संगीत शास्त्र

हिन्दी-समिति-ग्रन्थमाला—१९

संगीत शास्त्र

लेखक

के० वासुदेव शास्त्री

प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग

उत्तर प्रदेश

प्रकाशकीय

भारत की राजभापा के रूप मे हिंदी की प्रतिष्ठा के पश्चात् यद्यपि इस देश के प्रत्येक जन पर उसकी समृद्धि का दायित्व है, किन्तु इससे हिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्रों के विशेष उत्तरदायित्व मे किमी प्रकार की कमी नही आती। हमें सविधान में निर्धारित अवधि के भीतर हिन्दी को न केवल सभी राजकार्यो में व्यवहृत करना है, वरन् उसे उच्चतम शिक्षा के माध्यम के लिए भी परिपुष्ट बनाना है। इसके लिए अपेक्षा है कि हिन्दी में वाङमय के सभी अवयवो पर प्रामाणिक ग्रन्थ हो और यदि कोई व्यक्ति केवल हिन्दी के माध्यम से ज्ञानार्जन करना चाहे तो उमका मार्ग अवरुद्ध न रह जाय।

इसी भावना से प्रेरित होकर उत्तर प्रदेश शासन ने हिन्दी समिति के तत्त्वावधान में हिन्दी वाङमय के सभी अगो पर ३०० ग्रन्थो के प्रणयन एव प्रकाशन के लिए पच-वर्षीय योजना परिचालित की है। यह प्रसन्नता का विषय है कि देश के वहुश्रुत विद्वानो का सहयोग इस सत्प्रयास मे समिति को प्राप्त हुआ है जिसके परिणाम-स्वरूप थोडे समय में ही विभिन्न विपयो पर अठारह ग्रन्थ प्रकाशित किये जा चुके है। देश की हिन्दीभाषी जनता एव पत्र-पत्रिकाओ से हमें इस दिशा मे पर्याप्त प्रोत्साहन मिला है जिससे हमे अपने इस उपक्रम की सफलता पर विश्वास होने लगा है।

प्रस्तुत ग्रथ हिन्दी ग्रथमाला का १९वाँ पुष्प है। सम्प्रति हिन्दी में सगीत शास्त्र पर वस्तुत ग्रथो की वहुलता नही है, और जो ग्रथ प्रकाशित भी हुए हैं उनमे सागो-पागत्व, विस्तृत विवेचन एव शोध का अभाव दिखाई पडता है। प्रस्तुत पुस्तक के लेखक श्री के० वासुदेव शास्त्री न केवल भारतीय सगीत की विभिन्न पद्धतियो के सुविज्ञ है, वरन् उन्होने गत सैंतीस वर्षो से प्राचीन ग्रथो में सगीत शास्त्र-विषयक समस्त उपलब्ध सामग्री का अध्ययन किया है। और इस अध्ययन, चिन्तन, एव मनन का परिणाम है प्रस्तुत ग्रथ। इसमें सगीत के सभी तत्त्वो का सरल, सुबोध और आकर्षक

ढग से उद्घाटन हुआ है। इससे भारतीय सगीत के विद्यार्थियो एव जिज्ञासुओ की तृप्ति तो होगी ही, साथ ही इस दिशा में आगे शोध करनेवालो को प्रचुर प्रेरणा एव दिग्निर्देश भी प्राप्त होगा। इसी विश्वास से हम इसे हिन्दी के सहृदय पाठको के सम्मुख उपस्थित करते है।

भगवतीशरण सिंह

सचिव, हिन्दी समिति

भूमिका

हमारे प्राचीन ग्रन्थो मे सगीत शास्त्र विषयक जो सामग्री उपलब्ध है, पिछले ३७ वर्ष से मै उसका अध्ययन करता रहा हूँ। यह पुस्तक उसी का परिणाम है। तजौर जिले में स्थित मेरे ग्राम कीवलूर में बहुत से शौकिया तथा पेशेवर सगीतज्ञ निवास करते थे। कन्दस्वामी नागस्वरक्कारर नामक अत्यन्त प्रसिद्ध वशीवादक उसकी शोभा बढा रहे थे। वे वशीवादक सगीतज्ञो के मुकुटमणि थे, जिनका स्थान देश के उस अञ्चल में सामान्यत अन्य वादको तथा गायको के समकक्ष ही माना जाता है। राग, छाया तथा स्वर-सचार की प्रथम शिक्षा मुझे अपने बडे भाई श्री माधव शास्त्री से मिली जो सगीत शिक्षक थे। मुझे अपने गाव के बहुत ही कुशल सगीतज्ञ श्रीरामचन्द्र भागवतार का गायन सुनने तथा उनसे कुछ सीखने का भी अवसर प्राप्त हुआ था। पहले तो वे हिन्दुस्थानी सगीत के अद्वितीय गायक के रूप मे प्रसिद्ध हुए, किन्तु बाद में उन्होने कर्णाटक सगीत में भी ख्याति प्राप्त की। उनके नारी-सुलभ कण्ठस्वर पर नागूर के मशहूर ढोलकवादक तजौर निवासी जनाब नन्हू मिया साहब, मुग्ध हो गये। इन्होने उन्हें शास्त्रीय हिन्दुस्थानी सगीत की शिक्षा दी और फिर दोनो ने साथ-साथ समस्त दक्षिण भारत का परिभ्रमण किया जिसमे दोनो को ही सयुक्त लाभ पहुचा। श्री रामचन्द्र भागवतार ने अपने प्रारम्भिक जीवन के कितने ही वर्ष उस समय के दो महान् करनाटकी सगीतज्ञो, श्री महावैद्यनाथ ऐयर तथा श्री पटनम सुब्रह्मण्य ऐयर, का सगीत सुनने में बिताये और जब उक्त दोनो प्रतिष्ठित कलाकार दिवगत हो गये, तब स्वय प्रथम कोटि के करनाटकी सगीतज्ञ का स्थान प्राप्त कर लिया। इसी समय सुप्रसिद्ध अभिनेत्री बालामणि ने लुभावना वेतन देकर उन्हें सगीत की शिक्षा प्रदान करने के लिए कुछ वर्षो तक अपने यहा नियुक्त कर लिया, जिससे पेशेवर सगीतज्ञ के रूप में उनका जीवन समाप्त हो गया। इसके बाद उन्होने अपना अधिकाश समय सगीत की शिक्षा प्रदान करने में ही लगाया और वे लगभग २५ वर्षो तक "सगीतज्ञो के सगीतज्ञ" रूप में ही प्रसिद्ध रहे। मैंने देखा था कि स्वर्गीय पचम केश भागवतार, वायलिन गोविन्द स्वामी पिल्लै, नागस्वरम् पक्किरिया पिल्लै, कोयम्बटूर तयी और बगलौर नागरत्नम् रागो तथा कृतियो के किसी गूढ तत्त्व को समझने के लिए हफ्तो तक उनकी मौज का इन्तजार किया करते थे। पिछली शताब्दी

के उत्तरार्ध मे कर्णाटक सगीत के उक्त दोनो आचार्यों की सयुक्त परम्परा का प्रतिनिधित्व उन्होने किया।

मैंने उस समय तक रागो, उनकी छायाओ, उनके स्वरो तथा सचारो का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था, जब सन् १९२१ मे प्रकाशित पूना ज्ञान समाज के स्मृति-ग्रन्थ में सगीत विषयक सस्कृत के भाषण मैंने देखे। उसमे मुझे श्री बलवन्त तैलग सहस्त्रबुद्धे तथा कुछ अन्य विद्वानो के व्याख्यान पढने को मिले। सगीत रत्नाकर, नारदी शिक्षा तथा पाणिनि शिक्षा, यही तीन पुस्तकें थी जिनका अध्ययन मैंने पहले पहल किया।

सस्कृत जानने के कारण मुझे सगीत रत्नाकर तथा नारदी शिक्षा के श्लोको का अर्थ समझने मे वहाँ यथेष्ट सुविधा हुई जहा तक ऐसे विषय का सम्बन्ध था जो प्राविधिक न था, किन्तु उसके प्राविधिक अश में हर दूसरे-तीसरे श्लोक पर कठिनाई का सामना करना पडा। पहली समस्या श्रुतियो और स्वरो के पारस्परिक सम्बन्ध में थी जिसका मुझे समाधान करना था। हमे बताया गया है कि सप्तक मे बाईस श्रुतिया होती हैं, षड्ज में चार, ऋषभ मे तीन, इत्यादि और समस्त सातो स्वरो मे बाईसो श्रुतियो का समावेश हो जाता है। अब प्रश्न यह था "क्या प्रत्येक श्रुति एक स्वर का प्रतिनिधित्व करती है? ग्रन्थो में जो यह कहा गया है कि षड्ज मे चार श्रुतिया होती हैं, क्या उसका यह आशय है कि षड्ज भी चार होते हैं?" कोई भी इसका उत्तर "हा" मे न देगा। फिर, यदि प्रत्येक श्रुति का आशय स्वर ही हो, तो इसके लिए दो पृथक शब्द—श्रुति और स्वर—रखने की क्या आवश्यकता है? और यदि प्रत्येक श्रुति स्वर है तो फिर स्वर भी बाईस होने चाहिए, जब कि ग्रन्थो मे कही भी इनकी अधिक से अधिक सख्या १९ के ऊपर नही आयी है। मैंने सहजबुद्धि से यह परिणाम निकाला कि श्रुतिया वे घटक अग मात्र है जिनसे स्वरो का निर्माण हुआ है अर्थात् प्रत्येक स्वर चार, तीन या दो श्रुतियो के सयोग से बना है। कई वर्षों के बाद जब मैंने नाटयशास्त्र का सुषिराध्याय याने ३० वा अध्याय देखा तो मेरे इस विचार की पुष्टि हो गयी। किन्तु इस पुष्टि के बहुत पहले ही मानो मेरे कान मे कोई कह उठता था कि मेरा यह सोचना यथार्थ है। श्रुतिया स्वरो के निर्माणकारी अग है, लेकिन फिर यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि "किसी विशिष्ट श्रुति मे प्रत्येक स्वर का अपना स्थान है", इस कथन का क्या तात्पर्य है? प्रत्येक स्वर को किसी विशिष्ट श्रुति के रूप मे पहचानने में हमें अपने कानो से सहायता मिलती है जिससे इस मत की पुष्टि होती है कि प्रत्येक स्वर एक ही श्रुति-विशेष का द्योतक है। इसका उत्तर मैंने यह कहकर दिया कि यद्यपि प्रत्येक स्वर कई श्रुतियो के मेल से बनता है, फिर भी जो

रहने से अन्य श्लोको की तरह इनका भी अर्थ स्पष्ट हो गया कि हमारे महर्षियो ने जो कुछ कहा है, समस्त वैज्ञानिक साधनो से युक्त आज के सामान्य व्यक्तियो की अपेक्षा अधिक निश्चयपूर्वक कहा है और वे अधिक गहराई तक जा सके है, अन्त में अन्य श्लोको की तरह इनका भी अर्थ स्पष्ट हो गया। एकाएक यह बात मेरे ध्यान में आयी कि जब एक श्रुति मे दो स्वर एक दूसरे के बहुत निकट होते है, तब वे 'डोल' (बीट) उत्पन्न करते है और बिना एक दूसरे में मिले पृथक्-पृथक् नही रह सकते। इसलिए स्वतत्र अस्तित्व की शर्त यह है कि श्रुतियो के बीच मे कम से कम दूरी हो। अब उक्त श्लोक का अर्थ स्पष्ट हो गया। इसका आशय यह हुआ कि अनुक्रम में आनेवाली ऐसी केवल बाईस श्रुतिया ही हो सकती है जिनके बीच में इतना अल्पतम अन्तर हो कि डोलो की उत्पत्ति न होने पाये।

दूसरी समस्या उस समय सामने आयी जब मैंने "ग्राम", फिर "मूर्च्छना" और तब "जाति" से सम्बद्ध धारणाओ पर विचार किया। इनके कारण मुझे अधिक कठिनाई नही हुई, क्योकि उनका अर्थ आसानी से मेरी समझ में आ गया। फिर भी मुझे इन धारणाओ के सम्बन्ध मे जनता में प्रचलित अनेक भ्रातियो से जूझना पडा। इस पुस्तक मे मैंने विस्तार से यह कार्य किया है। तजौर के सरस्वती महल में कार्य करने का परम सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था, जहा पाण्डुलिपियो का दुर्लभ सग्रह विद्यमान है, अत सगीत के सम्बन्ध में प्रत्येक छपी हुई पुस्तक और पाण्डुलिपियो में उपलब्ध प्राय एक-एक सामग्री का मै अवलोकन कर चुका हूँ।

मै समझता हूँ कि सबसे महत्त्व की बात जिसकी खोज मैंने की है, सात प्रकार के स्थायी स्वर अलकारो के सम्बन्ध में है। एक ही स्वर का उच्चारण सात मूर्च्छनाओ से किया जा सकता है और इन मूर्च्छनाओ का प्रत्येक राग से विशिष्ट सम्बन्ध है, यह जो बात कही जाती रही है, इसने सगीत रत्नाकर के रचनाकाल से अर्थात् सन् १२०० ईसवी से आज तक के विद्वानो और सगीत शास्त्रियो को हैरान कर रखा था। बाद के सभी ग्रन्थ-लेखको ने इस सिद्धान्त की अवहेलना की, यद्यपि 'सगीत रत्नाकर' में इसे प्रत्येक राग का लक्षण माना है। अब मै बतलाता हू कि बुद्धि को चक्कर में डालने वाला यह विषय किस तरह मेरी समझ में आया। इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में मै निरतर विचार करता रहता था कि एक दिन मैंने देखा कि षड्ज में "यदुकुल काम्भोजी" की जिस तरह समाप्ति होती है, उसमें एक विशेष प्रकार की कोमलता (फ्लैटनेस) रहती है जो 'काम्भोजी' में विद्यमान नही रहती। तब मेरे मन में यह बात आयी कि षड्ज मे समाप्ति के ये दोनो प्रकार ही स्थायी स्वर अलकारो के सात प्रकारो में से दो प्रकार होने चाहिए। अब मै अपने परिश्रम का फल सुविज्ञ विद्वानो तथा सगीतज्ञो के

सामने रख दे रहा हूँ जिससे इसमे जो कुछ उपयोगी हो, उसे वे ग्रहण कर लें और जो काम का न हो उसे छोड दें।

मैं उत्तर प्रदेश सरकार के सूचना विभाग की हिन्दी समिति के सचिव को हार्दिक धन्यवाद देना चाहता हू क्योकि उन्होंने मगोत के अध्ययन में अपना यह तुच्छ अशदान सर्वसाधारण के समक्ष रखने का अवसर मुझे प्रदान किया।

सरस्वती महल, तजौर]

के० वासुदेव शास्त्री

विषय-सूची

संगीत शास्त्र

पहला परिच्छेद

शास्त्रावतरण

संगीत का शब्दार्थ

'सम्' (सम्यक्) और 'गीत' दोनो शब्दो के मिलन मे सगीत शब्द बनता है। मौखिक गाना ही 'गीत' है। 'सम्' (सम्यक्) का अर्थ है 'अच्छा'। वाद्य और नृत्य दोनो के मिलने से ही गीत अच्छा बन जाता है—

'गीत वाद्य च नृत्य च त्रय मगीनमुच्यते।'

हम आज साधारणतया केवल 'गीत' या 'गीत' और 'वाद्य' को ही सगीत कहते हैं। इसलिए प्रधानत गीत और वाद्य पर ही इस पुस्तक में 'सगीत-शास्त्र' शीर्षक के अन्तर्गत विचार किया जा रहा है।

संगीत की प्रशसा

मगीत आनन्द का आविर्भाव है। आनन्द ईश्वर का स्वरूप है। सगीत के द्वारा ही दु ख के लेश तक से भी सम्बन्ध न रखनेवाला सुख मिलता है। दूसरे विषयो से होनेवाले सुखो के आगे या पीछे दु ख की सम्भावना है परन्तु इस दु खपूर्ण ससार में मगीत एक स्वर्गावास है। मगीत के ईश्वर स्वरूप होने के कारण जो लोग सगीत का अभ्यास करते हैं वे तप, दान, यज्ञ, कर्म, योग आदि के कष्ट न झेलते हुए मोक्षमार्ग तक पहुँचते हैं। योग और ज्ञान के सर्वश्रेष्ठ आचार्य श्री याज्ञवल्क्य कहते हैं—

"वीणावादनतत्त्वज्ञ. श्रुतिजातिविशारद ।
तालज्ञश्चाप्रयासेन मोक्षमार्ग प्रयच्छति ॥"

—याज्ञवल्क्यस्मृति ।

सगीत योग की विशेषता यह है कि इसमें साध्य और साधन दोनो ही सुखरूप हैं।

भक्तिमार्ग में सगीत के साथ भगवद्भजन करने से मन शीघ्र ही ईश्वर के नाम-रूप में लीन हो जाता है। इसके दो कारण है। सगीत के विना नामोच्चारण मात्र करते समय मुंह सिर्फ नाम का रटन करता रहता है, मन तो दसो दिशाओ मे फिरता रहता है। पर सगीत के साथ नामजप या गुणगान करते समय सगीत की मनोहर शक्ति एक दृढ रज्जु बनकर भगवान के नाम-रूप को मन के साथ बांध देती है। दूसरा कारण यह है कि ईश्वर सगीत से जितना प्रसन्न होता है उतना दूसरे उपचारो से नही—

"गीतेन प्रीयते देव सर्वज्ञ पार्वतीपति ।
गोपीपतिरनन्तोऽपि वशध्वनिवशगत ।।
सामगीतिरतो ब्रह्मा वीणासक्ता सरस्वती ।
किमन्ये यक्षगन्धर्वदेवदानवमानवा ।।"

सगीत समस्त जीवसमूह को आनन्द का वरदान देकर अपनी ओर खीच लेता है।

'पशुर्वेत्ति शिशुर्वेत्ति वेत्ति गानरस फणी'

यह एक सुप्रसिद्ध वाक्य है।

देवर्षि नारद ने जीवन्मुक्त होने पर भी वीणावादन को नही छोडा। इससे प्रतीत होता है कि सगीतानन्द जीवन्मुक्ति के आनन्द से कम नही है।

सगीतरूपी एकमात्र साधन से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारो पुरुषार्थ मिलते हैं। भगवद्भजन से धर्म, राजाओ और प्रभुओ से मिले हुए सम्मान के रूप में अर्थ, अर्थ से काम और ईश्वरप्रसाद के फलस्वरूप मोक्ष की भी प्राप्ति होती है।

संगीत शास्त्र का अवतरण

भारतवर्ष की कलाओ और शास्त्रो की उत्पत्ति की खोज करते समय वेद, आगम (तन्त्र) और महर्षियो के वाक्य ही हरएक कला या शास्त्र का मूल ठहरते हैं। ये मूलभूत उपदेश आज भी विद्यमान हैं। एक और विशेषता यह है कि यह शास्त्र जितना पुराना है उतना ही अगाध और सम्बद्ध विषय पर विस्तृत रूप से विचार करता हुआ दृष्टिगोचर होता है।

हमारे देश में नये ग्रन्थ लिखते समय प्राचीन ग्रन्थो का अनुसरण करने में ही ग्रन्थ का गौरव समझा जाता है, परन्तु पाश्चात्य देशो में प्राचीन ग्रन्थो का खण्डन करके लिखने में ही लेखक अपने ग्रन्थो का गौरव समझते है। इसका मुख्य कारण यह है कि हमारे मूलभूत ग्रन्थ योगधारणा की शक्ति के द्वारा साक्षात् **दृष्ट विषयों** से ओतप्रोत हैं। इसी मार्ग से सब वस्तुओ का सच्चा स्वरूप प्राप्त हुआ है। **यह**

योगियो के प्रत्यक्ष और स्वानुभव ज्ञान से प्राप्त है, अनुमान से नही। पाश्चात्य देशो में इन्द्रियो से उपलब्ध ज्ञान ही एक मात्र साधन है। जिन विषयो में पाश्चात्य विद्वान् इन्द्रियो से सत्य स्वरूप नहीं जान पाते, उनमे इन्द्रियो से प्राप्त तत्सम्बद्ध ज्ञान से अनुमान करते हैं। नयी-नयी खोजो के अनुसार यह अनुमान प्रतिदिन बदलता रहता है। उनके ग्रन्थो में वस्तुओ का स्वरूप कल एक प्रकार का हुआ तो, आज और कुछ भिन्न प्रकार का होता है। वस्तुत वस्तुस्वरूप कभी बदलनेवाला नही होता, परन्तु पाश्चात्य लोग वस्तुओ के लगातार बदलनेवाले सिद्धान्त को 'साइण्टिफिक प्रोग्रेस' नाम देकर तृप्त होते हैं। असली बात यह है कि हरएक कला और विज्ञान की शाखा मे हमारे प्राचीन ग्रन्थो में पाये जानेवाले बहुत से तत्त्वो[1] पर पाश्चात्य वैज्ञानिको और कलाकारो का ध्यान अब तक नही गया है।

हमारे सगीत शास्त्र के अवतरण में विविध परम्पराएँ हैं। उनमें तीन परम्पराएँ मुख्य प्रतीत होती हैं—(१) वेद-परम्परा (२) आगमो और पुराणो की परम्परा (३) ऋषि प्रोक्त सहिता परम्परा। वेद-परम्परा में हमारे सगीत की उत्पत्ति सामवेद से बतायी गयी है।

'सामवेदादिद गीत सञ्जग्राह पितामह ।'

गीत और वाद्य में क्रमश नारद और स्वाति ब्रह्मा के प्रथम शिष्य हुए। कहा जाता है कि नाटक में उपयोग करने के लिए गीत और वाद्य को इन दोनो से भरत मुनि ने सीखा। भरतमुनि ने ही स्वय यह अपने 'नाट्यशास्त्र'[2] में कहा है।

१ उदाहरण के तौर पर यहां एक विषय का उल्लेख किया जाता है। हमारे शस्त्रचिकित्सा ग्रन्थ 'सुश्रुत सहिता' में हमारे शरीर के १०७ मर्मस्थानो का विवरण है जिनमें शस्त्र का आघात होने से वे अंग प्रयोजन के योग्य नहीं रह जाते अथवा कुछ ही दिनो में या बहुत दिनो के बाद मृत्यु की सम्भावना होती है। पाश्चात्य चिकित्साशास्त्री इस तथ्य को नहीं जानते। फलत पाश्चात्य चिकित्सा में सुसिद्ध 'आपरेशन' करने के कुछ दिनो के बाद, कारण जाने बिना लगभग ५ प्रतिशत लोगो का मरण होता है।

२. 'गान्धर्वञ्चैव वाद्यञ्च स्वातिना नारदेन च।
विस्तार गुणसम्पन्नम् उक्तं लक्षणकर्मत.॥
अनुवृत्त्या तया स्वातेरातोद्यानां समासत.।
पौष्करणा प्रवक्ष्यमि निर्वृत्ति संभवं तथा॥'
—अध्याय ३३, श्लोक ३—४।

महर्षि नारद का आदि ग्रन्थ 'नारदीय शिक्षा' है। यही सामवेद की शिक्षा है। उसमें श्रुति, स्वर, ग्राम, मूर्च्छना, सप्त मुख्य राग—इनका विवरण है। इसके अलावा सामवेद के सप्तस्वर, लौकिक सगीत के सप्तस्वर और दूसरे वेदो के स्वर आदि में परस्पर सम्बन्ध भी बताया गया है।

सामवेद के सप्तस्वरो का नाम क्रुष्ट, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, मन्द्र, अतिस्वार है। यह अवरोहण क्रम है। लौकिक सप्तस्वरो में ये 'म ग रि स नि ध प' के समान हैं। ऊपरी दृष्टि से देखें तो यह अनुभवविरुद्ध जान पडता है। यह चर्चा की ही वात है। इसका पूरा विवरण आगे स्पष्ट किया जायगा।

'स्वातिनारदसवाद' नामक एक ग्रन्थ है। प्रयत्न करने पर यह ग्रन्थ मिल सकता है।

सगीत शास्त्र के उपलब्ध आदि ग्रन्थ भरत नाटयशास्त्र में सगीत विभाग (अध्याय २८ से ३६ तक) है। इस ग्रन्थ में गीत और वाद्यो का पूरा विवरण है, परन्तु रागो के नाम और उनके विवरण नही बताये गये हैं। भरत के शिष्यो में दत्तिल, कोहल, विशाखिल—इन तीनो के द्वारा ग्रन्थ लिखे गये। उनमें दत्तिल कृत 'दत्तिलम्' नामक ग्रन्थ छपा हुआ है। कोहल कृत 'कोहलीयम्' लिखित रूप में मिल सकता है। 'विशाखिलम्' उपलभ्य नही है। इसी परम्परा में आये हुए मतग मुनि ने 'बृहद्देशी' नामक ग्रन्थ लिखा है। यह ग्रन्थ भी छपा हुआ है। 'दत्तिलम्' और 'बृहद्देशी' में रागो की उत्पत्ति, नाम और लक्षण के विवरण हैं।

आगम परम्परा में सगीत के आदिकर्ता महादेव हैं। शिव-पार्वती सवाद के रूप में ३६००० श्लोको का एक ग्रन्थ गान्धर्व नाम से प्रचलित था। परन्तु वह ग्रन्थ अब प्राप्य नही है। तो भी उसकी विषय सूची यामलाष्टक नामक ग्रन्थ में दी गयी है।

इसी परम्परा के ग्रन्थो में नन्दिकेश्वर कृत 'नन्दिकेश्वर सहिता' भी एक है। यह ग्रन्थ अब नही मिलता। परन्तु सगीत रत्नाकर के टीकाकार सिंहभूपाल ने (ई० १५००) इसके कुछ श्लोक उद्धरण के रूप में दिये हैं। यदि खोज की जाय तो कदाचित् यह ग्रन्थ मिल सकता है।

ऋषि कृत सहिता परपरा में 'काश्यपीयम्' ही मुख्य ग्रन्थ है। इसके कुछ श्लोको के उद्धरण पिछले दिनो के ग्रन्थो में दिये गये हैं। पर यह काश्यपीय ग्रन्थ अप्राप्य ही है।

इनके अलावा आगम-पुराण-परपरा के शैव और वैष्णव आगम ग्रन्थो में शिल्प, नाटय आदि विषयो के साथ सगीत विषयक विचारो के महत्त्वपूर्ण उल्लेख हैं।

अन्य परम्पराओ में याष्टिक, दुर्गा, आञ्जनेय परम्पराएँ ही मुख्य हैं। याष्टिक, दुर्गा परम्पराओ का अनुमरण करके सगीत रत्नाकर में शार्ङ्गदेव ने रागोत्पत्ति और रागविवरण दिये हैं। आञ्जनेय मत का अनुकरण चतुरदामोदर कृत 'मगीत दर्पण' (१६०० ई०) में है। मगीत परम्पराओ के प्रवर्तको का नाम सगीत रत्नाकर मे यो दिया गया है—

> 'सदाशिव शिवा व्रह्मा भरत कश्यपो मुनि ।
> मतङ्गो याष्टिको दुर्गा शक्ति शार्दूलकोहलौ ।।
> विगाखिलो दत्तिलश्च कम्वलोऽश्वतरस्तथा ।
> वायुविश्वावसू रम्भार्ऽर्जुनो नारदतुम्वुरू ।।
> आञ्जनेयो मातृगुप्तो रावणो नन्दिकेश्वर ।
> स्वातिर्गणो विन्दुराज क्षेत्रराजश्च राहल ।।
> रुद्रटो नान्यभूपालो भोजभूवल्लभस्तथा ।
> परमर्दी च सोमेशो जगदेकमहीपति ।।
> व्याख्यातारो भारतीये लोल्लटोद्भटशकुका ।
> भट्टाभिनवगुप्तश्च श्रीमत्कीर्तिधर पर ।।
> अन्ये च वहव पूर्वे ये मगीतविशारदा ।'

इनके साय द्रविड (तमिल) देश मे एक अति प्राचीन पद्धति उत्पन्न हुई है। इस परम्परा के प्रवर्तक परमशिव, स्कन्द और अगस्त्य हैं। इम पद्धति में कई ग्रन्य भी लिखे गये थे। पर अव सव ग्रन्थ नप्ट हो चुके है। उन ग्रन्थो से कुछ उद्धरण पिछले दिनो के काव्यों और निघण्टुओं में उपलभ्य हैं। इस पद्धति में रागो का नाम 'पण' और 'तिरम्' है। इनके लक्ष्य अव भी 'देवार' नामक स्तोत्र में वर्तमान हैं।

सन् १२०० ई० में मव पद्धतियो का मन्यन करके शार्ङ्गदेव ने 'मगीत रत्नाकर' नामक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ लिखा, इसकी छ टीकाएं[1] मस्कृत में थी। पर अव दो ही प्राप्य हैं। सन् १७०० ई० में लिखी हुई 'सेतु' नाम की एक व्रजभापा टीका 'तजौर सरस्वती महल पुस्तकालय' में है। टीकाकार का नाम है गगाराम। भावभट्ट के द्वारा लिखी हुई आन्ध्रभापा की टीका भी है। इनसे इस ग्रन्थ का महत्त्व जाना जा सकता है। यही समूचे भारत के सगीत सम्प्रदाय में एकरूपता लानेवाला अन्तिम ग्रन्थ है।

१. कुम्भकर्ण, केशव, कल्लिनाथ, सिंहभूपाल, हमभूपाल—और एक टीकाकार का नाम नहीं मालूम है।

महर्षि नारद का आदि ग्रन्थ 'नारदीय शिक्षा' है। यही सामवेद की शिक्षा है। उसमे श्रुति, स्वर, ग्राम, मूर्च्छना, सप्त मुख्य राग—इनका विवरण है। इसके अलावा सामवेद के सप्तस्वर, लौकिक सगीत के सप्तस्वर और दूसरे वेदो के स्वर आदि में परस्पर सम्बन्ध भी बताया गया है।

सामवेद के सप्तस्वरो का नाम क्रुष्ट, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, मन्द्र, अतिस्वार है। यह अवरोहण क्रम है। लौकिक सप्तस्वरो में ये 'म ग रि स नि ध प' के समान है। ऊपरी दृष्टि से देखें तो यह अनुभवविरुद्ध जान पडता है। यह चर्चा की ही बात है। इसका पूरा विवरण आगे स्पष्ट किया जायगा।

'स्वातिनारदसवाद' नामक एक ग्रन्थ है। प्रयत्न करने पर यह ग्रन्थ मिल सकता है।

सगीत शास्त्र के उपलब्ध आदि ग्रन्थ भरत नाट्यशास्त्र में सगीत विभाग (अध्याय २८ से ३६ तक) है। इस ग्रन्थ में गीत और वाद्यो का पूरा विवरण है, परन्तु रागो के नाम और उनके विवरण नही बताये गये है। भरत के शिष्यो में दत्तिल, कोहल, विशाखिल—इन तीनो के द्वारा ग्रन्थ लिखे गये। उनमें दत्तिल कृत 'दत्तिलम्' नामक ग्रन्थ छपा हुआ है। कोहल कृत 'कोहलीयम्' लिखित रूप में मिल सकता है। 'विशाखिलम्' उपलभ्य नही है। इसी परम्परा में आये हुए मतग मुनि ने 'बृहद्देशी' नामक ग्रन्थ लिखा है। यह ग्रन्थ भी छपा हुआ है। 'दत्तिलम्' और 'बृहद्देशी' में रागो की उत्पत्ति, नाम और लक्षण के विवरण हैं।

आगम परम्परा में सगीत के आदिकर्ता महादेव हैं। शिव-पार्वती सवाद के रूप में ३६००० श्लोको का एक ग्रन्थ गान्धर्व नाम से प्रचलित था। परन्तु वह ग्रन्थ अब प्राप्य नही है। तो भी उसकी विषय सूची यामलाष्टक नामक ग्रन्थ में दी गयी है।

इसी परम्परा के ग्रन्थो में नन्दिकेश्वर कृत 'नन्दिकेश्वर सहिता' भी एक है। यह ग्रन्थ अब नही मिलता। परन्तु सगीत रत्नाकर के टीकाकार सिहभूपाल ने (ई० १५००) इसके कुछ श्लोक उद्धरण के रूप में दिये है। यदि खोज की जाय तो कदाचित् यह ग्रन्थ मिल सकता है।

ऋषि कृत सहिता परपरा में 'काश्यपीयम्' ही मुख्य ग्रन्थ है। इसके कुछ श्लोको के उद्धरण पिछले दिनो के ग्रन्थो में दिये गये हैं। पर यह काश्यपीय ग्रन्थ अप्राप्य ही है।

इनके अलावा आगम-पुराण-परपरा के शैव और वैष्णव आगम ग्रन्थो में शिल्प, नाट्य आदि विषयो के साथ सगीत विषयक विचारो के महत्त्वपूर्ण उल्लेख है।

अन्य परम्पराओं में याष्टिक, दुर्गा, आञ्जनेय परम्पराएँ ही मुख्य हैं। याष्टिक, दुर्गा परम्पराओं का अनुसरण करके सगीत रत्नाकर में शार्ङ्गदेव ने रागोत्पत्ति और रागविवरण दिये हैं। आञ्जनेय मत का अनुकरण चतुरदामोदर कृत 'सगीत दर्पण' (१६०० ई०) में है। सगीत परम्पराओं के प्रवर्तकों का नाम सगीत रत्नाकर में यों दिया गया है—

'सदाशिव शिवा ब्रह्मा भरत कश्यपो मुनि ।
मतङ्गो याष्टिको दुर्गा शक्ति शार्दूलकोहलौ ॥
विशाखिलो दत्तिलश्च कम्बलोऽश्वतरस्तथा ।
वायुविश्वावसू रम्भाऽर्जुनो नारदतुम्बुरू ॥
आञ्जनेयो मातृगुप्तो रावणो नन्दिकेश्वर ।
स्वातिर्गणो विन्दुराज क्षेत्रराजश्च राहल ॥
रुद्रटो नान्यभूपालो भोजभूवल्लभस्तथा ।
परमर्दी च सोमेशो जगदेकमहीपति ॥
व्याख्यातारो भारतीये लोल्लटोद्भटशकुका ।
भट्टाभिनवगुप्तश्च श्रीमत्कीर्तिधर पर ॥
अन्ये च बहव पूर्वे ये सगीतविशारदा ।'

इनके साथ द्रविड (तमिल) देश मे एक अति प्राचीन पद्धति उत्पन्न हुई है। इस परम्परा के प्रवर्तक परमशिव, स्कन्द और अगस्त्य हैं। इस पद्धति में कई ग्रन्थ भी लिखे गये थे। पर अब सब ग्रन्थ नष्ट हो चुके हैं। उन ग्रन्थों के कुछ उद्धरण पिछले दिनों के काव्यों और निघण्टुओं मे उपलभ्य हैं। इस पद्धति में रागों का नाम 'पण' और 'तिरम्' है। इनके लक्ष्य अब भी 'देवार' नामक स्तोत्र मे वर्तमान हैं।

सन् १२०० ई० में सब पद्धतियों का मन्थन करके शार्ङ्गदेव ने 'सगीत रत्नाकर' नामक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ लिखा, इसकी छ टीकाएं[1] सस्कृत में थीं। पर अब दो ही प्राप्य हैं। सन् १७०० ई० में लिखी हुई 'सेतु' नाम की एक ब्रजभाषा टीका 'तजौर सरस्वती महल पुस्तकालय' में है। टीकाकार का नाम है गगाराम। भावभट्ट के द्वारा लिखी हुई आन्ध्रभाषा की टीका भी है। इससे इस ग्रन्थ का महत्त्व जाना जा सकता है। यही समूचे भारत के सगीत सम्प्रदाय में एकरूपता लानेवाला अन्तिम ग्रन्थ है।

१. कुम्भकर्ण, केशव, कल्लिनाथ, सिंहभूपाल, हसभूपाल—और एक टीकाकार का नाम नहीं मालूम है।

इसके पश्चात् लिखे हुए सब ग्रन्थ हिन्दुस्थानी और कर्नाटक पद्धतियो की उत्पत्ति के बाद ही लिखे गये है। इस ग्रन्थ के लेखनकाल तक भारतवर्ष के सगीत में अन्त-प्रान्तीय छाया भेदो के रहने पर भी सारे देश में एक ही प्रकार का सगीत विद्यमान था। इस ग्रन्थ की रचना के पश्चात् उत्तर और दक्षिण भारत में विदेशी आक्रमणो के कारण कलाजगत् और शास्त्रजगत् मे एक शून्यता फैल गयी थी। यह अवस्था १०० वर्ष तक रही। इसके पश्चात् दक्षिण में विजयनगर साम्राज्य और उत्तर में दिल्ली के बादशाहो की सहायता से कला और शास्त्रो का पुनरुद्धार किया गया। इस पुनरुद्धार के फल-स्वरूप ही कर्नाटक और हिन्दुस्थानी नामक दो पद्धतियो का उदय हुआ। बीच के 'अन्धकारयुग या शून्ययुग' के कारण सब शास्त्रो को, उत्तर और दक्षिण के विद्वान् लोग भूल गये। सप्रदायो में भी उथल-पुथल हुई। पुनरुद्धार के समय रहे-सहे सप्र-दाय के रक्षण के लिए एक व्यवस्था करनी पडी। उत्तर भारत में थाट, और दक्षिण मे मेल का उदय हुआ। इसके पहले के ग्रन्थो में 'थाट' या 'मेल' शब्दो का प्रयोग कही नही हुआ है। केवल श्रुति, स्वर, ग्राम, मूर्च्छना, जाति, राग, वर्ण और अलकार—ये ही सगीत शास्त्र के अग रहते थे।

रत्नाकर के बाद के ग्रन्थो में उत्तर भारत की पद्धति के आधारभूत ग्रन्थो में (१) रागार्णव (२) गन्धर्वराज कृत 'राग रत्नाकर' (३) पुण्डरीक विट्ठल कृत 'नर्तन निर्णय' (४) सोमेश कृत 'मानसोल्लास' (५) कुम्भकर्ण कृत 'सगीत राज' (६) भावभट्ट कृत 'हृदय प्रकाश' (७) जयदेव कृत 'षड्राग चन्द्रोदय' (८) 'रागमाला' (९) चतुरदामोदर कृत 'सगीत दर्पण'—आदि मुख्य है।

इनमें पहले के चार ग्रन्थ अमुद्रित है, जिनमें पहले के तीन ग्रन्थ तजौर सरस्वती महल पुस्तकालय मे हस्तलिखित ग्रन्थो के रूप में है। चौथा बडौदा में छापा जा रहा है। 'सगीतराज' की छपाई भी हो रही है। अन्तिम चार ग्रन्थ प्रकाशित हुए है।

कर्नाटक सम्प्रदाय के आधारभूत ग्रन्थ विद्यारण्य का 'सगीत सार', रामामात्य का 'स्वरमेलकलानिधि', रघुनाथ नायक और गोविन्द दीक्षित का 'सगीत सुधा', सोमनाथ का 'रागविबोध,' वेंकट मखी कृत 'चतुर्दण्डि प्रकाशिका', गोविन्द कृत 'सग्रह चूडामणि, शाहजी और उनके सभा पण्डितो के द्वारा लिखे हुए 'रागलक्षण' और 'चतु-र्दण्डिलक्ष्य' और तुलजाराज कृत 'सगीत सारामृत' आदि है।

इनमे 'सगीत सार' अब उपलभ्य नही है, परन्तु सगीत सुधा का 'रागलक्षण' इसके अनुकरण पर लिखा हुआ है। शाहजी के रागलक्षण और चतुर्दण्डिलक्ष्य के अति-रिक्त शेष सब ग्रन्थ मुद्रित हो चुके है। शाहजी और उनके विद्वानो के लक्षण, लक्ष्य ग्रन्थ तालपत्र के रूप मे सरस्वती महल पुस्तकालय मे है।

इनके अनुकरण पर पीछे लिखे हुए बहुत से ग्रन्थ दोनों सम्प्रदायों में मिलते हैं। साधारणतया प्राचीन शास्त्रों के बहुत भाग समझ में न आने के कारण, दोनों ही सम्प्रदायों में लक्ष्य के सहारे ही संगीत कला का रक्षण और पोषण किया गया है। शास्त्र की सहायता बहुत कम ही ली गयी है। ऐसी हालत में भी विद्वानों और गवैयों का कथन है कि शास्त्र के अनुसार ही वे गाते हैं। वे नहीं मानते कि रागच्छाया के आवश्यक शास्त्र भाग बहुत दिन पूर्व ही भूले जा चुके हैं। प्राचीन शास्त्र का एकमात्र अवशेष 'वादी-सवादी-तत्त्व' हिन्दुस्थानी सम्प्रदाय में ही है। कर्नाटक पद्धति में वह भी नहीं है। हरएक राग में स्वरों का तीव्र या कोमलस्वरूप, उनके क्रम, वक्र, वर्ज्य-भाव को ही अब दोनों सप्रदायों के व्यक्ति शास्त्र समझ बैठे हैं। गुरुकुल सम्प्रदाय में अभ्यास के कारण रागों का स्वरूप, मार्ग और छाया उनके मन में भली-भाँति ठहर जाती है। परन्तु यह उनका भ्रम है कि स्वरावली की सहायता से ही राग स्वरूप सिद्ध हो रहा है। उनको यह बात भी नहीं ज्ञात है कि इसके अतिरिक्त एक सच्चा शास्त्र हमारे प्राचीन ग्रन्थों में उपलभ्य है।

दूसरा परिच्छेद

श्रुति, स्वर और ग्राम

नाद की उत्पत्ति

सगीत सुखजनक नादविशेप है। हमारे शास्त्र-सिद्धान्तो के अनुसार नाद आकाश का गुण है। तर्कशास्त्र में 'शब्दगुणकमाकाशम्' कहा गया है। परन्तु पाश्चात्य विज्ञान के अनुसार नाद आकाश का गुण नही है, किन्तु अन्य वस्तुओ के आघात से नाद का उद्भव होता है। हमारे सिद्धान्त में भी 'आकाश' अन्य वस्तुओ के साथ रहते समय 'आश्रिताश्रय' सम्बन्ध से विद्यमान है। अत आकाश में नाद का उद्भव आघात के विना स्वय होता हो तो भी अन्य वस्तुओ में स्थित आकाश में नाद के उद्वोधन के लिये आघात की आवश्यकता है।

पञ्चभूत तत्त्व

हमारे शास्त्रो की परिभाषा पाश्चात्य वैज्ञानिक परिभाषा से भिन्न है। हमारे शास्त्रो में प्रपञ्च के स्वरूप की धारणा के आधार पर ही विवेचन किया गया है कि इन्द्रियो से हम जो-जो अनुभव कर रहे हैं, उनकी समष्टि ही प्रपञ्च है। हरएक इन्द्रिय से अनुभव किये जानेवाले प्रपञ्च भाग को 'भूत' नाम दिया गया है। कान से अनुभव किये जानेवाले भूत का नाम आकाश[1] है। जो भूत स्पर्शेन्द्रिय से अनुभव किया जाता है उसका नाम 'वायु' है। नयनेन्द्रिय से जो अनुभव किया जाता है उसका नाम 'तेजस्' है। जो जिह्वा से अनुभव किया जाता है वह 'अप' और जो नासिका से अनुभव किया जाता है वह 'पृथ्वी' है। यह भी हमारा सिद्धान्त है कि पृथ्वी में गन्ध के साथ वाकी चारो भूतो के गुण भी हैं। 'जल' में रुचि के साथ, पृथ्वी को छोडकर

१. यह पूछना सरल है कि कैसे आकाश (प्रदेश) ज्ञान का अनुभव कान से किया जा सकता है। अगर किसी को कान के अलावा दूसरी इन्द्रियो की सहायता नहीं है; तो भी वह केवल श्रवण से विभिन्न शब्दों को सुनकर उनकी दिशा और उनकी दूरी समझ सकता है। दसो दिशाओ और दूरी के ज्ञान को जोडकर प्रदेश का अनुभव उसे होता है।

बाकी तीनो के गुण भी हैं। इसी प्रकार तेजस् में पृथ्वी और जल को छोडकर बाकी दोनो के गुण भी हैं। वायु में आकाश का गुण भी है। आकाश में 'शब्द' ही एक गुण है। इसीलिए हमारा सिद्धान्त है कि प्रपञ्च सृष्टि क्रम में आकाश से वायु, वायु से तेजस्, तेजस् से जल, जल से पृथ्वी उत्पन्न हुई हैं। सृष्टि मे ईश्वर ही आदि है। प्रपञ्च का कर्ता और कारणवस्तु दोनों वही है। उसके स्वरूप को समझने की शक्ति हमारे मस्तिष्क में नही है। वेद और महर्षियो के अनुभवों से ही ईश्वरस्वरूप को हम जान सकते हैं।

वेद और शास्त्रो में ईश्वर को 'सच्चिदानन्द' कहते हैं। 'सत्' नाश रहित, 'चित्' अखण्ड ज्ञान स्वरूप, 'आनन्द' आनन्द स्वरूप इसका अर्थ है। ईश्वर के, अपनी मायाशक्ति द्वारा अपने सच्चिदानन्द स्वरूप को अनेक प्रकारो मे सकुचित करने से प्रपञ्च की सृष्टि हुई है। ईश्वर की प्रथम सृष्टि आकाश है। आकाश का गुण है नाद। इसी कारण से आकाश और उसके गुण नाद में अन्य विषयो से भी अधिक परिमाण में ईश्वर का स्वरूप विकसित है। अर्थात् आनन्द का आविर्भाव आकाश मे तथा उससे सम्बद्ध श्रवणानुभव मे अधिक है। इसलिए इन्द्रिय-जन्य विषय-सुखों में से कान से अनुभव किये जानेवाले सगीत में अन्य सुखों की अपेक्षा ज्यादा सुख हैं।

अनाहत नाद

नाद के दो भेद हैं। एक आहत और दूसरा अनाहत। हमारे शरीर मे 'चेतन' का स्थान हृदय है। यही ईश्वर का आविर्भाव अधिक मात्रा मे है।

हृदय मे 'दहराकाश' नाम से एक छोटी-सी जगह शुद्ध आकाश मे व्याप्त है। उसमें आघात के बिना नाद का आविर्भाव हमेशा हो रहा है। इसका नाम है अनाहत नाद। ऐसा होने पर भी हम उसे नही सुना करते, क्योकि हमारा मन और इन्द्रिय-ग्राम बाह्य विषयो में आसक्त हैं। इन्द्रियो को बाह्य विषयो से खीचकर अन्तर्मुख होने के पश्चात् अगर हम सुने, तो उस अनाहत नाद को सुन सकते हैं। शास्त्र मे कहा गया है कि वह नाद इतना मधुर है कि उसे सुनने के बाद मन किसी दूसरे विषय में नहीं लगता। यह योगियो का ही साध्य है।

हृदय मे आनन्द स्वरूपी ईश्वर का आविर्भाव अधिक होने के कारण उस आनन्द-स्वरूप की छाया अनाहत नाद में पड़ती है। इसीलिए अनाहत नाद आनन्दजनक है अर्थात् मधुर है। यही उसकी मधुरता का कारण है।

योगियो की तरह, जनसाधारण ही नही, जीवसाधारण को भी, इस आनन्द का अनुभव करने के लिए सगीत रूपी एक साधन ईश्वर की देन है।

रस और भाव का निश्चय नही होता। इसलिए मन के अवधान से ही श्रुतिस्वरो के स्वरूप का निश्चय होता है। एक आधार स्वर मे मन सावधान नही रहता, तो श्रुति स्वरो की उत्पत्ति और स्वरूप निश्चित नही हो सकते। यह समझा जाता है कि षड्ज या मध्यम दोनो ही आधार स्वर होने लायक हैं अर्थात् षड्ज को आधार स्वर बनाकर उससे एक सप्त स्वर समूह को तथा मध्यम को आधार स्वर बनाकर उससे एक सप्त स्वर समूह को भी उत्पन्न किया जा सकता है। पड्ज के आधार पर जिन स्वरो की उत्पत्ति होती है उनके समूह का नाम 'पड्जग्राम' है। मध्यम के आधार पर जिस स्वर समूह की उत्पत्ति होती है,वह स्वरसमूह 'मध्यमग्राम' कहलाता है। इन दोनो ग्रामो में पञ्चम और धैवत स्वरो को छोडकर बाकी स्वर समान हैं। पड्जग्राम में पञ्चम स्वर १४, १५, १६, १७ श्रुतियो से उत्पन्न होता है। मध्यमग्राम में तो १४, १५, १६ इन्ही तीनो श्रुतियो से पञ्चम उत्पन्न होता है। धैवत स्वर षड्जग्राम में १८, १९, २० इन तीनो श्रुतियो से उत्पन्न होता है और मध्यमग्राम में १७, १८, १९, २० इन चारो श्रुतियो से उत्पन्न होता है। आज से ७०० वर्ष पहले दोनो प्रकार के ग्रामस्वर भी आरम्भिक शिक्षा में सिखाये जाते थे। वह पद्धति मध्यकालीन शून्ययुग में विच्छिन्न हो गयी। इसके बाद पुनरुज्जीवन के समय से पड्जग्राम स्वरो को ही आरभिक शिक्षा में सिखाया जाना आरम्भ हुआ, परन्तु षड्जग्राम, मध्यमग्राम और उभयग्राम स्वरो से बनाये हुए राग सम्प्रदाय में अब भी विद्यमान हैं। इन रागो का पता लगाने के लिए एक सुलभ मार्ग है। षड्ज को 'सुर' बनाकर गाने से कुछ राग पूर्ण रञ्जक होते हैं, तो और कुछ राग मध्यम का 'सुर' बनाकर गाने से रञ्जक होते हैं। शास्त्रो में कहा गया है कि 'गान्धार' नामक भी एक ग्राम है, पर वह देव और गन्धर्वों के ही गाने योग्य है।

श्रुति और स्वरो के बारे में होनेवाली कुछ शंकाएँ

'श्रुति' शब्द अब 'आधार श्रुति' के अर्थ में प्रयुक्त किया जा रहा है। हम कहते है कि इस विद्वान् का सगीत 'श्रुतिशुद्ध' है। इसका श्रुतिज्ञान अच्छा है आदि। पर शास्त्र में 'श्रुति' का शब्दार्थ ऐसा दिया गया है कि--

"प्रथम श्रवणात् शब्द श्रूयते ह्रस्वमात्रक ।
सा श्रुति सपरिज्ञेया स्वरावयव लक्षणा ।।"

इसका तात्पर्य यह है कि श्रुति ह्रस्वमात्रावाली है। श्रुति स्वर का अवयव या अग है। अर्थात् हरएक स्वर दो-चार श्रुतियो से बना हुआ है। इस श्लोक का यह भाग 'प्रथम श्रवणात् शब्द ' कुछ दुरूह-सा है। इसका अर्थ यह है कि एक शब्द को सुनते

ममय हमें जो पहला छोटा भाग मुनाई पडता है, वही 'श्रुति' कहलाता है। क्योंकि लगातार मुनाई पडने के कारण वह 'श्रुति' रूप छोडकर स्वररूप लेता है।

हमारे शास्त्र मे कहा गया है कि एक स्थायी (सप्तक) में २२ श्रुतियाँ ही उत्पन्न हो मकती है। पर हरएक स्थायी के अन्दर भिन्न-भिन्न रूप में होनेवाली ह्रस्वमात्र शब्दो की मस्या अनन्त है। फिर शास्त्र वाक्य का मतलव क्या है? इन २२ श्रुतियो के वारे में मगीत-रत्नाकर में कुछ विवरण मिलता है। उम ग्रन्थ में २२ श्रुतियो को वीणा में २२ तारो में स्थापित करने का उपाय कहा गया है। उनकी स्थापना का क्रम यो दिया गया है—

. . आदिमा।
कार्या मन्द्रतमध्वाना द्वितीयोच्चध्वनिर्मनाक्॥
स्यान्निरन्तरता श्रुत्योर्मध्ये ध्वन्यन्तराश्रुते।'
—मगीत रत्नाकर, १।३।१२।

इनका तात्पर्य है कि पहले तार मे यथामभव नीची श्रुति का स्थापन करना। पहली श्रुति से तनिक उच्च श्रुति को दूमरे तार में स्थापन करना चाहिए। इन दोनो श्रुतियो के वीच में अगर और एक तार वजाया जाय, तो वह ध्वनि कान में नही पड़नी चाहिए। इम वात पर हमें जरा विचार करना आवश्यक है कि दो श्रुतियो के वीच में तीसरी ध्वनि का श्रवण नहीं होना चाहिए। यहाँ 'ध्वनि विज्ञान' हमें महारा दे मकता है। दो तारो में होनेवाली ध्वनियों में अगर थोडी भिन्नता रहती है, तो दोनों को वजाते ममय दोनो शब्द अलग-अलग नही सुनाई पडते है। पर दोनों मिलकर ऊँचे और नीचे वदलनेवाला एक शब्द सुनाई पडता है। इमे पाश्चात्य वैज्ञानिक परिभाषा में 'बीट्स' (Beats) कहते है। दोनो तारो की ध्वनियाँ जितना निकट होती है उतना विलव 'वीट्स' होते है। दोनों ध्वनियाँ एक रूप हो जायँ तो 'वीट्स' नही होते। इसी तरह दोनो ध्वनियो की दूरी को अधिक करते जायें, तो 'वीट्स' वेग से होने लगते हैं। पर ऐसा होते-होते एक नियत दूरी पर वीट्स रुक जाते हैं। इससे यह वात निश्चित होती है कि दो श्रुतियो के वीच का अन्तर नियमित दूरी को पार न करे, तभी 'वीट्स' सुनाई पडता है। जिम दूरी में 'वीट्स' रुक जाता है उसी को हमारे शास्त्रो में दो श्रुतियो का अन्तर माना गया है। एक स्थायी में २२ ऐसी ही श्रुतियों को ही उत्पन्न किया जा मकता है। यही वाईस श्रुतियो का तत्त्व है।

श्रुतियो में स्वरस्थानों का निदर्शन

दो समान नाद देनेवाली दो वीणाओ पर हरएक में २२ तारो की स्थापना करनी

९	क्रोवा	आयता	ग
१०	वज्रिका	दीप्ता	
११	प्रसारिणी	आयता	
१२	प्रीति	मृदु	
१३	मार्जनी	मध्या	म
१४	क्षिति	मृदु	
१५	रक्ता	मध्या	
१६	सदीपनी	आयता	
१७	आलापिनी	करुणा	प
१८	मदन्ती	करुणा	
१९	रोहिणी	आयता	
२०	रम्या	मध्या	ध
२१	उग्रा	दीप्ता	
२२	क्षोभिणी	मध्या	नि

स्वरप्रयोग में, आवश्यक विशिष्ट भाव के अनुसार स्वरगत श्रुतियो में उस भाव से सम्बन्ध रखनेवाली श्रुति जरा अधिक देर ठहरानी पडती है। स्वरो के भी अपने-अपने विशिष्ट रसभाव हैं। षड्ज और ऋषभ, वीर-अद्भुत और रौद्र रस प्रवान हैं। धैवत, वीभत्स और भयानक रस का अभिव्यञ्जक है। गान्धार और निषाद करुण रस प्रधान है। मध्यम और पञ्चम हास्य और शृगार रस प्रधान है।

वादी, सवादी, अनुवादी और विवादी

प्राय समान रसभाव देनेवाले दो स्वर पास-पास एक ही स्वरसमूह में रहने पर परस्पर रक्तिवर्धक होते हैं। इसलिए वे परस्पर सवादी स्वर कहलाते हैं। एक का नाम वादी और दूसरे का नाम सवादी है। हमारे काम आनेवाले मुख्य रस देनेवाले स्वर वादी हैं। प्राय उन्हीके समान रसभाव देनेवाले स्वर सवादी हैं। हरएक स्वरसमूह के आदि या अन्त में स्वर का सवादी रहने से ही वह स्वरसमूह पूर्ण रञ्जक होता है। जिन दो स्वरो के स्वरस्थान के बीच नौ या तेरह श्रुति अन्तर है, वे ही परस्पर सवादी हैं। सवादी के सवादी में रञ्जन शक्ति कुछ कम रहती है। उनके सवादियो मे रक्ति और भी कम रहती है। इस प्रकार होनेवाले द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ आदि सवादियो का नाम अनुवादी है। इसी तरह सवादी के सवादियो को ढूंढते समय दस अनुवादियो के बाद पहले की तरह स्वर फिर भी प्राप्त होते हैं।

अनुवादियो की दूरियाँ क्रमश ऐसी ही रहती है—

(१) ४ या १८
(२) ५ या १७
(३) ८ या १४
(४) १ या २१
(५) १० या १२
(६) ३ या १९
(७) ६ या १६
(८) ७ या १५
(९) २ या २०
(१०) ११

इनमें पिछले के अनुवादियो मे क्रम मे रक्ति कम होती है। इनमें २ या २० में रक्ति न होने के अलावा रक्ति का भग भी होता है। इसलिए २ या २० श्रुतियो के आगे रहनेवाले स्वर विवादी है।

सवादी प्रकृति स्वरो में

षड्ज (४) के सवादी मध्यम (१३) और पञ्चम (१७) हैं।
ऋषभ (७) का सवादी धैवत (२०)
गान्धार (९) का सवादी निषाद (२२)
मध्यम (१३) ,, निषाद (२२) और षड्ज (४)
पञ्चम (१७) ,, षड्ज (४)
धैवत (२०) ,, ऋषभ (७)
निषाद (२२) ,, गान्धार (९) और मध्यम (१३)

मतङ्ग आदि महर्षियो के मत के अनुसार समश्रुति सख्या रखनेवाले स्वर ही सवादी हो सकते है। इस मत के अनुसार देखें तो 'मध्यम' और 'निषाद' सवादी नही है।

हमारे शास्त्रो के अनुसार रागो में वादी राजा है। सवादी मन्त्री है। अनुवादी परिजन है। विवादी शत्रु है।

प्रकृति स्वर और विकृत या साधारण स्वर

स्वाद के लिए षड् रस है। ये छ रस अलग-अलग स्वाद के कारण होते है, परन्तु रसना उनसे तृप्त नही होती। वह और कुछ मिश्र रसो को चाहती है। रसो

के सात प्रकार हैं। पर हमारी आँखे केवल इन सात रगो से तृप्त नही होती। इनके सम्मिश्रित रगो का भी प्रकार भेद सुन्दरता की दृष्टि से आवश्यक जान पडता है।

इमी तरह, सगीत में भी सात प्रकृति स्वरो से भिन्न रुचिवाले लोगो की तृप्ति नही हुई। कुछ मिश्रित स्वरो की भी आवश्यकता हुई।

मिश्रित स्वरो का जन्म पहले विवादी दोप के परिहार के रूप में हुआ। स्वरावली में ऋषभ और गान्धार तया धैवत और निषाद पास-पास आते हैं। पर ये ऋषभ गान्धार परस्पर विवादी हैं और धैवत निपाद भी परस्पर विवादी हैं। इसलिए ऋषभ गान्धार को साथ-साथ उच्चारण करने से रक्तिभग होता है। इसी तरह धैवत निपाद को भी। इसे परिहृत करने के लिए गान्धार और मध्यम को मिश्रित करके एक नये स्वर की उत्पत्ति हुई। उसका नाम 'अन्तरस्वर' है। उसका स्वरस्थान मध्यम की द्वितीय श्रुति अर्थात् ग्यारहवी श्रुति है। स्वरगत श्रुतियाँ ८, ९, १०, ११ हैं। इसी तरह धैवत निपाद के विवादित्व के परिहार के लिए 'काकली' नामक एक नया स्वर उत्पन्न हुआ। स्वर के 'कलत्व' अर्थात् अव्यक्त मधुरता के कारण इसका 'काकली' नाम पडा। इसका स्वरस्थान षड्ज की द्वितीय श्रुति है। स्वरगत श्रुतियाँ २१, २२, १, २ हैं। इस तरह के मिश्रित स्वरो का नाम साधारण या विकृत स्वर है। कालान्तर और देशान्तर में कुछ और विकृत स्वरो की उत्पत्ति हुई है। इनमें काकली स्वर के स्वरस्थान को एक श्रुति नीचा करके 'कैशिकी' नाम का एक स्वर उत्पन्न हुआ है। इन काकली व कैशिकी स्वरो का अतर केशमात्र यानी अतिस्वल्प है। इसलिए इसका नाम कैशिकी पडा। उसका स्वरस्थान षड्ज की प्रथम श्रुति है। स्वरगत श्रुतियाँ २१, २२,, हैं। इसी तरह अन्तरगाधार के स्वरस्थान को भी एक श्रुति नीचा करके साधारण गाधार नामक एक नया स्वर उत्पन्न हुआ। इसका स्वरस्थान दसवी श्रुति है। स्वरगत श्रुतियाँ ८, ९, १० है। षड्जस्वर का स्वरस्थान एक श्रुति नीचा करके च्युतषड्ज नाम का एक विकृत स्वर हुआ। इसी तरह च्युतमध्यम भी मध्यम स्वरस्थान की एक श्रुति नीची करके हुआ।

मध्यमग्रामीय पञ्चम और धैवत, तया काकली और कैशिकी निपाद, अन्तर एव नाधारण गान्धार ये पहले उत्पन्न विकृतस्वर हैं। वाद मे एक श्रुति को मिलाकर चतु श्रुति ऋषभ का जन्म हुआ, और ऋषभस्वर से गान्धार की दो श्रुतियो को मिलाकर पञ्चश्रुति ऋषभ भी हुआ। और मध्यम की प्रथम श्रुति को भी मिलाकर षट्श्रुति ऋषभ भी हुआ। इसी तरह धैवत में भी चतु श्रुति धैवत, पञ्चश्रुति धैवत और षट्श्रुति धैवत भी उत्पन्न हुए। ये सव विकृतस्वर कर्नाटक और हिन्दुस्थानी सम्प्रदायो में अव भी इस्तेमाल किये जाते हैं। परन्तु इनके नाम में आज के कर्नाटक सम्प्रदाय

में थोडा अन्तर है, तो हिन्दुस्थानी सम्प्रदाय के स्वरो के नामो में अधिक अन्तर है।

स्वरस्थान श्रुति	प्राचीन नाम	कर्नाटक सम्प्रदाय	हिन्दुस्थानी सम्प्रदाय
१	कैशिकी या साधारण निषाद[1]	कैशिकी निषाद (षट्श्रुति धैवत)	कोमलतर निषाद
२	काकली निषाद	—	कोमल निषाद
३	च्युतषड्ज	काकली निषाद	शुद्ध निषाद
४	षड्ज (प्रकृति)	षड्ज	षड्ज
५	—	—	—
६	—	—	—
७	ऋषभ (प्रकृति)	शुद्ध ऋषभ	कोमल ऋषभ
८	—	चतु श्रुति ऋषभ	शुद्ध ऋषभ
९	गान्धार (प्रकृति)	शुद्ध गान्धार (पञ्च-श्रुति ऋषभ)	(तीव्र ऋषभ) अति कोमलतर गान्धार
१०	साधारण गान्धार	साधारण गान्धार (षट्श्रुति ऋषभ)	कोमलतर गान्धार
११	अन्तर गान्धार	—	कोमल गान्धार
१२	च्युत मध्यम	अन्तर गान्धार	शुद्ध गान्धार
१३	मध्यम (प्रकृति)	शुद्ध मध्यम	शुद्ध मध्यम
१४	—	—	—
१५	—	—	—
१६	मध्यम ग्राम पञ्चम	प्रतिमध्यम	तीव्रमध्यम
१७	पञ्चम (प्रकृति)	पञ्चम	पञ्चम
१८	—	—	—
१९	—	—	—
२०	धैवत (प्रकृति)	शुद्ध धैवत	कोमल धैवत
२१	—	चतु श्रुति धैवत	शुद्ध धैवत
२२	निषाद (प्रकृति)[2]	शुद्ध निषाद (पञ्च-श्रुति धैवत)	अति कोमलतर निषाद

१. कर्नाटक सम्प्रदाय में प्रथम श्रुति में स्थान रखनेवाले स्वर को ही कैशिकी निषाद कहते हैं। पर कुछ रागो में द्वितीय श्रुति पर स्थित स्वर भी प्रयुक्त किया जा रहा है। उसका अलग नाम नहीं है। उसे भी कैशिकी निषाद ही कहते हैं। इसी तरह गान्धार में भी १०, ११ दोनो श्रुतियो में स्थान रखनेवाले स्वरो को भी साधारण गान्धार ही कहते हैं।

२. इन स्वरो के अलावा 'रत्नाकर' में अच्युत षड्ज, अच्युत मध्यम, साधारण

स्वरस्थानो का निश्चय करने का मार्ग

स्वरो के उच्चारण को सुनने से स्वरस्थानो का निर्द्धारण करना सरल नही है परन्तु निश्चय करने का एक सुलभ मार्ग यह है कि वादी एव सवादी तत्त्व के सहा स्वरस्थानो को निश्चित करना चाहिए। कर्नाटक पद्धति, हिन्दुस्थानी पद्धति पाश्चात्य पद्धति इन तीनो पद्धतियो के प्रयोग में आनेवाले स्वरो का श्रुतिस्थान और दो स्वरो के वीच के अन्तर—इन्हें निश्चित करने के लिए वादी सवादि तत्त्व की वडी आवश्यकता है। इनके वारे में प्रचलित सिद्धान्त का भी सशोधन करना आवश्यक है।

षड्ज का स्थान तीनो सम्प्रदायो में चौथी श्रुति ही है। मध्यम का स्थान उससे ९ श्रुतियो के आगे है। इसलिए उसका स्थान १३ वी श्रुति है। पञ्चम का स्थान षड्ज से १३ श्रुतियो के आगे है। इसलिए इसका स्थान १७ वी श्रुति है। यह भी तीनो पद्धतियो में समान है।

पञ्चम से उसके सवादी ऋषभ का स्थान निश्चित कर सकते हैं। ऋषभ का स्थान पञ्चम से ९ श्रुतियो के नीचे है। अर्थात् इस ऋषभ का स्थान आठवी श्रुति है। कर्नाटक पद्धति में ऋषभ के चार भेद हैं। प्राचीन काल के प्रकृति ऋषभ को शुद्ध ऋषभ कहते हैं। उसका स्थान शास्त्रो के अनुसार सातवी श्रुति है। उससे उच्च ऋषभ को चतु श्रुति ऋषभ कहते हैं। और उससे उच्च ऋषभ को पञ्चश्रुति ऋषभ कहते हैं। और भी ऊँचे ऋषभ को षट्श्रुति ऋषभ कहते हैं। पञ्चम का सवादी होने वाला ऋषभ, शकराभरण राग में प्रयोग किये जानेवाला चतु श्रुति ऋषभ भी है। इसलिए कर्नाटक पद्धति में ८ वी श्रुति में स्थान रखनेवाले ऋषभ का नाम चतु श्रुति ऋषभ है। इसका उदाहरण शकराभरण में ऋषभ से शुरू होकर पञ्चम में समाप्त होनेवाली (री, गा, मपा) रक्तिदायक पकड है। हिन्दुस्थानी पद्धति में इस स्वर का नाम शुद्ध ऋषभ है। हिन्दुस्थानी पद्धति के सारङ्ग राग में ऋषभ पञ्चम का सवादी है। उसका नाम उस पद्धति में शुद्ध ऋषभ है।

ऋषभ, साधारण पञ्चम नामक चार विकृत स्वर भी दिये गये हैं। अच्युत षड्ज षड्ज स्वर की तृतीय और चतुर्थ श्रुतियो से वना हुआ है। उसका स्वरस्थान षड्ज की चतुर्थ श्रुति ही है। इस तरह अच्युत मध्यम भी मध्यम की तृतीय और चतुर्थ श्रुतियो से वना हुआ है। साधारण ऋषभ ४, ५, ६, ७ श्रुतियों से वना हुआ है। स्वरस्थान सातवीं श्रुति है। साधारण पञ्चम मध्यमग्राम में १३, १४, १५, १६ श्रुतियों से वना हुआ है। स्वरस्थान १६वीं श्रुति है। ये नाम अव प्रचार में नहीं है।

पाश्चात्य पद्धति में सुप्रसिद्ध मेल का नाम है 'डायटॉनिक स्केल' (Diatonic Scale)। स्वरो के नाम C, D, E, F, G, a, b, c, है। उसमे शुद्ध रूप स्वरो को 'नेचुरल' कहते है। तीव्रस्वर को 'शार्प' (sharp) और कोमलस्वर को 'फ्लैट' (flat) कहते हैं। उनके चिह्न 'H' और 'b' है।

पाश्चात्य पद्धति में विकृत या शार्प और फ्लैट की उत्पत्ति ऐसी होती है कि 'डायटॉनिक स्केल' के हरएक स्वर को उसके 'पञ्चम भाव' (Dominant or Fight) के अनुसार चढाने से[1] एक विकृत स्वर उत्पन्न होता है। इसी तरह दूसरी वार स्वरो को पञ्चम भाव करने से दूसरा विकृत स्वर उत्पन्न होता है। इस तरह सात 'शार्प' (sharp) स्वरो की उत्पत्ति होती है। इसी तरह मध्यम भाव[2] करने से सात 'फ्लैट' (flat) स्वरो की उत्पत्ति होती है। यही पाश्चात्य सम्प्रदाय

१. पञ्चम भाव से तीव्र स्वरो की उत्पत्ति

स्वर	—	C	D	E	F	G	a	b	
स्वरस्थान	—	4	8	12	13	17	21	25(3)	
पहली दफा	—	17	21	25	4	8	12	16	—F^H
दूसरी दफा	—	8	12	16	17	21	25	7	C^H
तीसरी दफा	—	21	25	7	8	12	16	20	G^H
चौथी दफा	—	12	16	20	21	25	7	11	D^H
पांचवीं दफा	—	25	7	11	12	16	20	2	a^H
छठीं दफा	—	16	20	2	25	7	11	15	E^H
सातवीं दफा	—	7	11	15	16	20	2	6	b^H

२. मध्यमभाव के अनुसार चढाने से कोमल स्वरो की उत्पत्ति

C	D	E	F	G	a	b	
4	8	12	13	17	21	25(3)	
13	17	21	22	4	8	12	b^b
22	4	8	9	13	17	21	E^b
9	13	17	18	22	4	8	a^b
18	22	4	5	9	13	17	D^b
5	9	13	14	18	22	4	G^b
14	18	22	23(1)	5	9	13	C^b
23	5	9	10	14	18	22	F^b

में विकृतस्वरो का उत्पत्ति विवरण है। इस पद्धति में ८ वी श्रुति ऋषभ को 'डी' नेचुरल ('D' natural) कहते है।

इस ऋषभ का सवादी धैवत है। उसका स्थान २१ वी श्रुति है। उसका नाम कर्नाटक सप्रदाय में चतु श्रुति धैवत है। यह स्वर शकराभरण राग में है। हिन्दुस्थानी पद्धति में उसका नाम शुद्ध धैवत है। राग सारङ्ग में शुद्ध ऋषभ और शुद्ध धैवत वादी सवादी हैं। पाश्चात्य सम्प्रदाय में इस धैवत को नेचुरल ए (Natural 'A') कहते है।

धैवत का सवादी गान्धार है। इस गान्धार का स्थान १२ वी श्रुति है। अर्थात् मध्यम से एक श्रुति नीचे है। इन धैवत और गान्धार को वादी सवादी रखनेवाले राग हिन्दुस्थानी, कर्नाटक दोनो पद्धतियो में है। कर्नाटक पद्धति के राग 'मोहनम' को हिन्दुस्थानी पद्धति में 'भूप' कहते हैं। इन दोनो रागो में गान्धार और धैवत वादी सवादी हैं। इस गान्धार को अब कर्नाटक पद्धति में अन्तर गान्धार कहते हैं। प्राचीन सम्प्रदाय में इस स्वर का नाम च्युत मध्यम है। इससे एक श्रुति नीचे स्थान रखनेवाले स्वर को ही अन्तरगान्धार नाम दिया गया था। हिन्दुस्थानी पद्धति में इसका नाम शुद्ध गान्धार कहते है। पर कई रागो में इस स्वर से एक श्रुति नीचे होनेवाला स्वर भी प्रयोग मे है। उसे भी 'शुद्ध गान्धार' कहते हैं। पाश्चात्य सम्प्रदाय में भी यह सन्देह है कि 'E' नेचुरल का स्थान ११ वी 'की' है या १२ वी। सन्देह निवृत्ति का एक मार्ग यह है। शुद्ध धैवत से एक श्रुति नीचे दूसरा धैवत है। उसका नाम प्राचीन काल में 'प्रकृति धैवत' दिया गया है। हिन्दुस्थानी सम्प्रदाय में उसका नाम कोमल धैवत है। कर्नाटक सम्प्रदाय में उसे 'शुद्ध धैवत' कहते हैं। उसका स्थान बीसवी श्रुति है। इसके सवादीस्वर का स्थान ११ वी श्रुति होना चाहिए। इसलिए इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि कोमल धैवत और गान्धार के जिन रागो में वादी-सवादी है, उनमें गान्धार का स्थान ११ वी श्रुति है और २१ वी श्रुति के अर्थात् हिन्दुस्थानी पद्धति के शुद्ध धैवत और गान्धार जहाँ वादी-सवादी है, वहाँ उन रागो में गान्धार का स्थान वारहवी श्रुति है।

वारहवी श्रुति के अन्तरगान्धार का सवादी, तीसरी श्रुति में स्थान रखनेवाला निषाद स्वर है। उसका नाम प्राचीन काल में च्युतषड्ज था। अब तो इसका नाम कर्नाटक पद्धति में काकली निषाद, हिन्दुस्थानी पद्धति मे शुद्ध निषाद और पाश्चात्य पद्धति में नेचुरल 'बी' (Natural 'B') है। उसके स्वरस्थान के बारे मे नेचुरल ई (Natural 'E') की तरह सदेह है कि उसका स्थान तीसरी या दूसरी श्रुति है।

तीसरी श्रुति के इस निषाद का सवादी, पञ्चम से एक श्रुति नीचे का स्वर है।

इसका नाम प्राचीन काल मे च्युत पञ्चम, आधुनिक कर्नाटक पद्धति में प्रतिमध्यम और हिन्दुस्थानी पद्धति में तीव्र मध्यम है। पाश्चात्य पद्धति मे इसका नाम 'एफ' शार्प ('F' sharp) है।

उस मध्यम का सवादी प्राचीन काल का शुद्ध ऋषभ है। उसका स्थान सातवी श्रुति है। उसे कर्नाटक पद्धति मे शुद्ध ऋषभ और हिन्दुस्थानी पद्धति मे कोमल ऋषभ कहते है। पाश्चात्य पद्धति में इसका नाम 'सी' शार्प ('C' sharp) है।

इस ऋषभस्वर का सवादी प्राचीन काल का शुद्ध धैवत है। उसका नाम कर्नाटक पद्धति मे शुद्ध धैवत, हिन्दुस्थानी पद्धति में कोमल धैवत और पाश्चात्य पद्धति में 'जी' शार्प ('G' sharp) है। उसका सवादी प्राचीन कालीन अन्तरगान्धार है। इसका विवरण अन्तर गान्धार के स्वर स्थान की चर्चा में बताया गया है। ग्यारहवी श्रुति में स्थान रखनेवाले गान्धार का सवादी प्राचीन काल का काकली निषाद है। अब कर्नाटक पद्धति में इसका अलग नाम नही है। हिन्दुस्थानी पद्धति में इसे भी शुद्ध निषाद कहते हैं। पाश्चात्य पद्धति मे इसका नाम 'ए' शार्प ('A' sharp) है।

उसका सवादी १५ वी श्रुति का होना चाहिए। इसका प्रयोग केवल पाश्चात्य सगीत में है। इसका नाम 'ई' शार्प ('E' sharp) है।

इसका सवादी ६ वी श्रुति में है। इसका प्रयोग सिर्फ पाश्चात्य सगीत मे ही है। इसका नाम 'बी' शार्प ('B' sharp) है।

उसका सवादी १९ वी श्रुति में होना चाहिए। किसी भी पद्धति में इसका प्रयोग नही दिखाई पडता है। उसका सवादी प्राचीन काल का कैशिकी या साधारण गान्धार है। उसका स्थान १० वी श्रुति है। अब इसे कर्नाटक पद्धति मे साधारण गान्धार कहते है। इस पद्धति मे प्राचीन काल के अन्तरगान्धार का अलग नाम प्रचलित न होने के कारण ग्यारहवी श्रुति मे स्थान रखनेवाले स्वर को भी साधारण गान्धार ही कहा जाता है। हिन्दुस्थानी पद्धति में उसका नाम कोमलतर गान्धार है। पाश्चात्य पद्धति मे उसका नाम 'एफ' फ्लाट ('F' flat) है।

इसके आगे भी सवादियो को ढूंढकर जायें तो पहले आये हुए स्वरस्थान ही मिलते हैं। २२ श्रुतियो की उत्पत्ति कर दिखाने के लिए यह भी एक मार्ग है।

दो स्वर परस्पर सवादी है या नही इसके निश्चय का उपाय जान लेना आवश्यक है। दोनो स्वरो मे एक से आरभ करके दूसरे स्वर में समाप्त होनेवाली एक तान या स्वरावली को गाते समय अन्तिम स्वर पर खडे होते समय रञ्जन हो तो यह निश्चय होता है कि ये दोनो स्वर परस्पर सवादी है। स्वरो के परस्पर सवादित्व के निश्चय हो जाने से हमे यह ज्ञात हो जाता है कि ये स्वर एक दूसरे से ९ या १३ श्रुतियो के

अन्तर के हैं। इसी तरह निर्धारित किये हुए स्वरस्थान से अनिर्धारित स्वरस्थान का निश्चय कर सकते हैं।

कर्नाटक सम्प्रदाय में वादी-सवादी

वादी	सवादी
षड्ज (४)	शुद्धमध्यम और पञ्चम (१३ और १७)
शुद्ध ऋषभ (७)	प्रतिमध्यम और शुद्ध धैवत (१६ और २०)
चतु श्रुति ऋषभ (८)	पञ्चम और चतु श्रुति धैवत (१७ और २१)
पञ्चश्रुति ऋषभ (९)	पञ्चश्रुति धैवत (२२)
शुद्ध गान्धार (९)	शुद्ध निषाद (२२)
साधारण गान्धार (१०)	कैशिकी निषाद (१)
अनामी गान्धार (११)	कैशिकी निषाद (२)
अन्तरगान्धार (१२)	चतु श्रुति धैवत और काकली निषाद (२१ और ३)
शुद्ध मध्यम (१३)	शुद्ध निषाद और षड्ज (२२ और ४)
प्रतिमध्यम (१६)	काकली निषाद और शुद्ध ऋषभ (३ और ७)
पञ्चम (१७)	षड्ज और चतु श्रुति ऋषभ (४ और ८)
शुद्ध धैवत (२०)	शुद्ध ऋषभ (७)
चतु श्रुति धैवत (२१)	चतु श्रुति ऋषभ और अन्तरगान्धार (८ और १२)
शुद्ध निषाद (२२)	शुद्ध गान्धार और शुद्ध मध्यम (९ और १३)
कैशिकी निषाद (१)	साधारण गान्धार (१०)
काकली निषाद (३)	अन्तर गान्धार (१२) और प्रतिमध्यम (१६)

हिन्दुस्यानी सम्प्रदाय में वादी-सवादी

वादी	सवादी
षड्ज (४)	शुद्ध मध्यम और पञ्चम (१३ और १७)
कोमल ऋषभ (७)	तीव्र मध्यम और कोमल धैवत (१६, २०)
शुद्ध ऋषभ (८)	पञ्चम और शुद्ध धैवत (१७, २१)
तीव्र ऋषभ (९)	तीव्र धैवत (२२)
अति कोमलतर गान्धार (९)	अति कोमलतर निषाद (२२)

कोमलतर गान्धार (१०)	कोमलतर निषाद (१)
कोमल गान्धार (११)	कोमल धैवत और शुद्ध निषाद (२० और २)
शुद्ध गान्धार (१२)	शुद्ध धैवत और शुद्ध निषाद (२१ और ३)
शुद्ध मध्यम (१३)	अतिकोमलतर निषाद और षड्ज (२२ और ४)
तीव्र मध्यम (१६)	शुद्ध निषाद और कोमल ऋषभ (३ और ७)
पञ्चम (१७)	षड्ज और शुद्ध ऋषभ (४ और ८)
कोमल धैवत (२०)	कोमल ऋषभ और कोमल गान्धार (७ और ११)
शुद्ध धैवत (२१)	शुद्ध ऋषभ और शुद्ध गान्धार (८ और १२)
अतिकोमलतर निषाद या तीव्र धैवत (२२)	अतिकोमलतर गाधार या तीव्र ऋषभ और शुद्ध मध्यम (९ और १३)
कोमलतर निषाद (१)	कोमलतर गान्धार (१०)
कोमल निषाद (२)	कोमल गान्धार (११)
शुद्ध निषाद (३)	शुद्ध' गान्धार और तीव्र मध्यम (१२ और १६)

१. प्रकृति या शुद्ध स्वर क्या है ? हिन्दुस्थानी शुद्ध स्वर या कर्नाटक शुद्ध स्वर ? यह प्रश्न अब सुलझाना है कि हमारे प्राचीन शास्त्र में कहे हुए प्रकृति या शुद्ध स्वर का रूप क्या है ? स्वर्गीय भातखण्डे जी, जिन्होंने हिन्दुस्थानी पद्धति की विस्तृत रूप से चर्चा कर एक सरल मार्ग का निर्माण किया है, दस से अधिक प्रश्नो को पीछे आनेवाले गवेषकों के द्वारा सुलझाने के लिए छोड गये है। उनमें यह प्रश्न भी एक है। इसे निर्धारित करने के लिए प्राचीन ग्रन्थो में दिये हुए प्रकृतिस्वरो के लक्षण पर विचार करना आवश्यक है। स्वर लक्षण को स्पष्ट रूप से बतानेवाला प्राचीन ग्रन्थ भरत का नाट्यशास्त्र है। उसमें प्रकृति स्वरो का लक्षण यो दिया गया है—

"षड्जश्च ऋषभश्चैव गान्धारो मध्यमस्तथा ।
पञ्चमो धैवतश्चैव निषाद सप्त च स्वरा: ।।
चतुर्विधत्वमेतेषा विज्ञेयं श्रुतियोगत ।
वादी चैवाथ संवादी अनुवादी विवाद्यपि ।।"

तत्र यो यदाश स तस्य वादी, ययोश्च नवकत्रयोदश श्रुत्यन्तरे तावन्योन्य संवादिनौ। यथा षड्ज मध्यमौ, षड्जपञ्चमौ, ऋषभधैवतौ, गान्धारनिषादौ इति षड्जग्रामे। मध्यमग्रामेऽप्येवमेव षड्जपञ्चमवर्जं पञ्चमऋषभयोश्चात्र संवाद ।

कुछ रागो में हम देखते है कि सवादी न होनेवाले स्वर भी 'गमक' और 'स्वर-गुम्फन' नामक क्रिया से सवादी होकर रक्तिजनक होते है। एक स्वर, उसके आगे या पीछे होनेवाला स्वर इन दोनो को एक के बाद दूसरे को वेग से बार-बार उच्चारण करने से 'गमक' होता है। वेग के अनुसार गमको को अनेक नाम दिये गये है। स्वर का उच्चारण करते समय उसके आगे या पीछे के स्वर की छाया को भी मिलाकर उच्चारण करने को 'स्वरगुम्फन' कहते है। इसलिए यह सिद्ध होता है कि सगीत मे स्वर-विवेचन का काम बडा कठिन है। कई जगहो मे असाध्य भी है।

अत्र श्लोक :

'सवादो मध्यमग्रामे पञ्चमस्यर्षभस्य च।
षड्जग्रामे च षड्जस्य संवाद. पञ्चमस्य च ॥
विवादिनस्तु ये तेषा द्विश्रुति स्वरमन्तरम्'

यथा ऋषभ, गान्धारौधैवत-निषादौ। एव वादि-सवादि-विवादिषु स्थापितेषु शेषा अनुवादिसज्ञका।

"षड्जश्चतु श्रुतिर्ज्ञेय ऋषभस्त्रिश्रुतिः स्मृत ।
द्विश्रुतिश्चापि गान्धारो मध्यमश्च चतु श्रुति. ॥
चतु श्रुति. पञ्चम स्यात् त्रि श्रुतिर्धैवतस्तथा।
द्विश्रुतिस्तु निषाद स्यात् षड्जग्रामे भवन्ति हि ॥
चतु श्रुतिस्तु विज्ञेयो मध्यम पञ्चम पुन ।
त्रिश्रुतिर्धैवस्तु स्याच्चतु श्रुतिक एव च ॥
निषादषड्जौ विज्ञेयौ द्विचतु श्रुतिसभवौ।
ऋषभस्त्रिश्रुतिश्च स्यात् गान्धारो द्विश्रुतिस्तथा ॥"

—अध्याय २४ श्लोक १९-२६।

इसका तात्पर्य यह है कि स्वर सात है—षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत और निषाद।

स्वर चतुर्विध है, वादी, सवादी, अनुवादी और विवादी। किसी गाने में प्रधान स्वर वादी है। उससे ९ या १३ श्रुतियो के अन्तर पर रहनेवाला स्वर सवादी है। उदाहरणार्थ 'स' और 'म', 'स' और 'प', 'री' और 'ध', 'ग' और 'नि' परस्पर वादी सवादी है। षड्जग्राम में वादी सवादी का सम्बन्ध ऐसा है। इस तरह मध्यम ग्राम में 'री' और 'प' वादी सवादी है, 'स' और 'प' नहीं। अन्य स्वरो का सवाद षड्जग्राम के अनुसार

सामगान से सगीत की उत्पत्ति

'नारदीय शिक्षा' में सामवेद का और लौकिक सगीत के स्वरो का सम्बन्ध ऐसा बताया गया है कि सामवेद के सप्तस्वर अर्थात् क्रुष्ट, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ,

ही है। उद्धृत श्लोक का अनुवाद यह है—"मध्यम ग्राम में ऋषभ और पञ्चम वादी सवादी है।" दो स्वर परस्पर विवादी है जिनमें दो श्रुतियो का अन्तर है। उदाहरणार्थ ऋषभ और गान्धार, धैवत और निषाद। सवादी विवादियो का निर्धारण करने से यह निश्चित होता है कि बाकी स्वर परस्पर अनुवादी है।

षड्जग्राम में षड्ज की चार श्रुतियां है। ऋषभ की तीन, गान्धार की दो, मध्यम की चार, पञ्चम की चार, धैवत की तीन और निषाद की दो, मध्यमग्राम में षड्ज की चार, ऋषभ की तीन, गान्धार की दो, मध्यम की चार, पञ्चम की तीन, धैवत की चार, और निषाद की दो श्रुतियां है।

इन श्लोको से प्राचीन ग्रन्थो के प्रकृति या शुद्धस्वर का अर्थात् षड्जग्राम स्वर का स्वरूप निश्चित हो सकता है। पहले मध्यम और पञ्चम के बारे में संदेह नहीं है। अब ऋषभ का स्वरूप निश्चय करना है। कहा गया है कि (श्लोक २१) ऋषभ और पञ्चम, मध्यमग्राम में वादी सवादी है। मध्यमग्राम का पञ्चम, षड्जग्राम के पञ्चम से एक श्रुति नीचे का है। उसका प्रमाण 'नाट्यशास्त्र' में है यथा—

"मध्यम ग्रामेतु श्रुत्यपकृष्ट' पञ्चम. कार्यः—मध्यम ग्राम में पञ्चम को एक श्रुति नीचे करना है"—२२वें श्लोक के बाद का गद्य भाग।

यह त्रिश्रुति पञ्चम, मामूली पञ्चम से एक श्रुति कम है। उसका नाम कर्नाटक पद्धति में प्रतिमध्यम है और हिन्दुस्थानी पद्धति में तीव्रमध्यम। यह मध्यमग्राम-पचम ही ऋषभ का सवादी बताया गया है। कर्नाटक पद्धति में 'पूर्वी कल्याण' में शुद्ध ऋषभ और प्रतिमध्यम का परस्पर सवादित्व है। इसी तरह हिन्दुस्थानी पद्धति में भी उसी राग में कोमल ऋषभ और तीव्र मध्यम का सवादित्व है। हिन्दुस्थानी पद्धति का शुद्ध ऋषभ तीव्र मध्यम का संवादी नहीं हो सकता। पञ्चम या शुद्ध धैवत का ही संवादी है। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन ग्रन्थो में बताया हुआ प्रकृति या शुद्ध ऋषभ हिन्दुस्थानी पद्धति का कोमल ऋषभ अर्थात् कर्नाटक पद्धति का शुद्ध ऋषभ ही है। इससे यह निश्चित होता है कि कर्नाटक पद्धति में शुद्ध ऋषभ का नामकरण ठीक है। इसी तरह शुद्ध ऋषभ का संवादी शुद्ध धैवत भी कर्नाटक पद्धति में ठीक है। गान्धार का अब विचार करना है। कहा गया है कि गान्धार, ऋषभ का विवादी (श्लोक २२ के बाद का गद्य भाग) है। इस कारण शुद्ध ऋषभ और शुद्ध गान्धार का प्रयोग साथ-

मन्द्र और अतिस्वार्य क्रमश लौकिक स्वरो में ये 'म ग रि स नि ध प' के समान है।[1] पर सामगान करते समय उन स्वरो का स्वरस्थान हिन्दुस्थानी पद्धति के काफी थाट अर्थात् कर्नाटक पद्धति के खरहरप्रिया मेल का 'ग रि स नि ध प म' के समान दिखाई देता है। इनका समन्वय करना आवश्यक है।

पहले हमें याद रखना चाहिए कि काफी *थाट या खरहरप्रिया* मेल विकृत स्वरो से वनाया हुआ है, क्योकि उसके ऋषभ, गान्धार, धैवत और निषाद ये चार स्वर प्रकृति स्वरो से ऊँचे हैं। अर्थात् प्रकृति ऋषभ सातवी श्रुति पर है, परन्तु इस थाट का ऋषभ ८ वी श्रुति पर है। प्रकृति गान्धार ९ वी श्रुति पर है, इस थाट या मेल का गान्धार १० वी श्रुति पर है। प्रकृति धैवत २० वी श्रुति पर है, परन्तु इस थाट का धैवत २१ वी श्रुति पर है। प्राचीन काल में काकली और अन्तर—ये दो विकृत स्वर ही प्राचीन ग्रन्थो में वताये गये हैं।

साथ नहीं हो सकता। पर हिन्दुस्थानी पद्धति में शुद्ध गान्धार कोमल ऋषभ के साथ वहुत से रागो में आता है। अत प्राचीन ग्रन्थो का शुद्ध गान्धार हिन्दुस्थानी पद्धति का शुद्ध गान्धार नहीं हो सकता। कर्नाटक पद्धति के शुद्ध गान्धार का स्थान चतु श्रुति ऋषभ के ऊपर और साधारण गान्धार के नीचे है। अर्थात् हिन्दुस्थानी पद्धति के शुद्ध ऋषभ के ऊपर और कोमल गान्धार के नीचे है। उसका नाम कोमलतर गान्धार है। इस गान्धार के साथ कोमल ऋषभ का प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति में नहीं है। कारण, दोनो परस्पर विवादी है। इस कारण कर्नाटक पद्धति में भी शुद्ध ऋषभ और शुद्ध गान्धार का प्रयोग साथ-साथ नहीं हो रहा है। इसलिए कर्नाटक पद्धति में ही शुद्ध गान्धार का नामकरण ठीक है। शुद्ध गान्धार के सवादी शुद्ध निषाद का नामकरण भी कर्नाटक पद्धति में ठीक है। कर्नाटक पद्धति में जो स्वर शुद्धस्वर कहे जाते है वे ही प्राचीन काल के शुद्धस्वर है। परन्तु यह हमें मालूम नहीं होता कि हिन्दुस्थानी पद्धति में कव और किस कारण से शुद्धस्वरो के नाम बदल गये है। केवल यह वताया जा सकता है कि यह नवीन नामकरण १७, १८वीं शताब्दी तक नहीं हुआ था।

१. य सामगाना प्रथम. स वेणोर्मध्यम स्वर । यो द्वितीय स गान्धार । तृतीय स्त्वृषभ स्मृत । चतुर्थ. षड्ज इत्याहु पञ्चमो धैवतो भवेत्। षष्ठो निषादो वक्तव्यः सप्तम पञ्चम स्मृत । नारदीय शिक्षा प्रथमप्रकरणे, खण्डिका ५, श्लो० १—२। इन श्लोको में धैवत और निषाद स्थान विवर्तित है।

दूसरी बात यह है कि सामगान करते समय हमें खरहरप्रिया मेल या काफी ठाट की याद नहीं आती है। परन्तु हिन्दुस्थानी पद्धति के 'पीलू' और कर्नाटक पद्धति के

प्रकृतिस्वर की श्रुतियाँ		सामगान में अवरोह रूप में रहते समय उनके रूप	बैठने के स्थान	काफी या खरहरप्रिया के स्वरों की		
				श्रुतियाँ		बैठने के स्थान
म	१०	१३				
	११	१२			८	
	१२	११			९	
	१३	१०	१०	ग	१०	१०
			—		५	—
					६	
ग	८	९			७	
	९	८	८	रि	८	८
रि	५	७	—		१	—
					२	
	६	६			३	
	७	५	५	म	४	४
स	१	४	—			-
	२	३			२१	
	३	२			२२	
	४	१	१	नि	१	१
			—		१८	—
					१९	
नि	२१	२२			२०	
	२२	२१	२१	ध	२१	२१
			—		१४	—
ध	१८	२०			१५	
	१९	१९			१६	
	२०	१८	१८	प	१७	१७
प	१४	१७	—		१०	—
	१५	१६			११	
	१६	१५			१२	
	१७	१४	१४	म	१३	१३
			—			—

'रीतिगौड' रागो की याद थोडी आती है। इन दोनो रागो के पकड गान्धार से शुरू होकर षड्ज में खतम होते हैं। इस पकड में रक्ति के रहने के कारण आदि और अन्त के स्वर का परस्पर सवादी होना आवश्यक है, परन्तु षड्ज का सवादी गान्धार नही, मध्यम है। इसलिए यह निश्चय होता है कि इन रागो का गान्धार मध्यम को छूकर आता है। क्योकि षड्ज का स्वरस्थान चौथी श्रुति है। इस ठाट के गान्धार का स्वर-स्थान १० वी श्रुति है। मध्यम का स्वरस्थान १३ वी श्रुति है। सवादित्व होने के लिए नौ श्रुतियो का अन्तर रहना चाहिए। इसलिए ऐसा दिखाई पडता है कि यह गान्धार १३ वी श्रुति से आरम्भ होकर अवरोह करता हुआ दसवी श्रुति पर समाप्त होता है। इससे हमें एक विषय की स्फूर्ति होती है कि मध्यम की चार श्रुतियाँ १३, १२, ११, १० इन चारो को अवरोह क्रम मे उच्चारण करे, तो इन रागो की गान्धार के समान ध्वनि सुनाई पडती है। अत मध्यम का अवरोह रूप सामगान के प्रथमस्वर का रूप ले लेता है। इसी तरह अन्य प्रकृति स्वरो को भी अर्थात् ग, रि, स, नि, ध, प को अवरोह रूप में गाते हैं, तो उनके स्वरस्थान काफी थाट या खरहरप्रिया मेल के रि, स, नि, ध, प, म स्वरो के स्थानो मे प्राय बैठ जाते हैं। अत हम इस सिद्धान्त पर पहुँच सकते हैं कि सामगान के स्वरो का उनकी श्रुतियो पर अवरोहात्मक रूप में उच्चारण किया जाता है, परन्तु लौकिक स्वर अपनी श्रुतियो के आरोहात्मक रूप मार्ग में उच्चरित होते हैं और 'नारदीय शिक्षा' के सामगान स्वरो और लौकिक स्वरो के सम्बन्ध की व्यवस्था ठीक निकलती है।

सामगान स्वरो के उच्चारण की अवरोहात्मक गति सामगान करते समय और ध्यानपूर्वक सुनने पर स्पष्ट दिखाई पडेगी।

इससे यह स्पष्ट होता है कि सामगान में प्रकृति स्वरो का ही प्रयोग किया जाता है, परन्तु हरएक स्वर का उच्चारण मार्ग श्रुतियो के अवरोह क्रम में है।

हमारे लौकिक सगीत में ये ही स्वर अपनी श्रुतियो के आरोह क्रम में उच्चरित किये जाते हैं।

तीसरा परिच्छेद

वर्णालंकार और गमक

स्वरों में रञ्जन की उत्पत्ति का साधन

हरएक स्वर स्वतन्त्र रूप से भी रञ्जक होना चाहिए अन्यथा इनका नामकरण 'स्वर' हो ही नहीं सकता। रञ्जन के लिए अनुरणन, प्रसन्नता और दीप्ति का प्रयोग आवश्यक है। 'दीप्ति' का अर्थ है गभीरता और 'प्रसन्नता' का अर्थ है शान्त होना। इन दोनों के साथ-साथ प्रयोग करने की रीति में सात भेद हैं। उनके नाम भी शास्त्रों में दिये गये हैं।

पहली रीति में स्वर का उच्चारण प्रसन्नता से शुरू होकर क्रम से गभीर होता है। इसका प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति में राग 'बिहाग' में है। इस राग में हरएक स्वर शान्त भाव से शुरू होने के पश्चात् क्रमशः गभीर होकर पुनः शान्त भाव को प्राप्त न करके इसी गभीरता में स्थिर रहता है। यही रीति कर्नाटक पद्धति में 'भैरवी' और यदुकुल काम्बोजी रागों में पायी जाती है। इसका नाम 'प्रसन्नादि' है।

दूसरी रीति में स्वर का उच्चारण गभीरता के साथ आरम्भ होकर फिर शान्त होता है। इसका प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति में राग 'मालकोस' में है। कर्नाटक पद्धति में कल्याणी राग में है। इस रीति का नाम है 'प्रसन्नान्त'।

तीसरी रीति में स्वरों का उच्चारण गभीरता से शुरू कर शान्त अवस्था को प्राप्त होना और पुनः गभीरता में ही स्थिर रहता है। इसका नाम है 'प्रसन्न मध्यम'। इसका प्रयोग कर्नाटक पद्धति में शंकराभरण और तोडी रागों में और हिन्दुस्थानी पद्धति के राग सिन्धुभैरवी में है।

चौथी रीति में स्वरों का उच्चारण प्रसन्नता से आरम्भ होकर गभीर होता हुआ अन्त में प्रसन्नता को प्राप्त कर लेता है। इसका प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति में राग 'नाट' और कर्नाटक पद्धति में 'काम्बोजी' राग में है। इस रीति का नाम है 'प्रसन्नाद्यन्त'।

पाँचवीं रीति में स्वर का विस्तार होता है। इसका नाम है 'प्रस्तार'। हिन्दुस्तानी पद्धति में राग गौड सारंग के आरोहण में इसका प्रयोग होता है। कर्नाटक पद्धति में श्रीराग के आरोहण में भी इसका प्रयोग दिखाई पड़ता है।

छठी रीति में स्वर केवल शान्त हो जाते है। इसका नाम है **'प्रसाद'**। प्रस्तार और प्रसाद दोनो रीतियाँ प्राय एक ही राग में आती हैं। आरोहण में प्रस्तार और अवरोहण में प्रसाद का प्रयोग होता है। प्रसाद रीति का प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति के राग गौड सारङ्ग मे और कर्नाटक पद्धति के श्रीराग के अवरोहण में किया जा रहा है।

सातवी रीति में चार-पाँच स्वरो के द्वारा वेग से आरोह या अवरोह करना पडता है। इसका नाम **'क्रमविरेचित'** है। यह रीति 'यमनकल्याण' के अवरोह में और कर्नाटक पद्धति के सहाना राग के आरोहण में मिलती है।

इन सातो प्रकारो में प्रत्येक राग की एक ही रीति का प्रयोग सब स्वरो में करना चाहिए। पर स्थायी स्वर में ही रीति का स्वरूप स्पष्ट दीख पडता है। इसीलिए इन रीतियो को 'स्थायी स्वर अलकार' कहते है। गानक्रिया में एक स्वर में स्थिर रहने को 'स्थायी वर्ण' कहते हैं। 'वर्ण' गानक्रिया का साधारण नाम है। स्थायी के अलावा, आरोही वर्ण, अवरोही वर्ण और सचारी वर्ण भी गानक्रिया में हैं। आरोही, अवरोही, सचारी वर्णों में भी अनेक प्रकार के अलकार हैं।

प्रारम्भिक शिक्षा में ही इन सब अलकारो का अभ्यास कराना चाहिए। इनमें अनेक अलकार अब भी प्रारम्भिक शिक्षाभ्यास में वर्तमान है। जो अलकार आज के अभ्यास मे नही हैं, उन्हें भी शिक्षाभ्यास मे सम्मिलित कर लेना चाहिए। स्थायी स्वर अलकारो का इस तरह अभ्यास करना चाहिए कि जिस स्थायी स्वर अलकार का जिस राग में प्रयोग किया जा रहा हो, उस राग के सचार से उस अलकार का विलव, मध्य और द्रुत—इन तीनो कालो मे अभ्यास हो जाय। और प्रत्येक राग में प्रयुक्त गीत, वर्ण और चीज़ो का उस राग के विशिष्ट स्थायी स्वर अलकार के साथ तीनो कालों में अभ्यास हो जाय।

आरोही, अवरोही और सचारी वर्णों के अलकार नाटयशास्त्र और सगीत रत्नाकर में दिये गये है। आरोही वर्ण में १३ अलकार, अवरोही में ५ और सचारी में १४ अलकार नाटयशास्त्र में बताये गये हैं, परन्तु सगीत रत्नाकर में आरोही में १२, अवरोही में १२ और सचारी में २५ अलकार दिये गये है। इनके अलावा सात प्रसिद्ध अलकारो के नाम भी दिये गये हैं। इन सब अलकारो का वर्णन मात्र नाटयशास्त्र में है। सगीत रत्नाकर में उनके उदाहरण भी हैं। आजकल विना उनके नाम के प्रारम्भिक शिक्षा में उनका अभ्यास किया जा रहा है। कर्नाटक पद्धति में 'सरली वरिस', 'जण्ट वरिस', 'दाट्टु वरिस', सप्तालकार कहलाते हैं। हिन्दुस्थानी पद्धति में सरगम, मीड, मुरकी, खटका, तान, वोलतान कहते है।

आरोही वर्ण के अलंकार

१. विस्तीर्ण—सा री गा मा पा धा नी
२. निष्कर्ष—सस - रिरि - गग - मम - पप - धध - निनि,
गात्रवर्ण—ससस - रिरिरि - गगग - ममम - पपप - धधध - निनिनि,
ससस - रिरिरिरि - गगगग - मममम - पपपप - धधधध - निनिनिनि।
३. बिन्दु—सा,रि' – गा,म – पा,ध – नी,स – स,रि।
४. अभ्युच्चय—सगपनिरि।
५. हसित—सा – रीरी – गागागा – मामामामा – पापापापापा – धा धा धा-
धा धा धा – नीनीनीनीनीनीनी – सासासासासासासासा।
६. प्रेंखित—सरी – रिगा – गमा – मपा – पधा – धनी – निसा।
७. आक्षिप्त—सगा – गपा – पनी – निरी।
८. सन्धिप्रच्छादन—सरिगा – गमपा – पधनी – निसगी।
९. उद्गीत—ससससरिगा – मममपधा – निनिनिनिसरी।
१०. उद्वाहित—सरिरिरिगा – मपपपधा – निससमरी।
११. त्रिवर्ण—सरिगगगा – मपधधधा – निसरिरिरी।
१२. पृथग्वेणु—सरिग सरिग सरिग – रिगम रिगम रिगम – मपध मपध मपध
पधनि पधनि पधनि – धनिस धनिस धनिस।
इन्ही नाम के और इसी क्रम में १२ अवरोही अलंकार हैं।

सञ्चारी वर्ण के अलंकार

१. मन्द्रादि—सगरी – रिमगा – गपमा – मधपा – पनिधा – धसनी – निरिसा –
सधनी – निपधा – धमपा – पगमा – मरिगा – गसरी – रिनिसा।
२. मन्द्रमध्य—गसरी – मरिगा – पगमा – धमपा – निपधा – सधनी –
रिनिसा – सगरी – निरिगा – धसनी – पनिधा – मधपा – गपमा –
रिमगा – सगरी।
३. मन्द्रान्त—रिगसा – गमरी – मपगा – पधमा – धनिपा – निसधा – सरिनी –
सनिरी – निधसा – धपनी – पमधा – मगपा – गरिमा – रिसगा।
४. प्रस्तार—सगा – रिमा – गपा – मधा – पनी – धसा – नधा – निमा –
धमा – पगा – मरी – गसा।

१. इसमें 'सा' 'प्लुत' या त्रिमात्रिक है।

५ प्रसाद—सरिसा – रिगरी – गमगा – मपमा – पधपा – धनिधा – निसनी – सरिसा – सनिसा – निधनी – धपधा – पमपा – मगमा – गरिगा – रिसरी – सनिसा।

६ व्यावृत्त—सगरिमासा – रिमगपारी – गपमधागा – मधपनीमा – पनिधसापा – धसनिरीधा – निरिसगानी – सगरिमासा – सधनिपासा – निपधपानी – धमपगाधा – पगमरीपा – मरिगसामा – गसरिनीगा – रिनिसधारी – सधनिपासा।

७ स्कलित—सगरिममरिगसा – रिमगपपगमरी – गपमधधमपगा – मधपनिनिपधमा – पनिधससधनिपा – धसनिरिरिनिसधा – निरिसगगसरिनी – सधनिपपनिधसा – निपधममधपनी – धमपगगपमध – पगमरिरिमगपा – मरिगससगरिमा – गसरिनिनिरिसगा।

८ परिवर्तक—सगम – रिमपा – गपधा – मधनी – पनिसा – सनिपा – निधमा – धपगा – पमरी – मगसा।

९ आक्षेप—सरिगा – रिगमा – मपधा – पधनी – धनिसा – सनिधा – निधपा – धपमा – पमगा – मगरी – गरिसा।

१० बिन्दु – सा, रिसा – री, गरी – गा, मगा – मा, पमा – धा, निधा – नी, सनी – सा, रिसा – नी, धनी – धा, पधा – पा, मपा – गा, मगा – री, सरी – सा, निसा।

११ उद्वाहित—सरिगरी – रिगमगा – गमपमा – मपधपा – पधनिधा – धनिसनी – निसरिसा – सनिधनी – निधपधा – धपमपा – पमगमा – मगरिगा – गरिसरी – रिसनिसा।

१२ ऊर्मि—मासमा – पारिपा – धागधा – नीमनी – सापसा – पासपा – मानिमा – गाधगा – रीपरी – सामसा।

१३ सम—सरिगममगरिसा – रिगमपपमगरी – गमपधधपमगा – मपधनिनिधपमा – पधनिससनिधपा – सनिधपपधनिसा – निधपममपधनी – धपमगगमपधा – पमगरिरिगमपा – मगरिससरिगमा।

१४ प्रेंख—सरीरिसा – रिगागरी – गमामगा – मपापमा – पधाधपा – धनीनिधा – निसासनी – सनीनिसा – निधाधनी – धपापधा – पमामपा – मगागरी – गरीरिगा – रिसासरी – सनीनिसा।

१५ निष्कूजित—सरिसागसा – रिगरीमरी – गमगापगा – मपमाधमा – पधपा-

निधा – धनिधासनी – निसनीरिसा – सनिसाधनी – निधनीपधा – धपधामपा – पमपागमा – मगमारिगा – रिसरीनिसा।

१६ श्येन—सपा – रिधा – गनी – पसा – सपा – निगा – धरी – पसा।

१७ क्रम—सरिसरिगसरिगमा – रिगरिगमरिगमपा – गमगमपगमपधा – मपमपधमपधनी – पधपधनिपधनिसा – सनिसनिधसनिधप – निधनिधपनिधपम – धपधपमधपमगा – पमपमगपमगरी – मगमगरिमगरिसा।

१८ उद्वहित—सरिपमगरी – रिगधपमगा – गमनिधपमा – मपसनिधपा – पधरिसनिधा – धनिगरिसनी – निसमगरिसा–सनिमपधनी – निधगमपधा –धमरिगमपा – पमसरिगमा – मगनिसरिगा – गरिधनिसरी – रिसपधनिसा।

१९ रञ्जित—सगरिसगरिसा – रिमगरिमगरी – गपमगपमधा – मधपमधपमा–पनिधपनिधपा – धसनिधसनिधा – निरिसनिरिसनी – सगरिसगरिसा – सधनिसधनिसा – निपधनिपधनी – धमपधमपधा–पगमपगमपा – मरिगमरिगमा – गसरिगसरिगा – रिनिसरिनिसरी – सधनिसधनिसा।

२० सन्निवृत्त प्रवृत्तक—सपामगरी – रिधापमगा – गनीधपमा – मसानिधपा–परीसनिधा – धगारिसनी – निमागरिसा – समापधनी – निगामपधा–धरीगमपा – पसारिगमा – मनीसरिगा – गधानिसरी – रिपाधनिसा।

२१ वेणु—सासरिमागा – रीरिगपामा – गागमधापा – मामपनीधा – पापधसानी – धावनिरीसा – सासनिपाधा – नीनिधमापा – धाधपगामा – पापमरीगा – मामगसारी – गागरिनीसा।

२२ ललितस्वर—सरिमरिसा – रिगपगरी – गमधमगा – मपनिपमा – पधसधपा – धनिरिनिधा – निसगसनी – सरिमरिसा – सनिपनिसा – निधमधनी – धपगपधा – पमरिमपा – मगसगमा – गरिनिरिगा – रिसधसरी – सनिपनिसा।

२३ हुँकार—सरिस – सरिगरिस – सरिगमगरिस – सरिगमपमगरिस – सरिगमपधपमगरिस – सरिगमपधनिधपमगरिस – सरिगमपधनिसनिधपमगरिस – सनिस – सनिधनिस – सनिधपधनिस– सनिधपमगमपधनिस – सनिधपमगरिगमपधनिस – सनिधपमगरिसरिगमपधनिस।

२४ ह्लादमान—सगरिसा – रिमगरी – गपमगा – मधपमा – पनिधपा – धसनिधा – निरिसनी – सगरिसा – सधनिसा – निपधनी – धमपधा – पगमपा – मरिगमा – गसरिगा – रिनिसरी – सधनिसा।

२५ अवलोकित—सगमामरिसा – रिमपापगरी – गमधाधमगा – मधनीनिपमा– सधपापनिसा –निपमामधनी–धमगागपधा – पगरीरिमपा–मरिसासगमा।

गमक

एक स्वर में रञ्जन के साथ कम्पन देने को गमक कहते हैं। एक स्वर के ऊपर या नीचे होनेवाले स्वर को भी मिलाकर ऊपर और नीचे वेग से उच्चारण करने से ही 'गमक' उत्पन्न होता है। गमको के पन्द्रह भेद हैं—

(१) तिरिप (२) स्फुरित (३) कम्पित (४) लीन (५) आन्दोलित (६) वलि (७) त्रिभिन्न (८) कुरुल (९) आहत (१०) उल्लासित (११) प्लावित (१२) गुम्फित (१३) मुद्रित (१४) नामित (१५) मिश्रित।

१ तिरिप—एक ह्रस्वाक्षर के १/८ मात्रा काल के वेग से होनेवाले कम्पन का नाम 'तिरिप' है।

२ स्फुरित—एक ह्रस्वाक्षर के १/६ मात्रा काल के वेग से किये जानेवाले कम्पन का नाम 'स्फुरित' है।

३ कम्पित—एक ह्रस्वाक्षर के १/४ मात्रा काल के वेग से कम्पन किया जाय तो वह 'कम्पित' कहा जाता है।

४. लीन—एक ह्रस्वाक्षर के १/२ मात्रा काल के वेग से कम्पन किया जाय तो वह "लीन' है।

५ आन्दोलित—एक ह्रस्वाक्षर काल के अर्थात् एक मात्रा के वेग से कम्पन करने को 'आन्दोलित' कहते हैं।

६ वलि—वेग से कम्पन करते समय थोडे वक्रत्व के साथ कम्पन करने को 'वलि' कहते हैं।

७ त्रिभिन्न—तीनो स्थानो में वेग से सचार करने का नाम 'त्रिभिन्न' है।

८ कुरुल—'वलि' में ही स्वरो को घनता के साथ उच्चारण करने को 'कुरुल' कहते हैं।

९ आहत—सचार करते समय आगे के स्वर पर आघात करके लौटने को 'आहत' कहते हैं।

१० उल्लासित—सचार मे एक स्वर को पार करके जाने को 'उल्लासित' नाम दिया गया है।

११ प्लावित—तीन ह्रस्वाक्षर काल के वेग से कम्पन करने को 'प्लावित' नाम दिया गया है।

१२ गुंफित—हुँकार और गभीरता के साथ कम्पन करने का नाम गुम्फित है।

१३ मुद्रित—मुँह बन्द करके कम्पन करने को 'मुद्रित' कहते हैं।

१४ नामित—स्वरों का नमन करके कम्पन करना 'नामित' है।

१५ मिश्रित—ऊपर बताये हुए गमकों में दो या अधिक गमकों को मिश्रित करके प्रयोग करने को 'मिश्रित' कहते हैं।

चौथा परिच्छेद

मूर्च्छना और क्रम

भारतीय सगीत का विशिष्ट स्वरूप है 'राग'। रागो के स्वरूप और रागो के पारस्परिक भेद को हमारे देश के समस्त सगीत-सप्रदायज्ञ और रसिकजन अनुभव से जानते हैं। परन्तु यदि एक विदेशी पूछे कि 'राग क्या है?' तो उसे समझाने के लिए आजकल के लक्षण पर्याप्त नही हैं।

आज रागलक्षण के नाम से प्रचलित लक्षण केवल हरएक राग में प्रयोज्य स्वरो के कोमल और तीव्र रूप एव वक्र वर्ज्यभाव ही हैं। उत्तर भारत में वादी-सवादी रूप में एक लक्षण और भी है। परन्तु रागच्छाया देनेवाले दूसरे लक्षणो को भूले हमें बहुत दिन हो गये। केवल सम्प्रदाय के कारण रागो का जीवन और छाया सुरक्षित है। रागच्छाया के निश्चित लक्षणो को प्राचीन ग्रन्थो से ढूंढ़ निकालना हमारा आवश्यक कर्तव्य है।

प्राचीन ग्रन्थो में राग का स्वरूप इस प्रकार वर्णित किया गया है कि श्रुति से स्वर, स्वरो से ग्राम, ग्राम से मूर्च्छना, मूर्च्छना से जाति और जाति से रागो की उत्पत्ति होती है। श्रुति, स्वर, ग्राम—इन तीनो का स्वरूप पहले ही बताया जा चुका है। अब मूर्च्छना पर विचार किया जाय।

मूर्च्छना का स्वरूप

एक स्वर से आरम्भ करके क्रमश सातवें स्वर तक आरोह करने के पश्चात् उसी मार्ग से अवरोह करने को मूर्च्छना कहते हैं। हरएक ग्राम में हरएक स्वर से शुरू करने पर सात मूर्च्छनाएँ उत्पन्न हो सकती हैं। मूर्च्छना रागच्छाया का आधार है। यह कैसे हो सकता है?

कहा गया है कि राग का स्वरूप 'रञ्जक स्वर-सन्दर्भ' है। वैसे तो हरएक स्वर अलग रहते समय भी रञ्जक होता है, परन्तु राग में स्वरसमूह के प्रयोग से और भी रञ्जन की उत्पत्ति होती है। हरएक स्वर एक रसभाव का पोपक है। उस स्वर को उसके सवादी के साथ एक स्वरसमूह में प्रयोग करने से उस रसभाव का प्रकाशन

और रञ्जन शक्ति और भी ज्यादा होती है। एक ही रसभाव देनेवाले अनेक पकडों को कल्पना के साथ गाते जाना 'राग' है।

हरएक पकड में आरम्भिक स्वर का प्राधान्य अधिक है। उसके सवादी तक आरोहण करने से रसभाव-पूर्ण एक पकड हमे मिल जाता है। दूसरे स्वर से शुरू करें तो उस पकड से दूसरा रसभाव ही मिलता है। राग की प्राप्ति के लिए हमे एक ही प्रकार का रसभाव देनेवाले बहुत पकडो की उत्पत्ति चाहिए। पर अब हमें एक ही पकड मिला हुआ है। तार और मन्द्र स्थानो में अगर इसी स्वर से शुरू करके उसके सवादी तक आरोहण करें तो और दो पकडो की प्राप्ति होती है। इस तत्व को लेकर इसी तरह बहुत से पकडो को उत्पन्न करने का एक उपाय किया जाय तो उसका नाम मूर्च्छना है।

एक स्वर से आरम्भ करके उसके सवादी तक आरोहण करने से एक रसभाव की पूर्ति होने के कारण, उसके ऊपर लगातार सचार करें तो भी आदि में उत्पन्न रसभाव की हानि नही होती। प्राय एक स्वर का सवादी उसका चौथा या पाँचवाँ स्वर ही रहता है। उस चौथे या पाँचवें स्वर के आगे भी सचार करके जायँ तो रसभाव का भग नही होता। पर इसे याद रखना आवश्यक है कि आरम्भिक स्वर का आठवाँ स्वर तारस्थान में वही स्वर है और उससे शुरू कर सवादी तक आरोहण करने से हमें काम आनेवाला राग का दूसरा पकड मिलता है। अगर आठवें स्वर में शुरू करना है तो सातवें स्वर पर रुकना चाहिए। अन्यथा सचार लगातार होने के कारण आठवें स्वर से आरम्भ हमें प्राप्त नही होता। इसलिए चौथे या पाँचवें स्वर के आगे सचार करते समय सातवें स्वर तक आरोहण करने पर रुक जाना पडता है। अगर और सचार करना है तो अवरोह ही करना चाहिए। अवरोह करते समय भी आरम्भ स्वर तक अवरोहण करके रुक जाना चाहिए। इस प्रकार एक स्वर से शुरू करके उसके सातवें स्वर तक आरोह करने के पश्चात् पुन· आरम्भ स्वर तक अवरोहण करने से एक चक्राकार संचार मिलता है। उस चक्र में सचार करते है तो एक ही रसभाव प्राप्त होता है।

हरएक राग का अपना निजी मूर्च्छना-चक्र है। इसे ढूंढने का एक सरल मार्ग है। राग में सचार करते समय, (1) एक स्वर तक पहुँचने के पश्चात् उसके आगे न जाकर उसी स्वर में कुछ देर स्थिर रहना और तत्पश्चात् ही ऊपर जाना पड़ता है। (11) या उस स्वर तक पहुँचने के बाद तत्काल लौटना पड़ता है। (111) या उस स्वर को छोड़कर जाना पडता है। इन तीनो में किसी एक प्रकार में सचार रुक जाय तो यह निश्चित होता है कि वही स्वर उस राग की मूर्च्छना का आरम्भक स्वर

है। इसी प्रकार अवरोहण के द्वारा भी निश्चय कर सकते हैं। जैसे कर्नाटक पद्धति के नाट राग मे गान्धार से ऋषभ तक आरोहात्मक सचार ('गपधनिसरि') निर्विघ्न किया जाता है। ऋषभ तक पहुँचकर लौटना पडता है। अगर उसके आगे जाना चाहें, तो ऋषभ के बाद के स्वर गान्धार का लघन करके 'रिमा' या 'सगा'—ऐसा सचार करना पडता है। 'रिगा' या 'गरी'—ऐसा सचार नही किया जाता। अवरोहण मे भी मूर्च्छना के अन्तिम स्वर गान्धार के नीचे जाना चाहे तो 'गसा' या 'मरी'—ऐसा सचार करना चाहिए। 'गरी', 'रिगा'—ऐसा सचार नही किया जाता।

इसी तरह हिन्दुस्थानी पद्धति के माड राग में मूर्च्छना का आरम्भ गान्धार से होकर ऋषभ तक समाप्ति होती है, तत्पश्चात् गान्धार तक अवरोह होता है। ऋषभ के ऊपर इस राग में भी 'रिगा, गरी'—ऐसा सचार नही है। ऋषभ के ऊपर जाना चाहे, तो ऋषभ पर ठहरकर पुन आगे जाना पडता है। और ऋषभ को पार कर 'सगा'—ऐसा आरोह करना पडता है। उसी प्रकार गान्धार के नीचे जाना चाहें तो गान्धार पर ठहरकर सचार करना पडता है या 'रि' का लघन करके नीचे 'गसा'—ऐसा सचार कर सकते हैं।

रागो की सीमाएँ और आधार, मूर्च्छना और न्यासस्वर

राग स्वरमय चित्र है। एक चित्र के ऊपर और एक नीचे की सीमा है। उसी तरह एक आधार है। एक ही आधार और सीमाओ में अनेक चित्रो का अकन किया जा सकता है। रागस्वरूप की सीमाएँ ही 'मूर्च्छना' है। क्योकि मूर्च्छनाचक्र के अन्दर ही राग का स्वरूप उत्पन्न होता है।

अब यह विचार किया जाय कि 'आधार' क्या वस्तु है। राग में सचार करते समय यह अनुभव होता है कि कुछ स्वरो पर कुछ देर ठहरे। दूसरे स्वरो पर ठहरने की इच्छा नही होती। हरएक राग में एक ऐसा स्वर है जहाँ जाने पर और आगे, नीचे वढने की इच्छा ही नही होती। रागविस्तार की इच्छा से विवश होकर एक नया प्रस्थान करना पडता है। इस स्वर का नाम 'न्यास' है जहाँ हमे इस तरह स्थिर रहने की इच्छा होती है। न्याम शव्द का अर्थ है (नि—नितराम् = अच्छी तरह + आस = वैठना) अच्छी तरह वैठना। यही न्यासस्वर रागो की वुनियाद है जहाँ अनेक सचार करने के वाद राग समाप्त होते हैं। चित्रो के आधार और सीमाओ में परस्पर निर्धारक सम्बन्ध है। इसी तरह मूर्च्छना और न्यासस्वर का परस्पर निर्धारक सम्बन्व है। न्यासस्वर मूर्च्छना से उत्पन्न हुआ है।

एक ही स्वर में आकर समाप्त होनेवाले वहुत से राग हैं। हमें अनुभव है कि

षड्ज स्वर में आकर वहुत से राग समाप्त होते हैं। अनेक राग एक ही न्यासस्वर के आधार में रहने पर भी भिन्न-भिन्न रसभाव के पोषक रहते हैं। इसका कारण यह है कि हरएक राग एक विशिष्ट रसभाव देनेवाले स्वर को अश रूप में लेता है। अर्थात् वही स्वर उस राग का मुख्य स्वर वन जाता है। उसका नाम अश या वादी है।

न्यासस्वर से मूर्च्छना निर्धारित होती है। जिससे कि एक ही न्यासस्वर के आधार पर रहनेवाले सव राग एक ही मूर्च्छना से उत्पन्न हो जायें।

एक मूर्च्छना एक रसभाव देती है। फिर उसके आधार पर भिन्न-भिन्न रसभाव का पोषण करनेवाले वहुत से रागो की उत्पत्ति कैसे होती है? इस प्रश्न का जवाव देने के लिए ही क्रम सचार है।

क्रमसचार और वादी-सवादी

हरएक मूर्च्छना चक्राकार में है। इस चक्र में किसी भी स्वर से शुरू कर उस चक्र की पूर्ति कर सकते हैं। हमें यह कभी नही भूलना चाहिए कि सगीत मे हरएक पकड या सचार का रसभाव आरम्भ स्वर से निश्चित होता है। इसके कारण एक मूर्च्छना चक्र में हरएक स्वर से शुरू करके चक्र की पूर्ति करने से एक-एक रसभाव उत्पन्न होता है। अर्थात् हरएक सचार में वादी सवादी भिन्न होते है।

हरएक मूर्च्छना हरएक रसभाव का पोषण करती है, और उसमें हरएक स्वर से शुरू करके सचार करते समय भिन्न-भिन्न प्रकार के रसभाव उत्पन्न होते हैं। मूर्च्छना के साथ रसभाव और सचारो के साथ रसभाव का क्या सम्वन्ध है?

काव्य और नाटको में रसनिष्पत्ति के समय मुख्य रस एक होता है और उसमें उपरस दूसरे होते हैं। उदाहरणतया शृङ्गार रस में ही हास्य, करुण, रौद्र इत्यादि रसभाव उत्पन्न होते हैं। उनमें मुख्य रसभाव मूर्च्छना से उत्पन्न होता है। उपरसो की उत्पत्ति क्रमसचारो से होती है। नीचे सात मूर्च्छनाएँ चक्राकार में लिखी गयी हैं। हरएक चक्र में १२ स्थान है जिनसे शुरु कर चक्र-सचार की पूर्ति कर सकते है।

प्रथम मूर्च्छना

स
रि रि
ग ग
म म
प प
ध ध
नि

द्वितीय मूर्च्छना

नि
म स
रि रि
ग ग
म म॑
प प
ध

तृतीय मूर्च्छना

ध
नि नि
स स
रि रि
ग ग
म म
प

चतुर्थ मूर्च्छना

प
ध ध
नि नि
स स
रि रि
ग ग
म

पचम मूर्च्छना

म
प प
ध ध
नि नि
स स
रि रि
ग

षष्ठ मूर्च्छना

ग
म म
प प
ध ध
नि नि
स स
रि

सप्तम मूर्च्छना

रि
ग ग
म म
प प
ध ध
नि नि
स
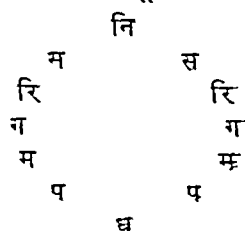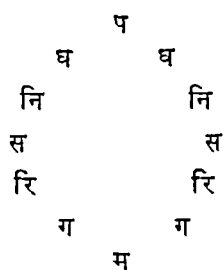
इनमें प्रथम मूर्च्छना मे उत्पन्न होनेवाले क्रमसवार यो है--

१ सरिगमप धनि धपमगरिस
२ रिगमप धनि धपमगरिसरि
३ गमप धनि धपमगरिसरिग

४ मप धनि धपमगरिसरिगम
५ प धनि धपमगरिसरिगमप
६ धनिधपमगरिसरिगमप ध
७ नि धपमगरिसरिगमप धनि
८ धपमगरिसरिगमप धनि ध
९ पमगरिसरिगमप धनि धप
१० मगरिसरिगमप धनि धपम
११ गरिसरिगमप धनि धपमग
१२ रिसरिगम पधनि धपमगरि

द्वितीय मूर्च्छना में उत्पन्न होनेवाले क्रमसचार—

१ निसरिगमप धपमगरिसनि
२ सरिगमप धपमगरिसनिस
३ रिगमप धपमगरिसनिसरि
४ गमप धपमगरिसनिसरिग
५ मप धपमगरिसनिसरिगम
६ प धपमगरिसनिसरिगमप
७ धपमगरिसनिसरिगमप ध
८ पमगरिसनिसरिगमप धप
९ मगरिसनिसरिगमप धपम
१० गरिसनिसरिगमप धपमग
११ रिसनिसरिगमप धपमगरि
१२ सनिसरिगमप धपमगरिस

तृतीय मूर्च्छना के क्रमसचार—

१ धनिसरिगमपमगरिसनि ध
२ निसरिगमपमगरिसनि धनि
३ सरिगमपमगरिसनि धनिस
४ रिगमपमगरिसनि धनिसरि
५ गमपमगरिसनि धनिसरिग
६ मपमगरिसनि धनिसरिगम
७ पमगरिसनि धनिसरिगमप

८ मगरिसनि धनिसरिगमपम
९ गरिसनि धनिसरिगमपमग
१० रिसनि धनिसरिगमपमगरि
११ सनि धनिसरिगमपमगरिस
१२ नि धनिसरिगमपमगरिसनि

इसी तरह चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ और सप्तम मूर्च्छनाओ के क्रमसचारो को लिख सकते है। हरएक क्रमसचार मे पहला स्वर रसनिष्पत्ति का कारण है। य स्वर अशस्वर है। पर इस स्वर का सवादी निकट मे न हो तो यह स्वर अश होने योग्य नही बनता। तब क्रमसचार का अन्तिम स्वर अशस्वर बन जाता है। इ रीति में हरएक क्रमसचार के वादी-सवादी यहाँ दिये जाते है। वादी-सवादी निर्धार के लिए यहाँ सब स्वर प्रकृति-स्वर माने गये हैं। विकृत स्वर हो तो वादी-सवा उनके स्वरस्थान के अनुसार रहते है।

पहली मूर्च्छना के क्रमसचारो में वादी-सवादी—

क्रमसचार की सख्या	वादी	सवादी
१	स	म
२	रि	ध
३	ग	नि
४	म	स
५	प	स
६	ध	रि
७	नि	ग
८	ध	रि
९	प	स
१०	म	स
११	ग	नि
१२	रि	ध

इसी प्रकार दूसरे क्रमसचारो में वादी-सवादी ऊहनीय हैं।

पाँचवाँ परिच्छेद

जाति या रागमाता

वादी सवादी में विभिन्नता होने पर भी एक ही मूर्च्छना से उत्पन्न रागो मे कई लक्षण एक ही प्रकार के होते हैं। उन लक्षणो मे न्यासस्वर प्रधान है। सप्त स्वरो में से किसी भी एक स्वर को न्यास रूप में ग्रहण करनेवाली जाति की उत्पत्ति हो सकती है। जिस जाति में 'षड्ज' न्यास स्वर रहता है उसका नाम षाड्जी है। इसी प्रकार आर्षभी, गांधारी, मध्यमा, पञ्चमी, धैवती, नैषादी—ये क्रमश ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत और निषाद आदि को न्यास रूप मे ग्रहण करनेवाली जातियो के नाम है।

हर जाति या राग के बारह लक्षण होते हैं, यानी (१) न्यासस्वर लक्षण (२) अशस्वर लक्षण (३) ग्रहस्वर लक्षण (४) अपन्यास स्वर लक्षण (५, ६) सन्यास-विन्यास लक्षण (७, ८) अल्पत्व-बहुत्व लक्षण (९) सपूर्णषाडवौडव लक्षण (१०) अन्तरमार्ग लक्षण (११) तार लक्षण (१२) मन्द्र लक्षण।

जाति या राग का विस्तार करते समय अशस्वर में पहले थोड़ी देर स्थिर रहना चाहिए। इसलिए अशस्वर को स्थायी स्वर भी कहते हैं। कभी-कभी स्थायी स्वर से ही सचार शुरू करते हैं। कभी-कभी अन्य स्वर से शुरू करके स्थायी स्वर में आकर रागविस्तार करते है। इस तरह के प्रारम्भस्वर का नाम ग्रहस्वर है। अश या न्यास भी ग्रहस्वर हो सकता है तथा कोई दूसरा स्वर भी।

हरएक जाति में अशस्वरो को बदलकर भिन्न-भिन्न रागो की उत्पत्ति की जा सकती है। एक या दो स्वरो को वर्ज्य करके भी भिन्न-भिन्न रागो को उत्पन्न कर सकते हैं। उनमे छ स्वरों से उत्पन्न राग और जातियो का नाम षाडव और पाँच स्वरो से उत्पन्न होनेवालो का नाम औडव है।

न्यासस्वर को ही अश रखकर, सातो स्वरो के साथ अगर जाति विस्तार किया जाय तो शुद्ध जाति होती है। अशस्वर को बदलकर अथवा एक या दो स्वरो को वर्ज्य करके अर्थात् षाडव, औडव कर जाति विस्तार किया जाय, तो उन्हें विकृत जाति कहते हैं। विकृत जातियाँ ही राग हैं।

राग की सृष्टि एक आत्मानुभव की अभिव्यक्ति है। जब रागो की सृष्टि करते हैं, तब रागो के लक्षण अपने आप रागकल्पना मे विद्यमान रहते है। राग की उत्पत्ति, लक्षणो से नही, बल्कि रागो से लक्षणो की उत्पत्ति होती है। इस बात को याद रखना आवश्यक है।

राग और जाति के विस्तार में न्यासस्वर और अशस्वर विस्तार का केन्द्र होने योग्य है। इनके अलावा न्यास और अश के सवादी और निकट सम्बन्ध रखनेवाले अनुवादी भी सचार का केन्द्र बनने लायक हैं। इस तरह के स्वरो को **अपन्यास** स्वर कहते हैं। राग सचार में छोटे भागो के केंद्र या आरम्भस्वर **सन्यास** और **विन्यास** हैं।

जाति और रागविस्तार में कई स्वरो का प्रयोग अधिक होता है और दूसरे स्वरो का प्रयोग कम होता है। इस लक्षण का नाम अल्पत्व, बहुत्व है। न्यास और अश स्वरो के सवादी और उनके निकट के अनुवादी बहुत्वपूर्ण स्वर होते हैं। दूर के अनुवादी और विवादी अल्पत्वपूर्ण स्वर हैं। इन बहुल स्वरो के प्रयोग में दो प्रकार हैं। सचार में उन स्वरो का सम्यक् उच्चारण एक मार्ग है, इसका नाम 'अलघन' है। इन स्वरो से युक्त पकडो का तुरन्त प्रयोग करना दूसरा मार्ग है। इसका नाम 'अभ्यास' है। अल्प स्वरो के प्रयोग मे भी दो प्रकार हैं। सचार में उन स्वरो को वर्ज्य कर अर्थात् उनको लाघकर सचार करना एक प्रकार है, उसका नाम 'लघन' है। जिन पकडो में ऐसे स्वर रहते हैं उन पकडो को प्रयोग में न लाना दूसरा मार्ग है। उसका नाम 'अनभ्यास' है।

हर राग में सचार करते समय तारस्थान में एक सीमा होती है, उसके आगे सचार नही करना चाहिए। तारस्थान मे अश स्वर का सवादी ही वह सीमा है। उसका नाम तारलक्षण है। इसी तरह नीचे भी एक सीमा है, वह मन्द्रस्थान में अशस्वर या न्यासस्वर का सवादी या मन्द्र षड्ज है। उसका नाम मन्द्रलक्षण है। मन्द्र और तार अवधि के बीच में सचार करने से राग का पूर्ण स्वरूप मिल जाता है। तार स्वर के ऊपर अगर सचार करने की अभिलाषा होती हो तो दूसरी बार इसी तरह अति तारस्थान सीमा तक सचार करने की शक्ति होनी चाहिए, अन्यथा वह चेष्टा रागस्वरूप के चरण या कटि मात्र छूकर आने की भाँति प्रतीत होगी। इसी तरह मन्द्रस्थायी के नीचे सचार करना भी साध्य नही है।

कभी-कभी अल्प या विवादी स्वरो का प्रयोग भी करते हैं। उस दशा में ऐसे स्वरो को अश या अश के सवादी स्वरो के साथ मिलाकर प्रयुक्त करना होता है। यह प्रयोग मिठाइयाँ खाते समय स्वाद बदलने के लिए बीच-बीच में कुछ नमकीन या

तिक्त पदार्थों को खाने के समान किया जाता है। इस तरह के प्रयोग का नाम 'अन्तर मार्ग' है।

विकृत जातियों की उत्पत्ति

विकृत जातियो की उत्पत्ति चार प्रकार से हो सकती है। अशस्वर न्यास से भिन्न होना, अपन्यासस्वर भिन्न होना, ग्रहस्वर भिन्न होना, असम्पूर्ण अर्थात् पाडव या औडव होना, इन चारो कारणो से विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है। इन कारणो में एक कारण मात्र से चार प्रकार की विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है (क, ख, ग, घ)। दो-दो कारण मिलकर छ विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है (कख, कग, कघ, खग, खघ, घक)। तीन-तीन कारण मिलकर चार विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है (कखग, कखघ, कगघ, खगघ)। चार कारणो से एक विकृत जाति की उत्पत्ति हो सकती है (कखगघ)। कुल मिल कर पन्द्रह विकृत जातियो की उत्पत्ति होती है। उनमें भी असम्पूर्णता में पाडव, औडव के दो भेद हैं। यह असम्पूर्णता इन पन्द्रह विकृत जातियो में से आठ विकृत जातियो का कारण होती है (१+३+३+१)। ये आठो विकृत जातियाँ षाडव, औडव के दो भेद होने के कारण सोलह वन जाती हैं। इसलिए हरएक जाति से २३ जातियाँ उत्पन्न होती हैं।

रागोत्पत्ति के लिए सात शुद्ध जाति मात्र काफी नही है। इस कारण से दो, तीन आदि विकृत जातियो को मिलाकर नयी ग्यारह जातियो को उत्पन्न किया गया है। उनका नाम सकीर्ण जाति है। इन ग्यारह सकीर्ण जातियो का उत्पत्तिक्रम यो है—

१ षड्जकैशिकी = षाड्जी + गान्धारी
२ षड्जमध्यमा = षाड्जी + मध्यमा
३ गान्धारपञ्चमी = गान्धारी + पञ्चमी
४ आन्ध्री = गान्धारी + आर्षभी
५ षड्जोदीच्यवती=षाड्जी + गान्धारी + धैवती
६ कार्मारवी=आर्षभी + पञ्चमी + नैषादी
७ नन्दयन्ती = आर्षभी + गान्धारी + पञ्चमी
८ गान्धारोदीच्यवा = गान्धारी + धैवती + षाड्जी + मध्यमा
९ मध्यमोदीच्यवा = मध्यमा + पञ्चमी + गान्धारी + धैवती
१० रक्तगान्धारी = गान्धारी + मध्यमा + पञ्चमी + नैषादी
११ कैशिकी = षाड्जी + गान्धारी + मध्यमा+पञ्चमी + धैवती +नैषादी

इस तरह शुद्ध और सकीर्ण जातियाँ कुल मिलकर अठारह हुईं। इनमें सात जातियाँ षड्जग्राम-मूर्च्छनाओ से उत्पन्न हुई हैं। वे षाड्जी, षड्जकैशिकी, षड्ज-

राग की सृष्टि एक आत्मानुभव की अभिव्यक्ति है। जब रागो की सृष्टि करते है, तब रागो के लक्षण अपने आप रागकल्पना में विद्यमान रहते हैं। राग की उत्पत्ति, लक्षणो से नही, वल्कि रागो से लक्षणो की उत्पत्ति होती है। इस बात को याद रखना आवश्यक है।

राग और जाति के विस्तार में न्यासस्वर और अशस्वर विस्तार का केन्द्र होने योग्य हैं। इनके अलावा न्यास और अश के सवादी और निकट सम्बन्ध रखनेवाले अनुवादी भी सचार का केन्द्र बनने लायक हैं। इस तरह के स्वरो को अपन्यास स्वर कहते हैं। राग सचार में छोटे भागो के केंद्र या आरम्भस्वर **संन्यास** और **विन्यास** हैं।

जाति और रागविस्तार में कई स्वरो का प्रयोग अधिक होता है और दूसरे स्वरो का प्रयोग कम होता है। इस लक्षण का नाम अल्पत्व, बहुत्व है। न्यास और अश स्वरो के सवादी और उनके निकट के अनुवादी बहुत्वपूर्ण स्वर होते है। दूर के अनुवादी और विवादी अल्पत्वपूर्ण स्वर हैं। इन बहुल स्वरो के प्रयोग में दो प्रकार हैं। सचार में उन स्वरो का सम्यक् उच्चारण एक मार्ग है, इसका नाम 'अलघन' है। इन स्वरो से युक्त पकड़ो का तुरन्त प्रयोग करना दूसरा मार्ग है। इसका नाम 'अभ्यास' है। अल्प स्वरो के प्रयोग में भी दो प्रकार हैं। सचार में उन स्वरो को वर्ज्य कर अर्थात् उनको लाघकर सचार करना एक प्रकार है, उसका नाम 'लघन' है। जिन पकडो में ऐसे स्वर रहते हैं उन पकडो को प्रयोग में न लाना दूसरा मार्ग है। उसका नाम 'अनभ्यास' है।

हर राग में सचार करते समय तारस्थान में एक सीमा होती है, उसके आगे सचार नही करना चाहिए। तारस्थान में अश स्वर का सवादी ही वह सीमा है। उसका नाम तारलक्षण है। इसी तरह नीचे भी एक सीमा है, वह मन्द्रस्थान में अशस्वर या न्यासस्वर का सवादी या मन्द्र षड्ज है। उसका नाम मन्द्रलक्षण है। मन्द्र और तार अवधि के बीच में सचार करने से राग का पूर्ण स्वरूप मिल जाता है। तार स्वर के ऊपर अगर सचार करने की अभिलाषा होती हो तो दूसरी बार इसी तरह अति तारस्थान सीमा तक सचार करने की शक्ति होनी चाहिए, अन्यथा वह चेष्टा रागस्वरूप के चरण या कटि मात्र छूकर आने की भाँति प्रतीत होगी। इसी तरह मन्द्रस्थायी के नीचे सचार करना भी साध्य नही है।

कभी-कभी अल्प या विवादी स्वरो का प्रयोग भी करते हैं। उस दशा में ऐसे स्वरो को अश या अश के सवादी स्वरो के साथ मिलाकर प्रयुक्त करना होता है। यह प्रयोग मिठाइयाँ खाते समय स्वाद बदलने के लिए बीच-बीच में कुछ नमकीन या

तिक्त पदार्थों को खाने के समान किया जाता है। इस तरह के प्रयोग का नाम 'अन्तर मार्ग' है।

विकृत जातियो की उत्पत्ति

विकृत जातियो की उत्पत्ति चार प्रकार से हो सकती है। अंशस्वर न्यास से भिन्न होना, अपन्यासस्वर भिन्न होना, ग्रहस्वर भिन्न होना, असम्पूर्ण अर्थात् षाडव या औडव होना, इन चारो कारणो से विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है। इन कारणो में एक कारण मात्र से चार प्रकार की विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है (क, ख, ग, घ)। दो-दो कारण मिलकर छ विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है (कख, कग, कघ, खग, खघ, घक)। तीन-तीन कारण मिलकर चार विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है (कखग, कखघ, कगघ, खगघ)। चार कारणो से एक विकृत जाति की उत्पत्ति हो सकती है (कखगघ)। कुल मिल कर पन्द्रह विकृत जातियो की उत्पत्ति होती है। उनमें भी असम्पूर्णता में षाडव, औडव के दो भेद हैं। यह असम्पूर्णता इन पन्द्रह विकृत जातियो में से आठ विकृत जातियो का कारण होती है (१+३+३+१)। ये आठो विकृत जातियाँ षाडव, औडव के दो भेद होने के कारण सोलह बन जाती हैं। इसलिए हरएक जाति से २३ जातियाँ उत्पन्न होती हैं।

रागोत्पत्ति के लिए सात शुद्ध जाति मात्र काफी नही है। इस कारण से दो, तीन आदि विकृत जातियो को मिलाकर नयी ग्यारह जातियो को उत्पन्न किया गया है। उनका नाम सकीर्ण जाति है। इन ग्यारह सकीर्ण जातियो का उत्पत्तिक्रम यो है—

१ षड्जकैशिकी = षाड्जी + गान्धारी
२ षड्जमध्यमा = षाड्जी + मध्यमा
३ गान्धारपञ्चमी = गान्धारी + पञ्चमी
४ आन्ध्री = गान्धारी + आर्षभी
५ षड्जोदीच्यवती=षाड्जी + गान्धारी + धैवती
६ कार्मारवी=आर्षभी + पञ्चमी + नैषादी
७ नन्दयन्ती = आर्षभी + गान्धारी + पञ्चमी
८ गान्धारोदीच्यवा = गान्धारी + धैवती + षाड्जी + मध्यमा
९ मध्यमोदीच्यवा = मध्यमा + पञ्चमी + गान्धारी + धैवती
१० रक्तगान्धारी = गान्धारी + मध्यमा + पञ्चमी + नैषादी
११ कैशिकी = षाड्जी + गान्धारी + मध्यमा+पञ्चमी + धैवती +नैषादी

इस तरह शुद्ध और सकीर्ण जातियाँ कुल मिलकर अठारह हुई। इनमें सात जातियाँ षड्जग्राम-मूर्च्छनाओ से उत्पन्न हुई हैं। वे षाड्जी, षड्जकैशिकी, षड्ज-

राग की सृष्टि एक आत्मानुभव की अभिव्यक्ति है। जब रागो की सृष्टि करते हैं, तब रागो के लक्षण अपने आप रागकल्पना में विद्यमान रहते हैं। राग की उत्पत्ति, लक्षणो से नही, बल्कि रागो से लक्षणो की उत्पत्ति होती है। इस बात को याद रखना आवश्यक है।

राग और जाति के विस्तार में न्यासस्वर और अशस्वर विस्तार का केन्द्र होने योग्य है। इनके अलावा न्यास और अश के सवादी और निकट सम्बन्ध रखनेवाले अनुवादी भी सचार का केन्द्र बनने लायक हैं। इस तरह के स्वरो को **अपन्यास** स्वर कहते हैं। राग सचार में छोटे भागो के केंद्र या आरम्भस्वर **सन्यास** और **विन्यास** हैं।

जाति और रागविस्तार में कई स्वरो का प्रयोग अधिक होता है और दूसरे स्वरो का प्रयोग कम होता है। इस लक्षण का नाम अल्पत्व, बहुत्व है। न्यास और अश स्वरो के सवादी और उनके निकट के अनुवादी बहुत्वपूर्ण स्वर होते हैं। दूर के अनुवादी और विवादी अल्पत्वपूर्ण स्वर हैं। इन बहुल स्वरो के प्रयोग में दो प्रकार हैं। सचार में उन स्वरो का सम्यक् उच्चारण एक मार्ग है, इसका नाम 'अलघन' है। इन स्वरो से युक्त पकडो का तुरन्त प्रयोग करना दूसरा मार्ग है। इसका नाम 'अभ्यास' है। अल्प स्वरो के प्रयोग मे भी दो प्रकार हैं। सचार में उन स्वरो को वर्ज्य कर *अर्थात् उनको लाघकर सचार करना एक प्रकार है, उसका नाम 'लघन' है। जिन* पकडो में ऐसे स्वर रहते हैं उन पकडो को प्रयोग में न लाना दूसरा मार्ग है। उसका नाम 'अनभ्यास' है।

हर राग में सचार करते समय तारस्थान मे एक सीमा होती है, उसके आगे सचार नही करना चाहिए। तारस्थान मे अश स्वर का सवादी ही वह सीमा है। उसका नाम तारलक्षण है। इसी तरह नीचे भी एक सीमा है, वह मन्द्रस्थान में अशस्वर या न्यासस्वर का सवादी या मन्द्र षड्ज है। उसका नाम मन्द्रलक्षण है। मन्द्र और तार अवधि के बीच में सचार करने से राग का पूर्ण स्वरूप मिल जाता है। तार स्वर के ऊपर अगर सचार करने की अभिलाषा होती हो तो दूसरी बार इसी तरह अति तारस्थान सीमा तक सचार करने की शक्ति होनी चाहिए, अन्यथा वह चेष्टा रागस्वरूप के चरण या कटि मात्र छूकर आने की भाँति प्रतीत होगी। इसी तरह मन्द्रस्थायी के नीचे सचार करना भी साध्य नही है।

कभी-कभी अल्प या विवादी स्वरो का प्रयोग भी करते हैं। उस दशा में ऐसे स्वरो को अश या अश के सवादी स्वरो के साथ मिलाकर प्रयुक्त करना होता है। यह प्रयोग मिठाइयाँ खाते समय स्वाद बदलने के लिए बीच-बीच में कुछ नमकीन या

तिक्त पदार्थों को खाने के समान किया जाता है। इस तरह के प्रयोग का नाम 'अन्तर मार्ग' है।

विकृत जातियो की उत्पत्ति

विकृत जातियो की उत्पत्ति चार प्रकार से हो सकती है। अशस्वर न्याम से भिन्न होना, अपन्यासस्वर भिन्न होना, ग्रहस्वर भिन्न होना, असम्पूर्ण अर्थात् पाडव या औडव होना, इन चारो कारणो से विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है। इन कारणो में एक कारण मात्र से चार प्रकार की विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है (क, ख, ग, घ)। दो-दो कारण मिलकर छ विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है (कख, कग, कघ, खग, खघ, घक)। तीन-तीन कारण मिलकर चार विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है (कखग, कखघ, कगघ, खगघ)। चार कारणो से एक विकृत जाति की उत्पत्ति हो सकती है (कखगघ)। कुल मिल कर पन्द्रह विकृत जातियो की उत्पत्ति होती है। उनमें भी असम्पूर्णता में पाडव, औडव के दो भेद हैं। यह असम्पूर्णता इन पन्द्रह विकृत जातियो में से आठ विकृत जातियो का कारण होती है (१+३+३+१)। ये आठो विकृत जातियाँ षाडव, औडव के दो भेद होने के कारण सोलह वन जाती हैं। इसलिए हरएक जाति से २३ जातियाँ उत्पन्न होती हैं।

रागोत्पत्ति के लिए सात शुद्ध जाति मात्र काफी नही है। इस कारण से दो, तीन आदि विकृत जातियो को मिलाकर नयी ग्यारह जातियो को उत्पन्न किया गया है। उनका नाम सकीर्ण जाति है। इन ग्यारह सकीर्ण जातियो का उत्पत्तिक्रम यो है—

१ पड्जकैशिकी = पाड्जी + गान्वारी
२ पड्जमध्यमा = पाड्जी + मध्यमा
३ गान्धारपञ्चमी = गान्धारी + पञ्चमी
४ आन्ध्री = गान्वारी + आर्पभी
५ षड्जोदीच्यवती=पाड्जी + गान्धारी + धैवती
६ कार्मारवी=आर्पभी + पञ्चमी + नैषादी
७ नन्दयन्ती = आर्पभी + गान्धारी + पञ्चमी
८ गान्धारोदीच्यवा = गान्वारी + धैवती + पाड्जी + मध्यमा
९ मध्यमोदीच्यवा = मध्यमा + पञ्चमी + गान्वारी + धैवती
१० रक्तगान्धारी = गान्वारी + मध्यमा + पञ्चमी + नैपादी
११ कैशिकी = पाड्जी + गान्वारी + मध्यमा+पञ्चमी + धैवती +नैपादी

इस तरह शुद्ध और सकीर्ण जातियाँ कुल मिलकर अठारह हुई। इनमें सात जातियाँ पड्जग्राम-मूर्च्छनाओ से उत्पन्न हुई है। वे पाड्जी, पड्जकैशिकी, पड्ज-

राग की सृष्टि एक आत्मानुभव की अभिव्यक्ति है। जब रागो की सृष्टि करते हैं, तब रागो के लक्षण अपने आप रागकल्पना में विद्यमान रहते है। राग की उत्पत्ति, लक्षणो से नही, बल्कि रागो से लक्षणो की उत्पत्ति होती है। इस बात को याद रखना आवश्यक है।

राग और जाति के विस्तार में न्यासस्वर और अशस्वर विस्तार का केन्द्र होने योग्य है। इनके अलावा न्यास और अश के सवादी और निकट सम्बन्ध रखनेवाले अनुवादी भी सचार का केन्द्र बनने लायक है। इस तरह के स्वरो को अपन्यास स्वर कहते है। राग सचार में छोटे भागो के केंद्र या आरम्भस्वर सन्यास और **विन्यास** हैं।

जाति और रागविस्तार में कई स्वरो का प्रयोग अधिक होता है और दूसरे स्वरो का प्रयोग कम होता है। इस लक्षण का नाम अल्पत्व, बहुत्व है। न्यास और अश स्वरो के सवादी और उनके निकट के अनुवादी बहुत्वपूर्ण स्वर होते है। दूर के अनुवादी और विवादी अल्पत्वपूर्ण स्वर है। इन बहुल स्वरो के प्रयोग में दो प्रकार हैं। सचार में उन स्वरो का सम्यक् उच्चारण एक मार्ग है, इसका नाम 'अलघन' है। इन स्वरो से युक्त पकड़ो का तुरन्त प्रयोग करना दूसरा मार्ग है। इसका नाम 'अभ्यास' है। अल्प स्वरो के प्रयोग मे भी दो प्रकार हैं। सचार में उन स्वरो को वर्ज्य कर अर्थात् उनको लाघकर सचार करना एक प्रकार है, उसका नाम 'लघन' है। जिन पकडो में ऐसे स्वर रहते है उन पकडो को प्रयोग में न लाना दूसरा मार्ग है। उसका नाम 'अनभ्यास' है।

हर राग में सचार करते समय तारस्थान में एक सीमा होती है, उसके आगे सचार नही करना चाहिए। तारस्थान में अश स्वर का सवादी ही वह सीमा है। उसका नाम तारलक्षण है। इसी तरह नीचे भी एक सीमा है, वह मन्द्रस्थान में अशस्वर या न्यासस्वर का सवादी या मन्द्र षड्ज है। उसका नाम मन्द्रलक्षण है। मन्द्र और तार अवधि के बीच में सचार करने से राग का पूर्ण स्वरूप मिल जाता है। तार स्वर के ऊपर अगर सचार करने की अभिलाषा होती हो तो दूसरी बार इसी तरह अति तारस्थान सीमा तक सचार करने की शक्ति होनी चाहिए, अन्यथा वह चेष्टा रागस्वरूप के चरण या कटि मात्र छूकर आने की भाँति प्रतीत होगी। इसी तरह मन्द्रस्थायी के नीचे सचार करना भी साध्य नही है।

कभी-कभी अल्प या विवादी स्वरो का प्रयोग भी करते हैं। उस दशा मे ऐसे स्वरो को अश या अश के सवादी स्वरो के साथ मिलाकर प्रयुक्त करना होता है। यह प्रयोग मिठाइयाँ खाते समय स्वाद बदलने के लिए बीच-बीच में कुछ नमकीन या

तिक्त पदार्थों को खाने के समान किया जाता है। इस तरह के प्रयोग का नाम 'अन्तर मार्ग' है।

विकृत जातियो की उत्पत्ति

विकृत जातियो की उत्पत्ति चार प्रकार से हो सकती है। अशस्वर न्यास से भिन्न होना, अपन्यासस्वर भिन्न होना, ग्रहस्वर भिन्न होना, असम्पूर्ण अर्थात् षाडव या औडव होना, इन चारो कारणो से विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है। इन कारणो में एक कारण मात्र से चार प्रकार की विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है (क, ख, ग, घ)। दो-दो कारण मिलकर छ विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है (कख, कग, कघ, खग, खघ, घक)। तीन-तीन कारण मिलकर चार विकृत जातियो की उत्पत्ति हो सकती है (कखग, कखघ, कगघ, खगघ)। चार कारणो से एक विकृत जाति की उत्पत्ति हो सकती है (कखगघ)। कुल मिल कर पन्द्रह विकृत जातियो की उत्पत्ति होती है। उनमें भी असम्पूर्णता में षाडव, औडव के दो भेद हैं। यह असम्पूर्णता इन पन्द्रह विकृत जातियो में से आठ विकृत जातियो का कारण होती है (१+३+३+१)। ये आठो विकृत जातियाँ षाडव, औडव के दो भेद होने के कारण सोलह बन जाती हैं। इसलिए हरएक जाति से २३ जातियाँ उत्पन्न होती हैं।

रागोत्पत्ति के लिए सात शुद्ध जाति मात्र काफी नही है। इस कारण से दो, तीन आदि विकृत जातियो को मिलाकर नयी ग्यारह जातियो को उत्पन्न किया गया है। उनका नाम सकीर्ण जाति है। इन ग्यारह सकीर्ण जातियो का उत्पत्तिक्रम यो है—

१ षड्जकैशिकी = षाड्जी + गान्धारी
२ षड्जमध्यमा = षाड्जी + मध्यमा
३ गान्धारपञ्चमी = गान्धारी + पञ्चमी
४ आन्ध्री = गान्धारी + आर्षभी
५ षड्जोदीच्यवती=षाड्जी + गान्धारी + धैवती
६ कार्मारवी=आर्षभी + पञ्चमी + नैषादी
७ नन्दयन्ती = आर्षभी + गान्धारी + पञ्चमी
८ गान्धारोदीच्यवा = गान्धारी + धैवती + षाड्जी + मध्यमा
९ मध्यमोदीच्यवा = मध्यमा + पञ्चमी + गान्धारी + धैवती
१० रक्तगान्धारी = गान्धारी + मध्यमा + पञ्चमी + नैषादी
११ कैशिकी = षाड्जी + गान्धारी + मध्यमा+पञ्चमी + धैवती +नैषादी

इस तरह शुद्ध और सकीर्ण जातियाँ कुल मिलकर अठारह हुई। इनमें सात जातियाँ षड्जग्राम-मूर्च्छनाओ से उत्पन्न हुई हैं। वे षाड्जी, षड्जकैशिकी, षड्ज-

	जातियाँ	अंश	अपन्यास
१६	गांधारपञ्चमी	प	रिप
१७	आंध्री	रिगपनि	रिगपनि
१८	नन्दयती	प	मप

जातियों में षाडव तथा औडवलोपी स्वर

	जातियाँ	षाडवलोपी स्वर	औडवलोपी स्वर
१	षाड्जी	नि	—
२	आर्षभी	स	सप
३	गांधारी	रि	रिध
४	मध्यमा	ग	गनि
५	पंचमी	ग	गनि
६	धैवती	प	सप
७	नैषादी	प	मप
८	षड्जकैशिकी	—	—
९	षड्जोदीच्यवा	रि	रिप
१०	षड्जमध्यमा	नि	गनि
११	गांधारोदीच्यवा	रि	—
१२	रक्तगांधारी	रि	रिध
१३	कैशिकी	रि	रिध
१४	मध्यमोदीच्यवा	—	—
१५	कार्मारवी	—	—
१६	गांधारपंचमी	—	—
१७	आंध्री	स	—
१८	नंदयन्ती	—	—

जातियों का रसभाव उनके न्यास एवं अंशस्वरों के अनुसार है।

जातिया और रस[1]

जातियाँ	रस
षड्जोदीच्यवती, षड्जमध्यमा, मध्यमा, पचमी, नदयन्ती	शृङ्गार, हास्य
आर्षभी, षाड्जी	वीर, अद्भुत, रौद्र
गाधारी, रक्तगाधारी	करुण
षड्जकैशिकी, धैवती, कैशिकी, गाधारपचमी	बीभत्स, भयानक

१ संगीतरत्नाकर में १८ जातियो के लक्षण और एक जाति में ब्रह्मा कृत साहित्य भी दिया गया है। उन लक्षणों में ऊपर बताये हुए न्यासस्वर, अशस्वर, अपन्यासस्वर, षाडव-औडवलोपी स्वरो के अलावा, काकली आदि साधारण स्वरों की विशेष विधि, दो-दो स्वरों को जोड़कर प्रयोग करने की रीति, अल्पत्व-बहुत्व स्वर, स्वरलोप की विशेष विधि, हरएक जाति में साहित्य के लायक प्रबधो का नियत लक्षण, ताल के नाम व मार्ग, गीतिविशेष, प्रत्येक जाति का नाटक में प्रयोगसंदर्भ और उस जाति की छाया से युक्त तात्कालिक विवरण दिये गये है।

ताल के बारे में आगे तालाध्याय में विस्तार किया जायगा। इनमें से पहले-पहल उत्पन्न ताल ही उपयुक्त किये गये हैं।

अ—चच्चत्पुटं (८ अक्षर) ई—संपद्वेष्टांक (१२ अक्षर)
आ—चाचपुट (६ अक्षर) उ—पचपाणि (१२ अक्षर)
इ—षट्पितापुत्रकं (१२ अक्षर) ऊ—उद्घट्टं (६ अक्षर)

ये आदिकाल के ताल है। ताल के अंगो को दुगुना या चौगुना करके नये तालों के रचना-नियमों की—यानी कला के बारे में प्रत्येक जाति की—विधि भी बतायी गयी है। प्रत्येक कला के मात्राकाल के भेद—अर्थात्, मार्ग के विषय में नियम—दिये गये है।

मध्यमोदीच्यवा गाधारोदीच्यवा }	वीर, रौद्र
कार्मारवी आध्री }	अद्भुत
षड्जमध्यमा	सर्वरस

अब प्रत्येक जाति का लक्षण यहाँ दिया जाता है।

जातिलक्षण

१ षाड्जी

(१) इस जाति में (षाडव-औडव रहित) सपूर्ण रूप में काकली-स्वरो का प्रयोग है। (२) सगा, सधा जोडकर प्रयोग करना है। (३) गाधार जब अश होता है तब निषाद का लोप नही है। (४) इस जाति के प्रबध में ताल है। "पचपाणि" जो पट्पितापुत्रक नामक ताल का एक भेद है। (५) यह ताल एक कला, द्विकला और चतुष्कला में प्रयुक्त किया जाता है। इस ताल के मार्ग में चित्र, वार्तिक तथा दक्षिण का (अर्थात् हर कला की दो, चार और आठ मात्राओ का) प्रयोग होता है। (६) गीति में मागधी, सभाविता और प्रथुला—इन तीनो का प्रयोग है। (७) नाटक में इस जाति का प्रयोग, "नैष्क्रामिक" ध्रुवा में, पहले दृश्य में किया जाता था। सगीतरत्नाकर-काल के (ई० सन् १२०० के) वराटी राग की छाया इस जाति में थी।

२. आर्षभी

इस जाति में, गाधार और निषाद का, दूसरे पाँच स्वरो के साथ मिलाकर प्रयोग करना पडता है। इस जाति में, गाधार और निषाद बहुल स्वर हैं। पचम अल्प स्वर है। पचम का लघन होता है। ताल चच्चत्पुट (८ अक्षर) है। कलाएँ आठ हैं। नैष्क्रामिक ध्रुवा में प्रयोग किया जाता था। इस जाति में देशी मधुकरी की छाया है।

३ गांधारी

इस जाति में न्यासस्वर एव अशस्वर अन्य स्वरो के साथ-साथ प्रयुक्त किये जाते है। "रि" और "ध" का साथ-साथ प्रयोग किया जाता है। पचम के अश होने पर जाति पाडव-औडव रहित अर्थात् पूर्ण होती है। नि, स, म—इनमें कोई एक स्वर

अश होता है तो औडव रूप नही होता। पूर्ण और पाडव रूप ही होते हैं। इसका ताल "चच्चत्पुट" है। प्रत्येक अक्षर की कलाएँ सोलह हैं। इसका प्रयोग, तीसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में होता था। गाधारपचमी, देशी वेलावली—इन दोनो रागो की छाया इस जाति में है।

४. मध्यमा

इस जाति में षड्ज और मध्यम वहुल स्वर हैं। इस जाति में साधारण स्वर अर्थात् अन्तर, काकली स्वरो का प्रयोग है। गाधार और निपाद अल्पत्व स्वर हैं। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ आठ हैं। इसका प्रयोग, दूसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में होता था। चोक्ष (शुद्ध) षाडव और देशी आधाली—इन दोनो की छाया इस जाति में है।

५. पंचमी

इस जाति में, "सग" और "म" अल्पत्व स्वर हैं। "रिम" और "गनि" के प्रयोग साथ-साथ होते हैं। इस जाति में भी अन्तर, काकली स्वरो का प्रयोग है। ऋपभ, अश रहता है, तो औडव रूप नही होता। पूर्ण और पाडव मात्र होते हैं। ताल चच्च-त्पुट है। तीसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग होता था। चोक्ष पचम तथा देशी आधाली की रागच्छायाएँ इस जाति में है।

६ धैवती

आरोह मे षड्ज और पचम लघ्य या वर्ज्य है। "रिध" वहुल स्वर हैं। ताल पचपाणि है। मार्ग, गीति, प्रयोग इत्यादि पाड्जी जाति की तरह होते हैं। कलाएँ वारह है। इस जाति में चोक्ष कैशिकी, देशी सिहली इत्यादि रागो की छाया है।

७. नैषादी

समपध अल्पत्वस्वर हैं और निरिध वहुल स्वर हैं। विनियोग पाड्जी की ही तरह होता है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह हैं। चोक्ष, साधारित, देशी, वेलावली इत्यादि की छाया इस जाति में पायी जाती है।

८ षड्जकैशिकी

ऋपभ और मध्यम अल्पत्वस्वर हैं। धनि वहुल स्वर है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह हैं। दूसरे दृश्य में, प्रावेशिकी ध्रुवा में, इसका प्रयोग होता था। इस जाति में, गाधार पचम, हिंदोल और देशी वेलावली की छायाएँ हैं।

९. षड्जोदीच्यवा

स म नि और ग—इन चारों में दो-दो स्वरो का प्रयोग साथ-साथ होता है। मद्र व गाधार बहुलस्वर हैं। षड्ज और ऋषभ अतिबहुलस्वर हैं। निषाद और गाधार अश होते है तो निषाद का अल्पत्व नही होता। गीति, ताल, कला, विनियोग इत्यादि षाड्जी ही के समान है। इसका प्रयोग, दूसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में होता था।

१० षड्जमध्यमा

इस जाति में, सब अशस्वरो में से (सरिगमपधनि) दो-दो स्वरो का प्रयोग साथ-साथ होता है। इस जाति में अन्तर काकली स्वरो का प्रयोग है। निषाद का अल्पत्व है। गाधाराश न होने पर षाडव-औडव में निषाद का लोप होता है। षाडव-औडव में निषाद का लोप है। षाडव-औडव में गाधार और निषाद विवादी स्वर है। गीति, ताल, कला—ये सब षाड्जी की तरह हैं। यह दूसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में, प्रयुक्त होती है।

११ गाधारोदीच्यवा

पूर्ण स्वरूप में, अश के सिवा अन्य स्वर अल्पत्व के है। षाडव-रूप में भी, "नि, ध, प," तथा "ग" का अल्पत्व है। रि और ध साथ-साथ आते हैं। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह हैं। चौथे दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग है।

१२. रक्तगाधारी

षड्ज और गाधार का, साथ-साथ प्रयोग होता है। धैवत और निषाद बहुल स्वर हैं। ताल, गीति और कला षाड्जी ही के अनुसार है। तीसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग होता था।

१३ कैशिकी

इस जाति मे, निषाद और धैवत अश हो तो पचम-न्यास रहना चाहिए। इस विषय में मतातर भी है कि "नि" एव "ग" अश होने पर नि, ग और प—इन तीनो को न्यास स्वर रहना चाहिए। ऋषभ अल्प स्वर है। निषाद और पचम बहुलस्वर हैं। सारे अशस्वरो में अर्थात्, सगमपधनि में—दो-दो स्वरो का प्रयोग, साथ-साथ होता है। ताल, कला और गीति षाड्जी के समान हैं। इसका प्रयोग, पाँचवें दृश्य में, ध्रुवा गान में, होता था।

१४. मध्यमोदीच्यवा

इस जाति में, अल्पत्व, वहुत्व और स्वरसगति गाधारोदीच्यवा के समान है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह हैं। चौथे दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग होता था।

१५. कार्मारवी

इस जाति में, जो स्वर अश के नही हैं, वे अतरमार्ग प्रयोग से वहुलस्वर हैं। गाधार अति वहुल स्वर हैं। अश स्वरो में से दो-दो स्वरो का, साथ-साथ प्रयोग होता है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह हैं। पाँचवें दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग होता था।

१६. गाधारपचमी

इस जाति में गाधारी और पचमी—दोनो जातियो के समान, स्वरो का प्रयोग साथ-साथ होता है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह हैं। चौथे दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग होता था।

१७. आंध्री

इस जाति में, रि, ग, ध और नि—इन स्वरो को मिला-मिला कर प्रयोग करना चाहिए। अशस्वर से न्यासस्वर तक का क्रम-सचार है। अन्य लक्षण गाधार पचमी के अनुसार ही है।

१८. नन्दयन्ती

इस जाति में गान्धार ग्रहस्वर है। मतान्तर में, पचम भी ग्रहस्वर है। मन्द्र ऋषभ वहुल स्वर है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ वत्तीस हैं। नाटक में पहले दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग होता था।

७	गा	गम	पा	पा	धप	मा	निध	निस
	मृ	दु	कि	र	ण			
८	निव	पनि	मा	मपरि	गा	गा	गा	गा
	म	मृ	त	भ	व			
९	री	गा	मा	पध	री	गा	सा	सा
	र	ज	त	गि	रि	शि	ख	र
१०	नी़	नी़	नी़	नी़	नी़	नी़	नी़	नी़
	म	णि	श	क	ल	श		ख
११	गा	गम	पा	पा	धप	मा	निध	निस
	व	र	यु	व	ति	द		त
१२	निध	पनि	मा	मपरि	गा	गा	गा	गा
	प		क्ति	नि	भ			
१३	नी	नी	पा	नी	गा	मा	गा	सा
	प्र	ण	मा		मि	प्र	ण	य
१४	गा	सा	गा	गा	गा	गम	गा	गा
	र	ति	क	ल	ह	र	व	नु
१५	गा	पा	मा	मा	निध	निर्सं	निध	पनि
	द							
१६	मा	परिग	गा	गा	गा	गा	गा	गा
	श	शि			न			

मध्यमा—४

१	मा	मा	मा	मा	पा	धनि	नी	धप
	पा			तु	भ	व	मू	
२	मा	पम	मा	सा	मा	गा	री	री
	र्ध	जा			न	न		
३	पा	मा	रिम	गम	मा	मा	मा	मा
	कि	री	ट					
४	मां	निव	निर्सं	निव	पम	पध	मा	मा
	म	णि	द		र्प		र्ण	

५	नी॰	नी॰	री	री	नी॰	री	री	पा
	गौ		री		क	र	प	
६	नी॰	मप	मा	मा	सा	सा	सा	सा
	ल्ल	वा			गु	लि		सु
७	गां	नी	सां	गां	धप	मा	धनि	सां
	ते						जि	त
८	पा	सां	पा	निधप	मा	मा	मा	मा
	सु	कि	र		ण			

पंचमी—५

१	पा	धनि	नी	नी	मा	नी	मा	पा
	ह	र	मू		र्ध	जा		न
२	गा	गा	सा	सा	मा॒	मा॒	पा॒	पा॒
	न	म	हे		श	म	म	र
३	पा॒	पा॒	धा॒	नी॰	नी॰	नी॰	गा	सा
	प	ति	वा		हु	स्त		भ
४	पा	मा	धा	नी	निध	पा	पा	पा
	न	म	न		त			
५	पा	पा	रीं	रीं	रीं	रीं	रीं	रीं
	प्र	ण	मा		मि	पु	रु	प
६	मा॒	नि॒ग	सा	सध	नी	नी	नी	नी
	मु	ख	प	द्म		ल		क्ष्मी
७	सां	सां	सां	मा	पा	पा	पा	पा
	ह	र	म		वि	का		प
८	धा	मा	धा	नी	पा	पा	पा	पा
	ति	म	जे		य			

धैवती—६

१	धा	धा	निध	पध	मा	मा	मा	मा
	त	रु	णा		म	लँ		द्रु
२	धा	धा	निध	निर्मं	सां	सां	सां	सां
	म	णि	भू		पि	ता		म

३	धा	धा	पा	पा	धा	धा	री	रिम
	अ	स	क	ल	श	शि	ति	ल
४	री	री	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	क							
५	धा	धा	पा	धनि	मा	मा	पा	पा
	द्वि	र	द	ग	ति			
६.	धा	धा	पा	धनि	धा	धा	पा	पा
	नि	पु	ण	म	ति			
७	सा	सा	सा	सा	सा	सा	सा	सा
	मु		ग्ध		मु	खा		बु
८	धा	धा	पा	धा	धनि	धा	धा	धा
	रु	ह	दि		व्य	का		ति
९	सा	सा	सा	रिग	सा	रिग	धा	धा
	ह	र	म		बु	दो		द
१०	मा	धा	पा	पा	धा	धा	नी	नी
	धि	नि	ना		द			
११	री	री	गा	सा	सा	सा	सा	गा
	अ	च	ल	व	र	सू		नु
१२	धा	रिसु	री	सुरि	री	सा	सा	सा
	दे		हा		धं	मि		श्रि
१३	सा	सरि	री	सरि	री	सा	सा	सा
	त	श	री		र			
१४	मा	मा	मा	मा	निध	पध	मा	मा
	प्र	ण	मा		मि	तम	ह	
१५	नी	नी	पा	पम	पा	पम	पध	रिग
	अ	नु	प	म	मु	ख	क	म
१६	गा	गा	गा	गा	गा	गा	गा	गा
	ल							

षड्जोदीच्यवा—९

१	सा	सा	सा	सा	मा	मा	गा	गा
	शै				ले			

२	गा	मा	पा	मा	गा	मा	मा	धा
	श		सू					नु
३	सा	सा	मा	गा	पा	पा	नी	धा
	शै		ले		श	सू		नु
४	धा	नी	सा	मा	धा	नी	पा	मा
	प्र	ण	य		प्र	स		ग
५	ग॒ा	सा	सा	सा	सा	सा	सा	ग॒ा
	स	वि	ला		स	खे		ल
६	धा	धा	पा	धा	पा	नी	धा	धा
	न	वि	नो				द	
७	सा	ग॒ा	ग॒ा	ग॒ा	ग॒ा	ग॒ा	सा	सा
	अ		वि		क			
८	नी	धा	पा	धा	पा	धा	धा	धा
	मु		खें					दु
९	सां	सां	मा	गा	पा	पा	नी	धा
	अ	धि	क		मु	खें		दु
१०	धा	नी	सां	सां	धा	नी	पा	मा
	न	य	न		न	मा		मि
११	ग॒ा	सा	सा	सा	सा	सा	सा	ग॒ा
	दे		वा		सु	रे		श
१२	धा	धा	पा	धा	मां	मां	मां	मां
	त	व	रु	चि	र			

षड्जमध्यमा—१०

१	मा	गा	सग	पा	धप	मा	निध	निम
	र	ज	नि	व	धू		मु	ख
२	मां	मां	सां	रिंगं	मंगं	निध	पध	पा
	वि	ला		स	लो			च
३	मा	गा	री	गा	मा	मा	सा	सा
	न							

४	मा	मगम	मा	मा	निघ	पध	पम	गमम
	प्र	वि	क	सि	त	कु	मु	द
५	धा	पध	परि	रिग	मग	रिग	सधस	सा
	द	ल	फे	न	स			नि
६	निध	सा	री	मगम	मा	मा	मा	मा
	भ							
७	मा	मा	मगम	मध	धप	पध	पम	गमग
	का		मि	ज	न	न	य	न
८	धा	पध	परि	रिग	मग	रिग	सधस	सा
	हृ	द	या	भि	न			दि
९	मा	मा	धनि	धस	धप	मप	पा	पा
	न							
१०	मा	मगम	मा	निध	पध	पमग	गा	मा
	प्र	ण	मा		मि	दे		व
११	धा	पध	परि	रिग	मग	रिग	सधस	सा
	कु	मु	दा	धि	वा			सि
१२	निध	सा	री	मगम	मा	मा	मा	मा
	न							

गाधारोदीच्यवा—११

१	सा	सा	पा	मा	पा	धप	पा	मा
	सौ							
२	धा	पा	मा	मा	सा	सा	सा	सा
	म्य							
३	धा	नी	सा	सा	मा	मा	पा	पा
	गौ		री		मु	खा		वु
४	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	रु	ह	दि		व्य	ति	ल	क
५	मा	मा	वा	निस	नी	नी	नी	नी
	प	रि	चु		वि	ता		चिं
६	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	सा	सा
	त	सु	पा		द			

७.	गा	मग	पा	पध	मा	धनि	पा	पा
	प्र	वि	क	सि	त	हे		म
८	री	गा	सा	सध	नी	नी	धा	धा
	क	म	ल	नि	भ			
९	गा	रिग	सा	सनि	गा	रिग	सा	सा
	अ	ति	रु	चि	र	का		ति
१०	सा	सा	सा	मा	मनि	धनि	नी	नी
	न	ख	द		र्प	णा		म
११	माँ	पाँ	माँ	पँरिगँ	गँ	गाँ	साँ	साँ
	ल	नि	के		तं			
१२	गाँ	साँ	गाँ	साँ	माँ	पाँ	माँ	पँरिँगँ
	म	न	सि	ज	श	री	र	
१३	गाँ	माँ	गाँ	साँ	गाँ	गाँ	गाँ	साँ
	ता			ड	न			
१४	नी°	नी°	पाँ	धाँ	नी°	गाँ	गाँ	गाँ
	प्र	ण	मा		मि	गौ		री
१५	नी°	नी°	धाँ	पाँ	धाँ	पाँ	माँ	पाँ
	च	र	ण	यु	ग	म	नु	प
१६	धाँ	पाँ	साँ	साँ	माँ	माँ	माँ	माँ
	म							

रक्तगाधारी—१२

१	पा	नी	सा	सा	गा	सा	पा	नी
	तं		वा		ल	र	ज	नि
२	साँ	साँ	पा	पा	मा	मा	गा	गा
	क	र	ति	ल	क	भू		प
३	मा	पा	धा	पा	मा	पा	धप	मग
	ण	वि	भू					
४	मा	मा	मा	मा	मा	मा	मा	मा
	ति							

४	मा	मगम	मा	मा	निध	पध	पम	ग
	प्र	वि	क	सि	त	कु	मु	द
५	धा	पध	परि	रिग	मग	रिग	सधस	सा
	द	ल	फे	न	स			नि
६	निध	सा	री	मगम	मा	मा	मा	मा
	भ							
७	म̣ा	म̣ा	म̣गम̣	म̣ध̣	ध̣प̣	प̣ध̣	प̣म̣	ग̣ा
	का		मि	ज	न	न	य	न
८	धा	पध	परि	रिग	मग	रिग	सधस	सा
	हृ	द	या	भि	न			दि
९	मा	मा	धनि	धस	धप	मप	पा	पा
	न							
१०	म̣ा	म̣ग̣म̣	म̣ा	नि̣ध̣	प̣ध̣	प̣म̣ग̣	ग̣ा	म̣ा
	प्र	ण	मा		मि	दे		व
११	धा	पध	परि	रिग	मग	रिग	सधस	सा
	कु	मु	दा	धि	वा			सि
१२	निध	सा	री	मगम	मा	मा	मा	मा
	न							

गांधारोदीच्यवा—११

१	सा	सा	पा	मा	पा	धप	पा	मा
	सौ							
२	धा	पा	मा	मा	सा	सा	सा	सा
	म्य							
३	धा	नी	सा	सा	मा	मा	पा	पा
	गौ		री		मु	खा		वु
४	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	रु	ह	दि		व्य	ति	ल	क
५	मा	मा	धा	निस	नी	नी	नी	नी
	प	रि	चु		वि	ता		र्वि
६	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	सा	सा
	त	सु	पा		द			

७	मँा	पँा	मँा	पँरिँगँ	गा	गा	गा	गा
	र	नि	के		त			
८	री	री	गा	सम	मा	मा	पा	पा
	सि	त	प		न	गे		द्र
९	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
	म	ति	का		त			
१०	धा	नी	पा	मा	धा	नी	सा	सा
	प		ण्मु	ख	वि	नो		द
११	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	क	र	प		ल्ल	वा		गु
१२	म़ा	म़ा	ध़ा	नी़	सनिनि	धा	पा	पा
	लि	वि	ला		स	की		ल
१३	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
	न	वि	नो		द			
१४	नी	नी	पा	धनि	गा	गा	गा	गा
	प्र	ण	मा		मि	दे		व
१५	मँा	री°	गँा	सँा	नी°	नी°	नी°	नी°
	य		ज्ञो		प	वी		त
१६	नी°	नी°	धँा	धँा	पँा	पँा	पँा	पँा
	क							

गान्धारपञ्चमी—१६

१	पा	मप	मध	नी	धप	मा	धा	नी
	का							
२	सनिनि	धा	पा	पा	पा	पा	पा	पा
			त					
३	धा	नी	मा	सा	मा	मा	पा	पा
	वा		मैं		क	दे		श
४	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	प्रें		खो		ल	मा		न

९	पा	पा	मा	धनि	पा	पा	पा	पा
	सु	रा	भि	ष्टु	त	म	नि	ल
१०	मा	पा	मा	रिग	गा	गा	गा	गा
	म	नो	ज		व		मं	बु
११	गा	पा	मा	पा	नी	नी	नी	नी
	दो		द	धि	नि	ना		द
१२	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
	म	ति	हा		स			
१३	गां	गां	गां	गां	मां	निंधं	नीं	नीं
	शि	व	शा		त	म	सु	र
१४	नी	नी	धप	मा	निध	निध	पा	पा
	च	मू	म	थ	न			
१५	रीं	गां	सां	सां	मां	निंधंनिं	नीं	नीं
	व		दे		त्रै	लो	क्य	
१६	नीं	नीं	धां	पां	धां	पां	मां	मा
	न	त	च	र	ण			

कार्मारवी—१५

१	री	री	री	री	री	री	री	री
	त		स्था		णु	ल	लि	त
२	मा	गा	सा	गा	सा	नी	नी	नी
	वा		मा		ग	स		क्त
३	नी	मा	नी	मा	पा	पा	गा	गा
	म	ति	ते		ज	प्र	स	र
४	गा	पा	मा	पा	नी	नी	नी	नी
	सौ		धा		शु	का		ति
५	रीं	गां	सां	नीं	रीं	गां	रीं	मां
	फ	णि	प	ति	मु	ख		
६	री	गा	री	सा	नी	धनि	पा	पा
	उ	रो	वि	पु	ल	सा		ग

७	मां	पां	मां	पंरिंगं	गा	गा	गा	गा
	र	नि	के		त			
८	रीं	री	गा	सम	मा	मा	पा	पा
	सि	त	प		न	गें		द्र
९	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
	म	ति	का		त			
१०	धा	नी	पा	मा	धा	नी	सा	सा
	प		पमु	ख	वि	नो		द
११	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	क	र	प		ल्ल	वा		गु
१२	म़ा	म़ा	ध़ा	नी़	मनिनि	धा	पा	पा
	लि	वि	ला		स	की		ल
१३	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
	न	वि	नो		द			
१४	नी	नी	पा	धनि	गा	गा	गा	गा
	प्र	ण	मा		मि	दे		व
१५	सां	रीं°	गां	सां	नीं°	नीं°	नीं°	नीं°
	य		शो		प	वी		त
१६	नीं°	नीं°	धां	धां	पां	पां	पां	पां
	कं							

गावारपचमी—१६

१	पा	मप	मध	नी	धप	मा	धा	नी
	का							
२	सनिनि	धा	पा	पा	पा	पा	पा	पा
			त					
३	धा	नी	सा	मा	मा	मा	पा	पा
	वा		मैं		क	दे		श
४	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	प्रे		खो		ल	मा		न

९	पृा	पृा	मृा	धृनिृ	पृा	पृा	पृा	पृा
	सु	रा	भि	ष्टु	त	म	नि	ल
१०	मा	पा	मा	रिग	गा	गा	गा	गा
	म	नो	ज		व		मँ	बु
११	गा	पा	मा	पा	नी	नी	नी	नी
	दो		द	धि	नि	ना		द
१२	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
	म	ति	हा		स			
१३	गँा	गँा	गँा	गँा	मँा	निँधँ	नी°	नी°
	शि	व	शा		त	म	सु	र
१४	नी	नी	धप	मा	निध	निध	पा	पा
	च	मू	म	थ	न			
१५	री°	गँा	सँा	सँा	मँा	निँधँनिँ	नी°	नी°
	व		दे		त्रै	लो	क्य	
१६	नी°	नी°	धँा	पँा	धँा	पँा	मँा	मा
	न	त	च	र	ण			

कार्मारवी—१५

१	री	री	री	री	री	री	री	री
	त		स्था		णु	ल	लि	त
२	मा	गा	सा	गा	सा	नी	नी	नी
	वा		मा		ग	स		क्त
३	नीृ	मृा	नीृ	मृा	पृा	पृा	गा	गा
	म	ति	ते		ज	प्र	स	र
४	गा	पा	मा	पा	नी	नी	नी	नी
	सौ		धा		शु	का		ति
५	री°	गँा	सँा	नी°	री°	गँा	री°	मँा
	फ	णि	प	ति	मु	ख		
६	री	गा	री	सा	नी	धनि	पा	पा
	उ	रो	वि	पु	ल	सा		ग

७	मँा	पँा	मँा	पँरिँगँ	गा	गा	गा	गा
	र	नि	के		त			
८	री	री	गा	सम	मा	मा	पा	पा
	सि	त	प		न	गें		द्र
९	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
	म	ति	का		त			
१०	धा	नी	पा	मा	धा	नी	सा	सा
	प		ण्मु	ख	वि	नो		द
११	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	क	र	प		ल्ल	वा		गु
१२	मा़	मा़	धा़	नी़	सनिनि	धा	पा	पा
	लि	वि	ला		स	की		ल
१३	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
	न	वि	नो		द			
१४	नी	नी	पा	धनि	गा	गा	गा	गा
	प्र	ण	मा		मि	दे		व
१५	साँ	री°	गाँ	साँ	नी°	नी°	नी°	नी°
	य		ज्ञो		प	वी		त
१६	नी°	नी°	धाँ	धाँ	पाँ	पाँ	पाँ	पाँ
	क							

गाधारपचमी—१६

१	पा	मप	मध	नी	धप	मा	धा	नी
	का							
२	सनिनि	धा	पा	पा	पा	पा	पा	पा
			त					
३	धा	नी	सा	सा	मा	मा	पा	पा
	वा		मैं		क	दे		श
४	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	प्रें		खो		ल	मा		न

२	धा	धा	धा	धा	धा	नी	सनिनि	धा
	०							
३	प़ा	प़ा	प़ा	प़ा	प़ा	प़ा	प़ा	प़ा
	म्य							
४	ध़ा	नी़	म़ा	प़ा	ग़ा	ग़ा	ग़ा	ग़ा
	वे		दा		ग	वे		द
५	मा	री	गा	गा	गा	गा	गा	गा
	क	र	क	म	ल	यो		नि
६	मा	मा	पा	पा	धा	निध	पा	पा
	त	मो	र	जो	वि	व		
७	धा	नी	मा	पा	गा	गा	गा	गा
	जि	त						
८	गम	पा	पा	पा	मा	मा	गा	गा
	हर							
९	धा	नी	मा	पा	गा	गा	गा	गा
	भ	व	ह	र	क	म	ल	गृ
१०	मा	मा	मा	मा	मा	मा	मा	मा
	ह							
११	री	गा	मा	पा	पम	पा	पा	नी
	शि	व	शा		त	स		नि
१२	री़	री़	री़	री़	प़ा	प़ा	म़ा	म़ा
	वे		श	न	म	पू		वँ
१३	ध़ा	नी़	सनि़नि़	ध़ा	प़ा	पा	पा	पा
	भृ	ष		ण	ली		ल	
१४	ध़ा	नी	म़ा	प़ा	ग़ा	ग़ा	ग़ा	ग़ा
	उ	र	गे		श	भो		ग
१५	गा	पा	पा	पा	धा	मा	गा	मा
	भा		सु	र	शु	भ	पृ	थु
१६	धा	धा	नी	धा	पा	पा	पा	पा
	ल							
१७	री	गा	मा	पा	पम	पा	पा	नी
	अ	च	ल	प	ति	सू	नु	

१८	री̥	री̥	री̥	री̥	पा̥	पा̥	पा̥	पा̥
	क	र	प		क	जा		म
१९	पा	पा	पा	पा	धा	मा	मा	मा
	ल	वि	ला		स	कौ		ल
२०	नी̥	पा̥	गा̥	गम̥	गा̥	गा̥	गा̥	गा̥
	न	वि	नो		द			
२१	री̥	री̥	गा̥	गा̥	मा̥	मा̥	मा̥	मा
	स्फ	टि	क	म	णि	र	ज	त
२२	नी	पा	नी	मा	नी	धा	पा	पा
	सि	त	न	व	द्रु	कू		ल
२३	सां	सां	धनि	धा	पा	पा	पा	पा
	क्षी		रोद		सा			ग
२४	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	मां	मां
	र	नि	का		शं			
२५	री	री	गा	गा	मा	मा	पा	पा
	अ	ज	शि	र	क	पा		ल
२६	री	री	री	गा	मा	रिग	मा	मा
	पृ	थु	भा			ज	न	
२७	मा	नी	पा	नी	गा	गा	गा	गा
	व		दे		सु	ख	द	
२८	मा	मा	पा	पा	धा	धनि	निध	मा
	ह	र	दे		ह	म	म	ल
२९	धा	धा	मा	नी	धा	नी	पा	पा
	म	धु	सू		द	न		सु
३०	री̊	री̊	री̊	री̊	मा	पा	धा	मा
	ते		जो		धि	क		सु
३१	नी	नी	नी	नी	धा	पा	मा	मा
	ग	ति	यो					
३२	मा	परिग	गा	गा	गा	गा	गा	गा
			नि					

छठवाँ परिच्छेद

राग प्रकरण

राग दो प्रकार के हैं—प्राचीन और नवीन। प्राचीन रागो को 'मार्गराग' तथा 'भाषाराग' कहते हैं। नवीन रागो का नाम 'देशीराग' है। मार्गराग, भाषाराग और देशीराग—इन तीनो के दूसरे नाम भी हैं, जैसे—शुद्ध राग, छायालग राग और साधारण राग। मार्गराग में ब्रह्मा, भरत, नारद आदियो के उपदेशानुसार शुद्ध और विकृत जातियो के लक्षण पूर्णरूप में हैं।

मार्गरागो में तीन भेद हैं, ग्रामराग, शुद्धराग और उपराग। ग्रामरागो में पाच भेद यो है—शुद्ध, भिन्न, गौड, वेसर और साधारण।

काव्य, नाटक और गीत इन सब में रुचिभेद के अनुसार काव्य में रीति, नाटक में वृत्ति और गीत में गीति के भेद हुए है। पाचो गीतियो के अनुसार ही ग्रामरागो के पूर्वोक्त पाच भेद हुए है।

शुद्ध गीति[1] में स्वर वक्रतारहित हैं और मृदुल भी। भिन्न गीति में स्वर वक्र, सूक्ष्म, मधुर और गमकयुक्त हैं। गौडी गीति में स्वरो की निबिडता के साथ, तीनो स्थानो में सचार गमकयुक्त है और मद्रस्थान में विशेष सचार[2] है। वेसरगीति में स्वरो का प्रयोग वेग से होता है तथा रक्तिपूर्ण भी रहता है। इन चारो गीतियो के लक्षणो का मिश्रित रूप ही साधारणी गीति है।

इन गीतियो के अनुसार ही ग्रामरागो की उत्पत्ति हुई थी, जैसे—

१. भरतमुनि ने—मागधी, अर्धमागधी, पृथुला, सभाविता—इन चारो गीतियों का ही उल्लेख किया है। वे गीतियाँ पद और ताल के अनुसार रहती है। परन्तु यहाँ बतायी हुई गीतियां स्वरो से अनुसृत है। ये पाँच गीतियाँ "सगीत रत्नाकर" में "दुर्गा-मत" के अनुसार लिखी गयी हैं। मतग के मतानुसार इन पाँचो के साथ, भाषा एव विभाषा के दो और भेदो को मिलाकर सात गीतियां बनी हुई है।

२ इस विशेष सचार को "ओहाटी ललित" कहते है। चिबुक को वक्ष स्थल पर रखकर उकारो व अकारो के प्रयोग से गाना होता है।

ग्रामराग

(अ) शुद्ध—७ (१) षड्जग्राम से उत्पन्न राग
(१) षड्जकैशिकमध्यम
(२) शुद्धसाधारित
(३) षड्जग्रामराग
(२) मध्यमग्राम से उत्पन्न राग
(४) पचम
(५) मध्यमग्रामराग
(६) षाडवराग
(७) शुद्धकैशिकराग

(आ) भिन्न—५ (१) षड्जग्राम से उत्पन्न राग
(८) कैशिकमध्यम
(९) भिन्नषड्ज
(२) मध्यमग्राम से उत्पन्न
(१०) तान
(११) कैशिक
(१२) भिन्नपचम

(इ) गौड—३ (१) षड्जग्राम से उत्पन्न
(१३) गौडकैशिकमध्यम
(१४) गौडपचम
(२) मध्यमग्राम से उत्पन्न
(१५) गौडकैशिक

(ई) वेसर—८ (१) षड्जग्राम से उत्पन्न
(१६) टक्क
(१७) वेसर षाडव
(१८) सौवीरी
(२) मध्यमग्राम मे उत्पन्न
(१९) वोट्टराग
(२०) मालवकैशिक
(२१) मालवपचम
(३) षड्ज और मध्यमग्राम से उत्पन्न

(२२) टक्ककैशिक
(२३) हिंदोल

(ड) साधारण—७ (१) षड्जग्राम से उत्पन्न
(२४) रूपसाधार
(२५) शक
(२६) भम्माणपचम
(२) मध्यमग्राम से उत्पन्न
(२७) नर्त
(२८) गाधारपचम
(२९) षाड्जकैशिक
(३०) ककुभ

उपराग—८

(१) शकतिलक
(२) टक्क
(३) सैंधव
(४) कोकिलपचम
(५) रेवगुप्त
(६) पचमषाडव
(७) भावनापचम
(८) नागगाधार

राग या शुद्ध राग—२०

(१) श्रीराग
(२) नट्ट
(३) वगाल (पहला)
(४) वगाल (दूसरा)
(५) भास
(६) मध्यमषाडव
(७) रक्तहस
(८) कोल्लहास
(९) प्रसव
(१०) भैरव
(११) ध्वनि
(१२) मेघराग
(१३) सोमराग
(१४) कामोद (पहला)
(१५) कामोद (दूसरा)
(१६) आम्रपचम
(१७) कदर्प
(१८) देशाख्य
(१९) कैशिककुभ
(२०) नट्टनारायण

इन ५८ रागो में १५ रागो से भाषा, विभाषा और अतरभाषा जैसे रागो की उत्पत्ति होती हैं। वे इनकी छाया के अनुसार रहते हैं। इस तरह के भाषाजनक १५ राग और उन १५ रागो से उत्पन्न राग ये हैं—

(१) सौवीर	(६) टक्ककैशिक	(११) भिन्नषड्ज
(२) ककुभ	(७) हिंदोल	(१२) वेसरषाडव
(३) टक्क	(८) वोट्ट	(१३) मालवपंचम
(४) पंचम	(९) मालवकैशिक	(१४) तान
(५) भिन्नपंचम	(१०) गांधारपंचम	(१५) पंचमषाडव

इनमें (१) सौवीर से उत्पन्न भाषाराग—४

(१) सौवीरी (३) सांधारित
(२) वेगमध्यमा (४) गांधारी

(२) ककुभ से उत्पन्न भाषाराग—६

(१) भिन्नपंचमी (४) रगन्ती
(२) कांभोजी (५) मधुरी
(३) मध्यमग्राम (६) शकमिश्रा

ककुभ से उत्पन्न विभाषाराग—३

(१) भोगवर्धनी
(२) आभीरिका
(३) मधुकरी

ककुभ से उत्पन्न अंतरभाषाराग—१

१ शालवाहिनिका

(३) टक्कराग से उत्पन्न भाषाराग—२१

(१) त्रवणा (९) पंचमलक्षिता
(२) त्रवणोद्भवा (१०) सौराष्ट्री
(३) वैरंजी (११) पंचमी
(४) मध्यमग्रामदेहा (१२) वेगरंजी
(५) मालववेसरी (१३) गांधारपंचमी
(६) छेवाटी (१४) मालवी
(७) सैन्धवी (१५) तानवलिता
(८) कोलाहला (१६) ललिता

(९) पुलिन्दका
(१०) तुबुरा
(११) षड्जभाषा
(१२) कालिन्दी
(१३) ललिता
(१४) श्रीकण्ठिका
(१५) वागाली
(१६) गाधारी
(१७) सैंधवी

भिन्नषड्ज से उत्पन्न विभाषाराग—४

(१) पौरालिका
(२) मालवी
(३) कालिन्दी
(४) देवारवर्धनी

(१२) वेसरषाडव से उत्पन्न भाषाराग—२

(१) नाद्या
(२) बाह्यषाडवा

वेसरषाडव से उत्पन्न विभाषाराग—२

(१) पार्वती
(२) श्रीकंठी

(१३) मालवपचम से उत्पन्न भाषाराग—३

(१) वेदवती
(२) भावनी
(३) विभावनी

(१४) तान से उत्पन्न भाषाराग—१

(१) तानोद्भवा

(१५) पचमषाडव से उत्पन्न भाषाराग—१

(१) पोता

ऊपर कहे हुए पद्रह भाषाजनक रागो के अलावा, कोई-कोई, 'शका' नाम के भाषाराग के जनक रेवगुप्ति को भी अलग मानते हैं।

उत्पत्ति स्थान न जाननेवाला विभाषाराग पल्लवी है। उसी प्रकार के अन्तर-भाषा राग (१) भासवलिता (२) किरणावली (३) शकललिता हैं।

(१) ग्राम रागो से उत्पन्न देशीराग या रागाङ्ग—

शकराभरण
घटारव
हसक
दीपक
रीति
कर्णाटिका
लाटी
पाचाली
मध्यमादि
मालवश्री
तोडी
वगाल
भैरव
वराली
गुर्जरी
गौड
कोलाहल
वसन्त
धन्यासी
देशी
देशाख्या

(२) भापारागो से उत्पन्न देशीराग या भाषाग—

गाभीरी
वेहारी
खमिता
उत्पला
गौडी
नादान्तरी
नीलोत्पली
छाया
तरङ्गिणी
गावारगति
वेरजिका
डोवक्रिया
सावेरी
वेलावली
प्रथममजरी
आदिकामोदी
नागध्वनि
वराटी
नट्टा
कर्नाटवगाला

(३) क्रियाङ्ग—

भावक्री
स्वभावक्री
शिवक्री
मकरक्री
त्रिनेत्रक्री
कुमुदक्री
दनुक्री
ओजक्री
इन्द्रक्री
नागकृति
धन्यकृति
विजयक्री
रामकृति
गौडकृति
देवकृति

(४) उपागराग—३०

पूर्णाटिका
देवाल
कुञ्जरी
वराटी (उपाङ्ग)
कुतलवराटी
द्राविड ,,
सैंधव ,,
अपस्थान ,,
हतस्वर वराटी
तोडी (उपाङ्ग)
छायातोडी
तुरुष्क

६	री	गा	पा	पा	पा	पा	पा	पा
	वि	लु	लि	त	स	ह		स्र
७	धा	मा	धा	मा	सा	सा	सा	सा
	कि	र		णो	ज	य		तु
८	पा	धा	निध	पा	मा	पा	मा	मा
	भा				नु			

—(यह मतङ्गादि प्रोक्त वचन स्वर साहित्य है।)

(२) षड्जग्रामराग

यह षड्ज मध्यमा जाति से उत्पन्न होता है। इसका ग्रह तथा अंशस्वर तार षड्ज है। राग सपूर्ण है। इसमें न्यासस्वर मध्यम है, अपन्यास षड्ज है। अवरोही वर्ण में इस राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नात है। इसकी मूर्च्छना षड्जादि है। इसमें काकली निषाद एव अतरगाधार का प्रयोग विहित है। यह राग वीर, रौद्र और अद्भुत रसो का पोषक है। राग-देवता बृहस्पति है। इसे वरसात के दिनो में प्रथम प्रहर में गाना चाहिए।

आलाप—सुसुरी गधगरिस सनिधापाधाधारीगा सा। री गा सा सग पनिधनिस सा सा। गसरिग पधनिप मामा।

करण—री री गाधा गरि सासा नी धपापा। री री गध परि सां सां सां सां। सां सां गानिधा रीरीगा धा गारी सां सां निधपापा। री री पापा निधनि सां सां सां। सरि सरि पधनिध पमामामामा।

आक्षिप्तिका—

१	री	री	गा	सा	गा	री	गा	सा
	स	ज	य	तु	भ्		ता	
२	नी	धा	पा	पा	री	री	गा	धा
	धि	प	ति		प	रि	क	र
३	गा	री	सा	सा	सा	सा	सा	सा
	भो		गी	द्र		कु		ड
४.	सा	सा	गा	धनि	नी	नी	नी	नी
	ला		भ	र	ण			

५	गा	रिग	धा	धा	गा	गरि	सा	सा
	ग	ज	च		मं	प	ट	नि
६	नी	धा	पा	पा	री	री	पा	पा
	व	स	न		श	शा		क
७	नी	धा	नी	सा	ना	सा	ना	रिमरि
	चू		डा	म	णि			
८	पा	धा	निध	पा	मा	मा	मा	मा
	श				भु			

(३) शुद्ध कैशिकराग

यह राग कार्मारवी और कैशिकी जाति से उत्पन्न हुआ है। इसका ग्रहस्वर और अंशस्वर तारषड्ज है, न्यासस्वर पंचम है। इस राग में काकलीनिषाद का प्रयोग है। अवरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। इसमें स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नान्त है। यह राग संपूर्ण है। इसकी मूर्च्छना मध्यमग्रामीय षड्जादि है। राग अंगारक (मङ्गल) का प्रीतिकारी और वीर, रौद्र एवं अद्भुत रसों का पोषक है। शिशिर ऋतु में प्रथम प्रहर में इसे गाना चाहिए।

आलाप—सासा गामा गारी गामा नानी सारी नाधा माधा माधा नीधा पामा गामा पापा।

वर्तनी—मासासासा रीरीसासारीरी गागा नानासानानां मामा गारी गारी सासा-रीरीप नि मंनिसांसां रीरी मामा पापाधामा मामाधानी नासासाना रीरीगामा सासा-पापा धामागामा पामा पापापापा।

आक्षिप्तिका—

१	ना	मा	मा	सा	ना	ना	नी	धा
	अ		ग्नि		ज्वा		ला	शि
२	ना	सा	री	मा	ना	री	गा	मा
	खा		के		शि			
३	मा	गा	री	सा	ना	सा	ना	सा
	मा				न	शो		णि
४	मा	सा	सा	ना	नी	ना	नी	नी
	त	भो				जि	नि	

५	मा	मा	गा	री	मा	मा	पा	पा
	स		र्वा		हा		रि	णि
६	धा	नी	पा	मा	धा	मा	धा	सा
	नि		र्मी		से			
७	सा	सा	सा	सा	नी	धा	पा	पा
	च			र्म	मु	डे	न	
८	धा	नी	गा	मा	पा	पा	पा	पा
	मो			स्तु	ते			

(४) शुद्ध षाडवराग

मध्यम जाति में विकृत भेद से उत्पन्न हुआ है। इनका ग्रहस्वर तारमध्यम है, न्यास एव अशस्वर मध्यममध्यम हैं। मध्यमग्रामीय मध्यमादि इसकी मूर्च्छना है। इसमे गाधार और पचम का अल्प प्रयोग है, काकलीनिपाद तथा अतरगाधार का प्रयोग भी है। मचारी वर्ण में इस राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नान्त है। यह शुक्र-प्रिय राग है और हास्य एव शृगार रस का पोपक है। पूर्व याम मे गाना चाहिए।

आलाप—म़ा नारी नीधा साधानी माधा सारीग़ा ध़ा स़ा ध़ाम़ारिगाम़ा माधा-मारी गारीनीधा म़ाधानीम़ाम़ा।

करण—ममरिग मम सस धनि मस धनि म़ा म़ा पपपपनि धममध धससरि ग़ागा-म़ारिगाम़ाम़ा।

वर्तनिका—साधनि पध मारि मानि धधाधधनसरि मासासाधनी धपम़ा म़ा गारी गारी गासामाधाम़ा ग़ारीगा गमारिगा म़ामाधनी म़ा धनि धगसाधनि म़ा म़ा म़ा।

आक्षिप्तिका—

१	म़ा	म़ा	ध़ा	ध़ा	सा	धा	नी	पा
	पृ	थु	ग		ड	ग	लि	त
२	धा	नी़	म़ा	म़ा	म़ा	री	म़ा	री
	म	द	ज	ल	म	ति	सौ	
३	ध़ा	नी़	म़ा	म़ा	गा	रिग	धा	धा
	र	भ	ल		ग्न		पट्	प

४	मा	धा	सा	मग	म़ा	म़ा	म़ा	म़ा
	द	स	मू		ह			
५	मग	री	गा	मा	मा	मा	पम	गा
	मु	ख	मिं		द्र	नी		ल
६	री	गा	स़ा	म़ा	म़ा	म़ा	म़ा	म़ा
	श	क	लै		र्भ	पि		त
७	नी	ध़ा	नी	ध़ा	स़ा	म़ा	म़ा	सा
	मि	व	ग	ण	प	ते		
८	गा	री	री	गा	म़ा	म़ा	म़ा	म़ा
		र्ज	य	तु				

(५) भिन्नकैशिकमध्यम

यह राग षड्जमध्यमा जाति से उत्पन्न हुआ है। इसका ग्रह और अंशस्वर षड्ज है, न्यासस्वर मध्यमस्वर भी हो सकता है। षड्जग्रामीय षड्जादि मूर्च्छना है। संचारी वर्ण मे राग का प्रकाशन होता है। राग मे काकलीनिषाद का प्रयोग है। इसका स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नादि है। यह वीर, रौद्र और अद्भुत रसो का पोषक है। दिन के प्रथम याम में गाने योग्य है। चंद्र-प्रिय राग है।

आलाप—म़ा निधा साम़ा। मम धम मम धम गामाधाधा नीधा मम स़ा ग़ा माधानीधा स़ा स़ा धमा मगा स गास साधा मामा। स़ा ग़ा माधानीधा म़ा स़ा मधा पमाप मामा।

वर्तनिका—मम निध सस मम मध मग मध निमम। नीध़ानीमधनिस। निधनि स़स़स़स़म़म़ धध। मम गम़ म़ गम। स़ग गध़ाध़ाधधममध़मगममधम़म़। म़म़धम-धपमापा मामा। (यह प्रबन्धविशेष है।)

आक्षिप्तिका—

१	ना	मा	नो	धा	सा	ना	मा	मा
	वृ	ह	दु	द	न्	त्रि	क	ट
२	मा	धा	मा	गा	मा	धा	नी	मा
	ग		म	न	ज	र	ठ	त्रि
३	मा	नी	धा	नी	मा	धा	नी	नी
	भ		क्त		सु	वि	पु	ल

४	नी	धा	नी	सा	सा	सा	सा	सा
	पी		ना		ग			
५	मा	मस	सा	सा	नी	धा	पा	पा
	अ	रि	द	म	न	वि	ष	म
६	धा	नी	मा	मा	गा	री	मा	मा
	लो		च	न	सु	र	न	मि
७	मा	मा	मा	मा	धा	नी	मा	मा
	त	वि	ना		य	क		
८	सा	सा	धा	नी	मा	मा	मा	मा
	व				दे			

(६) भिन्नतानराग

यह मध्यमा और पचमी जातियो से उत्पन्न हुआ है। इसमें पचमस्वर ग्रह और अश है, न्यासस्वर मध्यम है। इसमें काकलीनिपाद का प्रयोग है, ऋषभस्वर का अल्प प्रयोग है। सचारी वर्ण मे इस राग का प्रकाशन होता है, स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नादि है। ऋषभ वर्ज्य भी है। मध्यमग्रामीय पचमादि मूर्च्छना है। प्रथम याम में गाने योग्य है। करुण रस का पोषक है। शिवप्रिय राग है।

आलाप—पा नी सागा मापा धापामगामामा। ममध ममग सा सा सम स मागम पापापानी सागामा धापाम गममा। मम धप धध सस पापा ससस मागमपापा मम पप धध निनि पध मध मग गसा सा गसगसमम पापापानी सागापापा धापामगमामा।

वर्तनी—पापा नीनी सस गग पापानीपानी सगग सागामा पाधा पाम गामापापा (पचम) पापा सासा धामापापापा (षड्ज) सस गम (पचम) नीसागा मापाधाम गा मामा।

आक्षिप्तिका—

१	पा	पा	नी	नी	सा	सा	गा	गा
	ह	र	व	र	मु	कु	ट	ज
२	सा	गा	मप	मग	सा	सा	सा	सा
	टा		लु	लि	त			
३	सा	गा	मा	पा	धा	पा	मप	मग
	अ	म	र	व	धू		कु	च

४	सा	गा	मा	पा	पा	पा	पा	पा
	प	रि	म	लि	त			
५	धा	पा	मा	मा	पा	पा	धा	धा
	ब	हु	वि	ध	कु	सु	म	र
६	सा	मा	पा	पा	धा	पा	मा	गा
	जो		रु	णि	त			
७	धा	पा	पम	मपग	सा॒	गा॒	मा॒	पा॒
	वि	ज	य	तं	ग		गा	
८	धा	पा	मग	मा	मा	मा	मा	मा
	वि	म	ल	ज	ल			

(७) भिन्नकैशिक

यह कैशिकी और कार्मारवी जातियो से उत्पन्न हुआ है। ग्रह, अंश और अपन्यास षड्ज है। सपूर्ण है। इसमें काकलीनिषाद का प्रयोग है। मद्र स्थायी स्वरो का प्रयोग अधिक है। षड्जग्राम की षड्जादि मूर्च्छना मे राग-स्वरूप मिलता है। राग का प्रकाशन सचारी वर्ण में होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नादि है। राग दान-वीर, रौद्र तथा अद्भुत रसो का पोषक है। शिशिर ऋतु में, पहले याम मे गाने योग्य है। शिवजी को प्रीतिदायक है।

आलाप—साधा मा॒धासा निधस नीमा॒ सा॒ सा॒री॒ मा॒पा॒धा॒मा॒धा॒मा॒ निध सनि सासा सारी॒ सामा धानी साधा सा मपा॒मापापा।

वर्तनी—सासाधा माधापा मारी मापा धामाधामा॒नी॒मा॒। नी॒सा॒ रीरी गा॒गा॒ सारी सासामाधा पापा सारी मापा धासा धापा मापापापा।

आक्षिप्तिका—

१	सा	मा	मा	मा	री	री	मा	मा
	ऽ			द्र	नी			ल
२	मा	मा	पम	पा	पा	पा	पा	पा
	स			प्र	भ			म
३	मा	धा	मा	पा	धा	मा	री	ना
	दा			ध	ग			ध
४	मा	मा	मनि	नी॒	नी॒	नी॒	नी॒	सा॒
	वा			सि	त			

मधमगागसगमगम धधधधधनिधनिधग् ससमगममधसरिमधमगधाधमधधाधा। ध-धनि धधस धधनि धधध धधनिधधधमधसरि मगामामामाधधधमधधधधधधधधधधधधध-निधनिमधमगामामा।

करण—मध मध धाधनिधास धनिधा धस रिगा धनि धामग। मामा। धमधम। धमधमा (मध्यम) मनि धध रिध धाममम धागमधानिध धनि धामममसृगम धाधनि धनि धनि धाध धधस। धनिधा धसरिग धनिधा मधसरि मधमधधा धधधनि धनि धनि धनि मधमा मागामामा।

आक्षिप्तिका—

१	धा	धा	मा	धा	सृा	सृा	सृा	सृा
	ध	न	च	ल	न	खि		न्न
२	धा	धा	धा	धा	धा	धा	सा	धा
	प		न्न	ग	वि	ष	म	वि
३	सृा	सृा	मृा	मृा	मृा	धा	धा	धा
	नि		श्वा		स	धू		म
४	धा	धा	मा	गा	मा	मा	मा	मा
	धू		म्र	श	शि			
५	मा	मा	मा	गा	मा	धा	धा	धा
	वि	र	चि	त	क	पा		ल
६	धा	नी	धा	मा	मा	मा	मा	गा
	मा		ल		ज	य	ति	ज
७	मा	धा	धा	धा	मा	मा	मा	मा
	टा		म	ड	ल			
८	धा	धा	धा	धनि	गा	मा	मा	मा
	श				भो			

(१०) गौड़ कैशिक

यह कैशिकी एव षड्जमध्यमा जातियो से उत्पन्न हुआ है। इसमे न्यास स्वर पचम है। ग्रह और अश षड्ज हैं। पूर्ण राग है। काकलीनिपाद का प्रयोग है। षड्जग्रामीय षड्जादि मूर्च्छना राग का स्वरूप देती है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकारप्रसन्नादि है। करुण, वीर, रौद्र और अद्भुत

रसों का पोषक है। शिशिर ऋतु में मध्यम याम के उत्तरार्ध में गाने योग्य है। राग शिवप्रिय है।

आलाप—सासा सग सनिसरी मगगसमम पम निप पगम गरि रिगम मस। गम्‌। सृनि सरिम गपम पधरिमपाधारी मापाधानि रिमापा धास नि मासा। सासा (षड्ज) सससस ससस मगस, गसनि सासा। सासा सस,ग ससस मगमरि गसग मधस। पधप मापमापापा। पमपापापधपधपापप पधरिरिरि मरि मसरि मधास-निसासा। सासा (षड्ज) सससस ससस सग सग सनिसासा। सासा ससगस समग मरिगस गसधसपध पमा पापा धम पापा गम गगम (पंचम) पप गग मम गग गमग। निनिपनिप गमगस सनिपनिप। गमगपम मगमग गरीरी रिगमम (षड्ज) स ससससस ससगसधसा गध सरीमामापमपापा।

करण—निस निध सस रिम रिगम ममगपपनिगा पमगारि परीरीरिमरिम-समरी मरिगसा मपधस रिमापमापुापुारिमरिम रिमपापारिम पनि रीरीरिमसा पघ मससनिसा सम रिगा सग सनिनी,निनि निनि सधध सध मम पपपा गागगनि पपधनी गगगप गमागा रीरी रिगामाम (षड्ज) स सनी निसा गारी रिम गम सागा मापा पनि धनि गमग धधम रिस गा सग सनि घसा धमरि मा पम पापा पम धमा रिमा रीसध मारी रिम मम मग साधध सस मम पप मम पापा पप गग मम पापापा।

आक्षिप्तिका—

१	सा	मा	सा	मा	नी	नी	नी	नी
	भ		स्मा		ध्य		ग	वि
२	नी	नी	सा	री	री	गा	मा	सा
	भू		पि	त		दे		ह
३	मा	सा	री	मा	री	मा	री	सा
	सु	र	व	र	मु	नि	स	हि
४	री	री	री	री	मा	मा	मा	मा
	त				भी		म	भु
५	सा	सा	धा	धा	री	री	री	री
	ज		ग	म	वे		ष्टि	त
६	सा	सा	सा	मा	मा	मा	री	मा
	वा		ह		सु	र	व	र

(१२) बोट्टराग

यह पचमी और षड्जमध्यमा जातियो से उत्पन्न हुआ है। ग्रह तथा अशस्वर पचम है। न्यास मध्यम है। गाधार का अल्प प्रयोग है। पूर्ण राग है। काकलीनिषाद का प्रयोग है। मध्यमग्रामीय पचमादि मूर्च्छना है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नान्त है। हास्य एव शृगार रसो का पोषक है। उत्सवो में प्रयोग करने योग्य है। दिन के अतिम प्रहर में गाना चाहिए। शिवप्रिय राग है।

आलाप—पन्निसासा धगारि पानी धा पामा गरी ममा मामा। म पापा पनिनिमामधासासनि धा धमगा मगारिरिसा री पमापापापसा सपपमपप मपमपपमा। पधनि पध मधस गरि रिरिप रिरिप रिपपप (षड्ज) सा। ससगरि पा (पचम) पपपपमगरि मगा मा मा मधा धा धध निध निसा मम धध सस रिरि गग रिगा ग (पचम) पप सप धस निध धधधमसमा मगारी रिध रिरिध रिरि (ऋषभ) रिरिप रिरिप पा पनिधा पामा गरि मगामा मा। गाम। मगममगा ममगप ममगागरी रिरिरि ध धस गागारी। रिस मम गग पमपपमपपापा पमप ध नि धनि मामामधाधमामधासारीगागापा परि पापमपधनिपधमधमा गारी। रिगमपाधापा मागारिपगामाम (मध्यम) मगाममगममगमपमगागपमागामापापा पनिधधनिधनिनिपानिधध ससधधगरीगरिरि गपापपधपधापधससधधगसग। सासससमरिरिपमपममपापापममपपधधस सपा। ससससमसमरिरिगागससपपपप धधनिपधमधमगरिमगाग। सगसधस पपधधससरिरिपपपपपमगरीमगागगा। मामागमम (मध्यम)मा पनिधनिरिधा धनिपपपधममरिगरिमरिग। ससासससगससगधधध गससससमरिरिरिपरिपाप। पापसधसासपाप (षड्ज) रिसरिरिपाप। पममपपधधधधनिपध मामरिरि। ममरिरि गरिपरिपपपपप (षड्ज) ससासधधगधमगरिपा। पापाधाधापापासासापापाधध पप ममगगागारिधारिरिधरिरि (ऋषभ) रिरिपा (पचम) पधापामागारीगारीसगामामा।

करण—धाममगममाममगममा (पचम) पगममाममगमसाधधधनिप धमाधनिपध सारिगरिमरिमसाममगरिसा। रिगरिग (पचम) पपपपनिनिधामामा। माममधधाधममधधासरिधगाधगगधरिग (पचम) पापपपनिनिध ससधगसमागारीमारिमा (मध्यम) निधाधाधधधनि। पामागारीरिपारीनिधा (षड्ज) ससममारिरिरिरिपममनिधापामागारीरिमागामामाधरिरि धरिरिधरिरिरिपपरिपपरिपपरिपपमनिनिधनिधानिनिधाधधध निधधमधमामाममधध (षड्ज) स (ऋषभ) रि (पचम)

पपनिनिनिनिवनिनि निपववधरिपपमवममरिरिगरि (पचम) पनिनिववपृपृमृमगग-रिरिमग मामानिवनिवावववनिपपपवगमरीगरिरिपरिपामगागामामा।

१	सा	धा	मा	मा	सा	सा	मा	सा
	प	व	न	वि	लु	लि	त	
२	धा	पा	मा	पा	धा	पा	मा	मा
	भ्र	मि	त	म	धु	क	र	
३	धा	पा	मा	गा	री	गा	सा	निव
	ज	ल	ज	रे		णु	प	रि
४	मा	री	मा	पा	पा	पा	पा	पृा
	पिं		ज	रि	ते			
५	मा	री	मा	पा	पा	पा	पा	धा
	म		द	म		द	ग	ति
६	मा	सा	पा	पा	धा	पा	मा	गा
	ह		म	व	धू			
७	धा	पा	मा	गा	री	गा	सा	निव
	वि	च	र	ति	वि	क	सि	त
८	पा	पा	पम	गम	मा	मा	मा	मा
	कु	मु	द	व	ने			

(१३) मालवपचम

यह मध्यमा और पचमी जातियो से उत्पन्न है। ग्रह, अश तथा न्यास पचम है। मध्यमग्रामीय पचमादि मूर्च्छना से रागस्वरूप मिलता है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नान्त है। गाधार अल्पत्वस्वर है। काकलीनिषाद का प्रयोग है। शृगार एव हास्य रसो का पोषक है। केतु का प्रियकर है। दिन के अतिम याम में गेय है।

आलाप—पामारिगामाधानिवपाधवानिमरीमागागपा धामारिगा सानिवनिमा-माधनिसारिगाममगमसाधानीवपापवानीसारी। मृामृागगपृाधामारीगामानिधनिमा-माधानिमारिगामगगसनिवनिपृा।पृापृा सधाधासगसामृमगारिरिरिमृामृापमासारीमा-पाधनीधापाधमामाधानीधापृा रिरिरिगामापारीरीगामापारीरीरिगामापानिधा मापा-निधा मारीरिगमाममामरिगमामगमनिध।निपा। पापा पपस धधग समग गरिप ममप मपपृापृा।धाम मप धम।मा पृधानीनिमामापाधासानमामापृाधागानृाधानि धापृा

(१२) बोट्टराग

यह पचमी और षड्जमध्यमा जातियो से उत्पन्न हुआ है। ग्रह तथा अशस्व 'पचम है। न्यास मध्यम है। गाधार का अल्प प्रयोग है। पूर्ण राग है। काकल निषाद का प्रयोग है। मध्यमग्रामीय पचमादि मूर्च्छना है। आरोही वर्ण में राग क प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नान्त है। हास्य एव शृगार रसो क 'प्रोषक है। उत्सवो में प्रयोग करने योग्य है। दिन के अतिम प्रहर में गाना चाहिए शिवप्रिय राग है।

आलाप—पन्निसासा धगारि पानी धा पामा गरी ममा मामा। मृ पृापृा पृनिनि मृामृधृासासनि धा धमगा मगारिरिसा री पृमापृापृापृसा सपपमपपृ मृपृमृपृपृमृा पधनि पध मधस गरि रिरिपृ रिरिप रिपपप (षड्ज) सा। ससगरि पृा (पचम पपपपमगरि मगृा मृा मृा मधा धा धध निध निसा मम धध सस रिरि गग रिगा (पचम) पप सप धस निध धधधमसमृा मगारी रिध रिरिध रिरि (ऋषभ) रिरि रिरिप पृा पनिधा पामा गरि मगामा मा। गाम। मगममगा ममगप ममगागर रिरिरि ध धस गागारी। रिस मम गग पमपपमपपापा पमप ध नि धनि मामामधाध मामधासारीगागापा परि पापमपधनिपधमधमृा गारी। रिगमपाधापा मागारिपगा माम (मध्यम) मगाममगममगमपमगागपमागामापापा पनिधधनिधनिनिपानिधध सससधधगरीगरिरि गपापपधपधापधससधधगसग। सासममरिृरिृपृमपममपापाप ममपपधधस सपा। सससमसमरिरिगागससपपपप धधनिपधमधमगरिमगाग। सग सधस पपधधससरिरिपपपपपमगरीमगागगा। मामृागमम (मध्यम) मा पनिधनिरिधा धनिपपपधममरिगरिमरिग। ससासससगससगधधध गससममरिरिरिपरिपाप। पापसधसासपाप (षड्ज) रिसरिरिपाप। पममपपधधधधनिपध मामरिरि। ममरिरि गरिपरिपपपपप (षड्ज) ससासधधगधमगरिपा। पापाधाधापापासासा-पापाधध पप ममगगागारिधारिरिधरिरि (ऋषभ) रिरिपा (पचम) पधापामा-गारीगारीसगामामा।

करण—धाममगममाममगममा (पचम) पगममाममगमसाधधधनिप धमाधनिपध सारिगरिमरिमसाममगरिसा। रिगरिग (पचम) पपपपनिनिधामामा। माममधधा-धममधधासरिधगाधगगधरिग (पचम) पापपपनिनिध ससधगसमागारीमारिसा (मध्यम) निधाधाधधधनि। पृामागारीरिपारीनिधा (षड्ज) ससममारिरिरिरि-पममनिधापामागारीरिमृागामृामृाधरिरि धरिरिधरिरिरिपपरिपपरिपपरिपपम-निनिधनिधानिनिधाधधध निधधमधमामाममधध (षड्ज) स (ऋषभ) रि (पचम)

पपनिनिनिनिववनिनि निपधववरिपपमवममरिरिगरि (पचम) पनिनिववपृपृमगग-रिरिमग मामानिवनिवाववधनिपपपवगमरीगरिरिपरिपामगागामामा ।

१	स।	वा	सा	मा	सा	सा	सा	सा
	प	व	न	वि	लु	लि	त	
२	वा	पा	मा	पा	धा	पा	मा	मा
	भ्र	मि	त	म	वु	क	र	
३	घा	पा	मा	गा	री	गा	सा	निव
	ज	ल	ज	रे		णु	प	रि
४	ना	री	मा	पा	पा	पा	पा	पृा
	पि		ज	रि	ते			
५	मा	री	मा	पा	पा	पा	पा	वा
	म		द	म		द	ग	ति
६	मा	सा	पा	पा	धा	पा	मा	गा
	ह		म	व	धू			
७	धा	पा	मा	गा	री	गा	सा	निव
	वि	च	र	ति	वि	क	सि	त
८	पा	पा	पम	गम	मा	मा	मा	म।
	कु	मु	द	व	ने			

(१३) मालवपचम

यह मध्यमा और पचमी जातियो से उत्पन्न है। ग्रह, अश तथा न्यास पचम है । मध्यमग्रामीय पचमादि मूर्च्छना से रागस्वरूप मिलता है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नान्त है। गावार अल्पत्वस्वर है। काकलीनिपाद का प्रयोग है। श्रृगार एव हास्य रसो का पोषक है। केतु का प्रियकर है। दिन के अतिम याम में गेय है।

आलाप—पामारिगानाधानिवपावधानिसरीमागागपा धामारिगा सानिवनिमा-माधनिनारिगाममगमसावानीवपापवानीसारी। मृामृागगपृाधामारीगासानिधनिमा-मावानिमारिगामगगसनिवनिपृा ।पृा पृा सवावासगसासृमगारिरिरिमृामृापमासारीमा-पावनीवापावमासाधानीवापृा रिरिरिगामापारीरीगामापारीरीरिगामापानिवा मापा-निवा मारीरिगमाममासरिगमामगसनिव ानिपा। पापा पपस धवग ससग गरिप ममप मपपृापृा ।धाम मप धम।मा पृवानीनिमामापाघासासमामापृावागामृावानि वापृा

घमासघनि धापा मामा (मध्यम) गागू मगूम री रिरीरिरिमसाससससमरीरिरिरि मापमामपापापपपधामामसमनिनिधधपपपधमामसससधधनिनिधधपपममगगरिरीनिनी धधपारीरीधरिरिगामापारीरीधरिरिगमापा। रीरीधरीधरिरिगामापारिगमरिगमप घनिधम। मरिरिरिरिगग ससससघसरिगगरिसनिधमपपरिममसुधनिधापाधामूगासू धानीधापाधमसघनिघपा।

करण—मापाधामा मरिगसा घनिमा घनिसा रिमगा धनिधघसधनिधापापा घध धनिधनिरि मापधनिधगसधानीधासाधानी (पचम) पापधसधाधधगसाससस मगारीरीपमूामूापनिघनिधसनिधपूापू रिगमापा धनिधस धनिपूपपधममपमधसधनि ममनिनिधधपाधामनिधपापा।

आक्षिप्तिका—

१	गा	री	सनि	सा	मग	रिग	सा	पम
	ध्या		न	म	य	न	वि	
२	पा	पा	सा	मा	गम	गा	निध	नी
	मु		च	ति	दी	न		
३	री	मग	पा	पम	पा	पा	धप	मा
	व्या	ह	र		ति	वि	श	ल्लि
४	रिम	गस	धम	धनि	पा	पा	पा	पा
	स	र	स	लि	ले			
५	पम	धम	सा	सा	सा	गा	सा	निध
	वि	धु	नो		ति	प		क्ष
६	निध	सा	सा	सा	सा	री	गा	मा
	यु	ग	ल		न	रें		द्र
७	धा	मा	रिग	सा	निध	सा	पा	मा
	ह		सो		नि		ज	
८	मरि	गम	धस	निध	पा	पा	पा	पा
	प्रि	या	वि	र	हे			

(१४) रूपसाधार

यह नैपादी व षड्जमध्यमा जातियो से उत्पन्न हुआ है। ग्रह और अश षड्ज हैं। मध्यम न्यास है। ऋषभ तथा पचम अल्पस्वर हैं। काकलीनिपाद का प्रयोग है।

अवरोही वर्ण मे राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नमध्य है। वीर, करुण, रौद्र और अद्भुत रसो का पोषक है। षड्जग्रामीय षड्जादि मूर्च्छना है।

आलाप—सानिधा सनि सा सामा पामापापामपा मगामनी निधाधधा मधनि धाननी सुसुपा धा सा री गाधा सापा धमा माधा निधानीनी मागा मागा मसा।

या

आलाप—सा धा सा धा पा पधा सा सा सगामगासगु धा पु धा सु मु सु गा मु निधा मु ससनि सा सु मु मु गु ग सा धा पाप धप ध मु सु स गा मा नी साना (षड्ज) म सगा सगा ग सासा धापा धाप मामा।

करण—साधा सनिधनी सा सा पामा पममा गसु नीधाधाध सधनिधध (षड्ज) सा माधाधासारी गमगरिसधाधपसाधधनिसा (मध्यम) मगमसा। सगमधमनिधा सगस सधनिध धमा मगामा मामा (मध्यम) (पचम) पगगम माग ममनि निधप-प मपा। गममम (षड्ज)सध सससा निधम पप धध स रिरि मरि ग मा धधधधगसा (धैवत) निधमा (मध्यम) म सा सगगध मम पस सग सस धनि धध मा मग मामा।

आक्षिप्तिका—

१	मा	मा	नी	नी	धा	धा	सा	सा
	स	द्यो			जा		त	
२	नी	नी	धा	सा	सा	मा	सा	सा
	वा		म	म	घो		र	
३	मा	मा	नी	धा	पा	मा	मा	मा
	त		त्पु	रु	ष	मी		
४	मा	री	नु	नी	नी	धा	मा	मा
	शा				न			
५	मा	मा	मा	मा	नी	नी	धा	धा
	वि		श्व		वि		ष्णु	
६	मा	सा	पा	पा	मा	मा	मा	मा
	वे		द	प	द			
७	मा	मा	नी	नी	नी	धा	मा	सा
	सू	क्ष्म	म	चि		त्य	म	
८	नी	नी	धा	मा	सा	सा	मा	सा
	ज	न	क	म	जा		त	

९	मा	मा	मा	मा	सा	सा	सा	सा
	प्र	ण	मा		मि	ह	र	
१०	सा	सा	नी	धा	सा	सा	सा	सा
	सद्	गु		रु				
११	मा	मा	नी	नी	नी	धा	सा	सा
	श	र	ण		म	भ	व	म
१२	सा	सा	पा	धा	मा	मा	मा	मा
	ह		प	र	म			

(१५) शकराग

यह षाड्जी व धैवती जातियो से उत्पन्न हुआ है। ग्रह, अश और न्यास षड् है। सपूर्ण राग है। काकली एव अन्तर गान्धार का प्रयोग है। षड्जग्राम षड्जादि मूर्च्छना है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्व अलकार प्रसन्नमध्य है। वीर, हास्य तथा अद्भुत रसो का पोषक है। रुद्रप्रि राग है।

आलाप—सा निधनी पापाधनी सारीगासासारी गाधा धानी सासा निधसार निधसानी धापानिसा गमा धध निनिरि गा सा।

या

आलाप—सा सनिमा मप धम सुगुगा मम मग माध साम पगसमासनि ससस निरिनिरि रिरि धनि मामपाधा मागासासनि सा स नी सास। रिरिरिरि गा रिधाव पानिनिनि निध सासा सरि रिरि धधध म ध मा धस रिम मरि। मा धापामा मागा सास री सासा।

करण—(षड्ज) ससनि मम मम पप धध गगा सरिरीरी गमगम माधधव गगससगासनि साससनि रिरिरिरिनिरिरिधानिमपधामा (गाधार) ग (षड्ज सनिनि पनिसासा सससनि रिरि गरिरि धापापनि निधासासा सरिरिरिधधधमधममा धमरि ममरिमधधपप मम गग (षड्ज) सस निसासा।

या

करण—(षड्ज) सनि धनि सा सा सा स ससा। सरिरिरि रिम (षड्ज (धैवत) धध (षड्ज) सस मा गा गगगमा गगनिस (षड्ज) सनिनिनि स रि गगमा।

(१६) भम्माणपंचम

यह षड्जमध्यमा जाति से उत्पन्न है। ग्रह, अंश और न्यास षड्ज है। न्यास मध्यम है। काकली निषाद का प्रयोग है। संपूर्ण राग है। गांधार अल्पत्वस्वर है। षड्जग्रामीय षड्जादि मूर्च्छना है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नमध्य है। वीर, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है। शिवप्रिय राग है।

आलाप—मा रिरिम रिरि सारी रिपा धाधधध धपाधपाप धपधप म मा मम मा। गारी रिधा धप धासा धासा धाना सरी रीसा सस मग रिमा सनिनि (धैवत) (पंचम) पप धप धप पपप ममप मप मा मगमामा।

या

सासा मधा मरी मा पृा पृ (पंचम) पृा पृा मृा मृा सरी पापृा मृपृ धृमृ निध पृामृा पृमृा पृापृा मृाधृा सृानी धापृा मृापृ मृापृा मृा मम पम प (मध्यम) मा।

करण—मस रिरिरि सरीरीरी। पापा धप धधा धध पधधा। पापाप मपमप-पापापा धधध मामा माम ध रीरीरीरीरी धरिरि धा। धापा पापा पाप पपप धाधधा सध धसा सृा सृा। स रिरिरि ससमसमरिग म पधध धापमपनि पपाप पाप पध मधपध पाध पध पाधपपापपमगसा।

या

करण—सस रिरि सासा धध रिरि सासा धृ धृ धृ सरिम मग मामरि गरिस रिरि मपधससनि धाम रिगा मा (पंचम) पम धम मम पग पृापृामृामा।

आक्षिप्तिका—

१	री	गा	मा	मा	रिग	मा	धा	मा
	गु	रु	ज	घ	न	ल	ल्लि	त
२	पा	धा	पध	पम	पा	पा	धा	पम
	मृ	दु	च	र	ण	प	त	न
३	मा	री	मा	पा	पा	धा	पम	मप
	ग	ति	सु	भ	ग	ग	म	न
४	पा	धनि	पम	धम	मा	मा	मा	मा
	म	द	य	ति				

५	री	री	मा	पम	रिग	सा	धा	मा
	प्रि	य	मु	दि	ता	म	धु	र
६	पा	पा	पध	पध	पा	पा	पा	पा
	म	धु	म	द	प	र	व	श
७	मा	मा	पा	धस	रिग	सा	धनि	पम
	हृ	द	या		भृ		श	
८	पा	धा	पा	धप	मा	मा	मा	मा
	त				न्वी			

(१७) नर्तराग

यह मध्यमा और पचमी जातियो से उत्पन्न हुआ है । दुर्गाशक्ति के मतानुसा धैवती जाति से उत्पन्न हुआ है। अश और ग्रहस्वर पचम हैं। न्यास मध्यम है काकली निषाद का प्रयोग है। गाधार का अल्पत्व प्रयोग में है। मध्यमग्रामी पचमादि मूर्च्छना है। सचारी वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलका प्रसन्न मध्य है। इसका प्रयोग उद्धट चारीमडल नृत्य में है। कश्यप के मतानुसा हास्य व शृगार रस का भी पोषक है।

आलाप—पापसा मगामापापगामा नीधापापमानीनी सासा सागा सानि धन नीनी। नि निध धमपध ममगा गसा सम मगा गनी निनि धधप पधममगामा।

या

आलाप—गमागम मापापग पापा। पगापानीनिधाधा। नीनी सागासा सुव नीनि नीनी निनि मसा ससस धानीनीनी निनिनि धधनि पपध मामगागस समा गगागरी निनी निध धधनी प (पचम) मागामामा।

करण—पापमगापा (पचम) ससगग निनिधापा (पचम) नीनीवा (पड्ज सनिनिध सनी धापा मापा पमगा गनिनि पधनि गम गम पामधाममामा।

या

करण—पपप मपपप मपप मग समग मामग सा। मगा मपापनी निवनि (पड्ज) सनि सनि निवनिधा निनि धधधनि पधपा पपधपाप धामम गमसा ससमगसा (पचम) धमा नीधापा। मामानी धधसा धधधध निपाधा पामागा गमसा सासा गपमा धनिध धनि (पचम) पधप मममनि धनि पधमम (पड्ज) सगामामा।

द्वितीयकरण—पापा (षड्ज) सगामा (पंचम) पापापा पधमा मगमा (मध्यम) मामा। ममम निधा धध निधमा पपधमा गमगमा मा (षड्ज) स मापपाधप माम मनि धरिधग़ (षड्ज) ऩ धानी निनि नीधधधनि। पापपध पाम। सामा। ग़ा (पंचम) धधम मनिधनि पध पममा गामामामा।

आक्षिप्तिका—

१	पा	पा	मा	गा	पा	पा	गा	मा
	अ	न	व	र	त	ग	लि	त
२	मा	सा	म़ा	म़ा	सा	मा	गा	सा
	म	द	ज	ल	दु		दि	न
३	गा	मा	पा	मा	गा	मा	मा	मा
	वा		री		घ	सि		क्त
४	मा	गा	मा	पा	मा	पा	पा	पा
	मु	व	न	त	ल			
५	नी	सा	नी	सा	सा	मा	मा	मा
	म	घु	क	र	कु	ला		घ
६	सा	गा	नी	धा	पा	पा	पा	पा
	का		रि	त	दि	न		दिङ्
७	नी	मा	नी	सा	मा	धा	पा	पा
	मु	ख	ग	ज	मु		ख	
८	मा	पा	गा	गा	मा	मा	मा	मा
	न		म		स्ते			

(१८) षड्जकैशिक

यह कैशिकी जाति से उत्पन्न हुआ है। अंश और ग्रहस्वर षड्ज तथा ऋषभ हैं। न्यासस्वर निषाद और गांधार हैं। मन्द्रस्थान में गांधार एवं षड्ज का प्रयोग है। ऋषभ अन्तरस्वर है। अवरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नादि है। षड्जग्राम मे षड्जादि मूर्च्छना है। वीर, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है। शिवप्रिय राग है।

आलाप—ऩानिनि रिसामा पामृ पाप ममगा। मृ निनि धाधामा मधाध ममधा सा समा मधा गसास। धमा मसासमामधा मानधा धमध नीनी।

या

आलाप—सासास नीनी सनिनी मपानीनीपापा रीरिग रीरी गगरिरि पा मप पमगम गरीगागरीसा। सनीमपनीनी धधमप निरिरिग। सा (षड्ज) स नि सानीसा (षड्ज) स निरीसानी।

करण—(षड्ज) सनिध समा ससनि स़ास़ा निनिस निरिसा ममपमम पपापपा पपा (मध्यम)। मम गगाममगम गा (गांधार) गगगनिधम निधम मामामाधा धमामाधा ग़ग़ सग़ सग़सा (षड्ज) ससधधधनि समम निधानीनि। (निषाद निधनि नीनिनि (षड्ज) सधनि नी निनिधनिगा। म मपम पापप (मध्यम) मग ग (षड्ज) सस़स़स़ गधरिग गनिध निनिनिधमा। मम धध गग रिग (षड्ज स सधनिधधमा पधानीनीनी (निषाद) निनि।

या

करण—सा (षड्ज) सनि री सानिसा (षड्ज) समापा नीपा नीधा (पचम पापारीधरीरी पमा मारी रिगरिग (षड्ज) सरिस निधप निसनि सनीनी।

आक्षिप्तिका —

१	सा	री	सा	री	सा	सा	सा	सा
	दी		ह	र	फ	णि		द
२	सा	नी	नी	नी	नी	सा	नी	री
	ना		ले		म	हि	ह	र
३	री	री	री	री	री	गा	सा	सा
	के		स	र	दि	सा		मु
४	नी	सा	नी	री	री	री	री	री
	ह	द	लि		ल्ले			
५	मा	मा	पा	पा	मा	मा	सग	री
			पि	अ	इ	का		ल
६	रिस	सा	नी	नी	पा	पा	नी	नी
	भ	म	रो		ज	ण	म	अ
७	सा	सा	सा	सा	सा	नी	नी	नी
	र		द	पु	ह	र		
८	री	री	रिस	नी	नी	नी	नी	नी
	प	उ		मे				

(१९) मध्यमग्रामराग

यह गांधारी, मध्यमा और पंचमी जातियों से उत्पन्न हुआ है। ग्रह और अंशस्वर मंद्रषड्ज हैं। मध्यमग्राम की मध्यमादि मूर्च्छना है। न्यास मध्यम है। काकली निषाद का प्रयोग है। अवरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नादि है। हास्य एवं शृंगार रसों का पोषक है। ग्रीष्म ऋतु में, दिन के प्रथम याम में गाने के लायक है। इस राग से मध्यमादि नामक रागाङ्गराग उत्पन्न होता है। उस राग की उत्पत्ति, न्यास, मूर्च्छना, काकलीस्वर प्रयोग और वर्णालंकार—ये सब मध्यमग्राम राग जैसे हैं। ग्रह तथा अंशस्वर मध्यम है।

आलाप—मा नीधापाधा धाधरि। गासा। रिगानीसा। सगप।पपप निनि-पनिमा मा गपमानिधनिनि निरिगासा। पा म प निधामा।

करण—निनिपपगगममरिग। नि मसामा। ममगगपपधध मधनिसनिध पापा-पापा पनी पनी मामामागागामगामनी धनीनीनिनिनिरिगमामापापामापानिधपा-मामा।

आक्षिप्तिका—

१	मा	मा	गा	गा	पा	पा	मा	मा
	अ	म	र	गु	रु	म	म	र
२	गा	मा	मा	मा	धा	नी	मा	ना
	प	ति	म	ज	य			
३	सा	मा	मा	मा	पा	पा	मा	मा
	जि	त	म	द	न	म	क	ल
४	री	गा	नी	मा	मा	ना	मा	सा
	श	शि	ति	ल	क			
५	नी	नी	नी	नी	धा	पा	मा	मा
	ग	ण	श	त	प	रि	वृ	त
६	गा	मा	गा	मा	धा	नी	मा	ना
	म	नु	भ	ह	र			
७	नी	री	गा	नी	मा	मा	पा	पा
	प्र	ण	म	त	मि	त	वृ	प
८	मा	ना	निध	पा	मा	मा	मा	मा
	र	थ	ग	म	न			

२	धा	नी॰	मा॰	मा॰	मा॰	री	मा॰	री
	म	द	ज	न	म	ति	सी	
३	धा॰	नी॰	सा॰	सा॰	गा	रिग	धा	धा
	र	भ	ल		ग्न		षट्	प
४	सा	धा	सा	मग	मा॰	मा॰	मा॰	मा॰
	द	स	मू		ह			
५	मग	री	गा	मा	मा	मा	पम	गा
	मु	ख	मि		द्र	नी		ल
६	री	गा	सा॰	सा॰	मा॰	मा॰	मा॰	मा॰
	श	क	लै		र्भ्	षि		त
७	नी	धा॰	नी	धा॰	सा॰	सा॰	सा॰	सा
	मि	व	ग	ण	प	ते		
८	गा	री	री	गा	मा॰	मा॰	मा॰	मा॰
			जं	य	तु			

(२२) भिन्नषड्ज

यह पड्जोदीच्यवती जाति से उत्पन्न हुआ है। इसका अश और ग्रहस्वर धैवत है, न्यासस्वर मध्यम है। षड्जग्राम की धैवतादिक मूर्च्छना है। ऋषभ एव पचम वर्ज्य हैं। सचारी वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नान्त है। काकली अतरस्वरो का प्रयोग है। ब्रह्म-प्रिय राग है। वीभत्स एव भयानक रसो का पोषक है। हेमत ऋतु में, प्रथम याम में गाने के योग्य है। इससे उत्पन्न रागाङ्ग राग भैरव है। भैरव का अशस्वर धैवत है। न्यासस्वर मध्यम है। ऋषभ एव पचम वर्ज्य हैं। प्रार्थना में इसका प्रयोग है। अन्य लक्षण भिन्न षड्ज के ही समान हैं।

आलाप—धा॰ धा॰ माम गा सा॰ सा॰ सगम धधा धा निधमगगमा मम मध मग सा॰ सा॰ सस॰ ग स॰। ग मधा धा धा सनिस सा॰ सानि गनि सनिधाधा। सनिसा॰ सा॰ स॰ न॰ स॰ ग सग स॰ ग मधा धानि धम गमा माधा। ध॰ नि॰ नी॰ नी॰ गाम गा मामा।

वर्तनी—धा धगा मामध मम सा॰ सा॰। सगम धधा धा धनिध पामामा मा मामम धम गसा॰ सा॰ सा मप मध गसा॰ सा॰ गसगध धा धा धनि पध मागा मा मा। मग सा॰ सा॰ सग धम धधा धाध निध पम गा मामा।

आक्षिप्तिका—

१	धा	धा	धा	नी	धा	पा	मा	गा
	च	ल		त्त	र			ग
२	सा	गा	मा	नी	धा	धा	धा	नी
	भ			गु	र			अ
३	धा	पा	मा	गा	सा	गा	सा	धा
	ने			क	रे			णु
४	धा	धा	नी	गा	मा	मा	मा	मा
	पि			ज	र			सु
५	मा	नी	धा	नी	सा	सा	सा	सा
	रा			सु	रं			सु
६	नी	गा	सा	नी	धा	धा	धा	नी
	से			वि	त			पु
७	धा	पा	मा	गा	सा	गा	मा	धा
	ना			तु	जा		ह्न	
८	धा	धा	नी	गा	मा	मा	मा	मा
	वी			ज	ल			

(२३) भिन्नपचम

यह मध्यमा और पचमी जातियो से उत्पन्न राग है। इसका ग्रह और अश धैवत है। न्यास पचम है। मध्यम ग्राम की धैवतादि मूर्च्छना है। सचारी वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नादि है। इस राग मे काकलीनिपाद का प्रयोग है और शुद्धनिपाद का भी। विष्णुप्रिय राग है। वीभत्स व भयानक रसो का पोषक है। ग्रीष्म ऋतु के प्रथम प्रहर में गाने के लायक है। इसमे उत्पन्न रागाग राग वराटी है। अशस्वर धैवत है। ग्रह और न्यासस्वर षड्ज है। मद्रस्थायी मध्यम मे तारस्थान के धैवत तक सचार है। शृगार रस का पोषक है।

आलाप—धा पा धामा नीधा पानी धामा गा मा पा पा पम मग पम मगस मगा गा री री री माधा पाधा मानीधा धप धनी (धैवत) धा धा मा धा सा (षड्ज) सामारिगनूसा गा गमा मनी न्नि (धैवत) धा निध पधा धाम धा मा गा मा पा पा।

वर्तनी—(धैवतषड्ज) सा गा रि (ऋषभ) मनिध पप धपनि (धैवत) धा धप धनी पचम परि गरि निधाधा पा मागा मा पा (पचम) (ऋषभ) रि मध मम मधा

रागांग राग गौड (गौळ) है। अंश, ग्रह और न्यासस्वर निषाद हैं। पंचम वर्ज है। तारस्वर बहुत्व है। अन्य लक्षण टक्कराग के अनुसार हैं।

आलाप—साधा मारी मागा गस गध निसारी गसारी गम मास निध मध मरी रीरिमागागसा सासग मधनिधासाधामरि गसा गधनि। सा सा ससगसाससमरिग सासगधाधध गसा सस धध निधाधम धमनिमरिगरिरिरि निधममधमरी गरीमरि गसा ससग सासरिगधाधनि निसासा संसंसंगससममगधममनिधवस.सधाधमामव मरिगसा गवनि स। मामामधामामधानिधानि मामधा धनिधमगामरिग साधवनि सासासासमधा गममनि गगमध मरीरिमगागसा सासासमगससमगमसगमगनि धाम सासा (षड्ज) ससस रि धमगगसनिधाधमा मामा धमधमम ममममधमधमाधनि सरिगमगमगरिमगागसागगनिसाममगमगमम गगममगग निनिमम गगमम ससममग गगमस सममरिरि गससगगस सधवनिनि मममधधधवधधव निवनिवमधववव मधधसध निधामधवमधवधधधधमसगसधनिधा। मममममममध सगारि मागागमग धनी सासा।

करण—(षड्ज) सधा मारिगरिनिधाम मधमारिगसासगधाध (षड्ज) सधाधासुधगरि गरीरीरीनिरिमा। माममधनिधा ममध धससधवगरिमासगसनि मनिमाधासाधानी सासामासनिधनिधानी सागाधनी सामा साधा मागारीरी (ऋषभ) रिगामा निधानी सु। सु। सु गु मधधनिगा धासासासमरिगसगसनिधा नीधाधाध सा सासा सासा मगामगागनिगपमागा। सामामामा धामरि गसुसगसागनी गासा मामा गानी (षड्ज) सु सु सा सा गा गा गामा सु सु। सगासासा गामगा ममगममामा। गासागारि मारि मारि मारि गसागनि (षड्ज) ससा।

आक्षिप्तिका—

१	सा	सा	धा	धा	मा	मा	मा	मा
	सु	र	मु	कु	ट	म	णि	ग
२	सा	सनि	धा	सा	सा	सा	सा	सा
	णा	र्चि	त		च	र	ण	
३	सा	सा	गा	गा	सा	मा	गा	मा
	सु	र	वृ	क्ष		कु	सु	म
४	धा	सा	निध	सा	सा	सा	सा	सा
	वा		सि	त	मु	कु	ट	

५	धा	नी	मा	गा	मा	धा	मा	गा
	श	शि	श	क	ल	कि	र	ण
६	मा	सा	धा	नी	सनि	धा	धा	धा
	वि	च्छु	रि		त	ज	ट	
७	मा	मा	पा	नी	मा	गा	मा	गा
	प्र	ण	म	त	प	शु	प	ति
८	गा	गा	धा	नी	ना	ना	सा	मा
	म	ज	म	म	र			

(२६) हिन्दोल

यह राग षाड्जी, गांधारी, पंचमी और नैषादी जातियों से उत्पन्न है। इनके ग्रह, अंश और न्यासस्वर षड्ज हैं। ऋषभ एवं धैवत वर्ज्य हैं। मध्यग्राम की षड्जादि मूर्च्छना है। काकलीनिषाद का प्रयोग है। वीर, रौद्र, अद्भुत और शृंगार रसों का पोषक है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नादि है। वसंतकाल के चौथे प्रहर में गाना चाहिए।

इससे उत्पन्न रागांग राग वसंत है। संपूर्ण राग है। अन्य लक्षण हिंदोल के समान हैं। वसंतराग का दूसरा नाम देशी हिंदोल भी है।

आलाप—सानीपापमागागपापमागनी सामामासा गामापापनीनीनी गागपपा-पनीमा। मनीमागागपापनी मनीसनीगमा। पन्नीमामपनी मगासासामृा मगगसननि गसानमनीमनी पपसममामगसनिसामृगामसा पापनीसा मनीमगामपापनीमनी मनि गमा पनि सागानी सा। गामानमृ गमा गमा मनिसनिनिपापमगामा। ससगग मम-पपनिनि मनिमगा गपापनिमा। गासगमनीसनी मागा मम गम मग मगमप मगापाप सगानाम। मगम मनीपा पापममगागमगपापनी निमनि मम। नीपा मागागमा पापनी सा। ननि मगा गपापनी मागाममनी मनी स। नि ममनी मा। ना नानागमासनी सानमग ममगपमा गपापन गगमगनी पापमम गा। गमसमगगपा। ममनीप पम-निनिमगापापनी नागासगननी मनी म। (षड्ज) समा। पापानी मानापपनी पनिपा-पनी नानापपनि पनी पनि नगानम मगसगननीसनी पनी मगमगामामनी। पनी पमगमगमा गम गमानिमनीपनी पमगमगामा। मगमग नागानन निनि पपमम गमपनीनिपम। गाममपनीनि पमगाममपनी सननिमगाननगामगामपनीपापनी मगा-गपनी मनीननीगमानी मापनीमपागममगागनमननि मा (षड्ज) ननगनग। मगामगम मगनी पापापम निनिगसा। ममगा (गांधार) पा (पंचम) **पपनिनि**

गागस गसनी सनीसा (षड्ज) ससगससमगमा सस गा। निनि सपानी ममापगम ससससगगससगसगम पापासनि मगागपापनी सागासगासनिसनीसा (पचम) पपनि पनि पापनि ससनि ससपापनीपगनीगगपापनी मृमृमृ। गगगनिनिनि पपपनिनिनि सस। पागगम ससगसगसगमपनिपस निमगागापापन्निसासाससमगसगसनीनी सा

करण—सगापमगापा (पचम) (षड्ज) समागसागनीनिपानि पपगगपमग गृागृागृा (षड्ज) ससगागम पाधमम (पचम) पानिनि सनिसा सृ। निनिनि सास सनि सासानिगपानी। सृासृासृासनि ससृ निमगगगस ससनिसगमनिसनि निपनीनि पानीपपगगपगमृमृा गृाग (षड्ज) ससृसृसृ मपम। पानिसनिमा। मामा (पचम) निसनिनि सनि ससा। सस निससनी सासापनी। पनि पापपनि सनि ससस पपपपनी। नीमम निपनिप पगसग गमगामास सनिमम गमगापप गमगानीगृागृ (षड्ज) ससमग मगागमगागमगागमससग सनिसनीपागपागमृामासगगपापस (षड्ज) ससगृगृ ममपपनिनि सनीससगगसगसनिसासा।

आक्षिप्तिका—

१	सा	सा	मा	गा	सा	गा	मा	पा
	स	मु	प	न	त	स	क	ल
२	पम	गा	सा	सा	सा	गा	मा	मा
	म	भि	नु	त	ज	नौ		ध
३	नी	सा	पा	नी	पा	नी	गा	पा
	प	रि	तु		ष्ट	मा		न
४	नी	सृा	सृा	सा	सनि	गा	सप	नी
	स		ह		स			
५	नी	नी	सा	गा	सा	नी	पा	पा
	प्रि	य	त	म	स	ह	च	र
६	पम	गा	सा	सा	गम	गा	मा	पा
	स	हि	त		म	द	ना	
७	नी	सा	पा	नी	पा	नी	गा	पा
	ग		वि		ना	श	न	
८	निस	निम	सा	गा	सा	सा	सा	सा
	गौ			मि				

(२७) शुद्धकैशिकमध्यम

यह राग षड्जमध्यमा और कैशिकी जातियो मे उत्पन्न हुआ है। षड्जग्राम की षड्जादि मूर्च्छना है। इसका अंश और ग्रहस्वर तारषड्ज है। न्यास मध्यम है। ऋषभ एव पचम वर्ज्य है। गांधार का अल्प प्रयोग है। इस राग मे काकलीनिषाद का प्रयोग है। अवरोही वर्ण रागप्रकाशक होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नान्त है। चद्रप्रिय राग है। पूर्व याम में गाना चाहिए।

शुद्धकैशिकमध्यम से उत्पन्न रागागराग देशी है। ग्रह, अंश और न्यासस्वर ऋषभ है। पचम वर्ज्य है। मद्र गांधार का प्रयोग है। मध्यम, निषाद और षड्ज बहुत्व-स्वर है। करुण रस का पोषक है। अन्य लक्षण शुद्धकैशिकमध्यम जैसे है।

आलाप—मृ धृमृ धृ सनि धसनी सृ सृ। सा धानी मृ मृ मृ गृ सृ गृ माधा माधा मृ निध सनि सृ सृ धृमृ मधमगागमा सामाधामामगासागामाधान निधमृनी मृ मामाधानी मा मृ।

करण—मसममधधममधसनिधसासृसृसृ। मृमृगृम गमृ मधममानिधमृ सृ मृ मृ धृधृ मृमृ धम मगसगमम गग धध सस गृमृ मम धमध नधनि मामा मामा।

आक्षिप्तिका—

१	मृा	मृा	धा	पा	मा	धृा	पृा	मृा
	ओ		का		र	मू		र्ति
२	धा	पा	मा	पा	री	री	मा	मा
	म		स्य		मा		त्रा	
३	नी	धा	मा	नी	धा	नी	मृा	मृा
	श्र	य	भू		षि	त		क
४	नी	धा	नी	मृा	मृा	मृा	मृा	मृा
	ला		ती		त			
५	धा	धा	मृा	मृा	री	री	मा	मा
	व	र	द		व	र		व
६	धा	धा	मा	मा	गृा	गृा	मृा	गृा
	रे		ण्य		गां		वि	
७	नी	धा	मा	नी	धा	नी	मा	सा
	द	क	न		न्तु		त	
८	धृा	मा	धृा	नी	मृा	मृा	मृा	मृा
	ध				दे			

(२८) गाधारपञ्चम

यह राग गाधारी और रक्तगाधारी जातियो से उत्पन्न है। ग्रह, अश और न्यास-स्वर गाधार हैं। काकलीनिषाद का प्रयोग है। मध्यमग्राम में गाधारादि मूर्च्छना है। सचारीवर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नमध्य है। यह राग अद्भुत, हास्य और करुण रसो का पोषक है। राहुप्रिय राग है।

इससे उत्पन्न रागाग राग देशाख्या (देशाक्षी) है। गाधार में गमक स्फुरित है। ऋषभ वर्ज्य है। अश, ग्रह और न्यासस्वर गाधार हैं। मद्रनिषाद का प्रयोग है। स्वरो का समसचार है। अन्य लक्षण गाधार पचम के समान हैं।

अलाप—गा सा सा नि सनि स गम गा गा। पामा गा सा सा नि सनि स समम गा गानी धानी सा नीधा पानी मा पा मा। गा स नि स नि सग मगा।

या

अलाप—गागारीरी सनी सपनीसगागा (पचम) सगा मामग पाधानि धानि पमनि धनि स पनि निध निधपापमगागा मसास साम गमधगम गा गागरी सनिपनि सगापमपसगागा।

करण—गममग निगमापपपनिममपामप पा पानी नि मधा मम धम ममा गा गा गम मम गामा (षड्ज) सनि स स ग ग मग मम मगागा री गा नी स सनी पानी नी मप मा गम पा पग मम गु निधनि सम पपप मम। गा स गनि मसा सा सा गम धप धम ममा धा नी पनी नि म मप नि मगा (षड्ज) स नि सा सु। सम गपगम।

या

करण—मगरिरि ससनि निससगागाग ममगगममस गसगा गममगमनि धधधनि मध ममापपधनि नीधा (पचम) पा ममपा मम निवसाम ममपा मपपममा मा सु। सस ससगागा।

आक्षिप्तिका—

१	सा	नी	सा	गा	सा	गा	गा	गा
	पिं		ग	ल	ज	टा		क
२	मा	पा	मा	पा	गा	गा	गा	गा
	ला		पे		नि	प	त	
३	गा	पा	सा	गा	गा	गा	गा	गनि
	ती		ज	य	ति	जा		ह्न

४	नी	पा	मा	पम	गा	गा	गा	गा
	वी		स	त	त			
५	गा	गा	गा	गनि	नी	नी	नी	निस
	पू	र्णा			हु	ति	रि	व
६	नी	पा	मा	पम	गा	गा	गा	गा
	हु	त	भु	जि	सु	स	मि	धि
७	मा	पा	सा	गा	गा	गा	मा	गनि
	प	य	स		क	प	र्दि	
८	नी	पा	मा	पम	गा	गा	गा	गा
	नो		प	नु	दे			

(२९) त्रवणा

भिन्नषड्ज राग का भाषाराग[1] है। इस राग में धैवत, निषाद और षड्ज बहुल स्वर हैं। इसका ग्रह, अंश और न्यास धैवत है। ऋषभ एव पञ्चम वर्ज्य हैं। धैवत, निषाद और षड्ज को मिलाकर वलितगमक का प्रयोग है। तारस्थान में तारगांधार और मध्यम का प्रयोग है। मन्द्र-धैवत का प्रयोग भी है। विजयोत्सवों में इसका प्रयोग होता है। इस राग से उत्पन्न भाषाङ्ग राग डोंबक्रृति है। इसका अंशस्वर षड्ज है। न्यासस्वर धैवत है। ऋषभ व पञ्चम वर्ज्य हैं। दीन व करुण रसों का पोषक है।

आलाप—धाधाधामानी सा नी सासनी सा सासनी धाध साससनि सामनि धानी नि धानी सासा सनि सनी निधाधा मृा गा गृ सृा स। सनिधाध मृा गृा मृा मृा नी धामृा मगाग सा स सनि धानी धानी निध निध गागमृा ससनी नीनिधानीनिधानि धानि सनि। धाधधमाधाधा।

रूपक—धनिधगगृाग सानीनी निनिसनिसनिधनी निधा धा। समनी निध निधा धा धसगमा मगमगा सासा। निनिनि गसनि धनि निधा धा। गाधनि सनि धनिधग सगसनि धनि मम धनिधा।

१ भाषारागों के चार प्रकार होते हैं, जैसे—मूलभाषा, सकीर्णभाषा, देशभाषा, छायामात्राश्रयभाषा। भाषारागों से विभाषा और विभाषारागों से अंतर-भाषारागों की उत्पत्ति होती है।

(२८) गाधारपञ्चम

यह राग गाधारी और रक्तगाधारी जातियो से उत्पन्न है। ग्रह, अश और न्यास-स्वर गाधार है। काकलीनिषाद का प्रयोग है। मध्यमग्राम मे गाधारादि मूर्च्छना है। सचारीवर्ण मे राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नमध्य है। यह राग अद्भुत, हास्य और करुण रसो का पोषक है। राहुप्रिय राग है।

इससे उत्पन्न रागाग राग देशाख्या (देशाक्षी) है। गाधार में गमक स्फुरित है। ऋषभ वर्ज्य है। अश, ग्रह और न्यासस्वर गाधार है। मद्रनिषाद का प्रयोग है। स्वरो का समसचार है। अन्य लक्षण गाधार पचम के समान है।

अलाप—गा सा सा नि सनि स गम गा गा। पामा गा सा सा नि सनि स समम गा गानी धानी सा नीधा पानी मा पा मा। गा स नि स नि सग मगा।

या

अलाप—गागारीरी सनी सपनीसगागा (पचम) सगा मामग पाधानि धानि पमनि धनि स पनि निध निधपापमगागा मसास साम गमधगम गा गागरी सनिपनि सगापमपसगागा।

करण—गममग निगमापपपनिममपामप पा पानी नि मधा मम धम ममा गा गा गम मम गामा (षड्ज) सनि स स ग ग मग मम मगागा री गा नी स सनी पानी नी मप मा गम पा पग मम ग निधनि सम पपप मम। गा स गनि मसा सा सा गम धप धम ममा धा नी पनी नि म मप नि मगा (षड्ज) स नि सा सा सम गपगम।

या

करण—मगरिरि ससनि निससगागाग ममगगममस गसगा गममगमनि धधधनि मध ममापपधनि नीधा (पचम) पा ममपा मम निधसाम ममपा मपपममा मा सा सस ससगागा।

आक्षिप्तिका—

१	सा	नी	सा	गा	सा	गा	गा	गा
	पिं		ग	ल	ज	टा		क
२	मा	पा	मा	पा	गा	गा	गा	गा
	ला		पे		नि	प	त	
३	गा	पा	सा	गा	गा	गा	गा	गनि
	ती		ज	य	ति	जा		ह्न

४	नी	पा	मा	पम	गा	गा	गा	गा
	वी		स	त	त			
५	गा	गा	गा	गनि	नी	नी	नी	निस
	पू	र्णा			हु	ति	रि	व
६	नी	पा	मा	पम	गा	गा	गा	गा
	हु	त	भु	जि	सु	स	मि	धि
७	मा	पा	सा	गा	गा	गा	मा	गनि
	प	य	स		क	प	दि	
८	नी	पा	मा	पम	गा	गा	गा	गा
	नो		प	नु	दे			

(२९) श्रवणा

भिन्नषड्ज राग का भाषाराग[1] है। इस राग में धैवत, निषाद और षड्ज बहुल स्वर हैं। इसका ग्रह, अंश और न्यास धैवत है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य हैं। धैवत, निषाद और षड्ज को मिलाकर वलितगमक का प्रयोग है। तारस्थान में तारगांधार और मध्यम का प्रयोग है। मंद्र-धैवत का प्रयोग भी है। विजयोत्सवों में इसका प्रयोग होता है। इस राग से उत्पन्न भाषाङ्ग राग डोंबक्रृति है। इसका अंशस्वर षड्ज है। न्यासस्वर धैवत है। ऋषभ व पंचम वर्ज्य हैं। दीन व करुण रसों का पोषक है।

आलाप—धाधाधामानी सा नी सासनी सा सासनी धाध साससनि सासनि धानी नि धानी सासा सनि सनी निधाधा मा गा गा सा स। सनिधाध मा गा मा मा नी धामा मगाग सा स सनि धानी धानी निध निध गागमा ससनी नीनिधानीनिधानि धानि सनि। धाधधमाधाधा।

रूपक—धनिधगगाग सानीनी निनिसनिसनिधनी निधा धा। समनी निध निधा धा धसगमा मगमगा सासा। निनिनि गसनि धनि निधा धा। गाधनि सनि धनिधग सगसनि धनि मम धनिधा।

1 भाषारागों के चार प्रकार होते हैं, जैसे—मूलभाषा, संकीर्णभाषा, देशभाषा, छायामात्राश्रयभाषा। भाषारागों से विभाषा और विभाषारागों से अंतरभाषारागों की उत्पत्ति होती है।

(३०) ककुभराग

यह मध्यमा, पचमी और धैवती जातियो से उत्पन्न राग है। इसका ग्रह और अशस्वर धैवत है। न्यासस्वर पचम है। षड्जग्राम में धैवतादि मूर्च्छना है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नमध्य है। यह राग करुण रस का पोषक है। शरद् ऋतु मे गाने योग्य है।

इससे उत्पन्न भाषाराग रगतिका है। इसका ग्रह, अश और न्यास धैवत है। धैवत में स्फुरित गमक है। धैवत बहुलस्वर भी है। तारमध्यम का प्रयोग नही। अपन्यास पचम है। इससे उत्पन्न भाषाङ्गराग सावरि है। इस राग के अश और ग्रहस्वर मध्यम है। न्यास धैवत है। षड्ज अल्पस्वर है। तारगाधार तथा मद्रमध्यम का प्रयोग है। पचम वर्ज्य है। करुण रस का पोषक है।

ककुभ से उत्पन्न विभाषाराग भोगवर्धनी है। अश, ग्रह और न्यास धैवत हैं। अपन्यास गाधार है। ऋषभ वर्ज्य है। तार एव मद्र गाधार का प्रयोग है। गाधार, मध्यम, पचम, धैवत और निषाद बहुलस्वर हैं। वैराग्य का पोषक है।

इससे उत्पन्न भाषाङ्गराग वेलावली है। इसका ग्रह, अश और न्यास धैवत हैं। षड्ज में कपित गमक है। तारधैवत व मद्रगाधार के प्रयोग हैं। विप्रलभ का पोषक है। हरिप्रिय राग है।

इससे उत्पन्न दूसरा भाषाराग प्रथममजरी है। इसमें ग्रह, अश और न्यास पचम है। तारऋषभ, धैवत और मद्रगाधार के प्रयोग हैं। गाधार तथा मध्यम के गभीर प्रयोग हैं। उत्सवो में इस राग का प्रयोग होता है।

तीसरा भाषाराग बगाली है। इसमें अश, ग्रह और न्यास धैवत है। अपन्यास गाधार है। ऋषभ व मध्यम के दीर्घ प्रयोग हैं। मद्रधैवत का भी प्रयोग है। इससे उत्पन्न भाषाग आडीकामोदी है। अश, ग्रह तथा न्यास धैवत है। मद्रमध्यम एव तारगाधार के प्रयोग है। स्वरो का क्रमसचार है।

आलाप—धमृ मृा मगारी रिरि ससनि निधा गामापापगामा धा धगामाममनी मनि निधानिधनि निगा धागधागा रिसासनि मगाग रिरिसासनिनि। धधधपाधपा।

या

आलाप—धाधाधस़ ससससधाध साध साधमसधारीरी ममरिग सासुधाधाध पधसधपधधममामा। मरिमारि मृा माधा धाधाधाधपधनिध पधामृा मधापाधा सारी मरी मृ गृ सृा गृ गृाध पधपमपापा।

करण—वा (धैवत) नीवा (पचम) गामा (ऋषभ) रिरि रि गारि (षड्ज) सधनी नो (धैवत) धावाधानीरी रिसानि रिसनि सनि सधा नीनी (धैवत) वा। धा धनी रिरिसा निरिसानिवानी ममगमगारी रिसानी रिसानी धानिपपमगपमवावा। नी निसनि निधव (षड्ज) सगवरिग (मध्यम) मनीनि मानि निधव (पचम) मपनि मगागरी ममपमगमवावा। गावाम गमरिमागा (ऋषभ) रिमाग (षड्ज) सा। धानी नि (धैवत) वा। वामाध सरिगमगपगमनिवानी पवापनि पवमगरि ममपगरि गृा मृा रि (ऋषभ) रिमाग (षड्ज) स। वानी म (धैवत) धा मावसरि गमगप-गमनि निवानिप धापनोप धमगरिममपगरिगामृामृा (ऋषभ) सवनिम (धैवत) गा पमपमा (षड्ज) सवनि धनि सनिवावपा।

या

करण—धवसासमधववसरीगा सृावा पावापापा मामापा मापावा पामृा मृा सरि मरि ममावप वापप मृा मृा पव सरि मरि गासृा वामा पारीमा पृा पृा।

आक्षिप्तिका—

१	वा	धा	सा	मा	धा	धा	री	री
	यो		ना		म	य		त्र
२	वा	धा	धा	धा	पा	धा	पा	मा
	नि	व	स	ति	क	रो		ति
३	री	री	मा	मा	पा	वा	पा	मा
	प	रि	र		क्ष	ण		स
४	पा	वा	पा	मा	मा	मा	मा	मा
	ख	लु	त		स्य			
५	री	री	मा	मा	धा	वा	पा	मा
	मु		ग्धे		व	स	म्भि	च
६	पा	मा	पा	पा	धा	धा	पा	मा
	हृ	द	ये		द	ह	सि	च
७	पा	धा	पा	मा	ना	रो	मा	री
	म	त	न		नृ	ग		
८	गा	मा	पा	पा	पा	पा	पा	पा
	ना				मि			

(३१) वेगरजी

यह राग टक्कराग की भाषा है। पचम एव धैवत वर्ज्य हैं। अश, ग्रह और न्यास षड्ज हैं। निषाद, षड्ज, ऋषभ, गाधार तथा मध्यम बहुलस्वर हैं। मद्र-स्थानीय निषाद का प्रयोग है। वेगरजी से उत्पन्न भाषागराग नागध्वनि है। इसका ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। पचम व धैवत वर्ज्य है। वीर रस का पोषक है।

आलाप—सा सा सनी सा रिगा नीगगम स नी गा सगसा सनी सारी नी सारी नी सारी सनी सासा मामागागा गा री सनि सानी सारी सारी सारी सारी सनी सनी समागारी सनी नी सरि गानी गागमासनी सासा।

रूपक—मममगगरी री स सनी नी सनी (षड्ज) सनी सरी गरि गगगनी सगरि मासामागा गा री री सा रि ग री सनी नी नी नी नी (षड्ज) सस (ऋषभ) रि गमरि स रिगम म री गसमरी गरी नी सा ममरी गा सा सा।

(३२) सौवीर

यह षड्जमध्यमा जाति से उत्पन्न राग है। इसमें ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। काकली निषाद का प्रयोग होता है। गाधार अल्पस्वर है। अवरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नान्त है। यह राग शात, रौद्र तथा अद्भुत रसो का पोषक है। दिन के पिछले याम मे गेय है। शिवप्रिय राग है।

इससे उत्पन्न मूल भाषाराग सौवीरी है। इसका ग्रह और न्यास षड्ज है। मध्यम बहुलस्वर है। "सगा" तथा "रिधा" साथ-साथ आते हैं। इससे उत्पन्न भाषाङ्गराग वराटी है। वराटी का दूसरा नाम वटकी है। इसका ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। पचम, धैवत तथा निषाद बहुलस्वर हैं। तारस्थान में षड्ज व धैवत का प्रयोग है। शात रस का पोषक है।

आलाप—सा सपा पधानी धापा पधा सा सपाप धा सा सपापधा ध गारि मा गा रि सनि स पा धा सनि सा। मा मा मगारी रि मा म पा प ध निधा पापधा सा स पापधा धगा रि मा गा री सनिधा धपा सा सनी सा सा। मम समम (षड्ज) स स सा ग स ग ग री ग सा स स स ध ध नि निध सनि धनि धा ध प। पपपधध ध स नि सा सा स स स सम (षड्ज) सस सस ग सस मरि रिग सस गध धनि धध ग सं सं सं धनि ध सनि धनि धध (पचम) पपप रि पपनि ध ध स सा सस धम रि रि धम रि रि धस सप। धध नि ग धध सस वध नि ध स नि धनि धधपा। पापपप (गाधार) गा गग मरि सग सनिध सस। पपधध सनिसा। स स स प पप निनिनि (षड्ज) स स स रि रि रि रि परि पा धध स निसा। सध म रि रि धम मा रि रि ग सस ग धध

नि धध गस सस धध निध सनि धनि ध धप धध रि नि धधध ग रि म ग रि स निध म निध निध पपृध रि निध सध गरि मगरि मगरि सनि ध समाप पधध सनिसा।

करण—(षड्ज) स (पचम) नीधा धा धा नी (पंचम) नीधा धा धनी (षड्ज) ससारी रिरि पपनि धाधा धधस स धनि ध पा। पप निध पृ पृ निृ रिृ रिृ ग रि मरि सासा मम रि ग सा स सस स रि ग सा ससनि ध (पचम) धानि (षड्ज) स स। मम स सस स मस सृा ससरि ग गसृ ग सृा ग सृ गृा सस गसनिधनिधाधध निपा पगृा धगृा धगृा गगग समारी (षड्ज) सनिधापा पापाधापा धनिनि (षड्ज) समृा मृा गगारी (ऋषभ) रिरि मममधमम। मासृास (पचम) धासाधनिनिपानीधप।-रीपपपपध धध सृ सृ सृ धृ धृ धधध ममम रि रि रि रि गरि गरि गस सधनि धसा धनि-धधरि पपपप। पधधधध निनि (पचम) पम धध धनि (षड्ज) ससृा।

आक्षिप्तिका—

१	सृा	सृा	सृ।	सृ।	सृ।	सृ।	सृा	सृ।
	त	रु	ण	त	रु	शि	ख	र
२	नी	नी	धा	धा	प।	प।	पा	म।
	कु	सु	म	भ	र	न	मि	त
३	नी	धा	स।	धा	नी	धा	प।	पा
	मृ	दु	सु	र	भि	प	व	न
४	धा	गा	धा	स।	स।	सृा	सृा	सृा
	धु	त	वि	ट	पे			
५	सृा	सृा	सृा	नी	मा	सा	री	गा
	का		न	ने				
६	सा	गा	धा	धा	नी	धा	पा	पा
	कु			ज	रो			
७	नी	धा	सा	धा	नी	धा	पा	पा
	भ्र	म	ति	म	द	ल	लि	त
८	गृा	गृा	धा	सा	सा	सा	सा	सा
	ली		ल।	ग	ति			

(३३) पिंजरी

हिंदोल से उत्पन्न भाषाराग पिंजरी है। इसमें अंशस्वर गांधार और न्यासस्वर षड्ज है। निषाद वर्ज्य है। इससे उत्पन्न भाषाङ्गराग नट्ट है, जिसमें ग्रह, अंश

और न्यास षड्ज है। तारस्थान मे गाधार, पचम तथा धैवत का प्रयोग है। मद्र-स्थान मे निषाद का भी प्रयोग है। स्वरो का क्रमसचार है।

गागारि सा धारि सा सारी गृा मृा मामा रीरि साधासापामागापाधासारी गापा मागारी सा सानि साधारीसासारीगासारी गागमामागारीसारी रिगारि रीस रि सृा। पृा धापासारि गामारि रीसा।

(३४) कर्नाट बगाल

वेगरजी से उत्पन्न भाषाङ्गराग कर्नाटबगाल है। इसका अशस्वर गाधार और न्यसस्वर षड्ज है। पचम वर्ज्य है। शृगार रस का पोषक है।

क्रियाङ्गराग

(१) रामकृति (रामक्रिया)

इस राग का ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। षड्ज से पचम तक, तारस्थान और मद्रस्थान मे प्रयोग है। षड्ज व ऋषभ बहुलस्वर है।

(२) गौडकृति (गौड़क्रिया)

इस राग का ग्रह, अश और न्यासस्वर षड्ज है। मध्यम एव पचम बहुलस्वर है। ऋषभ व धैवत वर्ज्य है। मद्रस्थान मे पचम का प्रयोग है। तारस्थान मे मध्यम का प्रयोग है।

(३) देवकृति (देवक्रिया)

ग्रहस्वर धैवत है। अश और न्यास षड्ज है। मध्यम बहुलस्वर है। ऋषभ एव पचम वर्ज्य हैं। मद्रस्थान में निषाद का प्रयोग है। वीर रस का पोषक है।

उपाङ्गराग

(१) वराटी

वराटी राग के उपाग ६ है। सब में, ग्रह अश और न्यास षड्ज है।

१ **कुतलवराटी**—इस राग में, निषाद बहुलस्वर है। धैवत मे कपित गमक है। मद्रस्थानीय षड्ज का प्रयोग है। शृगार रस का पोषक है।

२ **द्राविड़वराटी**—इस राग के ऋषभ में स्फुरित गमक है। मद्रस्थानीय निषाद का बहुल प्रयोग है।

३ **सिधुवराटी**—इस राग मे गाधार बहुल स्वर है। षड्ज और धैवत मे कपित गमक है। मद्रमध्यम का प्रयोग है। शृगार रस का पोषक है।

४. **अपस्थान वराटी**—इस राग में, मद्रस्थायी मध्यम, धैवत और निषाद का प्रयोग है।

५ **हतस्वर वराटी**—इस राग मे पचम बहुलस्वर है। षड्ज और पचम में कपित गमक है। मद्रस्थानीय धैवत का प्रयोग है।

६ **प्रताप वराटी**—इस राग मे पचम बहुलस्वर है। मद्रस्थानीय धैवत का प्रयोग है। षड्ज में कपित गमक है।

(२) तोडी

तोडी के दो उपागराग है—

१. **छायातोडी**—इसमें ऋषभ एव पचम वर्ज्य है।

२. **तुरुस्कतोडी**—इस राग के स्वरो मे आहति है। गाधार का अल्पप्रयोग है। धैवत और निषाद बहुलस्वर है।

(३) गुर्जरी

१. **महाराष्ट्र गुर्जरी**—इस राग में अश एव न्यास ऋषभ हैं। पचम वर्ज्य है। मद्रनिषाद का प्रयोग है। स्वरो में आहति है। उत्सवो में इसका प्रयोग होता है।

२. **सौराष्ट्र गुर्जरी**—इस राग के ऋषभ मे कपित गमक है।

३. **दक्षिण गुर्जरी**—इस राग के मध्यम में कपित गमक है। अन्यस्वरो मे आहति है।

(४) वेलावली

१. **तुच्छी वेलावली**—इसका अश, ग्रह और न्यास धैवत है। मध्यम वर्ज्य है। षड्ज तथा पचम में आदोलित गमक है। विप्रलभ शृगार रस का पोषक है।

२. **खवावती वेलावली**—इसका अश और न्यास धैवत है। पचम वर्ज्य है। मध्यम और निषाद मे आदोलित गमक है। शृगार रस का पोषक है।

३. **छाया वेलावली**—अश एव न्यास वेलावली के अनुसार हैं। मद्रस्थान में मध्यम का कपित गमक है।

४. **प्रताप वेलावली**—इसमें ऋषभ और पचम वर्ज्य हैं। स्वरो मे आहत गमक है।

(५) भैरव

१. **भैरवी**—भैरव का उपाग भैरवी ही है। इसका ग्रह, अश और न्यास धैवत है। तारस्थान और मद्रस्थान में गाधार का प्रयोग है।

(६) कामोद

१. **सिहली कामोद**—कामोद का उपाग है। इसके अधिकाश लक्षण कामोद के समान हैं। मद्रस्थान मे मध्यम का प्रयोग है। धैवत मे कपित गमक है।

(७) नट्ट

१. **छायानट्ट**—नट्टराग का उपाग है। इसके ग्रह, अशादि लक्षण नट्टराग के समान हैं। निषादगाधार में कपित गमक है। मद्रस्थान मे पचम का प्रयोग है।

(८) टक्क

१ **कोलाहल**—टक्कराग का भाषाराग है। इसका ग्रह और अश षड्ज है। पचम वर्ज्य है। मध्यम बहुलस्वर है। मद्रस्थान मे षड्ज और धैवत का प्रयोग है। स्वरो मे कपितादि गमक का प्रयोग है।

(९) कोलाहल

रामकृति—कोलाहल का भाषाङ्ग है। इस राग का पर्याय नाम वहुलि है। कलहाभिनय में इसका प्रयोग है। अश मध्यम और न्यास षड्ज हैं। पचम वर्ज्य है। टक्क तथा कोलाहल रागो के अधिक निकट होने के कारण इस राग को उनका उपाङ्ग भी कहते हैं। इसी तरह अति निकट होनेवाले रागो को उनके उपाग भी कहते हैं।

(१०) हिंदोल

चेवाटी—हिंदोल का भाषाराग है। अश, ग्रह और न्यास षड्ज है। ऋषभ वर्ज्य है। धैवत बहुलस्वर है। गाधार और पचम अपन्यासस्वर हैं। मद्रस्थान में षड्ज, गाधार और मध्यम का प्रयोग है। तारस्थान में षड्ज और गाधार का प्रयोग है। उत्सवो और हास्यसदर्भों में इस राग का प्रयोग होता है।

(११) चेवाटी

वल्लाता चेवाटी का उपाग है। ग्रह, अश और न्यास षड्ज हैं। ऋषभ वर्ज्य है। मद्रस्थान में धैवत का प्रयोग है। शृगार रस का पोषक है।

(१२) पचम

ग्रामराग है। मध्यमा एव पचमी जातियो से उत्पन्न है। इसमे ग्रह, अश और न्यास मध्यमस्थानीय पचम है। मध्यमग्राम की पचमादि मूर्च्छना है। काकली

अतर स्वरो का प्रयोग है। सचारी वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। मन्मथप्रिय राग है। शृगार एव हास्यरसो का पोषक है। ग्रीष्म ऋतु में दिन के प्रथम प्रहर मे गेय है।

दाक्षिणात्य—इसका भाषाराग है। इसमें अश, ग्रह और न्यास धैवत है। अपन्यास ऋषभ है। तारस्थान में मध्यम, पचम, धैवत और निषाद का प्रयोग है।

आघालिका—पचम का विभाषाराग है। अश, ग्रह और न्यास पचम हैं। निषाद का अल्पप्रयोग है। अन्य स्वरो का बहुल है। गाधार वर्ज्य है। मद्रस्थान में षड्ज का तथा तारस्थान में धैवत का प्रयोग होता है। इसका उपाग मल्लारी है जिसमें ग्रह, अश और न्यास पचम है। मद्रस्थान में मध्यम का प्रयोग है। गाधार वर्ज्य है। स्वरो में आहत गमक है। शृगार रस का पोषक है। इसका दूसरा उपाग मल्लार है। मल्लार राग के ग्रह, अश और न्यास धैवत हैं। षड्ज एव पचम वर्ज्य हैं। मद्रस्थान में गाधार और तारस्थान में निषाद का प्रयोग है।

(१३) गौड

१. **कर्नाट गौड**—गौड का उपाग है। इसका ग्रह, अश और न्यास षड्ज है।

२ **देशवाल गौड**—दूसरा उपाग है। षड्ज में आदोलित गमक है। ऋषभ एव पचम वर्ज्य हैं। गाधार बहुलस्वर है। मद्रस्वरो मे आहत गमक है।

३ **तुरुष्क गौड़**—तीसरा उपाग है। इसका अश और न्यास निषाद हैं। ऋषभ एव पचम वर्ज्य हैं। गाधार में "तिरिप" गमक है। षड्ज एव पचम बहुल-स्वर हैं।

४ **द्राविड़ गौड**—चौथा उपाग है। अश, ग्रह और न्यास निषाद है।

(१४) श्रीराग

मार्गरागो में "राग" नामक विभाग में एक प्रसिद्ध राग है। इसे देशी राग भी कहते हैं। यह राग षड्जग्राम की षाड्जी जाति से उत्पन्न है। अश, ग्रह और न्यास षड्ज है। मद्रस्थानीय गाधार और तारस्थानीय मध्यम का प्रयोग है। पचम अल्पस्वर है। वीररस का पोषक है।

(१५) बगाल

यह राग षड्ज मध्यमा जाति से, षड्जग्राम मूर्च्छना में उत्पन्न है। इसमे ग्रह अश और न्यास षड्ज हैं। मद्रस्थान में सचार नही है।

(३०) सैंधवी (द्वितीया)

यह पचम का भाषाराग है। अश, ग्रह और न्यास पचम है। ऋषभ एव पचम अपन्यासस्वर है। ऋषभ का बहुल प्रयोग है। निषाद, धैवत और पचम गमकयुक्त हैं।

(३१) सैंधवी (तृतीया)

यह मालवकैशिक का भाषाराग है। इसमें मृदुपचम का प्रयोग है। मद्रावधि षड्ज है। निषाद एव गाधार वर्ज्य हैं। इसमें ग्रह, अश तथा न्यास षड्ज हैं। समस्त भावो का पोषक है।

(३२) सैंधवी (चतुर्थी)

भिन्नषड्ज का भाषाराग है। ग्रह, अश और न्यास धैवत है। मद्रावधि धैवत है। ऋषभ एव पचम वर्ज्य है।

(३३) गौडी

हिंदोल का भाषाराग है। इसका ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। धैवत तथा ऋषभ वर्ज्य हैं। पचम में गमक है। मद्रस्थान मे षड्ज का प्रयोग है।

(३४) गौडी (द्वितीया)

यह मालव कैशिक का भाषाराग है। तारस्थान और मद्रस्थान में षड्ज का प्रयोग है। निषाद बहुलस्वर है। विप्रलभ शृगार तथा वीररस में प्रयोज्य है। यह मतग-मुनिप्रोक्त है।

(३५) त्रावणी

यह पचम का भाषाराग है। ग्रह और अश षड्ज है। न्यास पचम है। षड्ज, ऋषभ, मध्यम तथा पचमस्वरो में, हरएक के साथ गाधार एव निषाद का प्रयोग है। यह राग याष्टिकमुनिप्रोक्त है।

मतान्तर के अनुसार यह राग भाषाङ्ग कहा जाता है। ग्रह और अशस्वर धैवत हैं। पचम तथा निषाद वर्ज्य हैं। तारस्थान में मधार नही है। मन्द्र धैवत एव गाधार का प्रयोग है। मध्यम बहुलस्वर है।

(३६) हर्षपुरी

यह मालव कैशिक का भाषाराग है। मद्रस्थान मे षड्ज का प्रयोग है। इसमें ग्रह, अश और न्यास षड्ज हैं। तारस्थान में मध्यम एव पचम का प्रयोग है। धैवत वर्ज्य है। हर्ष में इसका प्रयोग है।

(३७) भम्माणी

यह पचम का विभाषाराग है। मद्रस्थान में षड्ज का प्रयोग है। इसमें ग्रह, अश और न्यास पचम हैं। तारस्थानीय षड्ज, मध्यम, पचम तथा निषाद का प्रयोग है। ऋषभ वर्ज्य है। उत्सव मे इसका प्रयोग है।

(३८) टक्ककैशिक

ग्राम रागो में वेसर रीति का एक राग है। धैवती और मध्यमा जातियो से उत्पन्न है। षड्जग्राम तथा मध्यमग्राम इन दोनो के स्वरो से युक्त है। इसमें ग्रह, अश तथा न्यास धैवत हैं एव काकली और अतरस्वर का प्रयोग है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नादि है। षड्जग्राम की धैवतादि मूर्च्छना में रागस्वरूप मिलता है। वीभत्स और भयानक रसो का पोषक है। दिन के चतुर्थ याम में गाना चाहिए। कचुकीनर्तन में इसका प्रयोग होता है। महाकाल और मन्मथ—दोनो का प्रीतिकारक है।

टक्ककैशिक का भाषाराग मालवा है। ग्रह, अश और न्यास धैवत हैं। षड्ज और धैवत स्वरो का प्रयोग गाधार व निषाद के साथ-साथ होता है।

(१) सौवीर के भाषाराग

१ **वेगमध्यमा**—इसके ग्रह एव न्यासस्वर षड्ज हैं। अशस्वर षड्ज है। षड्ज एव पचम का प्रयोग साथ-साथ होता है। मध्यम बहुलस्वर है। सपूर्ण राग है।

२. **साधारित**—ग्रह एव अश षड्ज है। न्यास मध्यम है। ऋषभ मध्यम तथा षड्ज मध्यम को साथ-साथ प्रयोग करते समय गमक का प्रयोग किया जाता है।

३ **गाधारी**—ग्रह एव अश निषाद हैं। न्यास षड्ज है। करुण रस का पोषक है।

(२) ककुभ के भाषाराग

१. **भिन्नपचमी**—ऋषभ, मध्यम, पचम और धैवत बहुलस्वर हैं। अशस्वर धैवत है। मध्यम अपन्यास है।

२ **काभोजी**—ग्रह, अश और न्यासस्वर धैवत हैं। षड्ज एव धैवत साथ-साथ आते हैं। ऋषभ एव पचम का भी साथ-साथ प्रयोग है।

३. **मध्यमग्राम**—ग्रह, अश और न्यासस्वर धैवत है। ककुभ के दो ग्रामो में मध्यमग्राम से उत्पन्न राग है। ऋषभ एव धैवत का साथ-साथ प्रयोग है।

४. **मधुरी**—अशस्वर षड्ज है। न्यासस्वर धैवत है। गाधार, पचम और निषाद, धैवत के साथ-साथ प्रयुक्त होते हैं।

५. **शकमिश्र**—ग्रह एव अश निषाद हैं। न्यास ऋषभ है। पचम-निषाद तथा ऋषभ-धैवत का साथ-साथ प्रयोग है।

(३) ककुभ के विभाषाराग

१. **आभीरिका**—ग्रह, अश और न्यास मध्यम हैं। तारस्थान में पचम का प्रयोग है। मद्रस्थान में धैवत का प्रयोग है। निषाद, ऋषभ और षड्ज के साथ-साथ द्रुत-प्रयोग हैं। मध्यम बहुलस्वर है।

२. **मधुकरी**—ग्रह एव न्यास षड्ज है। अपन्यास गाधार है। षड्ज, ऋषभ, पचम, धैवत और निषाद बहुलस्वर हैं।

(४) ककुभ के अन्तर-भाषाराग

१ **शालवाहिनी**—इसका ग्रह और अश ऋषभ हैं। न्यास धैवत हैं। ऋषभ एव गाधार का साथ-साथ प्रयोग है।

(५) टक्कभाषाराग

१ **त्रवणा**—इसमें ग्रह, अश और न्यास षड्ज हैं। षड्ज, धैवत तथा निषाद बहुलस्वर हैं। ऋषभ एव पचम वर्ज्य हैं। मद्रस्थान में षड्ज का प्रयोग है। तार-स्थान में गाधार और मध्यम का प्रयोग है। दिन के अतिम याम में गेय है। वीर रस का पोषक है। देवता रुद्र है।

२ **त्रवणोद्भवा**—अशस्वर मध्यम है। न्यास षड्ज है। अपन्यास गाधार है। ऋषभ एव धैवत बहुलस्वर हैं।

३ **वेरञ्जी**—इसमें ग्रह एव अश गाधार हैं। न्यास षड्ज हैं। पचम अल्पस्वर है। "समा" एव "रिगा" का प्रयोग साथ-साथ होता है। षाडवराग है।

४ **मध्यमग्रामदेहा**—इसका ग्रह, अश और न्यास मध्यम हैं। षड्ज एव मध्यम का साथ-साथ प्रयोग है।

५ **मालववेसरी**—इसमें अश एव ग्रह निषाद है। न्यास षड्ज है। षड्ज तथा गाधार एव षड्ज एव मध्यम का साथ-साथ प्रयोग है।

६. **चेवाटी**—षाडव राग है। इसमें ग्रह, अश और न्यास षड्ज हैं। षड्जमध्यम तथा गाधारनिषाद का साथ-साथ प्रयोग है। मध्यम बहुल स्वर है।

७ **पचमलक्षिता**—इसमें ग्रह एव न्यास षड्ज हैं और अश पचम है। तार-स्थान में षड्ज, गाधार, मध्यम और पचम के प्रयोग हैं। ऋषभ वर्ज्य है।

८ **पञ्चमी**—इसमें ग्रह एव अश पचम हैं। न्यास षड्ज है। ऋषभपचम तथा षड्जपचम के प्रयोग साथ-साथ हैं।

९. **गाधारपचमी**—इसमें ग्रह और अशस्वर धैवत है। न्यास षड्ज है। गाधार बहुलस्वर है। षड्जमध्यम का साथ-साथ प्रयोग है।

१०. **मालवी**—पचम और धैवत मिलकर अश एव न्यास हैं। ऋषभ वर्ज्य है। तारस्थान के षड्ज, गाधार और मध्यम मे कपित गमक है।

११. **तानवलिता**—ग्रह एव अश मध्यम हैं। न्यासस्वर षड्ज है। षड्ज और पचम का मृदुभाव से लालन है।

१२. **रविचन्द्रिका**—इसमें ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। ऋषभ और पचम का अल्प प्रयोग है। ऋषभ गाधार तथा षड्जमध्यम का प्रयोग साथ-साथ है।

१३. **ताना**—इसमें ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। अपन्यास धैवत है। ऋषभ और पचम वर्ज्य हैं। निषाद तथा षड्ज में गमक है। करुणरस का पोषक है।

१४. **अवाहेरी**—इसमें ग्रह एव अश मध्यम है। न्यास षड्ज है। गाधार एव धैवत का बहुल प्रयोग है। पचम वर्ज्य है। वीर रस का पोषक है।

१५ **दोह्या**—इसमें ग्रह तथा अश गाधार है। न्यास षड्ज है। ऋषभ एव पचम वर्ज्य है।

१६. **वेसरी**—इसमें ग्रह, अश और न्यास षड्ज हैं। धैवत तथा निषाद का साथ-साथ प्रयोग है एव षड्ज और धैवत का भी। काकली निषाद का प्रयोग है। वीर रस का पोषक है।

(६) टक्क के विभाषाराग

१. **देवारवर्धनी**—अश एव ग्रह पचम हैं, न्यास षड्ज है।

२. **आध्री**—अश तथा ग्रह मध्यम है, न्यास पचम है।

३. **गुर्जरी**—ग्रह एव अश निषाद है और न्यास षड्ज हैं। "सम" तथा "रिनि" साथ-साथ आते हैं।

४. **भावनी**—ग्रह, अश और न्यास पचम हैं।

(७) शुद्धपचम के भाषाराग

१ **तानोद्भवा**—अश मध्यम है। पचम न्यास है। "धप" साथ-साथ आते हैं। पचम बहुलस्वर है।

२. **आभीरी**—ग्रह, अश तथा न्यास पचम हैं। काकली स्वर का प्रयोग है, निषाद बहुलस्वर है। "सम" साथ-साथ प्रयोग किया जाता है।

३ **गुर्जरी**—ग्रह, अश और न्यास पचम हैं। तारस्थान में षड्जमध्यम का प्रयोग है। गाधार तथा पचम अपन्यास हैं।

४. **आध्री**—ग्रह एव अशस्वर ऋषभ हैं। न्यासस्वर पचम है। षड्ज का हलका प्रयोग है।

५ **मागली**—ग्रह, अश और न्यास धैवत है। काकली निषाद का प्रयोग है। 'सध' तथा 'रिप' साथ-साथ आते हैं।

६. **भावनी**—ग्रह, अश तथा न्यास पचम है। ऋषभ वर्ज्य है। स, म, नि बहुलस्वर है। "म" अपन्यास है।

(८) भिन्नपचम के भाषाराग

१. **धैवतभूषिता**—ग्रह, अश और न्यास धैवत हैं। "सध" तथा "रिध" साथ-साथ आते है।

२ **शुद्धभिन्ना**—अश, ग्रह तथा न्यास धैवत हैं। "रिध" और "सम" साथ-साथ आते है। सपूर्ण राग है।

३ **वराटी**—अश एव ग्रह मध्यम हैं। न्यास धैवत है। "ऋषभ" का हलका प्रयोग है। "सधा" व "रिगा" का साथ-साथ प्रयोग है। धम बहुलस्वर हैं।

४. **विशाला**—ग्रह और अश पचम हैं। न्यास धैवत है। धैवत बहुलस्वर है। 'सधा' साथ-साथ आते हैं। सपूर्ण राग है।

(९) भिन्नपंचम का विभाषाराग

१. **कौशली**—ग्रह एव अश निषाद है। न्यास धैवत है। ऋषभ वर्ज्य है।

(१०) टक्ककैशिक के भाषाराग

१ **मालवा**—ग्रह, अश और न्यास धैवत है। "सध" "रिध" साथ-साथ आते हैं।

२. **भिन्नवलिता**—ग्रह एव अश षड्ज है। न्यास धैवत है। धैवत एव निषाद बहुलस्वर हैं। मध्यम एव निषाद का साथ-साथ प्रयोग है।

(११) टक्ककैशिक का विभाषाराग

१ द्राविडी—ग्रह एव अश मध्यम है। न्यास धैवत है। "गनि" तथा "सधा" के प्रयोग साथ-साथ होते हैं।

(१२) हिंदोल के भाषाराग

१ वेसरी—ग्रह, अश और न्यास पड्ज हैं। पचम एव धैवत अल्पस्वर है। सग" व "रिनि" का प्रयोग साथ-साथ होता है।

२ प्रथममजरी—ग्रह एव अश पचम है तथा न्यास पड्ज है। पधनिस बहुल वर हैं। ऋषभ का अल्प प्रयोग है।

३ षड्जमध्यमा—ग्रहस्वर पड्ज और न्यासस्वर मध्यम है। निषाद एव ऋषभ वर्ज्य हैं। "समा" तथा "गमा" के प्रयोग साथ-साथ होते हैं।

४. माधुरी—ग्रह व अश मध्यम है। न्यास पड्ज है। पधनिस बहुलस्वर हैं। ऋषभ का अल्प प्रयोग है।

५ भिन्नपौराली—ग्रह एव अश मध्यम हैं। न्यास पड्ज है।

६ मालववेसरी—ग्रह, अश और न्यास पड्ज है। अपन्यास गाधार हैं। मध्यम एव पचम में गमक हैं। ऋषभ तथा धैवत वर्ज्य हैं।

(१३) बोट्ट राग का भाषाराग

१. मागली—ग्रह और अश पचम हैं। न्यास मध्यम है। मध्यम बहुलस्वर है। ऋषभ एव धैवत का साथ-साथ प्रयोग होता है।

(१४) मालवकैशिक के भाषाराग

१ बागली—अश एव ग्रह मध्यम है। न्यास पड्ज है। मध्यम बहुलस्वर है। रि, नि का साथ-साथ प्रयोग है।

२ मागली—ग्रह, अश और न्यास पड्ज हैं। मध्यम एव पचम अल्पस्वर हैं। मध्यम और पचम स्फुरित गमक से युक्त हैं। धैवत का दीर्घप्रयोग है। तारस्थान में ऋषभ और मध्यम का प्रयोग है।

३ मालववेसरी—ग्रह, अश तथा न्यास पड्ज है। धैवत वर्ज्य है। तारस्थान में ऋषभ और मद्रस्थान में पचम का प्रयोग है। मध्यम और पचम कपितगमक से युक्त है।

४ खजनी—ग्रह एव अश पचम है। न्यास पड्ज है। धैवत वर्ज्य है। निम तथा रिमा का प्रयोग साथ-साथ होता है।

२. **आभीरी**—ग्रह, अश तथा न्यास पचम है। काकली स्वर का प्रयोग है, निषाद वहुलस्वर है। "सम" साथ-साथ प्रयोग किया जाता है।

३ **गुर्जरी**—ग्रह, अश और न्यास पचम है। तारस्थान में षड्जमध्यम का प्रयोग है। गाधार तथा पचम अपन्यास है।

४. **आध्री**—ग्रह एव अशस्वर ऋषभ हैं। न्यासस्वर पचम है। षड्ज का हलका प्रयोग है।

५ **मागली**—ग्रह, अश और न्यास धैवत हैं। काकली निपाद का प्रयोग है। 'सध' तथा 'रिप' साथ-साथ आते हैं।

६. **भावनी**—ग्रह, अश तथा न्यास पचम है। ऋषभ वर्ज्य है। स, म, नि बहुलस्वर है। "म" अपन्यास है।

(८) भिन्नपचम के भाषाराग

१. **धैवतभूषिता**—ग्रह, अश और न्यास धैवत है। "सध" तथा "रिध" साथ-साथ आते है।

२ **शुद्धभिन्ना**—अश, ग्रह तथा न्यास धैवत है। "रिध" और "सम" साथ-साथ आते है। सपूर्ण राग है।

३. **वराटी**—अश एवं ग्रह मध्यम हैं। न्यास धैवत है। "ऋषभ" का हलका प्रयोग है। "सधा" व "रिगा" का साथ-साथ प्रयोग है। धम वहुलस्वर है।

४. **विशाला**—ग्रह और अश पचम हैं। न्यास धैवत है। धैवत वहुलस्वर है। 'सधा' साथ-साथ आते हैं। सपूर्ण राग है।

(९) भिन्नपचम का विभाषाराग

१ **कौशली**—ग्रह एव अश निषाद है। न्यास धैवत है। ऋषभ वर्ज्य है।

(१०) टक्ककैशिक के भाषाराग

१ **मालवा**—ग्रह, अश और न्यास धैवत है। "सध" "रिध" साथ-साथ आते हैं।

२. **भिन्नवलिता**—ग्रह एव अश षड्ज हैं। न्यास धैवत है। धैवत एव निपाद बहुलस्वर हैं। मध्यम एव निपाद का साथ-साथ प्रयोग है।

(११) टक्ककैशिक का विभाषाराग

१ द्राविडी—ग्रह एव अश मध्यम है। न्यास धैवत है। "गनि" तथा "सधा" के प्रयोग साथ-साथ होते है।

(१२) हिंदोल के भाषाराग

१ वेसरी—ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। पचम एव धैवत अल्पस्वर है। "सग" व "रिनि" का प्रयोग साथ-साथ होता है।

२ प्रथममजरी—ग्रह एव अश पचम हैं तथा न्यास षड्ज है। पधनिम बहुल स्वर है। ऋषभ का अल्प प्रयोग है।

३ षड्जमध्यमा—ग्रहस्वर षड्ज और न्यासस्वर मध्यम है। निषाद एव ऋषभ वर्ज्य है। "समा" तथा "गमा" के प्रयोग साथ-साथ होते है।

४. माधुरी—ग्रह व अश मध्यम है। न्यास षड्ज है। पधनिस बहुलस्वर हैं। ऋषभ का अल्प प्रयोग है।

५ भिन्नपौराली—ग्रह एव अश मध्यम है। न्यास षड्ज है।

६ मालववेसरी—ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। अपन्यास गाधार हैं। मध्यम एव पचम में गमक है। ऋषभ तथा धैवत वर्ज्य है।

(१३) वोट्ट राग का भाषाराग

१ मागली—ग्रह और अश पचम हैं। न्यास मध्यम है। मध्यम बहुलस्वर है। ऋषभ एव धैवत का साथ-साथ प्रयोग होता है।

(१४) मालवकैशिक के भाषाराग

१ बागली—अश एव ग्रह मध्यम हैं। न्यास षड्ज है। मध्यम बहुलस्वर है। रि, नि का साथ-साथ प्रयोग है।

२ मागली—ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। मध्यम एव पचम अल्पस्वर है। मध्यम और पचम स्फुरित गमक से युक्त है। धैवत का दीर्घप्रयोग है। तारस्थान में ऋषभ और मध्यम का प्रयोग है।

३ मालववेसरी—ग्रह, अश तथा न्यास षड्ज हैं। धैवत वर्ज्य है। तारस्थान में ऋषभ और मद्रस्थान में पचम का प्रयोग हैं। मध्यम और पचम कपितगमक से युक्त है।

४. खजनी—ग्रह एव अश पचम है। न्यास षड्ज है। धैवत वर्ज्य है। निम तथा रिमा का प्रयोग साथ-साथ होता है।

२. **आभीरी**—ग्रह, अश तथा न्यास पचम है। काकली स्वर का प्रयोग है, निपाद बहुलस्वर है। "सम" साथ-साथ प्रयोग किया जाता है।

३ **गुर्जरी**—ग्रह, अश और न्यास पचम है। तारस्थान में षड्जमध्यम का प्रयोग है। गाधार तथा पचम अपन्यास है।

४ **आध्री**—ग्रह एव अशस्वर ऋषभ हैं। न्यासस्वर पचम है। षड्ज का हलका प्रयोग है।

५ **मागली**—ग्रह, अश और न्यास धैवत है। काकली निपाद का प्रयोग है। 'सध' तथा 'रिप' साथ-साथ आते हैं।

६. **भावनी**—ग्रह, अश तथा न्यास पचम है। ऋषभ वर्ज्य है। स, म, नि बहुलस्वर हैं। "म" अपन्यास है।

(८) भिन्नपचम के भाषाराग

१. **धैवतभूषिता**—ग्रह, अश और न्यास धैवत हैं। "सध" तथा "रिध" साथ-साथ आते है।

२ **शुद्धभिन्ना**—अश, ग्रह तथा न्यास धैवत है। "रिध" और "सम" साथ-साथ आते हैं। सपूर्ण राग है।

३. **वराटी**—अश एवं ग्रह मध्यम है। न्यास धैवत है। "ऋषभ" का हलका प्रयोग है। "सधा" व "रिगा" का साथ-साथ प्रयोग है। धम बहुलस्वर हैं।

४. **विशाला**—ग्रह और अश पचम है। न्यास धैवत है। धैवत बहुल है। 'सधा' साथ-साथ आते है। सपूर्ण राग है।

(९) भिन्नपंचम का विभाषाराग

१ **कौशली**—ग्रह एव अश निषाद है। न्यास धैवत है। ऋषभ

(१०) टक्ककैशिक के भाषाराग

१ **मालवा**—ग्रह, अश और न्यास धैवत हैं। "सध" "रिध" आते हैं।

२ **भिन्नवलिता**—ग्रह एव अश षड्ज हैं। न्यास धैवत है। धै बहुलस्वर हैं। मध्यम एव निपाद का साथ-साथ प्रयोग है।

६. शुद्धा—ग्रह, अश तथा न्यास धैवत है। धैवत का मृदु प्रयोग होता है। रिप वर्ज्य है। मतान्तर में "प" मात्र वर्ज्य है। सग का साथ-साथ प्रयोग है। अपन्याम पड्ज है। मद्रस्थान में स, ग, धा के प्रयोग हैं। पचम का दीर्घ प्रयोग है।

७ दाक्षिणात्या—ग्रह, अश और न्यास धैवत है। पचम अल्पस्वर है। पाडव राग है। "समा" तथा "सवा" के साथ-साथ प्रयोग होते हैं।

८ पुलिन्दी—ग्रह एव अश धैवत हैं और न्यास पड्ज है। गप वर्ज्य है। "सव" तथा "मम" के साथ-साथ प्रयोग हैं।

९. तुम्बुरा—ग्रह, अश और न्यास धैवत हैं। ऋषभ वर्ज्य है।

१०. कालिन्दी—ग्रह एव अश गाधार हैं और न्यास धैवत है। रिप वर्ज्य है। निपाद का अल्प प्रयोग है। चतु स्वर राग है। आरोहण व अवरोहण में राग का प्रकाशन होता है।

११. श्रीकण्ठी—ग्रह, अश और न्यास धैवत है। पचम वर्ज्य है। अपन्यास ऋषभ है। रिमा का प्रयोग साथ-साथ आता है।

१२. गाधारी—ग्रह व अश गाधार हैं, और न्यास मध्यम है। मध्यम वर्ज्य है।

(१८) भिन्नपड्ज के विभाषाराग

१. पौराली—ग्रह एव अश मध्यम है। न्यास धैवत है। ऋषभ अल्पस्वर है। रिमप का प्रयोग साथ-साथ होता है।

२. मालवी—ग्रह, अश और न्याम धैवत हैं। सरिगम वहुलस्वर हैं। मद्र स्थान में धैवत का प्रयोग है।

३. कालिन्दी—ग्रह और अश गाधार हैं। न्यास धैवत है। ऋषभ एव पचम वर्ज्य हैं। निपाद अल्पस्वर है। अद्भुत रस का पोपक है।

४. देवारवर्धनी—ग्रह एव अश निपाद हैं। न्यास धैवत है। ऋषभ वर्ज्य है।

(१९) वेसरपाडव के भाषाराग

१ नाद्या—ग्रह एव अश पड्ज हैं। न्यास मध्यम है। "ग" वहुलस्वर है। पचम वर्ज्य है।

२. वाह्यषाडवा—अश, ग्रह और न्यास मध्यम है। "निग" तथा "रिग" के साथ-साथ प्रयोग हैं।

(२०) वेसरषाडव के विभाषाराग

१. **पार्वती**—अश एव ग्रह षड्ज है।

२ **श्रीकठी**—ग्रह, अश और न्यास मध्यम है। "निध" तथा "रिध" का साथ-साथ प्रयोग है। पचम वर्ज्य है।

(२१) मालवपचम के विभाषाराग

१ **वेगवती**—अश धैवत है। ग्रह एव न्यास षड्ज हैं। आजनेयप्रोक्त है।

२ **भावनी**—ग्रह, अश और न्यास पचम हैं। अपन्यास षड्ज है। ऋषभ वर्ज्य है।

३. **विभावनी**—ग्रह, अश और न्यास पचम हैं। गाधार, मध्यम और धैवत अल्पस्वर हैं। मद्रस्थान में पचम का प्रयोग है।

(२२) भिन्नतान का भाषाराग

१. **तानोद्भवा**—अश, ग्रह और न्यास पचम हैं। ऋषभ वर्ज्य है। काकली अतर स्वरो का प्रयोग है।

(२३) पचमषाडव का भाषाराग

१. **पोता**—अश, ग्रह और न्यास ऋषभ हैं। निषाद एव षड्ज बहुलस्वर हैं। धैवत वर्ज्य है।

(२४) रेवगुप्त का भाषाराग

१ **शका**—ग्रह एव अश मध्यम हैं। न्यास षड्ज है। गाधार, पचम, ऋषभ और धैवत बहुलस्वर हैं।

अज्ञातजनक भाषाराग

१ **पल्लवी**—यह विभाषा राग है। ग्रह, अश और न्यास धैवत है। षड्ज एव ऋषभ बहुलस्वर हैं। तारस्थान मे गाधार का प्रयोग है।

२. **भासवलिता**—यह अतरभाषाराग है। ग्रह, अश तथा न्यास धैवत हैं। ऋषभ अल्पस्वर है। पचम वर्ज्य है।

३ **किरणावलि**—यह अतरभाषाराग है। ग्रह, अश और न्यास धैवत हैं। तारस्थान में गाधार और निषाद का प्रयोग है। मद्रस्थान मे भी निषाद का प्रयोग है।

४ शकवलिता—ग्रह एव अंश मध्यम हैं। न्यास धैवत है। धनि का साथ-साथ प्रयोग है।

उपराग (मार्ग)

१ शकतिलक—यह षाड्जी एव धैवती जातियो से उत्पन्न है। ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। पंचम अल्पस्वर है।

२ टक्कसैंधव—यह षाड्जी और कैशिकी जातियो से उत्पन्न है। ग्रह, अंश और न्यास षड्ज है। पंचम अल्पस्वर हैं।

३ कोकिलपंचम—यह राग पंचमी एव मध्यमा जातियो से उत्पन्न है। अंश एव ग्रह पंचम हैं और न्यास मध्यम है।

४. भावनापंचम—यह राग गांधारपंचमी जाति से उत्पन्न है। गांधार ग्रह स्वर है, पंचम अंशस्वर है।

५. नागगांधार—यह राग गांधारी और रक्तगांधारी जातियो से उत्पन्न है। अंश, ग्रह तथा न्यास गांधार हैं। काकली और अंतर स्वरो का प्रयोग है।

६ नागपंचम—यह राग आर्षभी व धैवती जातियो से उत्पन्न है। न्यास धैवत है और ग्रह तथा अंश ऋषभ हैं। गांधार वर्ज्य है।

निरुपपद राग

१ नट्टराग—मध्यमोदीच्यवा जाति से उत्पन्न है। अंश, ग्रह और न्यास मध्यम हैं। तारस्थान में षड्ज का प्रयोग है।

२ भास—यह राग आंध्री जाति से उत्पन्न है। ग्रह, अंश और न्यास धैवत हैं।

३ रक्तहंस—रक्तगांधारी जाति से उत्पन्न राग है। अंश, ग्रह तथा न्यास धैवत है और ऋषभ वर्ज्य है। तारस्थान में गांधार का प्रयोग है।

४ कोल्लास—नैषादी व धैवती जातियो से यह राग उत्पन्न है। ग्रह, अंश और न्यास षड्ज हैं। धैवत अल्पस्वर है।

५ प्रसव—नन्दयती जाति से यह उत्पन्न है। ग्रह व अंश मध्यम हैं और न्यास षड्ज है। षड्ज, मध्यम तथा निषाद बहुलस्वर हैं। वीर रस का पोषक है।

६ ध्वनि—गांधारपंचमी जाति से उत्पन्न राग है। ग्रह, अंश और न्यास पंचम है। पंचम व धैवत बहुलस्वर हैं। निषाद एव गांधार अल्पस्वर हैं। मंद्रस्थान में मध्यम का प्रयोग है।

७ कन्दर्प—यह राग षड्जकैशिकी जाति से उत्पन्न है। ग्रह, अंश तथा न्यास षड्ज है। पंचम वर्ज्य है। मंद्र षड्ज का प्रयोग है।

(४) उपाङ्गराग

१. **पूर्णाट**—अश एव ग्रह धैवत हैं। न्यास मध्यम है। पचम बहुलस्वर है। भिन्न षड्ज का उपाङ्ग है।

२ **देवाल**—अश, ग्रह और न्यास मध्यम है। ऋषभ एव धैवत का मृदु प्रयोग है। मध्यम में कपित गमक है। निषाद, ऋषभ और धैवत अल्पस्वर हैं। बगाल राग का उपाङ्ग है। प्राचीन मत के अनुसार इस राग का नाम कामोद है।

३ **कुरजी**—अश, ग्रह और न्यास पचम हैं। ललित का उपाङ्ग है। षड्ज एव पचम बहुलस्वर हैं। ऋषभ एव निषाद वर्ज्य हैं। मद्रस्थान में गाधार का प्रयोग है।

सातवाँ परिच्छेद

हिन्दुस्थानी और कर्नाटक संगीत पद्धति

कर्नाटक पद्धति

राग, भाषा, रागाङ्ग तथा भाषाङ्ग इनके विवरण का सप्रदाय शार्ङ्गदेव के काल तक अर्थात् ई० बारहवी शताब्दी के अत तक—प्रचार में था। उसके बाद मुसलमानो के आक्रमण के कारण उत्तर और दक्षिण भारत में यह सप्रदाय विच्छिन्न हो गया। उत्तर भारत में राग-रागिनी सप्रदाय अवशिष्ट रह गया। दक्षिण भारत में इसका भी भग हो गया। मुसलमानो के आक्रमण रुक जाने के बाद १४ वी शताब्दी के आरभ से हमारी कलाओ के पुनरुज्जीवन का शुभ कार्य आरम्भ हुआ। दक्षिण भारत में कर्नाटक साम्राज्य अर्थात् विजयनगर साम्राज्य इस काम का केन्द्र-स्थान हुआ। इस कार्य के मूलपुरुष विजयनगर के मत्री विद्यारण्य (माधवाचार्य) हैं।

उन्होने भारत की ललितकलाओ का ही नही अपितु समस्त वेदो, शास्त्रो और कलाओ का भी उज्जीवन किया है। वेदचतुष्टयी के भाष्य, समस्त दर्शनो के सग्रह, धर्मशास्त्र के विचार, पुराणो के सग्रह, वेदात के प्रकाशन के अतिरिक्त अन्य शास्त्रो में भी उनकी प्रशसनीय सेवाएँ हैं।

सगीत के क्षेत्र में उनका कार्य यह है कि देश के कोने-कोने मे शेष रहनेवाले रागो को बहुत प्रयास से ढूँढ-ढूँढकर उन्होने एकत्र किया, तो भी उन्हे लगभग पचास राग ही मिले थे। उनके लक्षणो के बारे मे विचार करते-करते उन्हें यह बात प्रतीत हुई कि लक्ष्य कुछ जगह में शेष रहने पर भी लक्षणशास्त्र के सप्रदाय का पूर्ण रूप से भग हो गया है। प्राचीन सगीत ग्रथो का अर्थ भी अच्छी तरह समझ में नही आया था। देश-देश के रुचिभेद से लक्ष्य में भिन्नता होने के कारण वे, प्राचीन ग्रथो में पाये जानेवाले लक्षण और तात्कालिक मिले हुए लक्ष्य—इन दोनो में समन्वय कर नही सके। इसलिए उन्हें उपलब्ध पचास रागो के लक्ष्यमार्ग का सरक्षण करने के लिए एक नया प्रबन्ध करना पडा।

प्राचीन ग्रथो मे बताया गया है कि ग्राम से मूर्च्छना, मूर्च्छना से जाति और जाति से राग उत्पन्न हुए हैं। प्रत्येक राग के ग्रह, अश, न्यासादि दस लक्षण, वर्णलक्षण और स्थायी स्वर अलकार लक्षण—ये सब प्राचीन ग्रथो में दिये गये हैं। विद्यारण्य को मिले

हुए पचास रागो के सम्बन्ध मे इन लक्षणो को ढूँढने का काम नही हो सका। नया प्रवन्ध इस तरह करना पडा कि वीणावाद्य के सहारे हर-एक राग मे प्रयुक्त होनेवाले प्रकृति-विकृति स्वरो का निर्धारण किया गया। जिन रागो के स्वरो का प्रकृति-विकृतिरूप समान था उन्हें एक समूह में रखकर हर समूह का नाम "मेल" रखा गया। इस तरह ये पचास राग पद्रह मेलो के अदर रखे गये। हरएक मेल में रहनेवाले रागो में प्रसिद्ध राग के नाम के अनुसार ही तत्सम्वद्ध मेल का नामकरण किया गया।

वाद में जगह-जगह से कुछ और रागो का पता लगने लगा। उनके प्रकृति-विकृतिस्वरो के अनुसार और चार मेलो की सृष्टि हुई। विद्यारण्य के वाद विजयनगर साम्राज्य के सेनापति और राजप्रतिनिधि राम रायर की आज्ञा के अनुसार रामामात्य की लिखी हुई "स्वरमेल कलानिधि" (सन् १५५६) पुस्तक में इनका विवरण मिलता है। इन्होने १९ मेलो तथा ६४ रागो के लक्षण दिये हैं।

सन् १६०५ में, आध्रदेश में रहनेवाले वैणिक और शास्त्रज्ञ सोमनाथ ने "रागविवोध" नामक ग्रथ लिखा है। इस ग्रथ में ७६ रागो के विवरण दिये गये है। इनके प्रकृति-विकृतिस्वरो के अनुसार २३ मेलो की आवश्यकता हुई।

उनके वाद सोमनार्य और भावभट्ट दोनो ने "स्वरराग सुधार्णवम्" और "सगीत चद्रिका" नामक ग्रथ लिखे हैं। उनमें लगभग १०० रागो के विवरण हैं। परतु उन्होने २० मेलो के अदर ही इन १०० रागो को वाँट दिया है। आये दिन मेलो की सख्या में अनियमित वृद्धि देखकर सगीतज्ञ लोग इस पर ऐसा विचार करने लगे कि व्यवहार में रहनेवाले रागो में, काम आनेवाले प्रकृति विकृत स्वरभेदो का निश्चय करके, प्रस्तारक्रम के अनुसार, साध्य मेलो की सख्या का निर्धारण किया जाय। इस विषय पर विद्वान् लोग तरह-तरह के मत देने लगे। कुछ लोगो का कथन था कि ३० मेल ही प्रचार में रहनेवाले रागो के लिए पर्याप्त हैं। और कुछ लोग, मेलो की सख्या को एक सहस्र से भी अधिक वढाना चाहते थे। अत मे, वहुत-से वाद-विवाद के वाद सव एक निष्कर्ष पर आ पहुँचे। उनके मतानुसार, तव के प्रचलित रागो में उपयोग किये जानेवाले प्रकृति-विकृतस्वरो की सख्याएँ १६ थी। उनमें सात स्वर शुद्ध स्वर हैं। ऋपभ के तीन प्रकार—शुद्ध, पञ्चश्रुति और पट्श्रुति। गान्धार के तीन प्रकार—शुद्ध, साधारण और अन्तर। मध्यम के दो भेद—शुद्ध और प्रति-मध्यम। पञ्चम का एक ही रूप था। धैवत के तीन प्रकार—शुद्ध, पञ्चश्रुति और पट्श्रुति। निपाद में तीन रूप—शुद्ध, कैशिकी और काकली। इन १६ स्वरो में

एक ही स्वरस्थान में दो-दो नाम रखनेवाले स्वर भी है। तीन ऋषभो और तीन गान्धारो मे, दूसरी, तीसरी, ऋषभ के स्थान पहली, दूसरी गान्धार के समान है। ९ वी श्रुति, पञ्चश्रुति ऋषभ और शुद्ध गान्धार का स्थान है। १० वी श्रुति षट्श्रुति ऋषभ और साधारण गान्धार का स्थान है। इसी तरह धैवत, निषाद मे भी दूसरी, तीसरी धैवत का स्थान पहली दूसरी निषाद के स्थान में है। अर्थात् २२ वी श्रुति पञ्चश्रुति धैवत और शुद्ध निषाद का स्थान है। २३ वी या पहली श्रुति षट्श्रुति धैवत और कैशिकी निषाद का स्थान है। इसलिए १६ स्वर रहने पर भी स्वरस्थान १२ ही अर्थात् ४, ७, ९, १०, १२, १३, १६, १७, २०, २२ और तीसरी श्रुति हुए।

इसमें और कुछ विशेषता है। कुछ रागो में नवी श्रुति पर स्थित पञ्चश्रुति ऋषभ का प्रयोग है। और कुछ रागो में आठवी श्रुति पर स्थित चतुश्रुति ऋषभ का प्रयोग है। इन दोनो को और इसी तरह आनेवाले अन्यस्वरो को भी अलग-अलग गिना जाय तो स्वरो की सख्या २० हो जायेगी। तव मेलो की सख्या २०० से ज्यादा हो जाती है। इसलिए मेलो की सख्या को अधिक होने से वचाने के लिए चतु श्रुति और पञ्चश्रुति स्वर एक ही स्वर-जैसे गिने गये और इसी तरह आनेवाले दोनो स्वरो को भी एक स्वर-जैसा ही गिनकर, अर्थात् केवल १६ स्वरो के रूप रखकर, ७२ मेलो की सृष्टि की गयी है। पर प्रयोग में इन दोनो स्थानो के भेद पर अच्छी तरह ध्यान दिया जाता है।

७२ मेल कर्ता की योजना

ऋषभ के तीन रूप और गान्धार के भी तीन रूप है। पहले ऋषभ और पहले गान्धार को मिलाकर (७, ९ स्थान में होनेवाले स्वर) प्रथम मेलचक्र वनाया गया। पहला ऋषभ और दूसरा गान्धार (७, १० श्रुतिस्थान के स्वर) मिलाकर दूसरा मेलचक्र वनाया गया। पहला ऋषभ तथा तीसरा गान्धार (७, १२ श्रुतिस्थान के स्वर) मिलाकर तीसरा मेलचक्र वनाया गया। दूसरा ऋषभ और दूसरा गान्धार (९, १० श्रुतिस्थान के स्वर) मिलाकर चौथा मेलचक्र वनाया गया। दूसरा ऋषभ और तीसरा गान्धार (९, १२ श्रुतिस्थान के स्वर) मिलाकर पाचवाँ मेलचक्र वनाया गया। तीसरा ऋषभ एव तीसरा गान्धार (१०, १२ वी श्रुति के स्वर) मिलाकर छठा मेलचक्र वनाया गया। इन छ मेलचक्रो में भी शुद्ध मध्यम (१३ श्रुति) ही रखा गया। अव प्रत्येक चक्र के पूर्वभाग की जानकारी हमें हुई है। और इसी तरह धैवत और निषाद का मेलन करने से हरएक चक्र को ६ उत्तर भाग मिलेंगे। तव मेलो के रूप यो हुए—

पहले चक्र के	पहले मेल में	पहला धैवत (२०वी श्रुति)	पहला निपाद (२२ वी श्रुति) रह गया।
,,	दूसरे मेल में	,,	दूसरा निषाद (१ ली श्रुति) रह गया।
,,	तीसरे मेल में	,,	तीसरा निषाद (३ री श्रुति) रह गया।
,,	चौथे मेल में	दूसरा धैवत (२२वी श्रुति)	दूसरा निपाद (१ ली श्रुति) रह गया।
,,	पाचवे मेल मे	,,	तीसरा निपाद (३ री श्रुति) रह गया।
,,	छठे मेल में	तीसरा धैवत (१ ली श्रुति)	,, ,,

इसी तरह वाकी पाच चक्रो के प्रत्येक चक्र में भी छ मेल मिलेंगे। कुल मिलकर ३६ मेल प्राप्त होते हैं। हर मेल मे पड्जपञ्चम मिलेंगे तो मेल का पूर्ण रूप पाया जाता है।

इस तरह छ चक्रो से पहले ३६ मेलो की उत्पत्ति हुई। इन ३६ मेलो में ही शुद्ध मध्यम (१३ वी श्रुति) के स्थान पर प्रतिमध्यम (१६ वी श्रुति) को रखकर और ३६ मेलो की सृष्टि इमी रीति पर हुई।

हर एक मेल के प्रकृति, विकृति स्वर जिन रागो में दिखाई पडें उन्हें उसी मेल से जन्य कहा गया। यद्यपि मेलो की सृष्टि आधुनिक काल मे हुई, तो भी इनको 'जनक' नाम प्राप्त हो गया। इस तरह जनक, जन्य नाम रागो की उत्पत्ति के विपय में वहुत भ्रम का कारण वन गया। रागोत्पत्ति के वारे में प्राचीन ग्रन्थो से परिचय न होने के कारण लोग मेलो को ही, जो आधुनिक काल की सृष्टि है, प्राचीन जनकराग समझने लगे। कुछ पुस्तको में ७२ मेलो को ही प्राचीन रागाङ्गराग नाम से कहा जाने लगा। करीव ६० वर्ष पहले के सुव्वराम दीक्षित के द्वारा सपादित 'सगीत सप्रदाय प्रदर्शनी' मे इमी प्रकार वताया गया है। जिन्हें प्राचीन शास्त्रो का ज्ञान कम है उनमें यह आधार ग्रन्थ माना जाता है।

इन ७२ मेलो के अन्दर रहनेवाले रागो में सव से प्रसिद्ध राग का नाम ही मेलो का नाम वन गया। मेल सख्या की सूचना देने के लिए प्रसिद्ध राग के नाम के साथ कटपयादि सख्या का अनुसरण करके दो अक्षर नाम के आगे जोड दिये गये है, परतु वहुत मेलो के अन्दर रखने के लिए एक राग भी न मिला। इस तरह के मेलो की सृष्टि

व्यर्थ प्रतीत हुई। इन ७२ मेलो के रचयिता वेंकट मखी ने इसका समाधान यो दिया है कि भविष्य में आविष्कृत किये जानेवाले रागो और विदेशो से आनेवाले रागो को भी स्थान देने के लिए इन्हें रखा जाय (मद्रपुरी सगीत विद्वत्सभा द्वारा मुद्रित चतुर्दण्डि-प्रकाशिका के ४ थे प्रकरण के श्लोक ८० से ९२ देखिए)।

इस तरह के मेलो को नये नाम दिये गये। इन नामो मे पहले दो अक्षर कटपयादि सख्यानुसार मेल के सख्यासूचक थे। इस तरह नाम रखने में भी मतभेद हुआ है।

आजकल व्यवहृत मेलो में मेल राग बने हुए रागो के नाम यो है—

मेल	राग	मेल का नाम
८	तोडी	हनुमत्तोडी
१५	मालवगौड	मायामालवगौड
२०	भैरवी	नटभैरवी
२८	काम्बोजी	हरिकाम्बोजी
२९	शकराभरण	धीर शकराभरण
३६	नाट	चलनाट
४५	पन्तुवराली	शुभपन्तुवराली

मेलकर्ता की योजना, केवल गणित मार्गानुसृत सृष्टि है। परन्तु रागो मे स्वरो का रूप तो वादी-सवादी तत्त्व पर निर्भर है। इसलिए कई रागो को ७२ मेलो मे किसी के अन्दर भी रखना साध्य नही हुआ। कुछ रागो में वादी-सवादी तत्त्व की आवश्यकता के कारण आरोहण में एक विकृत स्वर और अवरोहण में दूसरा विकृत स्वर प्रयोग में है। उन्हे भी मेलकर्ता योजना में युक्त स्थान नही मिला।

इस योजना मे और एक दोष यह है कि चतुश्रुति (८ वी श्रुति), पञ्चश्रुति (९ वी श्रुति), ऋषभ धैवत स्वरो को एक स्वर-जैसा मानना और साधारण गान्धार, प्राचीन काल के अन्तर गान्धार तथा कैशिकी निषाद और प्राचीन काल के काकली निषाद—इन्हें एक ही स्वर-जैसा मानना। इस प्रकार की मान्यताओ के कारण ७२ मेलकर्ता योजना को याद मे रखकर गाने से वादी-सवादी सम्बन्ध भग्न होकर रक्ति-भग का कारण बन जाता है।

इन १६ स्वरो के अतिरिक्त रहनेवाले चार स्वर, ८ वी श्रुति पर स्थित चतुः-श्रुति ऋषभ, ११ वी श्रुति पर स्थित प्राचीन काल का अन्तरगान्धार, २१ वी श्रुति पर स्थित चतुश्रुति धैवत और दूसरी श्रुति पर स्थित काकली निषाद हैं। रागो में

जिस स्थान के स्वर का प्रयोग होता है यह बात वादी-सवादी सम्बन्ध के सहारे अत्यन्त सरलतापूर्वक निश्चित हो सकती है।

ई० सन् १५६५ मे तलकोट्टा युद्ध में विजयनगर राजधानी के ध्वस हो जाने के पश्चात् उस साम्राज्य की इकाइयो के प्रतिनिधि स्वतत्र होकर अपनी-अपनी इकाइयो के राजा हो गये। उनको नायक राजा कहा जाता है। तजौर, मदुरा, मैसूर, जिञ्जी और पेनुकोण्डा—ये पाच स्वतत्र नायक राज्य बन गये। उनमें से तजोर राज्य धन, धान्य, सम्पत्ति में अन्य राज्यो से बढकर था। अत विजयनगर के कलाकार अपने अपने कलाग्रन्थो के साथ तजौर पहुँचे। विजयनगर में पुनरुज्जीवित और सवर्धित कलाएँ और भी उन्नति पाने लगी।

सगीत के लक्ष्य सप्रदाय मे रागो का स्वरूप निश्चित करने के लिए 'सगीत रत्नाकर' के समय के पश्चात् आलाप और कई प्रवन्ध वनाये गये, वे प्रचार में भी थे। ये चार प्रकारो में बाँटे गये थे। उस विभाग के कर्ता गोपाल नायकहैं जो कर्नाटक देश में सगीत कला में वहुत प्रसिद्धि पाकर दिल्ली वादशाह के द्वारा वुलाये गये। यह भी कहा जाता है कि उन्होने वहाँ अमीर खुसरो नामक विद्वान् पर विजय प्राप्त की।

गोपाल नायक के अनुसार लक्ष्यसाहित्य आलाप, ठाय, गीत और प्रवन्ध नामक चार भागो में विभाजिन किया गया। आलाप का लक्षण सगीत रत्नाकर में दिया गया है।

१ **आलाप**—आलाप के पहले भाग में रागस्वरूप की रूपरेखा है। इसका नाम 'आक्षिप्तिका' है। इसमें जो 'आयत्तम्' नाम से भी पुकारा जाता है, उसके चार भाग हैं। इसके हर एक भाग का नाम 'स्वस्थान' है।

प्रथमस्वस्थान—प्रथम स्वस्थान में यो गान करना चाहिए—राग के स्थायी स्वर या अश स्वर पर खडे होकर आगे और पीछे थोडा जाकर जिस प्रकार रागभाव का प्रकाशन हो सकता हो, उस प्रकार राग के स्थायी स्वर का उच्चारण अलकार और गमक सहित अन्य स्वरो के साथ किया जाय।

यदि वह राग अवरोही वर्ण में प्रकाशित होता हो, तो नीचे के एक-एक स्वर को मिलाकर चालन करना है। वह आरोही वर्ण में प्रकाशित होता हो तो ऊपर के एक-एक स्वर को मिलाकर गाते जाना है। सचारी वर्ण मे राग का प्रकाशन हो तो आगे और पीछे के स्वरो को मिलाकर गाना चाहिए। इसका नाम 'मुखचालन' है। हर एक चालन को अन्तत स्थायी स्वर में न्यस्त करना चाहिए। अश के सवादी पहले स्वर तक इसी तरह करना चाहिए। यह आलाप का पहला स्वस्थान है। प्राय सवादी स्वर अश का चौथा या पाँचवाँ स्वर ही होगा। इसलिए इसका नाम 'द्वयर्ध-स्वर' है।

द्वितीय स्वस्थान—द्व्यर्धस्वर पर खडे रहकर चालन करने के पश्चात् स्थायी स्वर में आकर न्यास करने का नाम द्वितीय स्वस्थान है।

तृतीय स्वस्थान—दूसरे सप्तक में रहनेवाले अश स्वर का नाम द्विगुणस्वर है। द्विगुणस्वर और द्व्यर्धस्वर दोनो के बीच में होनेवाले स्वरो का नाम 'अर्धस्थित स्वर' है। अर्धस्थित स्वरो में चालन करके अश स्वर में आकर समाप्त किये जाने-वाले भाग का नाम तृतीय स्वस्थान है।

चतुर्थ स्वस्थान—द्विगुणस्वर में खडे रहकर चालन करके अशस्वर में आकर समाप्त करने को चतुर्थ स्वस्थान कहते हैं। आक्षिप्तिका के बाद राग को बहुत पकडो के साथ विस्तार करना चाहिए। इसे कई भागो में विभाजित किया गया है। उनके नाम रागवर्धनी, स्थायी, मकरिणी और न्यास हैं।

रागवर्धनी को प्रथम रागवर्धनी, द्वितीय रागवर्धनी और तृतीय रागवर्धनी नामक तीन भागो में विभाजित किया गया है। हर एक रागवर्धनी में मध्य, तारस्थान में सचार, द्वितीय रागवर्धनी मे मन्द्र, मध्य स्थानो में सचार, तृतीय रागवर्धनी में तीनो स्थानो में सचार करना होता है। प्रत्येक रागवर्धनी में विलम्ब, मध्य, द्रुत काल रहते हैं। किन्तु प्रथम रागवर्धनी में विलम्ब काल सचार, द्वितीय रागवर्धनी में मध्यकाल सचार, तृतीय रागवर्धनी मे द्रुतकाल के सचार ज्यादा रहते हैं।

इसके बाद 'स्थायी' नामक भाग का गान करना होता है। 'स्थायी' अर्थात् अशस्वर से शुरू करके प्रत्येक सचार में जिन स्वरो तक सचार करते हैं, उसके ऊपर नही जाना होता। इसी क्रम में आरोहण क्रम में एक से आठ स्वर तक दो बार सचार करना है, परन्तु नीचे इच्छानुसार सचार कर सकते हैं। इसके बाद अवरोह क्रम में इसी तरह तारस्थानीय अश स्वर से मध्यस्थानीय अश स्वर तक नीचे के एक से आठ स्वर तक दो बार सचार करना होता है। इन सचारो में इच्छानुसार ऊपर के स्वरो में घूम सकते हैं, पर नीचे नही घूम सकते। जिस तरह अश स्वर से स्थायी सचार आरम्भ किया जाता है उसी तरह हर एक अपन्यास स्वर से भी आरम्भ करके आठवें स्वर तक ऊपर और नीचे सचार कर सकते हैं।

इसके बाद आलाप के मुकुटरूप भाग का गान करना है। उसका नाम 'मकरिणी' है। मकरिणी मे हर एक स्थान मे अन्तिम सचार करके न्यास स्वर मे पूर्ति करना होता है। इसमें मन्द्रस्थान में अधिक सचार होता है।

अत मे न्यास स्वर से आरम्भ करके इच्छानुसार सचार करते हुए न्यास स्वर पर समाप्त करना चाहिए। उसका नाम न्यास है।

१५, १६, १७ वी शताब्दियो में इसी प्रकार के आलापो की कल्पना साम्प्रदायिक आचार्य कर चुके हैं।

/ २ **ठाय**—दूसरे लक्ष्यसाहित्य का नाम है 'ठाय'। यह शब्द 'स्थाय' नामक सस्कृत शब्द का प्राकृत रूप है। एक छोटे सचार का नाम 'ठाय' है। हर एक ठाय, राग के भिन्न-भिन्न रूप को प्रदर्शित करने का काम करता है। इस प्रकार उनके रूप कार्य के अनुसार उनके नामकरण भी किये गये हैं। सगीत रत्नाकर में 'ठाय' के नाम-रूप वर्णित किये गये हैं। उस जमाने में प्रसिद्ध ठाय रूप के अनुसार दशविध, और कार्य के अनुसार तैंतीस प्रकार के वताये गये हैं। अप्रसिद्ध ठाय में मिश्रित या सकीर्ण ठाय ३६ और असकीर्ण ठाय २६ हैं। कुल मिलकर ९६ ठायो का उल्लेख है। रूप के अनुसार स्थायो के उदाहरण—

१ शब्द स्थाय—व्यक्त रूप में शब्दो को अलग-अलग दिखानेवाले हैं।

२ ढाल स्थाय—मोती के ढाल के अनुसार चलन करने का नाम है।

३ लघनी—स्वरो को कोमलतर नमन के साथ उच्चारण करने का नाम है।

४ वहनी—इसमें गीत वहनी, आलप्ति वहनी, ये दो भेद होते हैं। आरोह या अवरोह में स्वरकम्पन, और सचारी में स्थिर स्वरकम्पन के साथ स्वर उच्चारण करने का नाम 'वहनी' है। हर एक वहनी के और दो भेद हैं। स्थिर वहनी और वेगाढ्या वहनी। और तीन भेद स्थायी के भेद से है, हृद्या, कण्ठ्या, शिरस्या। हृद्या में दो तरह के प्रयोग हैं। स्वरो को अन्दर घुसने की तरह उच्चारण किया जाय, तो उसका नाम 'कुन्ता' है। बाहर निकलने की तरह उच्चारण किया जाय तो उसका नाम 'फुल्ला' है।

५ वाद्यशब्द स्थाय—इसमें वीणा आदि वाद्यो से उपन्न शब्दो की तरह उच्चारण करने का नाम 'वाद्य शब्द' है।

६ छाया स्थाय—राग, स्वर आदियो के साथ दूसरे राग या स्वरो की छाया को भी मिलाकर उच्चारण करने का नाम है 'छाया स्थाय'।

७ स्वर लघित—दो, तीन या चार स्वरो को उच्चारण न करके लघन करने का यह नाम है।[1]

१. रूप के अनुसार स्थायो के नाम—ऊपर दिये हुए स्थायो को छोडकर और भी दो हैं। वे प्रेरित और तीक्ष्ण हैं।

काम के अनुसार स्थायों के नाम—भजन, स्थापना, गति, नादध्वनि, छवि, रक्षित, द्रुत, शब्द, वृत्त, अश, अवधान, अपस्थान, निकृति, करुणा, विविधत्व, गात्र,

काम के अनुसार स्थायो के नाम के उदाहरण—

१ भजन स्थाय—राग को रक्ति के साथ प्रकाशित करने का नाम है।

२ स्थापना स्थाय—राग को निश्चयपूर्वक स्थापित करने का काम करता है।

ये स्थाय भी बहुत से रागो में साम्प्रदायिक आचार्यो द्वारा कल्पित है। इनमे तानप्प आर्य के द्वारा रचित साहित्य विशेष है।

इस तरह के ठायो की कल्पना करके उन्हे याद रखने के लिए एक सम्प्रदाय मार्ग है। उसके अनुसार राग के अश, न्यास या अपन्यास स्वर को स्थायी बनाकर ऊपर तीन-चार स्वरो तक चार बार सचार करके उसी तरह नीचे भी सचार करने के पश्चात् मन्द्र षड्ज या न्यास स्वर पर समाप्त करना होता है। सचार का नाम 'येडुप' है। अन्त करने का नाम मुक्तायी या मकरिणी है।

३ गीत—बहुत दिन पूर्व से हजारो तरह के प्रबन्धभेद वर्तमान थे। उनका विवरण सगीतरत्नाकर प्रबन्धाध्याय में दिया गया है। उनमे कुछ प्रबन्धो को छोडकर बाकी सब अधयुग में अप्रचलित हो गये। बचे हुए प्रबन्धो मे 'सालग सूड' नामक प्रबन्ध ज्यादा प्रचार में थे। ये प्रबन्ध तालो के नामो में प्रचलित हैं। ध्रुव, मण्ठ, प्रतिमण्ठ, निस्सारुक, अड्डताल, रासताल, एक-ताल हैं।

इन सातो तालो में सालगसूड की तरह नयी चीजो की सृष्टि भी हुई। राग-स्वरूप का प्रकाशन करने के लिए साहित्य लक्ष्यो के चार भेदो में 'गीत' का भी एक स्थान है। इसमें राग का रूप सुलभ तालबद्ध छोटे-छोटे सचारो से बना हुआ होता है।

उपसम, काण्डारण, निर्जवनगाढ, ललित गाढ़, ललित, लुठित, सम, कोमल, प्रसृत, स्निग्ध, घोस, उचित, सुदेशिक, अपेक्षित घोष, स्वर।

अप्रसिद्ध स्थायों के नाम—असकीर्ण-वह, अक्षराडम्बर, उल्लासित, तरगित, प्रलम्बित, अवस्खलित, त्रोटित, सप्रविष्टक, उत्प्रविष्ट, निस्सारुग, भ्रामित, दीर्घ-कम्पित, प्रीतग्रहोल्लासित, अविलम्ब, विलम्बक, त्रोटित, प्रतीष्ट, प्रसृताकुञ्चित, स्थिर, स्थायुक, क्षिप्त, सूक्ष्मान्त।

मिश्रित स्थायो के नाम—प्रकृतिस्थ, शब्द, कला, आक्रमण, प्लुत, रागेष्ट, अपस्वराभास, वद्ध, कलरव, छन्दस, सुकराभास, सहित, लघु, अन्तर, वक्र, दीप्त प्रसन्न, प्रसन्न मृदु, गुरु, ह्रस्व, शिथिल गाढ़, दीप्त, असाधारण, साधारण, निरादर, दुष्कराभास, मिश्र।

प्रबन्ध—प्रबन्धो के ४ धातु या अवयव और उनके ६ अग—प्रबन्धो में वहुत कुछ अप्रचलित होने के वाद भी कुछ प्रबन्ध वच गये। उनमें पञ्चतालेश्वर प्रबन्ध और श्रीरङ्ग प्रबन्ध मुख्य हैं। प्रबन्धो में ६ अग और ४ धातु होते हैं। स्वर, विरुद, पद, तेनक, पाट और ताल—ये ६ अग है।

१ स्वर—स, रि, ग, म आदि हैं।

२ विरुद—प्रस्तुत नायक के धैर्य, शौर्य आदि का वर्णन करके उसको सबोधित करना या कर्ता के नाम, कुल आदि का वर्णन करना।

३ पद—केवल प्रस्तुत नायक के गुणो का वर्णन।

४ तेनक—'तेन' आदि अक्षरो के उच्चारण के साथ आलाप करने का नाम है। 'तेन' शब्द 'तत्' शब्द की तृतीया विभक्ति है। 'तेन' शब्द का अर्थ 'तत्' या 'ब्रह्म' है। इसलिए यह मगलकर शब्द है।

५ पाट—तक, तनादि वाद्य शब्दो से बद्ध साहित्य का नाम है।

६ ताल—एक ही प्रबन्ध में भिन्न-भिन्न ताल साहित्य के अग हो तो इसका नाम ताल है।

धातु या अवयव

चार धातु हैं—उद्ग्राह, मेलापक, ध्रुव, आभोग।

कभी-कभी उद्ग्राह और ध्रुव के मध्य भाग में अन्तर नामक एक पाँचवाँ धातु भी होता है। प्रबन्ध का आरम्भ भाग 'उद्ग्राह' है। उद्ग्राह को तृतीयाङ्ग ध्रुवा के साथ मिलानेवाला होने के कारण द्वितीयाङ्ग का नाम 'मेलापक' पडा। अगो में अनिवार्यता के कारण तृतीय धातु का नाम 'ध्रुव' हुआ। प्रबन्ध की पूर्ति करने की जगह 'आभोग' है।

प्रबन्ध षडङ्ग, पञ्चाङ्ग, चतुरङ्ग, त्र्यङ्ग या द्वयङ्ग बनाये गये थे। मेदिनी, आनन्दिनी, दीपनी, भावनी, तारावली आदि इनके नाम हैं।

धातुओ की दृष्टि से चतुर्धातु, त्रिधातु, द्विधातु प्रबन्ध भी हैं। इनमें उद्ग्राह और ध्रुव अनिवार्य हैं। त्रिधातु प्रबन्ध मे 'मेलापक' नही है। 'आभोग' में दो भाग हैं। पहला भाग विना ताल के 'आलाप' है। उसका नाम 'वाक्य' है। पूर्वार्ध मे साहित्यकर्ता और उत्तरार्ध में प्रस्तुत नायक का नाम रहता है।

ये चारो तरह के लक्ष्य साहित्य 'चतुर्दण्डी' नाम से प्रसिद्ध हुए। 'चतुर्दण्डी' शब्द का अर्थ है सगीत कला को वश में करने के चार उपाय। 'चतुर्दण्डी' सम्प्रदाय के आदिकर्ता गोपाल नायक हैं। इस सम्प्रदाय ने विजयनगर के पतन के पश्चात्

तंजौर में नायकों के आश्रित रहकर संरक्षण पाया। बहुत से चतुर्दण्डी साहित्यों की सृष्टि हुई।

नायकों के बाद तंजौर का शासन महाराष्ट्र राजाओं के हाथ में आ गया। इन राजाओं में दूसरे राजा 'शाहजी' संगीत और साहित्य कलाओं में पारङ्गत हुए। उनका दरबार बहुत से विद्वान् लोगों, शास्त्रज्ञों, गवैयों और कवियों से अलंकृत था। इनके समय रागों के लक्षण को निश्चय करने के लिए दस सम्प्रदायों के विद्वानों के मत के अनुसार लगभग एक सौ कर्नाटक रागों के लक्षणों को सुनकर, तालपत्र कोशों में लिखवाया गया।

चतुर्दण्डी लक्ष्य साहित्य को भी २० तालपत्र की पुस्तकों में लिखाकर सुरक्षित किया गया है। उनमें आलाप, ठाय, गीत और प्रबन्ध स्वररूप में लिखे गये हैं। सब ग्रन्थ अब भी 'तंजौर सरस्वती महल पुस्तकालय' में सुरक्षित हैं।

वैणिक, विद्वान्, शास्त्रज्ञ और साहित्यकार वेंकट मखी ने, जो १६२० ई० में तंजौर में थे, अपने "चतुर्दण्डिप्रकाशिका" नामक ग्रंथ में चतुर्दण्डी के लक्षण दिये हैं। उनके पिता गोविंद दीक्षित नायक राजाओं के मंत्री थे। राजा रघुनाथ नायक और गोविंद दीक्षित, इन दोनों की लिखी हुई "संगीतसुधा" में ५० रागों के आलापन क्रम विस्तृत रूप में दिये गये हैं। शाहजी (१६७८–१७११) के लक्ष्य-लक्षण ग्रन्थ में पाये जानेवाले लक्षण और लक्ष्यमार्ग ही आज की कर्नाटक संगीत पद्धति में भी विद्यमान हैं, परन्तु यह संप्रदाय संगीतरत्नाकर में दिये हुए रागस्वरूप और रागलक्षणों से बहुत भिन्न है।

संगीतरत्नाकर के बाद लिखे गये ग्रंथों में तात्कालिक रागों की मूर्च्छना, जाति, वर्ण और अलंकार इत्यादि के लक्षण नहीं दिये गये हैं। केवल हर एक राग के प्रकृति-विकृतिस्वर बताये गये हैं। इन ग्रंथों में दी हुई ग्रह, अंश, न्यास इत्यादि संज्ञाएँ भी उनके असली अर्थ में प्रयुक्त नहीं हैं। क्योंकि इन संज्ञाओं के मूलभूत मूर्च्छना-तत्त्व को वे सब भूल गये थे।

शाहजी द्वारा निष्कर्ष रूप में प्राप्त सब राग लक्षणों और लक्ष्य साहित्य से उद्धृत उदाहरणों को उनके भाई तुलजा महाराज ने अपने ग्रंथ "संगीत सारामृत" में यथा-तथ्य लिखा है। इस ग्रंथ में रागों के प्रकृति-विकृतिस्वर और चतुर्दण्डी लक्ष्य से विशेष संचार के उद्धरण मात्र दिये गये हैं। मूर्च्छना, ग्रह, अंश, न्यास, वर्ण और अलंकार आदि का उल्लेख नहीं है, किंतु संप्रदाय-परंपरा की विशुद्धता के कारण रागों की छाया पूर्ण जीवन के साथ, लगभग तीन वर्ष पहले तक विद्यमान थी। गुरुकुल संप्रदाय की

विच्छिन्नता के कारण सगीतकला के एक मात्र आश्रय सप्रदाय की भी कमी होती जा रही है।

आज कर्नाटक सप्रदाय के प्रचलित रागो में लगभग १०० राग प्रसिद्ध है। १५० अप्रसिद्ध अपूर्व राग हैं।

कर्नाटक पद्धति में मेल और रागो का इतिहास—

१ विद्यारण्य का मत—सगीतसार[1] (लगभग १४०० ई०)
२ रामामात्य का मत—स्वरमेल कलानिधि (१५५० ई०)
३ सोमनाथ का मत—रागविबोध (१६०९ ई०)
४ वेंकट मखी का मत[2]—चतुर्दण्डिप्रकाशिका (१६१५)
५ शाहजी और तुलजाजी का मत—सगीत सारामृत (१७१०-१७२५)
६ ७२ मेलकर्ता (उद्भवकाल लगभग १६०० ई०)
(प्रचार का काल लगभग १७५० ई०)

१ विद्यारण्य का 'सगीतसार' अब उपलब्ध नहीं है। परन्तु उनका मत रघुनाथ नायक और गोविन्द दीक्षित की 'सगीतसुधा' में उद्धृत किया गया है।

२ यह रचना ७२ मेलकर्ता के काल में परिष्कृत हुई, परन्तु इस योजना का प्रचार पिछले दिनो में ही हुआ।

१—५० राग और १५ मेल

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ		पञ्चश्रुति ऋषभ शुद्ध गान्धार	षट्श्रुति ऋषभ साधारण गान्धार	अन्तर गान्धार	अच्युत मध्यम	शुद्ध मध्यम		वराटी मध्यम	प्रतिमध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत	चतुःश्रुति धैवत	पञ्चश्रुति धैवत	षट्श्रुति धैवत कैशिकी निषाद	काकली निषाद	च्युतषड्ज
१	नट्टा मेल	स						रि	ग		म				प						ध	नि	
२	गुर्जरी मेल	स			रि				ग		म				प			ध				नि	
	२ गौराष्ट्र																						
	३ मेचबौलि																						
	४ छाया गौड																						
	५ गुण्डक्रिया																						
	६ सालगनाटिका																						
	७ शुद्ध वसन्त																						
	८ नादरामक्रिया																						

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	४ षड्ज	५	६	७ शुद्ध ऋषभ	८	९ पञ्चश्रुति ऋषभ शुद्ध गान्धार	१० षट्श्रुति ऋषभ साधारण गान्धार	११ अन्तर गान्धार	१२ अच्युत मध्यम	१३ शुद्ध मध्यम	१४	१५ वराटी मध्यम	१६ प्रीतिमध्यम	१७ पञ्चम	१८	१९	२० शुद्ध धैवत	२१ चतुःश्रुति धैवत	२२ पञ्चश्रुति धैवत	१ षट्श्रुति धैवत कैशिकी निषाद	२ काकली निषाद	३ च्युतषड्ज
	९ गौड																						
	१० बौलि																						
	११ कर्नाट बंगाल																						
	१२ ललित																						
	१३ मलहरि																						
	१४ पाठी																						
	१५ सावेरी																						
	१६ रेवगुप्ति																						
३	वराटी मेल	स			रि		ग						म		प			ध				नि	
४	श्रीराग मेल	स					रि	ग			म				प					ध	नि		

	२ राल्ग भैरवी																						
	३ घण्टारव																						
	४ वेलावली																						
	५ देवगान्धारी																						
	६ रीतिगोड																						
	७ मालवश्री																						
	८ मध्यमादि																						
	९ धनाशी																						
५	भैरवी मेल	स					रि	ग			म				प			ध			नि		
	२ भिन्न षड्ज																						
	३ हिन्दोल वगन्त																						
	४ हिन्दोल																						
	५ भूपाल																						
६	शंकराभरण मेल	स					रि		ग		म				प					ध		नि	
	२ आरभी																						
	३ पूर्वगौड																						
	४ नारायणी																						
	५ नारायण देशाक्षी																						
७	आहीरी मेल	स					रि	ग			म				प			ध				नि	
	२ आभेरी																						

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या ४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ		पञ्चश्रुति ऋषभ शुद्ध गान्धार	षट्श्रुति ऋषभ साधारण गान्धार	अन्तर गान्धार	अच्युत मध्यम	शुद्ध मध्यम		वराटी मध्यम	प्रतिमध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत	चतुश्रुति धैवत	पञ्चश्रुति धैवत	षट्श्रुति धैवत कैशिकी निषाद	काकली निषाद	च्युतषड्ज
८	वसन्त भैरवी मेल	स			रि				ग		म				प			ध			नि		
९	सामन्त मेल	स						रि	ग		म				प						ध	नि	
१०	काम्वोजी मेल	स					रि		ग		म				प					ध	नि		
११	मुखारी	स			रि		ग				म				प			ध		नि			
१२	शुद्ध रामक्रिया	स			रि				ग				म		प			ध				नि	
१३	केदारगौड	स					रि		ग		म				प					ध	नि		
	२ नारायण गौड																						
१४	हिजुज्जी	स			रि			ग			म				प			ध				नि	
१५	देशाक्षी	स						रि	ग		म				प					ध		नि	

२—६४ राग और २० मेल

मेलों की सख्या	मेल व राग	श्रुति सख्या																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ		पञ्चश्रुति ऋषभ शुद्धगान्धार	साधारण गाधार षट्श्रुति ऋषभ	अन्तर गान्धार	च्युत मध्यम गान्धार	शुद्ध मध्यम			च्युत पञ्चम मध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत		पञ्चश्रुति धैवत शुद्ध निषाद	षट्श्रुति धैवत कैशिकी निषाद	काकली निषाद	च्युतषड्ज निषाद
१	मुखारी मेल	स			रि						म				प			ध		नि			
२	मालवगौड मेल	स			रि					ग	म				प			ध					नि
	१ मालव गौड																						
	२ ललित																						
	३ बौलि																						
	४ सौराष्ट्र																						
	५ गुर्जरी																						
	६ मेचबौलि																						
	७ फलमञ्जरी																						

मेलो की सख्या	मेल एव रागो के नाम	श्रुति सख्या																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ		पञ्चश्रुति ऋषभ शुद्ध गान्धार	साधारण गान्धार षट्श्रुति ऋषभ	अन्तर गान्धार	च्युतमध्यम गान्धार	शुद्ध मध्यम			च्युत पचम मध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत		पञ्चश्रुति धैवत शुद्ध निषाद	षट्श्रुति धैवत कैशिकी निषाद	काकली निषाद	च्युत षड्ज निषाद
६	शुद्ध रामक्रिया	स			रि					ग				म	प			ध					नि
	२ षाढी																						
	३ आर्धदेशी																						
	४ दीपक																						
७	देशाक्षी मेल	स						रि		ग	म				प					ध			नि
८	कन्नड गौड	स						रि		ग	म				प					ध	नि		
	२ घण्टारव																						
	३ शुद्ध वगाल																						
	४ छाया नाट																						
	५ तुरुष्क तोडी																						

क्र.	नाम																						
	६ नागध्वनि																						
	७ देवक्रिया																						
९	शुद्ध नाट	म						रि		ग	म				प						ध		नि
१०	आहीरी	स					रि	ग			म				प			ध					नि
११	नादरामक्रिया	स			रि			ग			म				प			ध					नि
१२	शुद्ध वराली	स			रि		ग							म	प			ध					नि
१३	रीति गौड	स			रि		ग				म				प					ध	नि		
१४	वसन्तभैरवी मेल	स			रि					ग	म				प			ध			नि		
	२ भोगराग																						
१५	केदारगौड मेल	स					रि			ग	म				प					ध			नि
	२ नारायण गौड																						
१६	हेज्जुज्जीमेल	स			रि				ग		म				प			ध				नि	
१७	सामवराली मेल	स			रि		ग				म				प			ध				नि	
१८	रेवगुप्ति मेल	स			रि				ग		म				प			ध		नि			
१९	सामन्त मेल	म						रि	ग		म				प						ध	नि	
२०	काम्बोजी मेल	स					रि		ग		म				प					ध		नि	

३—७६ राग और २३ मेल

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या ४ षड्ज	५	६	७ शुद्ध ऋषभ	८ तीव्र ऋषभ	९ तीव्रतर ऋषभ शुद्ध गान्धार	१० तीव्रतम ऋषभ साधारण गान्धार	११ अन्तर गान्धार	१२ मृदु मध्यम	१३ शुद्ध मध्यम	१४	१५ तीव्रतम मध्यम	१६ मृदु पञ्चम	१७ पञ्चम	१८	१९	२० शुद्ध धैवत	२१ तीव्र धैवत	२२ तीव्रतर धैवत शुद्ध निषाद	१ तीव्रतम धैवत कैशिक निषाद	२ काकली निषाद	३ मृदु षड्ज
१	मुखारी मेल	स			रि		ग				म				प			ध		नि			
	२ तुरुष्क तोडी																						
२	रेवगुप्ति मेल	स			रि				ग		म				प			ध		नि			
३	सामवराली मेल	स			रि		ग				म				प			ध				नि	
	२ वसन्तवराली																						
४	तोडी मेल	स			रि			ग			म				प			ध			नि		
५	नादरामक्री मेल	स			रि			ग			म				प			ध					नि
६	भैरव मेल	स			रि				ग		म				प			ध			नि		
	२ पौरविका																						

७	वसन्त	स			रि				ग		म				प			ध				नि	
	२ डवक																						
	३ हिजेजा																						
	४ हिन्दोल																						
८	वसन्तभैरवी मेल	स			रि					ग	म				प			ध			नि		
	२ मारविका																						
९	मालवगौड मेल	स			रि					ग	म				प			ध					नि
	२ चैतीगौडी																						
	३ पूर्वी																						
	४ पाडी																						
	५ देवगान्धार																						
	६ गोण्डक्रिया																						
	७ कुरञ्जी																						
	८ वाहुली																						
	९ रामक्री																						
	१० पावक																						
	११ असानेरी																						
	१२. पञ्चम																						
	१३. बंगाल																						
	१४ शुद्ध ललित																						

मेलों की सख्या	मेल एव रागो के नाम	श्रुति सख्या ४ षड्ज	५	६	७ शुद्ध ऋषभ	८ तीव्र ऋषभ	९ तीव्रतर ऋषभ शुद्ध गान्धार	१० तीव्रतम ऋषभ साधारण गान्धार	११ अन्तरगान्धार	१२ मृदु मध्यम	१३ शुद्ध मध्यम	१४	१५ तीव्रतम मध्यम	१६ मृदु पञ्चम	१७ पञ्चम	१८	१९	२० शुद्ध धैवत	२१ तीव्र धैवत	२२ तीव्रतर धैवत शुद्ध निषाद	१ तीव्रतम धैवत कैशिक निषाद	२ काकली निषाद	३ मृदु षड्ज
	१५ गुर्जरी																						
	१६ फरज (परज)																						
	१७ शुद्ध गौड																						
१०	रीतिगौड मेल	स			रि		ग				म				प					ध	नि		
११	आभीर मेल	स					रि	ग			म				प			ध					नि
१२	हम्मीर मेल	स					रि			ग	म				प			ध					नि
	२ विषगड																						
	३ केदार																						
१३	शुद्ध वराटी मेल	स			रि			ग					म		प			ध					नि

१४	शुद्ध रामकी मेल	ग			रि					ग			म		प			ध					नि
	२ ललित																						
	३ जेतश्री																						
	४ ग्रावणी																						
	५ देशी																						
१५	श्रीराग मेल	ग				रि		ग			म				प				ध		नि		
	२ मालवश्री																						
	३ धन्याशिकी																						
	४ भैरवी																						
	५ धवला																						
	६ सैन्धवी																						
१६	कल्याण मेल	ग					रि	ग						म	प			ध					नि
१७	काम्बोदी मेल	स					रि		ग	ग	म				प					ध		नि	
	२ देवकी																						
१८	मल्लारी	स					रि				म				प					ध			नि
	२ नटमल्लारी																						
	३ पूर्न गौड																						
	४ भूपाली																						
	५ गौड																						
	६. शंकराभरण																						

मेलो की सख्या	मेल एव रागो के नाम	श्रुति सख्या																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ	तीव्र ऋषभ	तीव्रतर ऋषभ शुद्ध गान्धार	तीव्रतम ऋषभ साधारण गान्धार	अन्तर गान्धार	मृदु मध्यम	शुद्ध मध्यम		तीव्रतम मध्यम	मृदु पञ्चम	पञ्चम			शुद्ध धैवत	तीव्र धैवत	तीव्रतर धैवत शुद्ध निषाद	तीव्रतम धैवत कौशिको निषाद	काकली निषाद	मृदु षड्ज
	७ नटनारायण																						
	८ नारायण गौड़																						
	९ द्वितीय केदार																						
	१० सालङ्क नाट																						
	११ वेलावली																						
	१२ मध्यमादि																						
	१३ सावेरी																						
	१४ सौराष्ट्री																						
१९	सामन्त मेल	स						रि	ग		म				प						ध		नि
२०	कर्नाटगौड मेल	स						रि		ग	म				प				ध		नि		

	२. अटाणा																						
	३ नागध्वनि																						
	४ शुद्ध वगाल																						
	५ वर्ण नाटक																						
	६ ईराक																						
२१	देशाक्षी मेल	स						रि		ग	म				प					ध			
२२	शुद्ध नाट मेल	स						रि		ग	म				प						ध		नि
२३	सारङ्ग मेल	म					रि			ग				म	प						ध		नि

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ	तीव्र ऋषभ	तीव्रतर ऋषभ शुद्ध गान्धार	तीव्रतम ऋषभ साधारण गान्धार	अन्तर गान्धार	मृदु मध्यम	शुद्ध मध्यम		तीव्रतम मध्यम	मृदु पञ्चम	पञ्चम			शुद्ध धैवत	तीव्र धैवत	तीव्रतर धैवत शुद्ध निषाद	तीव्रतम धैवत कौशिकी निषाद	काकली निषाद	मृदु षड्ज
	७ नटनारायण																						
	८ नारायण गौड़																						
	९ द्वितीय केदार																						
	१०. सालङ्क नाट																						
	११ वेलावली																						
	१२ मध्यमादि																						
	१३ सावेरी																						
	१४ सौराष्ट्री																						
१९	सामन्त मेल	स						रि	ग		म				प						ध		नि
२०	कर्नाटगौड मेल	स						रि		ग	म				प				ध		नि		

	२ *अटाणा																						
	३ नागध्वनि																						
	४ शुद्ध बगाल																						
	५ वर्ण नाटक																						
	६ ईराक																						
२१	देशाक्षी मेल	स						रि		ग	म				प					ध			
२२	शुद्ध नाट मेल	स						रि		ग	म				प						ध		नि
२३	सारङ्ग मेल	स					रि			ग				म	प						ध		नि

४—५४ राग और १९ मेल

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या																					
		४ षड्ज	५	६	७ शुद्ध ऋषभ	८	९ शुद्ध गान्धार पञ्चश्रुति ऋषभ	१० षट्श्रुति ऋषभ साधारण गान्धार	११	१२ अन्तर गान्धार	१३ शुद्ध मध्यम	१४	१५	१६ वराली मध्यम	१७ पञ्चम	१८	१९	२० शुद्ध धैवत	२१	२२ पञ्चश्रुति धैवत शुद्ध निषाद	१ कैशिक निषाद	२	३ काकली निषाद
१	मुखारी मेल	स			रि		ग				म				प			ध		नि			
२	सामवराली मेल	स			रि		ग				म				प			ध					नि
३	भूपाल मेल	स			रि			ग			म				प			ध			नि		
४	हेज्जुज्जीमेल	स			रि					ग	म				प			ध			नि		
	२ रेवगुप्ति																						
५	वसन्तभैरवी मेल	स			रि					ग	म				प			ध			नि		
६	गौड मेल	स			रि					ग	म				प			ध					नि
	२ सौराष्ट्रम्																						
	३ सारङ्गनाट																						

	४ गुण्डक्रिया																						
	५ नादरामक्रिया																						
	६ ललिता																						
	७ पाडी																						
	८ गुर्जरी																						
	९ कन्नड बंगाल																						
	१० बौली																						
	११ गावेरी																						
	१२ मलहरि																						
	१३ छाया गौड																						
	१४ पूर्वगौड																						
७	भैरवी मेल	स					रि	ग			म				प					ध	नि		
	२ हिन्दोल																						
	३ घण्टारव																						
	४ रीतिगौड																						
८	आहीरी मेल	स					रि	ग			म				प			ध					नि
	२ हिन्दोल वसन्तम्																						
	३ आभेरी																						
९	श्रीराग मेल	स					रि	ग			म				प				ध		नि		
	२ मालव भैरवी																						

५—१०० राग और १९ मेल

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम	श्रुति संख्या																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ		शुद्ध गान्धार पञ्चश्रुति ऋषभ	षट्श्रुति ऋषभ साधारण गान्धार		अन्तर गान्धार	शुद्ध मध्यम			वराली मध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत		पञ्चश्रुति धैवत शुद्धनिषाद	कैशिक निषाद		काकली निषाद
१	श्रीराग मेल	स					रि	ग			म				प			ध			नि		
	२ कन्नड गौड़																						
	३ देवगान्धार																						
	४ सालगभैरवी																						
	५ शुद्ध देशी																						
	६ माधवमनोहरी																						
	७ मध्यमग्रामराग																						
	८ सैन्धवी																						
	९ खापूरी																						

	१० तुर्गैनी																						
	११ श्रीरञ्जनी																						
	१२ मालवश्री																						
	१३ देवगनोहरी																						
	१४ जयन्त सेना																						
	१५ मणिरगु																						
	१६ मव्यमादि																						
	१७ शुद्ध धन्यासी																						
२	शुद्ध नाट मेल	स						रि		ग	म				प						ध		नि
	२ उदयरविचन्द्रिका																						
३	मालवगौड मेल	स			र					ग	म				प			ध					नि
	२ गारनाटी																						
	३ आर्द्रदेशी																						
	४ छाया गौड																						
	५ टक्क																						
	६ गुर्जरी																						
	७ गुण्डक्रिया																						
	८ फलमञ्जरी																						
	९ नादरामक्रिया																						
	१० सौराष्ट्री																						

मेलो की सख्या	मेल एव रागों के नाम	श्रुति सख्या																					
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षडज			शुद्ध ऋषभ		शुद्ध गान्धार पञ्चश्रुति ऋषभ	षट्श्रुति ऋषभ साधारण गान्धार		अन्तर गान्धार	शुद्ध मध्यम			वराली मध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत		पञ्चश्रुति धैवत शुद्धनिषाद	कैशिक निषाद		काकली निषाद
	११ मेचबोली																						
	१२ मागधी																						
	१३ गौरीमनोहरी																						
	१४ मारुवा																						
	१५ गौड़ीपन्तु																						
	१६ सावेरी																						
	१७ पूर्वी																						
	१८ विभासुक																						
	१९ गौड																						
	२० कन्नड बगाल																						

	२१ झुली																						
	२२ पाडी																						
	२३ मलहरी																						
	२४ ललित																						
	२५ पूर्णपञ्चम																						
	२६ शुद्ध सावेरी																						
	२७ मेघ रञ्जी																						
	२८ रेवगुप्त																						
	२९ मालवी																						
४	वेलावली मेल	स					रि	ग			म				प					ध			नि
५	वराली मेल	स			रि		ग							म	प			ध					नि
६	शुद्ध रामक्रिया मेल	स			रि					ग				म	प			ध					नि
	२ दीपक																						
७	शंकराभरण मेल	स					रि			ग	म				प					ध			नि
	२ आरभी																						
	३ शुद्ध वसन्त																						
	४ सारस्वती मनोहरी																						
	५ पूर्वगौड																						
	६ नारायणी																						
	७ नारायण देशाक्षी																						

मेलों की सख्या	मेल एव रागो के नाम	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
		षड्ज			शुद्ध ऋषभ		शुद्ध गान्धार पञ्चश्रुति ऋषभ	षट्श्रुति ऋषभ साधारण गान्धार		अन्तर गान्धार	शुद्ध मध्यम			वराली मध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत		पञ्चश्रुति धैवत शुद्ध निषाद	कैशिक निषाद		काकली निषाद
	८ सामन्त																						
	९ कुरञ्जिका																						
	१० पूर्णचन्द्रिका																						
	११ सुरसिन्धु																						
	१२ जुलाऊ																						
	१३ विलाहुरी																						
	१४ गौडमल्लार																						
	१५ केदार																						
८	काम्बोजी मेल	स					रि			ग	म				प					ध	नि		
	२ नारायण गौड																						

	३ केदारगौड							
	४ बलहंस							
	५ नागध्वनि							
	६ छायातरङ्गिणी							
	७ ईशमनोहरी							
	८ गुरुकुल काम्भोजी							
	९ नाटकुरञ्जी							
	१० कनड							
	११ नटनारायणी							
	१२ आन्दाली							
	१३ नामा							
	१४ मोहन							
	१५ देवक्रिया							
	१६ मोहन कल्याणी							
९	…ंगी मेल	स	रि	ग	म	प	ध	नि
	२ आहरी							
	३ घण्टारव							
	४ इन्दुघण्टारव							
	५ रीतिगौड							
	६ हिन्दोल वसन्त							

मेलकर्ता का नाम	स	ऋषभ	गान्धार	मध्यम	पञ्चम	धैवत	निषाद
१ कनकागी	स	शुद्ध	शुद्ध	शुद्ध	प	शुद्ध	शुद्ध
२ रत्नागी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
३ गानमूर्ति	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
४ वनस्पति	,,	,,	,,	,,	,,	चतु श्रुति	कैशिक
५ मानवती	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
६ तानरूपी	,,	,,	,,	,,	,	पट्श्रुति	,,
७ सेनापति	,,	,,	साधारण	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
८ हनुमत्तोडी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
९ धेनुका	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
१० नाटकप्रिया	,,	,,	,,	,,	,,	चतु श्रुति	कैशिक
११ कोकिलप्रिया	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
१२ रूपवती	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
१३ गायकप्रिय	,,	,,	अन्तर	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
१४ वकुलाभरण	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
१५ मायामालवगौड	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
१६ चक्रवाक	,,	,,	,,	,,	,,	चतु श्रुति	कैशिक
१७ सूर्यकान्त	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली

१८	हाटकाम्बरी	,,	,,	,,	,,	,,	पट्श्रुति	,,
१९	झंकारध्वनि	,,	चतु श्रुति	साधारण	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
२०	नटभैरवी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
२१	कीरवाणी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
२२	खरहरप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	चतु श्रुति	कैशिक
२३	गौरी मनोहरी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
२४	वरुणप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	पट्श्रुति	,,
२५	माररंजनी	,,	,,	अन्तर	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
२६	चारुकेशी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
२७	सरसांगी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
२८	हरिकाम्भोजी	,,	,,	,,	,,	,,	चतु श्रुति	कैशिक
२९	धीरशंकराभरण	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
३०	नागानंदिनी	,,	,,	,,	,,	,,	पट्श्रुति	,,
३१	यागप्रिया	,,	पट्श्रुति	,,	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
३२	रागवर्धिनी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
३३	गांगेयभूषणी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
३४	वागधीश्वरी	,,	,,	,,	,,	,,	चतु श्रुति	कैशिक
३५	शूलिनी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
३६	चलनाट	,,	,,	,,	,,	,,	पट्श्रुति	,,
३७	सालग	,,	,,	,,	प्रति	,,	शुद्ध	शुद्ध

मेलकर्ता का नाम	स	ऋषभ	गान्धार	मध्यम	पञ्चम	धैवत	निषाद
३८ जलार्णव	स	षट्श्रुति	अन्तर	प्रति	प	शुद्ध	कैशिक
३९ झालवराली	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
४० नवनीत	,,	,,	,	,,	,	चतु श्रुति	कैशिक
४१ पावनी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
४२ रघुप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
४३ गवाबोधि	,,	,,	साधारण	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
४४ भवप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
४५ शुभपतुवराली	,,	शुद्ध	,,	,,	,,	,,	काकली
४६ षड्विधमार्गिणी	,,	,,	,,	,,	,,	चतु श्रुति	कैशिक
४७ सुवर्णांगी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
४८ दिव्यमणि	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
४९ धवलाबरी	,,	,,	अन्तर	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
५० नामनारायणी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
५१ कामवर्धनी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
५२ रामप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	चतु श्रुति	कैशिक
५३ गमनश्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
५४ विश्वभरी	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
५५ श्यामलागी	,,	चतु श्रुति	साधारण	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध

५६ षण्मुखप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
५७ सिंहेन्द्रमध्यम	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
५८. हेमवती	,,	,,	,,	,,	,,	चतु श्रुति	कैशिक
५९ धर्मवती	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
६० नीतिमती	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
६१ कांतामणि	,,	,,	अन्तर	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
६२ ऋषभप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
६३ लतांगी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
६४ वाचस्पति	,,	,,	,,	,,	,,	चतु श्रुति	कैशिक
६५ मेचकल्याणी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
६६ चित्राम्बरी	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
६७ सुचरित्र	,,	षट्श्रुति	,,	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
६८ ज्योति स्वरूपिणी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
६९ धातुवर्धिनी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
७० नासिकाभूषणी	,,	,,	,,	,,	,,	चतु श्रुति	कैशिक
७१ कोसल	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
७२ रसिकप्रिया	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,

मेलकर्ता का नाम	स	ऋषभ	गान्धार	मध्यम	पञ्चम	धैवत	निषाद
३८ झलार्णव	स	षट्श्रुति	अन्तर	प्रति	प	शुद्ध	कैशिक
३९ झालवराली	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
४० नवनीत	,,	,,	,	,,	,	चतु श्रुति	कैशिक
४१ पावनी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
४२ रघुप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
४३ गवाबोधि	,,	,,	साधारण	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
४४ भवप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
४५ शुभपतुवराली	,,	शुद्ध	,,	,,	,,	,,	काकली
४६ षड्विधमार्गिणी	,,	,,	,,	,,	,,	चतु श्रुति	कैशिक
४७ सुवर्णांगी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
४८ दिव्यमणि	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
४९ धवलावरी	,,	,,	अन्तर	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध
५० नामनारायणी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	कैशिक
५१ कामवर्धनी	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
५२ रामप्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	चतु श्रुति	कैशिक
५३ गमनश्रिय	,,	,,	,,	,,	,,	,,	काकली
५४ विश्वभरी	,,	,,	,,	,,	,,	षट्श्रुति	,,
५५ श्यामलागी	,,	चतु श्रुति	साधारण	,,	,,	शुद्ध	शुद्ध

५६ षण्मुखप्रिय	”	”	”	”	”	”	कैशिक
५७ सिंहेन्द्रमध्यम	”	”	”	”	”	”	काकली
५८ हेमवती	”	”	”	”	”	चतु श्रुति	कैशिक
५९ धर्मवती	”	”	”	”	”	”	काकली
६० नीतिमती	”	”	”	”	”	पट्श्रुति	”
६१ कान्तामणि	”	”	अन्तर	”	”	शुद्ध	शुद्ध
६२ ऋषभप्रिय	”	”	”	”	”	”	कैशिक
६३ लतांगी	”	”	”	”	”	”	काकली
६४ वाचस्पति	”	”	”	”	”	चतु श्रुति	कैशिक
६५ मेचकल्याणी	”	”	”	”	”	”	काकली
६६ चित्राम्बरी	”	”	”	”	”	पट्श्रुति	”
६७ सुचरित्र	”	पट्श्रुति	”	”	”	शुद्ध	शुद्ध
६८ ज्योति स्वरूपिणी	”	”	”	”	”	”	कैशिक
६९ धातुवर्धिनी	”	”	”	”	”	”	काकली
७० नासिकाभूषणी	”	”	”	”	”	चतु श्रुति	कैशिक
७१ कोसल	”	”	”	”	”	”	काकली
७२ रसिकप्रिया	”	”	”	”	”	पट्श्रुति	”

हिन्दुस्थानी पद्धति

विदेशी आक्रमणो के कारण हमारी बहुत-सी धार्मिक और कलासवधी सप्रदाय-सस्थाएँ मिट गयी थी। लगभग १००० ईसवी से १२०० ईसवी तक आक्रमणकारियो की नीयत मदिरो को मिटाना, धन, आभूपण आदि को लूट ले जाना आदि ही थी। कुछ समय के बाद वे आर्थिक निधियो के साथ-साथ कला एव विज्ञान की निधियो को भी ले जाने लगे। धीरे-धीरे उन्हें इसी देश में रहकर शासन करने की इच्छा हुई। महमूद गोरी ने दिल्ली में अपने एक प्रतिनिधि को नियुक्त करके उत्तर भारत के उत्तर-पश्चिमी भाग पर शासन किया था। उसके बाद उसका प्रतिनिधि कुतुबुद्दीन, जो पहले उसका गुलाम था, दिल्ली का बादशाह हुआ। यह ई० सन् १२०६ की बात है। उस समय से दिल्ली के बादशाह, उनके वशज और उनके परिजन, ये सब भारत को अपनी मातृभूमि मानने लगे। हिंदूधर्म की मूर्तिपूजा उन्हें पसद न आयी परतु भारतीय कलाएँ उनके मन को आकर्षित करने लगी। एक सौ वर्षों के बाद ही दिल्ली दरबार में भारतीय कलाकार स्थान पाने लगे। अलाउद्दीन खिलजी ने, जो अपने राज्य को सुदूर दक्षिण तक विस्तृत कर सका था, भारतीय गायक गोपाल नायक को बहुत आदर के साथ अपने दरबार के गवैयो में एक प्रतिष्ठित स्थान दिया। अलाउद्दीन के दरबार में अमीर खुसरो एक प्रसिद्ध कवि और गायक था। कहा जाता है कि गोपाल नायक और अमीर खुसरो में प्रतिस्पर्धा हुई। इसमें विजय किसकी हुई, यह विवादग्रस्त है। कुछ लोगो का कथन है कि यह घटना अलाउद्दीन के काल में नही, अपितु और बीस-तीस वर्ष पश्चात् हुई है।

बात कुछ भी हो, यह स्पष्ट है कि दिल्ली बादशाहो के दरबार में १४०० ई० से भारतीय कलाओ के पोषण करने का कार्य आरम्भ हुआ।

दक्षिण भारत में जिस तरह विजयनगर साम्राज्य के विशेष प्रयत्न से कर्नाटक सप्रदाय उत्पन्न होकर बढा, उसी तरह दिल्ली बादशाहो के आश्रय में उत्तर भारत का अवशिष्ट सगीत सप्रदाय "हिंदुस्थानी सगीत" नाम से बढने लगा।

बादशाहो का मन बहलाने के लिए उनके आश्रय मे रहनेवाले भारतीय गायक फारसी भाषा का भी थोडा-थोडा मिश्रण करने लगे। फारसी भाषा के प्रबधो का अनुसरण करके भारतीय साहित्यकार प्रबध रचने लगे। टप्पा, ख्याल, ठुमरी, गज़ल इत्यादि इसी तरह उत्पन्न हुए हैं। इस तरह भारतीय-फारसी मिश्रित रीति की रचनाओ में अमीर खुसरो का साहित्य ही मुख्य है। स्वरो के उच्चारण की रीति में भी थोडा-सा परिवर्तन हुआ। हरएक स्वर के साथ उसके ऊपर के स्वर को छूकर

उच्चारण करने की यह रीति हो गयी। अब तक भारतीय सगीत कुछ-कुछ प्रातीय छायाभेद होने पर भी देशभर में एक-जैसा था। इसके बाद स्वरो के उच्चारण की रीति में भिन्नता होने के कारण दक्षिण के सगीत और उत्तर के सगीत के रागो में स्वरो की समानता रहने पर भी छायाभेद होने लगे।

परतु वृन्दावन, अयोध्या आदि भारतीय पुण्यस्थलो में रहनेवाले सत और भक्त दरबार के सगीत से सबध न रखकर गाते और साहित्य रचना करते आते थे। प्राचीन सगीत साहित्यो मे जयदेव का गीतगोविंद, कवि विद्यापति का साहित्य इत्यादि प्रचार में थे और आज भी है।

सगीतशास्त्र में रागो का वादी-सवादीतत्त्व मात्र ही अवशिष्ट था। बाकी सब लक्षण—ग्राम, मूर्च्छना, जाति आदि—विस्मृत हो गये थे। रागो के मुख्य सचार "पकड" नाम से प्रचार में थे।

प्राचीन काल में रागो का विभाग दो प्रकार से था। एक प्रकार में याष्टिक, दुर्गा, मतङ्ग आदि के मत के अनुसार राग, भाषा, रागाङ्ग, भाषाङ्ग, क्रियाङ्ग और उपाङ्ग इत्यादि विभाग थे। इसी को सगीतरत्नाकर में शार्ङ्गदेव ने दिया है। दूसरा विभाग राग-रागिनी पद्धति में है। राग-रागिनी मत के आदिकर्ता कौन है? यह नही जाना जाता है। कदाचित् इसकी उत्पत्ति शैव आगमो में से हुई होगी। चतुर दामोदर (१६०० ई०) कृत सगीतदर्पण में राग-रागिनी मत के तीन सप्रदाय दिये गये है। रागार्णव मत, सोमनाथ मत, हनुमन्मत ये ही तीन है। इन तीनो मतो मे थोडा-थोडा भेद है। इन तीनो मतो के अनुसार राग विभाग इस प्रकार है—

सगीतदर्पण में राग-रागिनीमत

१ सोमेश्वर मत (प्राचीन मत)—यह मत पार्वतीजी के प्रति शिवजी के द्वारा उपदिष्ट माना जाता है।

पुरुषराग—६

१ श्रीराग—शिवजी के सद्योजात मुख से उत्पन्न।
२ वसत— ,, ,, वामदेव ,, ,, ,,
३ भैरव— ,, ,, अघोर ,, ,, ,,
४ पचम— ,, ,, तत्पुरुष ,, ,, ,,
५ मेघ— ,, ,, ईशान ,, ,, ,,
६ नट्टनारायण—पार्वतीजी के मुख से उत्पन्न।

ये सब शिव-पार्वती नर्तन के समय उत्पन्न हुए है।

श्रीराग की रागिनियां—६

(१) मालवी
(२) त्रिवेणी
(३) गौडी
(४) केदारी
(५) मधुमाधवी
(६) पहाडी

वसत की रागिनियां—६

(१) देशी
(२) देवगिरि
(३) वराटी
(४) तोडिका
(५) ललिता
(६) हिंदोली

भैरव की रागिनियां—६

(१) भैरवी
(२) गुर्जरी
(३) रेवा
(४) गुणकरी
(५) वगाली
(६) वहुली

पचम की रागिनियां—६

(१) विभास
(२) भूपाली
(३) कर्नाटी
(४) वडहसा
(५) मालवश्री
(६) पटमजरी

मेघराग की रागिनियां—६

(१) मल्लारी
(२) मोरठी
(३) सावेरी
(४) कौशिकी–(कैशिकी)
(५) गाधारी
(६) हरिश्रृगारा

नट्टनारायण की रागिनियां—६

(१) कामोदी
(२) कल्याणी
(३) आभेरी
(४) नाटिका
(५) सालगनाटी
(६) हवीरा।

उस मत के अनुसार राग-गायन का समय

सवेरे से—

मधुमाधवी
देशी
भूपाली
भैरवी

वेलावली	मेघराग
मल्हारी	पञ्चम
बंगाली	देशकार
साम	भैरव
गुर्जरी	ललित
धनाश्री	वसंत
मालवश्री	

पहले प्रहर के बाद

¹गुर्जरी	गुणकरी
कौशिक (कैशिक)	भैरवी
सावेरी	रामकरी
पटमंजरी	सौरठी
रेवा	

दूसरे प्रहर के बाद

वैराटी	नाग गांधारी
तोडिका	देशी
कामोदी	शंकराभरण
गुंडायिका	

तीसरे प्रहर के बाद—अर्धरात्रि तक गाने योग्य

मालव	केदारी
गौडी	कर्नाटी
त्रिवण	आभीरी
नटकल्याण	वडहंसी
मालवगनाट	पहाडी
सरा नाट नामक राग	

रागों को गाने में काल या समय का नियम अवश्य पालनीय है। राजाज्ञा से सब राग सदा गेय हैं।

१ देश भेद के अनुसार गुर्जरियां कई प्रकार की होती हैं।

रागों के ऋतुनियम

श्रीराग और उसकी रागिनियाँ — शिशिर ऋतु में
वसत ,, ,, — वसत ,,
भैरव ,, ,, — ग्रीष्म ,,
पचम ,, ,, — शरद ,,
मेघराग ,, ,, — वर्षा ,,
नट्टनारायण ,, ,, — हेमत ,,

रागो के गाने मे जो ऋतुनियम कहे गये हैं वे इच्छानुकूल हैं।

२ हनुमन्मत

पुरुषराग—६

(१) भैरव
(२) कौशिक (कैशिक)
(३) हिंदोल
(४) दीपक
(५) श्रीराग
(६) मेघराग

भैरव की रागिनियाँ—५

(१) मध्यमादि
(२) भैरवी
(३) वगाली
(४) वराटिका
(५) सैंधवी

कौशिक की रागिनियाँ—५

(१) तोडी
(२) खभावती
(३) गौडी
(४) गुणक्री
(५) ककुभा

हिंदोल की रागिनियाँ—५

(१) वेलावली
(२) रामक्री
(३) देशाख्या
(४) पटमजरी
(५) ललिता

दीपक की रागिनियाँ—५

(१) केदारी
(२) कानडा
(३) देशी
(४) कामोदी
(५) नाटिका

श्रीराग की रागिनियां—५

(१) वमती
(२) माल्नी (माल्वी)
(३) मालश्री
(४) धनाश्री
(५) जमावेरी

मेघराग की रागिनियां—५

(१) मह्लारी
(२) देशकारी
(३) भूपाली
(४) गुर्जरी
(५) टक्क

३. रागार्णवमत

पुरुषराग—६

(१) भैरव
(२) पंचम
(३) नाट
(४) मह्लार
(५) गौडमालव
(६) देशाख्य

भैरव की रागिनियां—५

(१) बंगाली
(२) गुणकरी
(३) मध्यमादी
(४) वसना
(५) धनाश्री

पंचम की रागिनियां—५

(१) ललिता
(२) गुर्जरी
(३) देशी
(४) वराटी
(५) रामकृति

नाट की रागिनियां—५

(१) नटनारायण
(२) पूर्वगांधार
(३) नाल्ना
(४) केदार
(५) कर्णाट

मल्हार की रागिनियाँ—५

(१) मेघमल्लारिका
(२) मालवकौशिका (कैशिका)
(३) पटमजरी
(४) असावेरी

गौड़मालव की रागिनियाँ—४

(१) हिंदोल
(२) श्रवणा
(३) आधारी
(४) गौडी
(५) पडहसिका

देशाख्य राग की रागिनियाँ—५

(१) भूपाली
(२) कुडायी
(३) कामोदी
(४) नाटिका
(५) वेलावली

हनुमन्मत की राग-रागिनियों के लक्षण

राग-रागिनी	अंश	न्यास	ग्रह	वर्ज्य	विशेष	मूर्च्छना	संचार
भैरव	ध	ध	ध	रि, प	मा बहुत्व ध विकृत औडव	ध आदि	धनिसगमधनि ।
मध्यमादि	म	म	म	रि, ध (कभी)	संपूर्ण	म आदि	पधमनिसरिगम (या) मम,पम,पनि,मनि गम ।
भैरवी	म	म	म		मध्यम ग्राम मतांतर में भैरव के समान	(सौवीरी) म आदि	मपधनि सरिगम (या) धनिसगमधप ।
बंगाली	स	म	स	रिध	मन्द्रप्रयुत	स आदि	सगमपनिसा (या) मप-धनिसरिगमा ।
वराटी	म	म	म		कीर्तिवर्धनी संपूर्णा	स आदि	सरिगमपधनिसा ।
सैंधवी	स	स	स	रि	मतांतरे संपूर्णा वीररसवर्धनी	स आदि	सरिगमपधनिसा (या) सगमधनिमा ।
कौशिक (मालकौशिक)	म	स	स		पूर्ण काकलीयुत	स आदि	सरिगमपधनिसा सनि-धमगरिसा ।
तोडी	म म (मतांतरे)	म स (मतांतरे)	म स (मतांतरे)		पूर्ण	म आदि	मपधनिसरिगमा (या) सरिगमपधनिसा
खम्भावती	ध	ध	ध	प	म ग्राम	ध आदि	धनिसरिगमधा ।
गौडी	स	म	स	रिप	सुखप्रदा	स आदि	गगमधनिसा सनिधम गमा (गमा)

राग-रागिनी	अंश	न्यास	ग्रह	वर्ज्य	विशेष	मूर्च्छना	संचार
गुणक्री	नि स (मतातरे)	नि स (मतान्तरे)	नि स (मतान्तरे)	रिध	औडव	नि आदि	निसगमपनि निपमगसनि (या) सगमपनिसा ।
ककुभा	ध	ध	ध		सपूर्णा	ध आदि	धनिसरिगमपधा ।
हिंदोल	स	स	स	रिध	मध्यम ग्राम काकलीयुत	स आदि	सगमपनिमपसा ।
वेलावली	ध	ध	ध		मध्यमग्राम वीररस	ध आदि	धनिसरिगमपधा ।
रामक्री	स	स	स	रिध (मतातरे) प (अन्यमत) रि	पूर्णा करुणरस	स आदि	सगमपनिस (या) सरिगमपधनिसा (या) सरिगमधनिसा ।
देशाख्या	ग	ग	ग		मध्यमग्राम (मतातरे सपूर्ण)	गा आदि	गमपधनिसगा (या) गमपधनिसरिगा ।
पटमजरी	प	प	प		मध्यमग्राम	प आदि	पधनिसा रीगमपा
ललिता	स	स	स	रिप	मध्यमग्राम (मतातर में सपूर्णा)	स आदि	सगमधनिसा (या) धनिसगमधा ।
(द्वितीय ललिता)	ध	ध	ध				

दीपक	ग	ग	ग		ग ग्राम	ग आदि	सरिगमपधनिसा
केदारी	नि	नि	नि	रिध	,, ,,	नि ,,	निसगम पनिनि पमगगनि
कर्णाटी	नि	नि	नि		काकलीयुत म ग्राम	नि ,,	निसरिगमपधनि
देशी	रि	रि	रि	प	काकलीयुत म ग्राम	रि ,,	रिमगधनिगरि
कामोदी	ध	ध	ध		विकृत ऋषभ म ग्राम	ध ,,	धनिगरिगमपधा
नाटिका	ग	ग	ग		बहु गमकवाली	स ,,	मरिगमपधनिसा सनिधपमगरिसा
श्रीराग	ग	ग	ग		रिषभयुत	ग ,,	सरिगमपधनिसा (या) रिगमपधनिसा
वगतिका	ग	ग	ग			श्रीराग ,,	सरिगमपधनिसा
मालवी	नि	नि	नि	परि	काकलीयुत	नि ,,	निगपसगनि (या) निगरिमगनि
मालवश्री	ग	ग	ग		शृंगाररस	ग ,,	सरिगमपधनिसा
धनाश्री	ग	ग	ग	रि	वीररस	ग ,,	सगमपधनिसा
अगावरी	प	ध	प	रिग	करुण		धनिसमपधा मधनिसरिग धगरिगनिध

रागरागिनी	अंश	न्यास	ग्रह	वर्ज्य	विशेष	मूर्च्छना	संचार
मेघराग	ध	ध	ध		विकृत धैवत शृंगार	ध आदि	धनिसरिगमपधा
मल्लारी	ध	ध	ध	सप	म ग्राम	ध ,,	धनिरिगमधा
देशकारी	स	स	स		वराटीमिश्रित	स ,,	सरिगमपधनिसा
भूपाली	स	स	स	रिम हीना (मतांतर में)	शांतरस	स ,,	सरिगमपधनिसा
गुर्जरी	रि	रि	रि		बहुन्यास	रि ,,	रिगमपधनिसरि
टक्क	स	स	स			स ,,	सरिगमपधनिसा
कल्याणनाट	रि (प) (मतांतर में)	रि (प)	रि (प)				रिगमपधनिसरि सरिग-मपधनिसा
सारंगनाट	स	स	स			स ,,	सरिगमपधनिस
देवक्री	सारङ्गसम	सारङ्गसम	सारङ्गसम				सरिगमपधनिस
सोरठी	प (स) (मतांतर)	प (स)	प (स)	रिवर्ज्य			पधनिसगमा (या) सग-मपधनिसा

त्रिवणा	ध	ध	ध	रि॰			धनिसगमधा
पहाली	ग	स	ग	रिग	गोरीवत्		
पनम	म	ग	स	प	(सपूर्ण मतांतर) शृंगाररस	म आदि	सरिगमधनिसा (या) सरिगमपधनिसा
शंकराभरण	वेलावली जैसे	वेलावली जैसे					
वड़हंसा	कर्नाट जैसे	कर्णाट जैसे					
विभास और रेवा	ललिता जैसे	ललिता जैसे					
कुड़ाई	देशाख्य स्वर जैसे	देशाख्य स्वर जैसे					
आभीरी	कल्याण जैसे	कल्याण जैसे					

मालश्री, जयतश्री, धनाश्री, मारुवा } देशभेद से भिन्न, लक्ष्य से लक्षण जान सकते हैं।

सरस्वती महल पुस्तकालय में "रागरत्नाकर" नामक एक ग्रथ है। बताया गया है कि ग्रथकर्ता का नाम गधर्वराज है। इस ग्रथ में हनुमन्मत के अनुसार रागरागिनी-मत और रागो के लक्षण दिये गये है। इसमें 'सगीत रत्नाकर' के अतिरिक्त दूसरे ग्रथो का उल्लेख नही है। इस ग्रथ में दिये हुए लक्षण और सगीतदर्पण मे वर्तमान लक्षण दोनो समान हैं। परतु सगीतदर्पण में न पाये जानेवाले पुत्र, स्नुषारागो के नाम और रूप भी दिये गये हैं। लक्षण नही हैं। आजकल के हिंदुस्थानी सप्रदाय के बहुत-से रागो के लक्षण, इन दोनो ग्रथो के लक्षणो के अनुसार हैं। इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि हिंदुस्तानी पद्धति के प्रामाणिक ग्रन्थ ये दो ही हैं। पुण्डरीकविट्ठल कृत "नर्तन निर्णय" मे भी रागरागिनी मत बताया गया है। इस ग्रथ में, इन तीनो मतो को मिश्रित करके ६ पुरुष राग, ३० स्त्रीराग और ३० पुत्रराग दिये गये है। हर एक राग का लक्षण और रूप भी दिये गये हैं।

हिंदुस्थानी सगीत का उच्च काल नायक, बैजूबावरा आदियो के काल से स्वामी हरिदास, तानसेन, सदारङ्ग, अदारङ्ग आदियो के काल तक का है। इस काल में दक्षिण के चतुर्दण्डी लक्ष्यो के अनुसार उत्तर भारत में भी लक्ष्यसाहित्य सगीत का रक्षण किया जाने लगा। उस समय में ही 'चीजो' की उत्पत्ति हुई। अनेक सप्रदाय होने के कारण कई घराने हो गये।

किंतु दक्षिण भारत के अनुसार उत्तर भारत में भी मेल या थाट की सृष्टि हुई और उनके अदर प्रकृति-विकृतिस्वरो के अनुसार राग रखे गये। भावभट्ट (ई० १७००) ने, जो बीकानेर के नरेश के दरबार में थे, अपने "अनूपसगीतरत्नाकर" मे मेल या थाटो के नाम दिये है। (देखिए **अनूपसगीतरत्नाकर** की मझली किताब पुट ३१)

कुछ दिन तक थाटो की सख्या पर अनेक मतभेद होने के बाद ऐसा निर्धारण हुआ कि थाटो की सख्या दस है। वे ये है—

थाट विलावल	थाट मार्वा
,, कल्याण या यमन	,, काफी
,, खमाज	,, असावरी
,, भैरव	,, भैरवी
,, पूर्वी	,, तोडी

पूना गायन समाज के प्रकाशन बालसगीतबोध में १५ थाटो का उल्लेख है।

हिन्दुस्थानी पद्धति में प्रचलित थाट
(पूना गायन समाज मे प्रकाशित बाल संगीतबोध के प्रकार)

संख्या	श्रुतियां / थाट का नाम	४ षड्ज	५	६ कोमल-रि	७	८ तीव्र-रि	९ कोमल-ग	१०	११ तीव्र-ग	१२	१३ कोमल-म	१४	१५ तीव्र-म	१६	१७ पञ्चम	१८	१९ कोमल-ध	२०	२१ तीव्र-ध	२२ कोमल-नि	१	२ तीव्र निषाद	३	
१	कल्याण	स				रि							म		प				ध			नि		
२	शंकराभरण	स				रि			ग		म				प				ध			नि		
३	श्रीराग	स		रि					ग		म				प		ध					नि		
४	भैरव			रि					ग		म				प		ध					नि		
५	तोडी	स		रि					ग				म		प		ध					नि		
६	बागेसरी	स				रि	ग				म				प				ध	नि				
७	भैरवी	स		रि			ग				म				प		ध			नि				
८	पीलू	स				रि			ग		म				प		ध					नि		
९	झिंझोटी	स				रि			ग				म		प				ध	नि				
१०	मारवा	स		रि					ग				म		प				ध			नि		षाडव
११	मोहनी	स		रि					ग		म				(प)		ध					नि		
१२	सारंग	स				रि			(ग)		म				प				(ध)	नि				औडव
१३	भूप	स				रि			ग		(म)				प				ध			(नि)		औडव
१४	विभास	स		रि					ग		(म)				प		ध					(नि)		औडव
१५	मालकौंस	स		(रि)			ग				म				प		ध			नि				

हिन्दुस्थानी पद्धति में प्रचलित रागों का स्वर लक्षण
(पूना गायन समाज से प्रकाशित बालसंगीतबोध के प्रकार)

संख्या	रागों के नाम	षड्ज	कोमल-रि	तीव्र (रि या शुद्ध रि)	कोमल-ग	तीव्र-ग (या शुद्ध ग)	कोमल-म (या शुद्ध म)	तीव्र-म (या शुद्ध-म)	पञ्चम	कोमल-ध	तीव्र-ध (या शुद्ध ध)	कोमल-नि	तीव्र-नि (या शुद्ध नि)	अंश स्वर	संपूर्ण, षाडव या औडव
१	भैरव (उष काल)	स	रि			ग	म		प	ध			नि	ध	स
२	विभास (प्रभात)	स				ग	म			ध			नि	ध	औ
३	रामकली (प्रात काल)	स	रि			ग	म		प	ध			नि	ध	औ
४	गुणकली ,,	स	रि			ग	म		प	ध					षा
५	भैरवी (पहला प्रहर)	स	रि		ग		म		प	ध		नि		ध	स
६	सिंध भैरवी ,,	स	रि		ग		म		प	ध		नि		ध	स
				रि		ग	म				ध		नि		
७	जोगी ,,	स	रि				म		प	ध		नि		स	षा
८	तोडी (दूसरा प्रहर)	स	रि		ग			म	प	ध			नि	ग	स
९	विलासखानी (मिया की) तोडी ,,	स	रि		ग		म		प	ध			नि	ग	स
१०	पीलू ,,	स		रि	ग		म			ध				ग	स

११	आसावरी	,,	स		[illegible]	ग		म		प	ध		नि		नि	स
१२	बिलावल	,,	स		रि		ग	ग		प		ध		नि	ग	स
१३	सारंग	(मध्याह्न)	स		रि			ग		प				नि	रि	ओ
१४	बृन्दावनी सारंग	,,	स		रि			म		प			नि		रि	ओ
१५	मधुमाद सारंग	,,	स		रि			म		प		ध		नि	रि	गा
१६	सोरठ	(तीसरा प्रहर)	स		रि			म		प				नि	रि	ओ
१७	देश	,,	स		रि			म		प				नि		ओ
			स		रि		ग	म		प		ध	नि			स
१८	मल्हार (मेघ)	,,	स		रि			म		प		ध				ओ
१९	मियां का मल्हार	,,	स		रि	ग		म		प		ध	नि	नि	रि	स
२०	भीमपलासी	(चौथा प्रहर)		रि	रि	ग		म			ध		नि		ग	स
२१	धनाश्री	(चौथा प्रहर)	स				ग	म		प			नि		स	ओ
						ग		म			ध		नि			स
२२	मारवा	,	स	रि			ग		म			म		नि	ध	गा
२३	मुलतानी	,,	स		रि		ग		ग	प	ध			नि		स
२४	श्रीराग	,,	स	रि				म		प	ध			नि	रि	स
							ग									
२५	गौरी	,,	स	रि			ग	ग	म	प	ध			नि	रि	स
२६	पूर्वी	(सायंकाल)	स	रि			ग		म	प	ध			नि	प	स
२७	पूरिया कल्याण	,,	स	रि			ग		म			ध		नि	ग	धा

हिन्दुस्थानी पद्धति में प्रचलित रागों का स्वर लक्षण
(पूना गायन समाज से प्रकाशित बालसंगीतबोध के प्रकार)

संख्या	रागो के नाम		षड्ज	कोमल-रि	तीव्र (रि या शुद्ध रि)	कोमल-ग	तीव्र-ग (या शुद्ध ग)	कोमल-म (या शुद्ध म)	तीव्र-म (या शुद्ध-म)	पञ्चम	कोमल-ध	तीव्र-ध (या शुद्ध ध)	कोमल-नि	तीव्र-नि (या शुद्ध नि)	अंश स्वर	संपूर्ण, षाडव या औडव
१	भैरव	(उष काल)	स	रि			ग	म		प	ध			नि	ध	स
२	विभास	(प्रभात)	स				ग	म			ध			नि	ध	औ
३	रामकली	(प्रात काल)	स	रि			ग	म		प	ध			नि	ध	औ
४	गुणकली	,,	स	रि			ग	म		प	ध					षा
५	भैरवी	(पहला प्रहर)	स	रि		ग		म		प	ध		नि		ध	स
६	सिंध भैरवी	,,	स	रि		ग		म		प	ध		नि		ध	स
					रि		ग	म				ध		नि		
७	जोगी	,,	स	रि				म		प	ध		नि		स	षा
८	तोडी	(दूसरा प्रहर)	स	रि		ग			म	प	ध			नि	ग	स
९	विलासखानी (मिया की) तोडी	,,	स	रि		ग		म		प	ध			नि	ग	स
१०	पीलू	,,	स		रि	ग		म			ध				ग	स

११	आसावरी *	,,	स		रि	ग		म		प	ध		नि		नि	स
१२	विलावल	,,	स		रि		ग	म		प		ध		नि	ग	स
१३	सारग	(मध्याह्न)	स		रि			म		प				नि	रि	औ
१४	बृन्दावनी सारग	,,	स		रि			म		प			नि		रि	औ
१५	मधुमाद सारग	,,	स		रि			म		प		ध		नि	रि	षा
१६	सौरठ	(तीसरा प्रहर)	स		रि			म		प				नि	रि	औ
१७	देश	,,	स		रि			म		प				नि		औ
			स		रि		ग	म		प		ध	नि			स
१८	मल्हार (मेघ)	,,	स		रि			म		प		ध				औ
१९	मिया का मल्हार	,,	स		रि	ग		म		प		ध	नि	नि	रि	स
२०	भीमपलासी	(चौथा प्रहर)		रि	रि	ग		म			ध		नि		म	स
२१	धनाश्री	(चौथा प्रहर)	स				ग	म		प			नि		स	औ
						ग		म			ध		नि			स
२२	मारवा	,	स	रि			ग		म			ध		नि	ध	षा
२३	मुल्तानी	,,	स		रि		ग		म	प	ध			नि		स
२४	श्रीराग	,,	स	रि				म		प	ध			नि	रि	स
							ग									
२५	गौरी	,,	स	रि			ग	म	म	प	ध			नि	रि	स
२६	पूर्वी	(सायकाल)	स	रि			ग		म	प	ध			नि	प	स
२७	पूरिया कल्याण	,,	स	रि			ग		म			ध		नि	ग	षा

संख्या	रागों के नाम		षड्ज	कोमल-रि	तीव्र-रि (या शुद्ध रि)	कोमल-ग	तीव्र-ग (या शुद्ध ग)	कोमल-म (या शुद्ध म)	तीव्र-म (या तीव्र म)	पञ्चम	कोमल-ध	तीव्र-ध (या शुद्ध ध)	कोमल-नि	तीव्र-नि (या शुद्ध नि)	अंश स्वर	संपूर्ण, षाडव या औडव
२८	कल्याण	(रात्रि का प्रथम प्रहर)	स		रि		ग		म	प		ध		नि	ग	स
२९	यमन कल्याण	,,	स		रि		ग	म	म	प		ध		नि	ग	स
३०	भूप कल्याण	,,	स		रि		ग			प		ध			ग	औ
३१	हमीर कल्याण	,,	स		रि		ग	म	म	प		ध		नि	ध	स
३२	कामोद कल्याण	,,	स		रि		ग	म		प		ध		नि	रि	स
३३	झिंजोटी	(सर्वदा)	स		रि		ग	म		प		ध		नि	स	स
३४	खमाच	,,	स				ग	म		प		ध		नि	म	षा स
३५	काफी	(सर्वदा)	स		रि	ग		म		प		ध	नि		प	स
३६	छायानाट	(रात्रि का दूसरा प्रहर)	सं	नि	धप	म	गरि	गम	पम	ग	रिसं				प	स
						मं			मं	मं						
३७	विहाग	,,	स				ग	म	मं	प				नि	नि	औ स

३८	माड		,,	स		रि		ग	म		प		ध		नि	ध	सं
३९	केदारा		,,	स		रि		ग	म		प		ध		नि	म	स
४०	कानडा		(मध्यरात्रि)	स		रि	ग		म		प	ध		नि		ग	स
४१	दरबारी कानडा		,,	स		रि		ग	म		प	ध		नि		ग	स
४२	शहाणा	(रात्रि का तीसरा प्रहर)		स		रि		ग	म		प		ध	नि		ग	स
४३	अडाणा	,,	,,	स		रि	ग		म		प		ध			ग	स
४४	मालकौंस	(रात्रि का चौथा प्रहर)		स			ग		म			ध		नि		म	औ
४५	कालगडा	,,	,,	स	रि		ग		म		प	ध			नि	ग	स
४६	परज	,,	,,	स	रि			ग		म		ध			नि	ग	औ
		,,		स	रि			ग	म		प	ध			नि		स
४७	सोहनी	,,	,,	स		रि		ग	म	म		ध		नि		ग	षा
४८	हिंदोल	,,	,,	स				ग		म			ध		नि	ग	औ
४९	वागेसरी	,,	,,	स		रि	ग		म				ध		नि	म	पा
		,,		स		रि	ग		म		प		ध		नि	ध	स
५०	बहार	,,	,,				ग		म					नि		स	स
५१	वसत		,,	स				ग	म?	म		ध			नि	प	औ
				स		रि		ग		म	प	ध			नि		स
५२	पचम	,,	,,	स				ग		म			ध		नि	प	औ
																	पा
५३	ललत	,,	,,	स		रि		ग	म				ध		नि	म	षा

सख्या	रागो के नाम		षड्ज	कोमल-रि	तीव्र-रि (या शुद्ध रि)	कोमल-ग	तीव्र-ग (या शुद्ध ग)	कोमल-म (या शुद्ध म)	तीव्र-म (या शुद्ध म)	पञ्चम	कोमल-ध	तीव्र-ध (या शुद्ध ध)	कोमल-नि	तीव्र-नि (या शुद्ध नि)	अश स्वर	सपूर्ण, षाडव या ओडव
५४	तिलक	(रात्रि का चौथा प्रहर)	स				ग	म		प				नि		औ
५५	शकराभरण	प्रात काल	स		रि		ग	म		प		ध		नि	स	स
५६	नटनारायण	अपराह्ण	स		रि		ग	म		प		ध		नि	ग	स
५७	आरभी	दो प्रहर	स		रि			म		प		ध			प	औ
			स		रि		ग	म		प		ध		नि		स
५८	नारायणी	प्रात काल	स		रि		ग	म		प		ध		नि	स	स
५९	पूर्वकल्याणी	सायकाल	स	रि			ग		म	प		ध		नि	ग	स
६०	आनद भैरवी	सर्वदा	स		रि	ग	ग	म		प		ध	नि		प	स
६१	गरुडध्वनि		स		रि		ग	म		प		ध		नि	रि	स
	(आखिर के सात राग कर्नाटक पद्धति में हैं)															

यह सब कुछ होने पर भी थाटो को अधिक मुख्यत्व नही था, क्योकि रागो का सचार थाटो के विकृतस्वर विभाग का अतिक्रमण करके ही करना पडा। इससे यह निश्चित होता है कि "थाट" रागो में प्रयुक्त होनेवाले स्वरो को याद रखने के लिए कल्पित तात्कालिक प्रबन्धमात्र है, रागोत्पत्ति के शास्त्रीय मार्ग के अनुसार नही हैं। क्योकि रागो की छाया के लिए मूर्च्छना, वादी, सवादी और वर्णालकार इन तीनो का लक्षण ही प्राण है।

कुछ दिनो से कर्नाटक पद्धति के ७२ मेलकर्ता प्रवन्ध और दक्षिणी गवैयो के स्वर-ज्ञान ने विद्वानो को आकर्षित किया है। इसलिए थाटो को अधिक मुख्यत्व दिया जाने लगा। रागो के लिए थाट की सृष्टि हुई है। किंतु आजकल लोग यह समझते हैं कि थाट या मेल ही सगीत शास्त्र है। इसका कुफल यह हुआ है कि रागच्छाया और राग-भाव में ध्यान देने की प्रवृत्ति कम हुई और थाटो एव उनके स्वरो पर ध्यान अधिक दिया जाता है। लोग यह नही जानते कि रागो के लिए स्वर हैं, बल्कि स्वरो के लिए राग नही है। मकान के लिए पत्थर है, मकान पत्थर के लिए नही है। बहुत-से रागो में स्वरो की स्पष्टतया विवेचना करना असाध्य है। इस तत्त्व को भूलकर स्थूल स्वरो पर ही पूरा ध्यान देने से रागो की रक्ति और आकर्षण शक्ति हर रोज कम होती जाती है। रक्ति के सरक्षण के लिए, मूर्च्छना, वादी, सवादी वर्णालकार आदि लक्षणो पर गवैयो का ध्यान देना आवश्यक है। रागो में इन लक्षणो को ढूंढने का क्रम अब दिया जाता है।

राग यमन

इस राग में मुख्य सचार "मपगा, रि, सा—धपमगारीसा—निसरिगा, मपा, धपमगा रिसा—सनिसरिगा—मपा, धपमागा, रिसागा, रिसवा सरिगा।"

इसमें गाधार स्वर पर—राग का जीवन निर्भर है। ऊपर के सचार और नीचे के सचार दोनो गाधार में ही आकर स्थिर होते हैं। आरोह-सचार धैवत के ऊपर नही चलता। अवरोह में षड्ज से निषाद को पारकर धैवत तक चलता है। इनसे यह मालूम होता है कि राग की मूर्च्छना धैवत से शुरू होकर अवरोहण मार्ग पर निषाद तक आती है। आरोहण में नही, अपितु, अवरोहण में राग का प्रकाशन होता है। निषाद, मूर्च्छना के नीचे का सिरा है। यह इससे पता चलता है कि षड्ज से नीचे सचार करते समय निषाद को पारकर सचार करना पडता है। इसलिए यह निर्धारित होता है कि निषाद ही मूर्च्छना का एक सिरा है। क्रमसचार षड्ज में आरभ होकर षड्ज में समाप्त होता है। इसलिए मूर्च्छना और क्रमसचार का रूप ऐसा है।

आठवाँ परिच्छेद

ताल प्रकरण

बालक आनन्दातिरेक में गाते, ताल बजाते और नाचते हैं। इससे यह जान पडता है कि गीत, ताल और नाच आनन्द की अभिव्यक्ति है। गीत और नाच की प्रतिष्ठा ताल से है। केवल ताल वाद्यो का वादन सुनते समय स्वत हमारे हाथ, शिर या पैर हिलने लगते या ताल गति का अनुसरण करने लगते है। सकोच के कारण हम तो नही नाचते, परतु सकोचहीन बालक नाचने लगते हैं। इसलिए यह कहना अत्युक्तिपूर्ण नहीं कि आनन्द ही ताल के रूप में विद्यमान है।

'काल' और 'मान' दोनो को मिलाने से ताल उत्पन्न होता है। 'ताल' शब्द प्रतिष्ठार्थक 'तल्' धातु से उत्पन्न हुआ है। इससे ताल का नाम सार्थक होता है।

ताल में सशब्द और निश्शब्द क्रियाओ से काल का 'मान' या 'नाप' किया जाता है।

ताल का स्वरूप स्पन्द है। ससार में सारी शक्तियाँ स्पन्दन रूप में हैं। कहा गया है कि ताल शब्द का अर्थ शिवशक्ति (ता=शिव, ल=शक्ति) है।

तालोत्पत्ति

बहुत समय से ताल के अग, लघु, गुरु, प्लुत आदि के आधार पर है। ये तीनो शब्द अक्षरो के मात्राकाल के नाम हैं। इसलिए यह प्रतीत होता है कि तालो की उत्पत्ति वृत्तो के गुरु, लघु आदि के अक्षर-नियम अर्थात् छन्द से ही हुई है।

अक्षरो का नियम ऋग्वेद काल से चला आता है। इस नियम का नाम 'छन्द' है। ऋग्वेद में हरएक मन्त्र का अलग-अलग छन्द है। मन्त्र का 'छादन' या छिपाकर रक्षण करने के कारण इसका नाम छन्दस् पडा।

छन्दो की उत्पत्ति के विषय में वेदो में एक कहानी है। देवासुर-युद्ध में देवता मन्त्रबल के सहारे युद्ध करने लगे। असुर लोग इन मन्त्रो के रूप को अपनी आसुरी माया से अस्तव्यस्त करने लगे। मन्त्रो को अस्तव्यस्तता से बचाने के लिए हर मन्त्र का एक कवच रूप 'छन्द' अर्थात् गुरु, लघु और प्लुत के अक्षरो के नियम बनाये गये।

फलत मन्त्रो का रक्षण हुआ। वेदो में देवता एव असुर शब्द सात्विक, राजस या तामस स्वभावो के अर्थ में प्रयुक्त किये गये हैं। 'देवता' शब्द से बुद्धि का प्रकाश और मन का अवधान सूचित किया जाता है। 'असुर' शब्द इन्द्रियो के वश में पड़कर मन की इच्छा के अनुसार चलने के मनोभाव, असावधानी इत्यादि का सूचक है। इसलिए छन्द का लाभ यह हुआ कि असावधान लोगो से भी मन्त्र अस्तव्यस्त न हो पाया।

इसी तरह गीत, वाद्य और नृत्यो के स्वरूप के रक्षण के लिए वृत्ताक्षरो के नाम अर्थात् लघु, गुरु, प्लुत शब्दो से ही ताल के अग उत्पन्न हुए हैं।

'तालबद्ध' और 'अनिबद्ध'—ये दो गीत के भेद हैं। इसलिए कुछ समय तक गीत के लिए ताल की आवश्यकता नही है। परतु नृत्त के लिए ताल प्राणरूप है। इसी लिए गीत शास्त्रो की अपेक्षा नर्तन शास्त्रो में तालो का विवरण अधिक मिलता है।

ताल सम्बन्धी ग्रथ

प्राचीन काल के ताल सम्बन्धी ग्रथ जो आज उपलब्ध हैं वे भरत का नाट्यशास्त्र (अध्याय ३२), आदिभरतम्, दत्तिलम्, भरतार्णवम्, सगीतरत्नाकर—इत्यादि है। इनके अलावा तामिल भाषा में कई सहस्र वर्ष पूर्व गीत, ताल और वाद्य के शास्त्र अगस्त्य आदि आचार्यों के द्वारा रचे गये हैं। इनमें बहुत से ग्रन्थ नष्ट हो चुके हैं। अवशिष्ट रहने वाले ग्रन्थों में 'तालसमुद्र' नामक ग्रन्थ मुद्रित हो चुका है।

नाट्यशास्त्र के तालाध्याय में ताल के दस प्राण, आदिकाल में उत्पन्न पाँच तालो के नाम, ताल कलाओ की वृद्धि करके, तथा तालो को मिश्रित करके तालो की सख्या को अधिक करने का मार्ग, नर्तन में उपयोग करने के लिए तालशब्दो से बनाये हुए साहित्य या ताल प्रबन्ध का विवरण, नाटकों में प्रयुक्त होनेवाले प्रबन्धो को उपयोग करने के अवसर इत्यादि दिये गये हैं।

प्राचीन नाट्य एव नृत्यग्रन्थों से उद्धृत किये हुए भागो से सकलित ग्रन्थ आदिभरत है। यह ग्रन्थसग्रह सभा में नाट्याचार्यों से नाट्यकला के बारे में विचार विनिमय के लिए तैयार किया गया है। इस ग्रन्थ में तालो के दस प्राण, चच्चत्पुट आदि प्राचीन ताल, १०८ ताल, ध्रुव आदि सात सालगसूडक ताल—ये सब दिये गये हैं। यह बात उल्लेख योग्य है कि 'नाट्यशास्त्र' में १०८ तालो के नाम या विवरण नही हैं।

'दत्तिलम्' में नाट्यशास्त्र में पाये जानेवाले विवरण ही सक्षिप्त रूप में हैं।

सगीत रत्नाकर में नाट्यशास्त्र आदिभरत और दूसरे सगीत ग्रन्थो में लिखे हुए सब विषयो को मिलाकर विशद तालाध्याय लिखा हुआ है, परन्तु इस ग्रन्थ के १०८ ताल और आदिभरत तथा भरतार्णव में दिये हुए १०८ तालो में कुछ भेद है।

आदिभरत और भरतार्णव में पाये जानेवाले १०८ ताल एक-से हैं। इन दोनो ग्रन्थ
गुरु लघु आदि तालाङ्गो को हस्तकौशल से दिखाने का मार्ग दिया गया है।

परन्तु इन ग्रन्थो मे दिये हुए तालो मे बहुत से ताल आजकल उत्तर या द
भारत में प्रचार में नही हैं। 'अधकारयुग' में अन्य कलाभागो के साथ इनका सप्र
भी नष्ट हो गया है।

दक्षिण भारत के पुनरुज्जीवित सप्रदाय में 'सालगसूड' नामक प्रबन्ध में प्रयु
किये हुए सात ताल मात्र प्रचार में आने लगे। उनके नाम ध्रुवा, मठ्य, झम्पा, अ
त्रिपुट, रूपक और एक ताल हैं। केवल यही सात ताल, नये साहित्य के लिए पर्य
नही हुए। इसलिए हरएक अग को तिगुना, चौगुना, पचगुना, छगुना और नौगुना क
सातो तालो के ३५ ताल बना दिये गये। इसमें भी एक सकट था। अर्ध मात्रा व
अग को ३, ५, ७, ९ से गुणित करते हुए ताल को बढाते समय सार्ध सख्याएँ—याने १
२½ इत्यादि—उत्पन्न हुईं। इससे बचने के लिए नियमरहित एक सम्प्रदाय की सृ
हुई है। अर्ध मात्राओ को ३, ५, ७, ९ आदि से गुणित करने के अवसर पर उन अ
से उन्हें गुणित न करके सब जगह ४ से गुणित करना ही साम्प्रदायिक परम्परा है

यही सप्रदाय दक्षिण भारत मे आज व्यवहार में है। उत्तर भारत में प्रा
चतुष्कला रूप मे ताल की सृष्टि १, २, ३, ४ मात्राओ के द्वारा नये नाम से की गयी
इनके साथ फारसी पद्धति मे होनेवाले कुछ ताल भी प्रचार में आने लगे। दक्षिण अ
उत्तर भारत में ताल शास्त्र जो बहुत विस्तृत रूप में था आज बहुत सक्षिप्त बन गया है

ताल के दस प्राण

१ काल—ससार में काल की गणना क्षण', लव, कला, त्रुटि या अ
द्रुत, द्रुत, लघु, गुरु, प्लुत से की जाती है। अनुद्रुत, द्रुत, लघु, गुरु, प्लुत, काकपाद—

१. ८ क्षण	=	१ लव
८ लव	=	१ काष्ठा
८ काष्ठा	=	१ निमेष
८ निमेष	=	१ कला
२ कला	=	१ त्रुटि या अनुद्रुत
२ त्रुटि या अनुद्रुत	=	१ द्रुत
२ द्रुत	=	१ लघु
२ लघु	=	१ गुरु
३ लघु	=	१ प्लुत

इनके द्वारा ताल में काल का नाप किया जाता है। लघु अक्षर का काल एक मात्रा है। इसलिए अनुद्रुत ¼ मात्राकाल है। द्रुत ½ मात्राकाल है। गुरु २ मात्राकाल है। प्लुत ३ मात्रा और काकपाद चार मात्राकाल है।

भिन्न-भिन्न देशो के अलग-अलग सम्प्रदायो में मात्राओ का काल एक निमेष से चार पाँच निमेष तक का प्रयोग में आता था। प्राचीन ग्रन्थो में लिखा है कि मार्गताल में अर्थात् प्राचीन शास्त्रसम्मत ताल में एक मात्रा का पाँच निमेष काल है। लघु, गुरु, प्लुत इत्यादि अगो का कालप्रमाण इस तरह के मात्रा-काल प्रमाण के अनुसार गिना हुआ है। तामिल ग्रन्थों में बताया गया है कि देशी ताल में मात्रा का काल चार निमेषो का है।

२ अंग—ताल में काल की गिनती करने के लिए प्रयुक्त किये जानेवाले प्रामाणिक नाप ही अग कहलाते हैं। इन अगो से ही हरएक ताल बनाया जाता है। अगों के नाम अनुद्रुत, द्रुत, द्रुतविराम, लघु, लघुविराम, गुरु, प्लुत, काकपाद (हसपाद) हैं। द्रुत काल के अग के साथ उसके आधे भाग को मिलाना द्रुतविराम है। इसी तरह लघु के साथ लघुकाल के आधे भाग को मिलाना लघुविराम[1] है।

अगो के साकेतिक चिह्न ये ही है—

अनुद्रुत	=	˘ (अर्धचन्द्र)
द्रुत	=	० (पूर्णचन्द्र)
द्रुतविराम	=	δ (द्रुत के ऊपर एक आकडा)
लघु	=	। (बाण)
लघुविराम	=	ˋ। (बाण के ऊपर तिरछी रेखा)
गुरु	=	ऽ (झुका हुआ धनुष)
प्लुत	=	ˋऽ (विजली)
काकपाद	=	+ (कौए या हस के पाँव)

इन अगो को मिलाने का नियम[2]—

१. 'विराम' लघु या द्रुतकाल के प्रयोग करने के बाद सुख भाव के लिए थोड़ी विश्रान्ति के साथ समाप्ति करना है। विराम शब्द का अर्थ ही 'समाप्ति करना' है। लघु या द्रुत के विश्रान्तिकाल के आधे भाग में कुछ कमी भी हो सकती है। इसमें मतभेद भी है। उसके अनुसार लघुविराम में भी विराम का काल पाव मात्रा का ही है।

२. ये नियम 'तालसमुद्र' नामक तामिल ग्रन्थ से लिये गये हैं। संगीत-दर्पण में भी इनका विवरण है, पर इतना विशदतर नहीं है।

निश्शब्द क्रिया-प्रयोगो में इन मात्राओ की निश्शब्द क्रियाएँ खलबली मचा देती हैं।

५. **जाति**—ताल की जाति नाटचशास्त्र और सगीतरत्नाकर में दो प्रकार की बतायी गयी है—त्र्यश्र और चतुरश्र। चतुरश्र ताल चच्चत्पुट है। त्र्यश्रताल चाचपुट है। उनका अग विभाग नामाक्षरो से ही प्रतीत होता है।

चच्चत्पुट का अग चत्+चत्+पु+टम्[1] (गुरु, गुरु, लघु, प्लुतम् ऽ ऽ । ऽ̀) है। अनुस्वारान्त अन्तिम भाग को प्लुत करना है। चाचपुट का अग (गुरु, लघु, लघु, गुरु ऽ ।। ऽ)। इससे प्रतीत होता है कि जाति, ताल के अन्तर्गत गति है, क्योकि 'चच्चत्पुट' में चतुरक्षर के दो भाग हैं। पहले भाग मे दो-दो अक्षर मिलकर चतुरक्षर बना हुआ है। दूसरे भाग में एक और तीन अक्षर, मिलकर चार अक्षर बन गये हैं। ताल चार-चार पद रख कर चलता है। इस तरह रखने में भी दो प्रकार हैं। इस बात को चच्चत्पुट हमें समझा देता है कि चार पद रखकर चलने में भी दो प्रकार हैं। चाचपुट तीन-तीन अक्षरो से बनाया हुआ है। पहले भाग में दो और एक अक्षर मिलकर दूसरे भाग में एक और दो अक्षर मिलकर तीन अक्षर हुए हैं।

चतुरश्र और त्र्यश्र जाति को मिलाकर एक नयी गतिवाली जाति 'मिश्र' नाम से उत्पन्न हुई है। उस जाति का उदाहरण 'षट्पितापुत्रक' ताल है। उस ताल में आदि और अन्त में प्लुत है। बाकी नामाक्षर के प्रकार गुरु-लघु हैं। ताल का रूप ऐसा है—(ऽ̀ । ऽ ऽ । ऽ̀) मिलकर १२ मात्राएँ हैं। इन १२ मात्राओ को तीन-तीन या चार-चार मात्राओ में बाँट सकते हैं। इसलिए इस जाति का नाम 'मिश्र' है।

'जाति' शब्द का यह अर्थ और प्रयोग 'अधयुग' में विस्मृत हो गये और जाति शब्द नये अर्थ में प्रयोग मे आने लगा। लघु के अक्षरकाल या मात्राकाल का नाम 'जाति' हो गया। लघु के तीन मात्राकाल रहे तो उस ताल को त्र्यश्र जाति कहते हैं। ४ मात्राएँ हो तो चतुरश्र जाति, पाच मात्राएँ हो तो खण्डजाति, सात मात्राएँ हो तो मिश्रजाति और नौ मात्राएँ हो तो सकीर्ण जाति कहते हैं। इस तरह कर्नाटक पद्धति में बचे हुए सात तालो से ३५ ताल बना दिये गये हैं।

६. **कला**—कला शब्द का अर्थ है 'भाग'। ताल शास्त्र में यह शब्द तीन अर्थो में प्रयुक्त किया गया है। एक कालप्रमाण का नाम है। इस अर्थ में कला ही गुरु है। आदिकाल में चच्चत्पुट, चाचपुट, षट्पितापुत्रक, सम्यक्वेष्टाक, उद्धट्ट नामक पाच ताल ही थे। हरएक ताल के अग को दुगुना, चौगुना और अठगुना करके नये तालो की कल्पना किया करते थे। इनको द्विकल, चतुष्कल, अष्टकल इत्यादि नाम

१ सयुक्ताक्षर के पहले होनेवाला लघु अक्षर गुरु हो जाता है ('सयोगे गुरु')।

दिये गये। आदि काल में कलावृद्धि का यही नियम था। चतुरश्रजाति ताल मे अर्थात् चच्चत्पुट में एक कल, द्विकल, चतुष्कल आदि तीन ही रूप थे। त्र्यश्र जाति में अर्थात् चाचपुट में त्रिकल, पट्कल, द्वादशकल, चतुर्विंशतिकल, अष्टाचत्वारिंशत्कल, षण्णवतिकल आदि तक कला वृद्धि की जाती थी। यह नियम तालप्रबन्धो में उपयोग में था। आजकल दक्षिण और उत्तर भारत में व्यवहृत हरएक ताल का एककल, द्विकल, चतुष्कल इत्यादि प्रयोग करते हैं। अष्टकल भी तालशास्त्र विशारदो के द्वारा प्रयुक्त किया जा रहा है।

७ **ग्रह**—गीत का आरम्भ और ताल का आरम्भ दोनो समकाल या आगे या पीछे होना सगीत सम्प्रदाय में व्यवहृत है। इस व्यवस्था का नाम 'ग्रह' है। गीत और ताल समकाल में आरम्भ हो तो उसका नाम 'समग्रह' है। गीत आरम्भ होने के बाद अर्थात् अतीत होने के बाद ताल आरम्भ हो तो इसका नाम 'अतीतग्रह' है। गीत आरम्भ होने के पहले अर्थात् अनागत में ताल शुरु हो तो उसका नाम 'अनागत-ग्रह' है। अनियम रूप से ताल और गीत शुरू हो तो उसका नाम 'विपमग्रह' है। इनके पर्य्याय नाम क्रमश समपाणि, अवपाणि, उपरिपाणि और विपमपाणि हैं। दूसरे पर्य्याय नाम ताल, वितال, अनुताल और प्रतिताल हैं।

८ **लय**—दो क्रियाओ के बीच में रहनेवाले अवकाश का 'लय' नाम है। साधारणतया कहें तो 'लय' ही ताल और गीत का वेग है। 'लय' विलम्ब, मध्य और द्रुत—इन तीनो प्रकार के हैं। विलम्ब का दुगुना वेग 'मध्यलय' है। मध्यलय का दुगुना वेग 'द्रुतलय' है।

९ **यति**—द्रुत, मध्य आदि विविध लयो को सुन्दर रूप मे मिलाने का मार्ग ही 'यति' है। इसमें पाच प्रकार हैं।

(१) समयति—आदि, मध्य और अन्त सब जगह में एक ही प्रकार का लय रहे तो इसका नाम 'समयति' है।

(२) स्रोतोगता (नदी के प्रवाहस्वरूप)—विलम्ब, मध्यद्रुत—इस क्रम मे लयो को मिलायें तो इसका नाम स्रोतोगता है।

(३) मृदङ्गयति—इसमे तीन प्रकार हैं—(अ) आदि और अन्त में द्रुतगति और मध्य में विलम्ब गति (आ) आदि और अन्त में द्रुतगति और मध्य में मध्यगति (इ) आदि और अन्त में मध्यगति और मध्य में विलम्ब गति।

(४) पिपीलिका यति (चीटी का रूप)—आदि और अन्त में विलम्ब, मध्य में द्रुतगति। आदि और अन्त में मध्यलय और मध्य में द्रुतलय। आदि और अन्त मे विलम्ब और मध्य में मध्यलय।

(५) गोपुच्छा यति—द्रुत, मध्य और विलम्ब इस क्रम में लयो को मिलाना या द्रुत और मध्य, मध्य और विलम्ब—यही गोपुच्छा यति है।

१० **प्रस्तार**—हरएक ताल के कई अग हैं। इन अगो के कालप्रमाणो को मिलाने से ताल का पूरा कालप्रमाण प्राप्त होता है। इसी पूरे कालप्रमाण को रखकर भिन्न-भिन्न रूप से अगो का जोडना साध्य है। इस तरह भिन्न-भिन्न रूप से किये जानेवाली अग कल्पना का मार्ग 'प्रस्तार' है। प्रस्तार में यह रूप-कल्पना क्रम से की जाती है। क्रम का लाभ यह है कि सब रूपो की कल्पना निश्चयपूर्वक साध्य होती है। दूसरा प्रयोजन एक ही प्रकार के रूप को बार-बार न आने देना है।

प्रस्तार, चतुरङ्ग प्रस्तार, षडङ्ग प्रस्तार—इत्यादि है। चतुरङ्ग प्रस्तार में प्लुत, गुरु, लघु, द्रुत—इन चार अगो से ही प्रस्तार करना होता हैं। षडङ्ग प्रस्तार में प्लुत, गुरु, लघुविराम, लघु, द्रुतविराम, द्रुत—इन छ अगो से प्रस्तार करना होता है। प्रस्तार का क्रम ऐसा है—

१ प्रथमत ताल का पूरा कालप्रमाण यथासम्भव बड़े अगो से जोड लेना है।

२ दाहिनी ओर बडा अग, बायी ओर छोटा अग—इस क्रम में लिखना चाहिए। तब दाहिनी ओर से देखे तो क्रमश छोटे-छोटे अग रहते है। यह पहला प्रस्तार है।

३ दूसरा प्रस्तार लिखने का क्रम यह है—ऊपरी प्रस्तार के अगो में से सब से छोटे अग के नीचे उससे छोटा अग हो, तो उसको लिखना चाहिए, अगर नही, तो इसके निकट के बडे अग के नीचे उससे छोटे अग को लिखना चाहिए। उसके बाद उस अग की दाहिनी ओर रहनेवाले ऊपरी अगो को ज्यो का त्यो नीचे भी लिखना चाहिए। अब लिखे हुए सब अगो को जोडकर देखने पर पूर्ण कालप्रमाण की कमी होती हो तो पूरक अग के बायी ओर यथासम्भव बडे अगो से ही पूर्ति करनी चाहिए। इसमें भी पूरक अगो का क्रम बडे अग के बायी ओर ही छोटे अग को लिखकर रखना चाहिए। इसी प्रकार तीसरे आदि अन्य प्रस्तारो को भी लिखना है। सर्वद्रुत होने के बाद प्रस्तार की पूर्ति समझनी चाहिए।

उदाहरणार्थ—

काल प्रमाण	प्रस्तारों का रूप और सख्या
१ एक द्रुत काल	o[1] एक ही प्रस्तार साध्य है।
२ एक लघु प्रमाण काल	I पहला प्रस्तार
	o o दूसरा प्रस्तार = प्रस्तार = २

[1] प्रत्येक प्रस्तार में पहले लेखनीय अग नीचे रेखाकित दिखाये गये है।

३. एक द्रुत और एक लघु

o ।̱ पहला प्रस्तार
। o̱ दूसरा प्रस्तार
o o̱ o तीसरा प्रस्तार = प्रस्तार = ३

४ एक गुरु प्रमाण काल

ऽ̱ पहला प्रस्तार
। ।̱ दूसरा प्रस्तार
o o̱ । तीसरा ,,
o । o̱ चौथा ,,
। o̱ o पाचवाँ ,,
o o̱ o o छठा ,, = प्रस्तार = ६

५ एक द्रुत और एक गुरु प्रमाणकाल

o ऽ̱ पहला प्रस्तार
o । ।̱ दूसरा ,,
। o̱ । तीसरा ,,
o o̱ o । चौथा ,,
ऽ o̱ पाचवाँ ,,
। ।̱ o छठा ,,
o o̱ । o सातवाँ ,,
o । o̱ o आठवाँ ,,
। o̱ o o नवाँ ,,
o o̱ o o o दसवाँ ,, = प्रस्तार = १०

६ एक प्लुत प्रमाण काल

ऽ̱̀ पहला प्रस्तार
। ऽ̱ दूसरा ,,
o o̱ ऽ तीसरा ,,
ऽ ।̱ चौथा ,,
। ।̱ । पाचवाँ ,,
o o̱ । । छठा ,,
o । o̱ । सातवाँ ,,
। o̱ o । आठवाँ ,,
o o o o । नवाँ ,,

o ऽ o दसवाँ प्रस्तार
o । । o ग्यारहवाँ ,,
। o । o बारहवाँ ,,
o o o । o तेरहवाँ ,,
ऽ o o चौदहवाँ ,,
। । o o पन्द्रहवाँ ,,
o o । o o सोलहवाँ ,,
o । o o o सत्रहवाँ ,,
। o o o o अठारहवाँ ,,
o o o o o o उन्नीसवाँ ,, = प्रस्तार = १९

१०८ ताल

१ चच्चत्पुटम् —ऽ ऽ । ऽ = (८)
२ चाचपुटम् —ऽ । । ऽ =(६)
३ षट्पितापुत्रकम् —ऽ । ऽ ऽ । ऽ = (१२)
४ सम्पक्वेष्टाकम् —ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ = (१२)
५ उद्घट्टम्—ऽ ऽ ऽ = (६)
६ आदिताल —। = (१)
७ दर्पणताल —o o ऽ = (३)
८ चच्चरी —o ठ । o ठ । o ठ । o ठ । o ठ । o ठ । o ठ । o ठ = (१८)
९ सिंहलीला —। o o o । = (३½)
१० कन्दर्प —o o । ऽ ऽ = (६)
११ सिंहविक्रम —ऽ ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ = (१६)
१२ श्रीरङ्ग —। । ऽ । ऽ = (८)
१३ रतिलील —। । ऽ ऽ = (६)
१४ रङ्गताल —o o o o ऽ = (४)
१५ परिक्रम —o o । । ऽ = (५)
१६ प्रत्यङ्ग —ऽ ऽ ऽ । । = (८)
१७ गजलीला —। । । । = (४½)
१८ त्रिभिन्न —। ऽ ऽ = (६)
१९ वीरविक्रम —। । o o ऽ = (५)

२० हसलील —ऺ ऺ = (२½)
२१. वर्णभिन्न —ऽ । ० ० = (४)
२२ राजचूडामणि —० ० । । । ० ० । ऽ = (८)
२३ रङ्गद्योतन —ऽ ऽ ऽ । ऽ̀ = (१०)
२४ राजताल —० ऽ̀ ० ० ऽ । ऽ̀ = (११)
२५ सिंहविक्रीडितम् —। ऽ̀ ऽ । ऽ̀ ऽ ऽ̀ । ऽ̀ = (१९)
२६ वनमाली —० ० ० ० । । ० ० ऽ = (७)
२७ चतुरश्रवर्ण —ऽ । । ० ० ऽ = (७)
२८ त्र्यश्रवर्ण —। ० ० । । ऽ = (६)
२९ मिश्रवर्ण —० ० δ ० ० δ ० ० δ ० ० δ = (७)
३० वर्णताल — δ ० ० ० ० ० । । । । । । । । । ० ० δ = (१५)
३१ खण्डवर्णताल —ऽ̀ ऽ̀ ऽ ० ऽ ऽ । ऽ = (१५½)
३२ रङ्गप्रदीप —। । ऽ ऽ ऽ̀ = (९)
३३ हसनाद —। ऽ̀ ० ० ऽ̀ = (८)
३४ सिंहनाद —। ऽ ऽ । ऽ = (८)
३५ मल्लिकामोद —। । ० ० ० ० = (४)
३६ शरभलील —। ० । ० । ० । ० । । = (८)
३७ रङ्गाभरण —ऽ ऽ । । ऽ̀ = (९)
३८ तुरङ्गलील —० ० । = (२)
३९ सिंहनन्दन —ऽ ऽ । ऽ । ऽ ० ० ऽ ऽ । ऽ̀ । ऽ ऽ । । + = (३२)
४० जयश्री —ऽ । ऽ । ऽ = (८)
४१ विजयानन्द —। । ऽ ऽ ऽ = (८)
[४]२ प्रतिताल —। । ० ० = (३)
[४]३ द्वितीयक —० ० । = (२)
[४४] मकरन्द —० ० । । । ऽ = (६)
[४५] कीर्तिताल —। ऽ ऽ̀ ऽ । ऽ̀ = (१२)
[४६] विजयताल —ऽ̀ ऽ ऽ̀ ऽ = (१०)
[४७] जयमङ्गल —। । ऽ । । ऽ = (८)
[४८] राजविद्याधर —। ऽ ० ० = (४)

४९ मठ (मठ्य) ताल—। । ऽ । । । । = (८)
५० नेत्रमठ —ऽ ऽ । ऽ ऽ + = (१३)
५१ प्रतिमठ —। । । । ऽ । । = (८)
५२ जयताल —। ऽ । । । ० ० ऽ॑ = (१०)
५३ कुडुक्क —० ० । । = (३)
५४ निस्सारुक —। ।॑ = (२$\frac{१}{८}$)
५५ निस्सानुक —। । ऽ ऽ । । = (८)
५६ क्रीडाताल —० δ = (१$\frac{५}{८}$)
५७ त्रिभङ्गी —। । ऽ ऽ = (६)
५८ कोकिलप्रिय —ऽ । ऽ॑ = (६)
५९ श्रीकीर्तिताल —ऽ ऽ । । = (६)
६० विन्दुमाली —ऽ ० ० ० ० ऽ = (६)
६१ नन्दन —। । ० ० ऽ॑ = (६)
६२ श्रीनन्दन —ऽ ० ० ऽ = (५)
६३ उद्वीक्षण —। । ऽ = (४)
६४ मठिकाताल —ऽ ० ऽ॑ = (५$\frac{१}{२}$)
६५ आदि मठ्य —। । ।॑ ।॑ = (४$\frac{१}{५}$)
६६ वर्ण मठ्य —। । ० ० । ० ० = (५)
६७ ढेङ्कीताल —ऽ । ऽ = (५)
६८ अभिनन्दन —। । ० ० ऽ = (५)
६९ नवक्रीड —० δ = (१$\frac{१}{४}$)
७० मल्लताल —। । । । ० δ = (५$\frac{१}{४}$)
७१ दीपक —० ० । । ऽ ऽ = (७)
७२ अनङ्गताल —। ऽ॑ । । ऽ ऽ॑ = (११)
७३ विषमताल —० ० ० δ ० ० ० δ = (४$\frac{१}{२}$)
७४ नान्दीताल —। ० ० । । ऽ ऽ = (८)
७५ मुकुन्दताल —। ० ० । ऽ = (५), । ० ० ० ०
ऽ = (५)
७६ कर्पुक —। । । । ऽ = (६)
७७ एकताल —० = ($\frac{१}{२}$)
७८ पूर्णककाल —० ० ० ० ऽ । = (५)

७९ खण्डककाल —० ० ऽ ऽ = (५)
८० समककाल —ऽ ऽ । = (५)
८१. असमककाल —। ऽ ऽ = (५)
८२ झोवड —। । ˋ। = (३$\frac{1}{4}$)
८३ पणताल —। ० । = (२$\frac{1}{2}$)
८४ अभङ्गताल —। ˋऽ = (४)
८५ रायरङ्गाल —ऽ । ऽ ० ० = (७)
८६ लघुशेखर —ˋ। = (१$\frac{1}{4}$)
८७ द्रुतशेखर —δ = ($\frac{3}{4}$)
८८ प्रतापशेखर —ˋऽ ० ˋऽ = (४$\frac{1}{4}$)
८९ गजझम्पा —ऽ ० δ = (३$\frac{1}{4}$)
९० चतुर्मुखताल —। ऽ । ˋऽ = (७)
९१ झपाताल —०δ । = (२$\frac{1}{4}$)
९२ प्रतिमठ्य —। । ऽ ऽ । । = (८)
९३ तृतीयताल —। । ० ० δ = (३$\frac{3}{4}$)
९४ वसन्त —। । । ऽ ऽ ऽ = (९)
९५ ललित —० ० । ऽ = (४)
९६ रतिताल —। ऽ = (३)
९७ करणताल —० ० ० ० = (२)
९८ पट्ताल —० ० ० ० ० ० = (३)
९९ वर्धन —० ० । ˋऽ = (५)
१०० वर्णताल —। । ˋऽ ˋऽ = (८)
१०१ राजनारायण —० ० । ऽ । ऽ = (७)
१०२ मदनताल —० ० ऽ = (३)
१०३ पार्वतीलोचन —० ० । । ० ० ऽ ऽ । । । । ऽ । । = (१६)
१०४ गारुगी —० ० ० δ = (२$\frac{1}{4}$)
१०५ श्रीनन्दन —ऽ । । ˋऽ =(७)
१०६ जयताल —। ऽ । । ० ० ˋऽ =(९)
१०७ लीलाताल —० । ˋऽ = (४$\frac{1}{2}$)
१०८ विलोकित —। ऽ ऽ ० ० ˋऽ ˋऽ = (१२)

१०९	ललितप्रिय	—। । ऽ । ऽ = (७)
११०	जनक	—। । । । ऽ ऽ । । ऽ ऽ = (१४)
१११	लक्ष्मीश	—० ० δ । । ऽ̀ ऽ̀ = (९¾)
११२	भद्रबाण[1]	—। ० । = (२½)

कर्नाटक पद्धति में प्रचलित ताल

१. ध्रुवताल= ।०।।=लघु, द्रुत, लघु, लघु=३½ मात्राएँ

त्र्यश्र जाति में ताल का अक्षर	=	३	+ २	+ ३	+ ३	=	११	अक्षर
चतुरश्रजाति ,, ,,	=	४	+ २	+ ४	+ ४	=	१४	,,
खण्ड जाति ,, ,,	=	५	+ २	+ ५	+ ५	=	१७	,,
मिश्र जाति ,, ,,	=	७	+ २	+ ७	+ ७	=	२३	,,
संकीर्णजाति ,, ,,	=	९	+ २	+ ९	+ ९	=	२९	,,

२ मठ्यताल=।०।=लघु द्रुत, लघु=२½ मात्राएँ

त्र्यश्र जाति में ताल अक्षर	=	३	+ २	+ ३	=	८	अक्षर
चतुरश्र ,, ,, ,,	=	४	+ २	+ ४	=	१०	,,
खण्ड ,, ,, ,,	=	५	+ २	+ ५	=	१२	,,
मिश्र ,, ,, ,,	=	७	+ २	+ ७	=	१६	,,
संकीर्ण ,, ,, ,,	=	९	+ २	+ ९	=	२०	,,

३ रूपकताल=० । = द्रुत, लघु = १½ मात्राएँ

त्र्यश्र जाति में ताल अक्षर	=	२	+ ३	=	५	अक्षर
चतुरश्र ,, ,, ,,	=	२	+ ४	=	६	,,
खण्ड ,, ,, ,,	=	२	+ ५	=	७	,,
मिश्र ,, ,, ,,	=	२	+ ७	=	९	,,
संकीर्ण ,, ,, ,,	=	२	+ ९	=	११	,,

४ झंपाताल = । ◡ ० = लघु, अनुद्रुत, द्रुत = १¾ मात्राएँ

त्र्यश्र जाति में ताल अक्षर	=	३	+ ३	=	६	अक्षर
चतुरश्र ,, ,, ,,	=	४	+ ३	=	७	,,

१. इन तालों को '१०८ ताल' ही कहते हैं, पर यहाँ ४ ताल अधिक दिये गये हैं। ये ११२ ताल नन्दिकेश्वर कृत नर्तनग्रन्थ 'भरतार्णव' से उद्धृत हैं।

खण्ड ,, ,, ,,	=	५ + ३	= ८ ,,
मिश्र ,, ,, ,,	=	७ + ३	= १० ,,
सकीर्ण ,, ,, ,,	=	९ + ३	= १२ ,,

त्रिपुट ताल=। ० ०=लघु, द्रुत, द्रुत=२ मात्राएँ

त्र्यश्र जाति में ताल अक्षर	= ३ + २ + २	= ७ अक्षर
चतुरश्र ,, ,, ,,	= ४ + २ + २	= ८ ,,
खण्ड ,, ,, ,,	= ५ + २ + २	= ९ ,,
मिश्र ,, ,, ,,	= ७ + २ + २	= ११ ,,
सकीर्ण ,, ,, ,,	= ९ + २ + २	= १३ ,,

अट्टताल= । । ० ० =लघु, लघु, द्रुत, द्रुत=३ मात्राएँ

त्र्यश्रजाति में ताल अक्षर	= ३ + ३ + २ + २	= १० अक्षर
चतुरश्र जाति में ताल अक्षर	= ४ + ४ + २ + २	= १२ ,,
खण्ड जाति में ,, ,,	= ५ + ५ + २ + २	= १४ ,,
मिश्र ,, ,, ,,	= ७ + ७ + २ + २	= १८ ,,
सकीर्ण ,, ,, ,,	= ९ + ९ + २ + २	= २२ ,,

एकताल=।=१ मात्रा

त्र्यश्रजाति में ताल अक्षर	= ३ अक्षर
चतुरश्र ,, ,, ,,	= ४ ,,
खण्ड ,, ,, ,,	= ५ ,,
मिश्र ,, ,, ,,	= ७ ,,
सकीर्ण ,, ,, ,,	= ९ ,,

हरएक जाति में अग सशब्द और नि शब्द क्रियाओ से गिने जाते हैं। लघु को क शपा के बाद बाकी अक्षरो का अगुलियो के पातन से गणन करते हैं। द्रुत को एक शपा के बाद एक विक्षेपकर के गिनते हैं। अनुद्रुत को एक शपा से गिनते है।

हरएक ताल में एक या दो जाति ही प्राय व्यवहार में हैं।

ध्रुवताल में चतुरश्रजाति (४ + २ + ४ + ४ = १४ अक्षर) व्यवहार में हैं।
मठ्य ,, ,, (४ + २ + ४ = १० ,,) ,,
रूपक ,, ,, (२ + ४ = ६ ,,) ,,
झपा ,, मिश्र ,, (७ + १ + २ = १० ,,) ,,
त्रिपुट ,, चतुरश्र (४ + २ + २ = ८) और त्र्यश्र (३ + २ + २ =७) जाति व्यवहार में है

इस ताल मे चतुरश्रजाति को 'आदिताल' कहते है ।
,, त्र्यश्र ,, त्रिपुट ,, ,,
अड्ड ,, खण्ड ,, (५ +५ + २ + २=१४ अक्षर अमल में हैं)
एक ,, चतुरश्र ,, ४ अक्षर ,, ,,

कभी-कभी त्र्यश्रजाति के लघु को दो शपा और एक विक्षेप से गिनते हैं उसको 'चापु' कहते हैं। इस तरह प्रयोग मे त्र्यश्रजाति रूपकताल (२+ ३=५अक्षर) प्रसिद्ध है। इसलि त्र्यश्रजाति रूपकताल को 'चापुताल' कहते है।

तालो का अभ्यास मार्ग

व्यवहार में रहनेवाली ताल जातियो का अभ्यास करने के लिये सप्तालकार नामक 'स्वरवर्णालिकार' बनाये गये हैं।

हिन्दुस्थानी पद्धति के प्रचलित तालों का विवरण

हिन्दुस्थानी पद्धति मे तालो के अगो पर ज्यादा ध्यान न देकर तालो की मात्राओ और तालो मे 'पात' एव 'खाली' की जगह और ठेके एव बोल पर अधिक ध्यान दिया जाता है। प्रचलित मुख्य ताल ये हैं—

१. त्रिताल[१]—मात्रा १६
तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
ना	धी	धी	ना	ना	धी	धी	ना	ना	ती	ती	ना	ना	धी	धी	ना
पा				पा				खा				पा			

१. प्राचीन सूडादि सप्ततालो में त्रिपुटा एक है । 'त्रिपुटा' 'तिवटा' होकर 'त्रिताल' हो गया है। त्रिपुट के अग '००।' हैं। चतुरश्रजाति त्रिपुट ताल ८ अक्षर काल से युक्त है। उसे दक्षिण के सप्रदाय में आदि ताल कहते हैं। इसमें हरएक अक्षर

२. एक ताल[1]—मात्रा १२

चार पात और दो खाली

मात्रा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
बोल	धी	धी	धागे	त्रक	तू	ना	क	त्ता	धागे	त्रक	धी	ना
	पा		खा		पा		खा		पा		पा	

३ चौताल[2]—मात्रा १२

चार पात और दो खाली

मात्रा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
बोल	धा	धा	धी	ता	किट	धा	धी	ता	किट	कत	गदी	गन
	पा		खा		पा		खा		पा		पा	

४ आड़ा चौताल[3]—मात्रा १४

चार पात और तीन खाली

मात्रा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
बोल	धी	तृक	धी	ना	तू	ना	क	त्ता	धि	धि	ना	धि	धि	ना
	पा		पा		खा		पा		खा		पा		खा	

को दुगुना करके हिन्दुस्थानी संप्रदाय में १६ मात्राएँ बनायी गयी हैं। पर पात का स्थान प्राचीन अगो का अनुसरण करता है। दोनो द्रुतों के लिए दो पात और एक लघु के लिए तीसरा पात और एक खाली।

१. एक ताल का प्राचीन अग एक लघु है। उसकी त्र्यश्रजाति में ३ मात्राएँ हैं। हरएक मात्रा को चौगुनी करके पहली दो मात्राओ के लिए दो पात और तीसरी मात्रा को दो पात दिये गये हैं। इसी रीति से एक ताल का निर्माण हुआ है।

२. चौताल प्राचीन अड्डताल से उत्पन्न हुआ है। अड्डताल के अंग ।। ०० हैं। इसकी चतुरश्रजाति में ४+४+२+२=१२ मात्राएँ हैं। पर अगो का अनुसरण करके पात दिये गये हैं। हरएक लघु का एक पात और एक खाली और हरएक द्रुत का एक पात दिया गया है।

३. कर्नाटक संप्रदाय में अड्डताल की खण्डजाति और ध्रुवताल की चतुरश्रजाति प्राय. प्रयोग में है। दोनो की मात्राएँ १४ हैं। हिन्दुस्थानी पद्धति के आडाचौताल नामक ताल में अड्डताल के अनुसार ५+५+२+२ इस प्रकार विभाग न करके २+४+४+४—ऐसा विभाग किया गया है।

५ झपताल[१]—मात्रा १०

तीन पात और एक खाली

१	२		३	४	५	६	७	८	९	१०
धी	ना		धी	धी	ना	ती	ना	धी	धी	ना
पा			पा			खा		पा		

६ रूपकताल[२]—मात्रा ७

तीन पात

१	२	३	४	५	६	७
ती	ती	ना	धी	ना	धी	ना
पा			पा		पा	

७ दादरा[३]—मात्रा ६

दो पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	
धा	गे	ना	धा	ती	ना	
पा		पा	खा			सप्रदाय १

१	२	३	४	५	६	
धी	ग	ना	ना	तु	न्ना	
पा		पा		खा		सप्रदाय २

१	२	३	४	५	६	
धा	धी	ना	धा	ती	ना	सप्रदाय ३

१. झपताल के प्राचीन अंग। ०० हैं। कर्नाटक संप्रदाय के अनुसार मिश्रजाति झम्पताल की ७+२+१=१० मात्राएँ हैं। अगों के अनुसार करें तो तीन पात होते हैं। पर इन तीनो पातो के विनियोग में हिन्दुस्थानी पद्धति में कुछ अन्तर हैं।

२. रूपकताल के प्राचीन अग ०। हैं। खण्डजाति में इसके २+५=७ अक्षर हैं। अगो का अनुसरण करें तो दो पात ही होते हैं। पर यहां लघु के दो पात और द्रुत का एक पात दिया गया है।

३. इनमें पहले दोनो सप्रदायो में मात्रा और पात व खाली के स्यान समान हैं। पर ताल की मात्राओ का 'पाद भाग' करने में अन्तर है। प्राचीन काल से ताल की मात्राओं का कई पादो जैसा विभाग करने की परम्परा थी, उसका नाम 'पाद भाग' है। दादरे

८ धमार—मात्रा १४

तीन पात

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	
ता	घे	ऽ	घे	ऽ	धा	ऽ	त	कि	ट	कि	ट	त	क	
पा					पा			पा						सम्प्रदाय—१

तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	
ता	घे	ऽ	घे	ऽ	धा	ऽ	त	धि	न	दि	म्न	धा	ऽ	
पा					पा			पा					खा	सम्प्रदाय—२

इस ठेके के दूसरे प्रकार के बोल

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	
धा	ऽ	ऽ	धि	ट्ट	धा	ऽ	ग	द्दि	म्न	ति	ट्ट	ता	ऽ	
पा					पा					पा			खा	सम्प्रदाय—२

तीसरे प्रकार के बोल

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	
क	धी	न	धी	न	धा	ऽ	क	द्धो	न	तो	न	ता	ऽ	
पा					पा					पा			खा	सम्प्रदाय—२

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	
क	धी	न	धी	न	धा	ऽ	क	द्धो	न	तो	न	धा	ऽ	
पा					पा		खा			पा				सम्प्रदाय—३

९. कहरवा—मात्रा ४

एक पात और एक खाली

१	२	३	४
धागे	नति	नक	धो ऽ
पा		खा	

में पहले संप्रदाय में तीन-तीन मात्राओं के दो पाद हैं। दूसरे संप्रदाय में दो-दो मात्राओं के तीन पाद हैं। तीसरे संप्रदाय में पाद भाग पहले संप्रदाय के समान हैं। परन्तु पात व खाली में अन्तर है। पहले संप्रदाय में २ पात और एक खाली है। तीसरा संप्रदाय एक पात और एक खाली है।

१० झूमरा—मात्रा १४

तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	
क	धी	न	धी	न	धा	ऽ	क	धी	न	ती	न	ता	ऽ	
पा			पा				खा			पा				सप्रदाय—१

इस ठेके के दूसरे प्रकार के बोल

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
धि	धातृ	कट	धि	धि	धागे	तृकट	ति	तातृ	कट	धि	धि	धागे	तृकट
पा			पा				खा			पा			

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	
धा	तृक	धि	धि	धा	गि	तृक	धि	तातृक	धि	तागि		तृक	ति	
पा				पा			खा			पा				सप्रदाय—२

११ दीपचंदी—मात्रा १४

तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	
धि	ऽ	धि	ऽ	धा	गे	ति	ति	ऽ	ति	ऽ	धा	गे	ति	
पा				पा			खा				पा			सप्रदाय—१

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	
धि	धि	ऽ	धातृ	कट	तू	ना	कत्ति	ऽ		धा	तृकट	तू	ना	
पा			पा				खा			पा				सप्रदाय—२

१२ धीमा तिताल—मात्रा १६

तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
धा	तृक	धा	धी	ना	धी	नि	ति	ता	तृक	धा	धी	ना	धी	धि	धि
पा				पा				खा				पा			

पजाबी ठेका

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
धी न	धी	न	धा	धी न	धी	न	धा	ती न	ती	न	ता	धी	न	धीन	धा
पा				पा				खा				पा			

१ २ ३ ४	५ ६ ७ ८	९ १० ११ १२	१३ १४ १५ १६
तक्कधि – धा	तक्कधि – धा	तक्कति – ता	तक्कधि – धा
पा	पा	खा	पा

१३ फरोदस्त—मात्रा १३

पाँच पात और एक खाली

१ २	३ ४	५ ६	७ ८ ९	१० ११	१२ १३
धा ऽ	धिन्ना	धिन्ना	धिधिन्ना	तिटकित	गदि गन
पा	पा	पा	पा	पा	खा

१४ सूरफाख्ता[१] (उसूले फाख्ता)—मात्रा १०

तीन पात और दो खाली

१ २	३ ४	५ ६	७ ८	९ १०	
धा गी	तिट	धा गी	धागी	तीट	
पा	खा	पा	पा	खा	सम्प्रदाय—१

१ २	३ ४	५ ६	७ ८	९ १०	
त्रिधि	ना तू	ना क	त्ता धा	ती ना	
पा	पा	खा	पा	खा	सम्प्रदाय—२

१५ गजल का ठेका—मात्रा ९

दो पात

१ २ ३ ४	५ ६ ७ ८ ९
ति ऽ त क	धि ऽ ना ना ऽ
पा	पा

१६ होरी का ठेका—मात्रा १४

तीन पात और एक खाली

१ २ ३	४ ५ ६ ७	८ ९ १०	११ १२ १३ १४
ना धि ऽ	ना क धि ऽ	ना ति ऽ	ना क धि ऽ
पा	पा	खा	पा

१. प्राचीन सालगसूड के मंठ या मठचताल के अंग '।०।' हैं। चतुरस्र जाति में ४+२+४=१० अक्षर हैं। अंगो का अनुसरण करके यहाँ हरएक लघु के लिए एक पात और खाली तथा द्रुत के लिए एक पात दिया गया है।

नवाँ परिच्छेद

प्रकीर्णक अध्याय

इस अध्याय में सगीत शास्त्र से सम्बद्ध प्रकीर्ण विषय वताये गये है।

वाग्गेयकार और उनके लक्षण

'वाक्' या 'मातु' गीत साहित्य मे शब्दो का नाम है। 'गेय' या 'धातु' गान के प्रकार का नाम है। इन दोनो में जो निपुण हैं वे ही 'वाग्गेयकार' कहे जा सकते हैं। शब्द-शास्त्र-ज्ञान, गानशास्त्र एव वाद्य शास्त्र का ज्ञान, विविध भाषा-ज्ञान, मधुर-शारीर, नूतन साहित्य रचना करने मे निपुणता इत्यादि में सामर्थ्य की कमी हो तो उन वाग्गेयकारो को मध्यम कहते हैं। 'मातु' मे समर्थ और धातु में असमर्थ हो तो 'अधम' कहलाता है। दूसरे कवियो की रचनाओ पर धातु रचनेवाले का नाम 'कुट्टि-कार' है। प्राचीन सगीत और नवीन सगीत दोनो का ज्ञान जिसे होता है वह 'गान्धर्व' कहलाता है। प्राचीन सगीत का ज्ञान-मात्र रखनेवाले का नाम 'स्वरादि' है।

गायको का लक्षण

शारीर की मधुरता, राग का आरम्भ, राग विस्तार, राग को समाप्त करने का ज्ञान, विविध राग, रागाङ्ग, आदि मार्ग देशी रागो का रूप-भेद ज्ञान, तालवद्ध रूपको को गाने में निपुणता, आलाप में मनोधर्म शक्ति, तीनो स्थानो में गमक प्रयोग करने की अनायास शक्ति, कण्ठ की वशता, ताल का ज्ञान, अवधान की पूर्णता, श्रम को जीतने की शक्ति, गायको के जो दोष शास्त्रो में वताये गये है उनसे विमुक्त रहना, सप्रदाय-शुद्ध गाने की पद्धति, धारणा शक्ति ये सव गुण उत्तम गायको के लिए आवश्यक है। जो दोप रहित, परतु कम गुणवाले है, उन्हें 'मध्यम गायक' कहते है। दोपयुक्त गायक 'अधम' है।

गायको के पांच प्रकार हैं—

१ शिक्षाकार—किसी कमी के विना शिक्षा देने की शक्ति रखनेवाले का नाम है 'शिक्षाकार'।

२ अनुकार—किसी दूसरे गायक का अनुसरण करनेवाले का नाम 'अनुकार' है।

३. रसिक—गायक जो स्वय रसानुभव करता है वह 'रसिक' है।

४ रञ्जक—कर्णमधुर गायक का नाम 'रञ्जक' है।

५ भावुक—गीत को आश्चर्यजनक शक्ति के साथ गानेवाला 'भावुक' है।

गायको में एकल, यमल, वृन्दगायक—ये तीन प्रकार है। इन तीनो मे 'एकल' दूसरे आदमी की सहायता के विना गा सकता है। 'यमल' दूसरे गायक के साथ मिलकर गानेवाले का नाम है। 'वृन्द' गायक समुदाय के साथ ही गा सकता है। स्त्री गायको में रूप, यौवन, कण्ठ का माधुर्य, चतुरता—ये सब आवश्यक हैं।

गायको के दोष

१ सन्दष्ट—दात पीसकर गानेवाला।
२ उद्‌घृष्ट—स्निग्धतारहित घोषण करनेवाला।
३ सूत्कारी—गाते समय मुंह से सांस छोडनेवाला।
४ भीत—भय के साथ गानेवाला।
५ शकित—जल्दी-जल्दी गानेवाला।
६ कपित—कण्ठ में अनावश्यक कम्पन से युक्त।
७ कराली—भयकर रूप में मुंह वनाकर गानेवाला।
८ विकल—स्वरो को, नियत श्रुति से ऊँचे और नीचे उच्चारण करनेवाला।
९ काकी—कौए की तरह कर्कश या मधुरता रहित आवाज करनेवाला।
१० विताल—ताल को छोडकर गानेवाला।
११ करभ—ऊँट की तरह गले को ऊँचा करके गानेवाला।
१२ उद्भट—वकरी के समान कण्ठ से गानेवाला।
१३ झोवका—गाते समय गला, मुख इत्यादि की शिराओ को फुलानेवाला।
१४ तुंवकी—गालो को तूबे की भाँति फुलाकर गानेवाला।
१५ वक्री—गले को ऐंठकर गानेवाला।
१६ प्रसारी—शरीर को लवा या प्रसारित करके गानेवाला।
१७ निमीलक—आँखें वन्द करके गानेवाला।
१८ नीरस—रक्ति के विना गानेवाला। इन्हें अधम गायक कहते हैं।
१९ अपस्वर—वर्ज्य स्वरो का भी प्रयोग करके गानेवाला।
२० अव्यक्त—अस्पष्ट उच्चारण के साथ गानेवाला।
२१ स्थानभ्रष्ट—तीनो स्थानो में गाने की शक्ति से हीन।

२२ अव्यवस्थित—तीनो स्थानो मे गाने की शक्ति न रहने से एक स्थान में गाते समय ही दूसरे स्थान में आकर पूरा करनेवाला।

२३ मिश्रक—रागच्छायाओ के सूक्ष्मभेद से अपरिचय के कारण रागच्छायाओ को मिश्रित करके गानेवाला।

२४ अनवधान—पकडो को अवधान रहित प्रयुक्त करनेवाला।

२५ सानुनासिक—नाक से स्वरो को उच्चारण करके गानेवाला।

कण्ठ ध्वनि के चार भेद

काहुल, नारट, वोवक और मिश्रक—कण्ठ ध्वनि के ये चार भेद हैं।

काहुल—कफ की अधिकता से उत्पन्न ध्वनि है। वह स्नेहयुक्त, मधुर, सुन्दर रहती है। मन्द्रमध्य स्थानो मे पूर्ण सुखभाव के साथ रहे, तो उसका नाम 'आडिल्ल' है।

नारट—पित्त की अधिकता से उत्पन्न कण्ठध्वनि का नाम है। तीनो स्थानो में गभीरता व लीनता से युक्त है।

वोवक—वात की अधिकता से उत्पन्न ध्वनि का नाम है। स्नेहरहित, माधुर्य-रहित, ऊँची ध्वनि है।

मिश्रक—दोषो की अधिकता के मिश्रण से उत्पन्न होनेवाली ध्वनि का नाम है। मिश्रध्वनि में चार भेद हैं—नाराट काहुल, नाराट वोवक, वोवक काहुल, नाराट वोवक काहुल। मिश्रित ध्वनि में दोनो ध्वनियो के दोष का थोडा परिहार हो जाता है। तीनो मिल जाते हैं तो दोषो का पूर्णपरिहार हो जाता है। ध्वनि उत्तमोत्तम वन जाती है। दो-दो के मिश्रण में नाराट काहुल मिश्रण उत्तम है अर्थात् कफ, पित्तज ध्वनि उत्तम है। काहुल-वोवक अर्थात् कफवातज ध्वनि मध्यम है। वोवक-नाराट मिश्रण या पित्तवातज ध्वनि अधम है।

कफ, पित्त, वात के अश भेद से दशविध ध्वनियाँ उत्पन्न होती है।

(१) मधुर, स्नेहयुक्त, घन (२) स्नेहयुक्त, कोमल, घन (३) मधुर, मृदु, त्रिस्थान व्यापक (४) मृदु, त्रिस्थान गभीर (५) स्नेहयुत, मृदु, घन (६) मधुर, मृदु, घन और त्रिस्थान व्याप्त (७) मधुर, स्नेहयुत मृदु, त्रिस्थान व्याप्त (८) मधुर, स्नेहयुत, गभीर, घन, त्रिस्थान व्याप्त (९) स्नेहयुत, कोमल, गभीर, घन, त्रिस्थान, लीन (१०) स्नेहयुत, मधुर, कोमल, घन, लीन, त्रिस्थान व्याप्त और गभीर।

इनके अतिरिक्त दो-दो भेदो के मिश्रण मे अश भेद से वारह ध्वनि भेद, और तीन दोषो के मिश्रण मे अश भेद से आठ भेद भी 'सगीत रत्नाकर' में दिये गये

हैं। अब तक शब्द स्वरूप का वर्णन हुआ है। अब शब्दगुण और शब्ददोष के बारे में विचार करेंगे।

शब्दगुण और शब्ददोष

शब्दगुण —

१ मृष्ट—कान को सुख से भरनेवाली ध्वनि का नाम है।

२. मधुर—तीनो स्थानो में पूर्ण रूप से वर्तमान ध्वनि।

३ चेहाल—चेहाल ध्वनि में छ गुण हैं।

(१) शस्त—सुख से अनुभव करने योग्य ध्वनि।

(२) प्रौढ—असाधारण विशेषता से युक्त ध्वनि।

(३) नाति स्थूल—अतिस्थूल भी नही।

(४) नातिकृश—अति कृश भी नही।

(५) स्निग्धता—स्नेहयुक्तत्व।

(६) घन—घनत्व से युक्त।

'चेहाल' नामक गुण पुरुषो में कण्ठ पर्यन्त ही है। अर्थात् मध्यस्थान तक ही है। स्त्रियो के तो तीनो स्थानो में है।

४ त्रिस्थान—तीनो स्थानो में प्रकाश और रक्ति की पूर्णता रहना।

५ सुखावह—मन को सुखदायक ध्वनि।

६ प्रचुर—स्थूलता से युक्त।

७ कोमल—मृदुत्व और कोयल सरीखी रमणीयता से युक्त है।

८ गाढ—बल से युक्त।

९ श्रावक—बहुत दूर तक सुनने योग्य ध्वनि।

१० करुण—सुननेवालो के हृदय में करुण रस की उत्पादक ध्वनि।

११ घन—अतर्बल से युक्त ध्वनि।

१२ स्निग्ध—रुक्षता रहित, स्नेहयुक्त।

१३ श्लक्ष्ण—लगातार सुन्दर रूप मे बहनेवाली ध्वनि।

१४ रक्तिभाव—अधिक रञ्जन पैदा करना।

१५ छविमान्—निर्मल कण्ठ की विशेषता से अक्षरोच्चारण, स्पष्टता या प्रकाश से युक्त ध्वनि।

शब्ददोष

१ रुक्ष—स्नेह-विहीन ध्वनि।

२ स्फुरित—बीच-बीच में भग होनेवाली ध्वनि।

३ निस्सार—आन्तरिक बल रहित।

४ काकोलिका—कौओ के समूह की तरह शब्द करनेवाली कर्ण कठोर ध्वनि।

५. केटि—तीनो स्थानो में व्याप्त होने पर भी गुणरहित ध्वनि।

६. केणि—तार, मन्द्र स्थानो में कठिनता से सचार कर सकनेवाली ध्वनि।

७. कृश—अति सूक्ष्म ध्वनि।

८. मग्न—सूक्ष्म, कृश, नीरस ध्वनि का नाम है।

शारीर

अभ्यास के बिना रागभाव की अभिव्यक्ति करने की शक्ति का नाम शारीर है। शरीर के साथ उत्पन्न होने के कारण इसका नाम शारीर पडा। यह जन्मान्तर की वासना-विशेष है।

सुशारीर के गुण

१ तार—दीर्घ ध्वनि

२ अनुध्वनि—अनुरणन के सहित होना।

३ माधुर्य—सुनने में मधुरतापूर्ण।

४ रक्ति—रञ्जन शक्ति।

५ गाभीर्य—गहराई से युक्त।

६ मार्दव—मृदुलता से युक्त या कर्कशता रहित।

७ घनता—सारयुक्तता।

८ कान्ति—प्रकाशन और अन्य शब्द गुण।

शारीर के दोष

१. निस्सारता—अन्तर्वल रहित होना।

२ विस्वरता—शारीर वश में न रहने के कारण स्वरान्तर हो जाना।

३ काकित्व—श्रुतिहीनता के कारण शारीर की अपुष्टता।

४ स्थान विच्युति—शारीर स्वाधीन नही होने के कारण एक स्थान से दूसरे स्थान पर जा पडना।

५ कार्श्य—आवश्यक स्थूलता से रहित रहना।

६ कार्कश्य—मृदुता रहित होना।

सुशारीर की प्राप्ति विद्या, दान, तप और शिवभक्ति से होती है। पूर्वपुण्य-विशेष से ही सुशारीर प्राप्त होता है।

रूपक आलप्ति

आलप्ति दो प्रकार की होती है। उनमे से रागालप्ति पहले ही बतायी गयी है। अब रूपक आलप्ति का विवरण किया जाता है।

'रूपक' या प्रबन्ध में मनोधर्म से रागो के विस्तार करने का नाम 'रूपक आलप्ति' है। इसमे रूपक के राग और तालो के नियमो का पालन करना आवश्यक है। इसके दो विभाग हैं। एक का नाम 'प्रतिग्रहणिका' दूसरे का नाम 'भञ्जनी' है।

'प्रतिग्रहणिका' में प्रस्तुत रूपक के ताल और राग मे इच्छानुसार सचार करके रूपक के एक अवयव को ग्रहण करना चाहिए। इसे कर्नाटक सप्रदाय में 'स्वरगान' कहते हैं। और इसमें स्वरो को नामोच्चारणपूर्वक गाते है। पर हिन्दुस्थानी सप्रदाय में अकारादि उच्चारण से सचार करते हैं।[1]

'भञ्जनी' में दो प्रकार हैं—स्थाय भञ्जनी और रूपक भञ्जनी। स्थाय भञ्जनी में रूपक के एक पकड रूप अवयव को उसी राग ताल में रूपभेद करके गाना होता है। उसका नाम कर्नाटक पद्धति मे 'सगति' डालना है। रूपक भञ्जनी में रूपक के किसी एक पूर्ण भाग को लेकर उसके पद, राग और ताल में इच्छानुसार रूप भेदो के साथ गाना होता है। इसका नाम कर्नाटक पद्धति में 'निरवल' है। 'भञ्जनी' का प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति के 'ख्याल' नामक प्रबन्ध में बहुत है।

१. आजकल कुछ हिन्दुस्थानी विद्वान् लोग भी कर्नाटक विद्वानो की तरह स्वरोच्चारण करके प्रतिग्रहणिका गाते है। पर हिन्दुस्थानी सगीत में रहनेवाले स्वरो का स्वभाव स्वरोच्चारण के लिए उपयुक्त होने के कारण इस तरह गाना सुनने में अच्छा नहीं लगता। अकारादि से गाना ही रमणीय है।

दसवाँ परिच्छेद

प्रबन्ध

प्रबन्धो के अग और धातु पहले ही चतुर्दण्डि-लक्षण में बताये गये हैं। प्रबन्ध के तीन नाम हैं—१ प्रबन्ध २ रूपक ३ वस्तु। और दो नाम, गीत और गेय भी लक्ष्य सप्रदाय में हैं।

धातुओ में 'अन्तरा' नामक धातु सालगसूड प्रबन्धो में ही प्रयुक्त किया जाता है। प्रबन्धो में तालनिबद्ध और अनिबद्ध के दो भेद हैं। प्रबन्धो में गुरु, लघु आदि अक्षरो का प्रयोग है। इनके प्रयोग करने में कुछ नियम भी हैं। इसी तरह प्रबन्धो के अवयवो की साहित्य रचना मे भी आरभ विषयक अक्षर और गुरु, लघु इत्यादि के नियम हैं। वे अब कहे जाते हैं।

गुरु, लघु के प्रयोग-विषय 'गण' या गुरु एव लघु से नियमित हैं। हरएक 'गण' मे ३ अग हैं। गण आठ प्रकार के हैं। उनके नाम भी अक्षरो से सूचित किये जाते हैं।

यगण	=	। S S
रगण	=	S । S
तगण	=	S S ।
भगण	=	S । ।
जगण	=	। S ।
सगण	=	। । S
मगण	=	S S S
नगण	=	। । ।

इन आठो गणो मे य, र, त गणो में एक लघु है। भ, ज, स गणो में एक गुरु है। 'म' गण मे सर्वगुरु है। 'न' गण में सर्वलघु है। य र त में क्रमश आदि, मध्य और अन्त में लघु है। इसी तरह भ ज स में क्रमश आदि, मध्य और अन्त में गुरु है।

'आदिमध्यावसानेषु भजसा यान्ति गौरवम्।
यरता लाघव यान्ति मनौ तु गुरुलाघवम्।'

गणो के देवता और फल—

गण	देवता	फल
य	अप्	वृद्धि।
र	अग्नि	मृत्यु।
त	पृथ्वी	निर्धनता या गरीबी।
भ	चन्द्र	कीर्ति।
ज	सूर्य	रोग।
स	वायु	स्थान भ्रष्टता।
म	पृथ्वी	धन की प्राप्ति।
न	इन्द्र	आयुर्वृद्धि।

श्लोको और गीतो के आरम्भ में प्रयोग किये जानेवाले गण मे होनेवाला फल ऊपर बताया गया है। अक्षरो के देवता और फल—

अक्षर अवर्ग, कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग, शवर्ग—इन आठ वर्गो मे विभाजित किये गये हैं। अवर्ग सब स्वर हैं। 'कवर्ग' क ख ग घ ङ। चवर्ग च, छ, ज, झ, ञ। टवर्ग ट, ठ, ड, ढ, ण। तवर्ग त, थ, द, ध, न। पवर्ग प,-फ, ब, भ, म। यवर्ग य, र, ल, व। शवर्ग श, ष, स, ह। वर्गो के देवता और हरएक वर्ग में श्लोक और गीतो के आरभ करने का फल—

वर्ग	देवता	फल
अ	सोम	आयुर्वृद्धि
क	अङ्गारक	कीर्ति
च	बुध	धन-प्राप्ति
ट	गुरु	सौभाग्य
त	शुक्र	कीर्ति
प	शनैश्चर	मन्दता
य	सूर्य	मृत्यु
श	राहु	शून्यता

इनके साथ कुछ विशेष फल भी हैं। न, ह और म ध न, कीर्ति और सर्वस्व नाश करते हैं। उद्ग्राह में दकार, अन्तरा में भकार, आभोग मे वकार—ये तीन लक्ष्मीप्रद हैं।

जैसे अक्षरो के गण आठ प्रकार के हैं, वैसे मात्रा के गण भी पांच प्रकार के हैं जैसे—छगण (छ मात्रावाला), पगण (पाँच मात्रावाला), चगण (चार मात्रावाला), तगण (तीन मात्रावाला) और दगण (दो मात्रावाला)।

प्रबन्धो के भेद

सूड, आलि और विप्रकीर्ण—ये तीन प्रवन्ध के भेद हैं। सूड में दो भेद हैं, शुद्ध सूड और सालगसूड।

शुद्ध सूड के आठ भेद हैं। एला, करण, ढेंकी, वर्तनी, झोवड, लव, रास, एकताली।

सालगसूड में ध्रुव, मठच, प्रतिमठच, निस्सारुक, अड्ड, रास, एकताली—ये सात भेद हैं।

आली प्रबन्ध मे २५ भेद हैं। उनके नाम वर्ण, वर्णस्वर, गद्य, कैवाड, अकचारिणी, कन्द, तुरङ्गलीला, द्विपदी, चक्रवाल, क्रौंचपद, स्वरार्थ, ध्वनिकुट्टनी, आर्या, घाता, द्विपद, कलहस, तोटक, घट, वृत्त, मातृका, नन्द्यावर्त, रागकदम्वक, पञ्चतालेश्वर और तालार्णव हैं। प्रकीर्ण प्रबन्धो में ३६ भेद हैं। उनके नाम श्रीरङ्ग, श्रीविलास, त्रिपादी, चतुष्पदी, पट्पदी, वस्तु, विजय, त्रिपत, चतुर्मुख, सिंहलील, हसलील, दण्डक, झम्पट, कन्दुक, त्रिभङ्गी, हरविलास, सुदर्शन, स्वराक, श्रीवर्द्धन, हर्षवर्द्धन, वदन, चञ्चरी, चर्या, पद्धडी, राहडी, वीरश्रिय, मगलाचर, धवल, मगल, ओवि, लोलि, ढोल्लरि, दन्ती हैं।

सव मिलाकर प्रवन्धो की सख्या ७५ है। हरएक प्रवन्ध के अनेक भेद हैं। जैसे—

शुद्ध सूड प्रवन्ध—एला = ३६५, करण = २७, ढेंकि = ३०, वर्तनि = ४, झोवडा = ३५१०, लवक = १, रास = ७७, और एक ताली = १।

सालग सूड प्रवन्ध—ध्रुव = १६, मण्ठ = ६, प्रतिमण्ठ = ४, निस्सारुकम् = ६, अड्ड = ६, रासताल = ४, एकताली = ३।

आली प्रवन्ध—वर्ण = १, वर्णस्वर = ४, गद्य = ३६, कैवाड = २, अङ्गचारिणी = ६, कन्द = २९, तुरङ्गलीला = ५, गजलीला = १, द्विपदी = ८, चक्रवाल = २, क्रौंचपद = १, स्वरार्थ = ८, ध्वनि कुट्टिनी = ३०, आर्या = २६, घाता = १, द्विपद = ९, कलहस = २, तोटक = १, घट = १, वृत्त = १, मातृक = ३, रागकदम्वक = २, पञ्चतालेश्वर = २, तालार्णव = २।

विप्रकीर्ण प्रवन्ध—श्रीरङ्ग = २, श्रीविलास = ५, त्रिपदी = १, चतुष्पदी = १, पट्पदी = १, वस्तु = १, विजय = १, त्रिपत = १, चतुर्मुख = १, सिंहलील =

१, हंसलील = १, दण्डक = १, झम्पट = १, कन्दुक = १, त्रिभङ्गी = ५, हरविलास = १, सुदर्शन = १, स्वराक = १, श्रीवर्द्धन = १, हर्षवर्द्धन = १, वदन = १, चच्चरि = १, चर्या = ४, पद्धडी = १, राहडी = १, वीरश्रिय = १, मगलाचार = १, धवल = ३, मगल = १, ओवि = १, लोलि = १, डोल्लरि = १, दन्ति = १।

अन्य प्रसिद्ध प्रबन्ध—वीरश्रृङ्गार = १, चतुरङ्ग = १, शरभलीला = १, ुर्यप्रकाश = १, चन्द्रप्रकाश = १, रणरङ्ग = १, नन्दन = १, नवरत्न प्रबन्ध = १।

प्रबन्धो का विभाजन, प्रबन्धो की प्रत्येक पाच जातियो से—अर्थात्, मेदिनी, ानदिनी इत्यादि से युक्त तथा कई दूसरी जातियो से अप्रधानतया मिश्रण करके किया या है। वह विभाजन यो हुआ है।

पहली मेदिनी जाति से युक्त प्रबन्ध—७

१ श्रीरग, २ श्रीविलास, ३ पचभगी, ४ पचानन, ५ उमातिलक, ६ करण, ७ सिहलीलक ॥१॥

दूसरी आनदिनी जाति से युक्त प्रबन्ध—१०

१ पचतालेश्वर, २ वर्णस्वर, ३ वस्त्वविवान या वस्तु, ४ विजय, ५ त्रिपदा, ६ हरविलास, ७ चतुर्मुख, ८ पद्धडि, ९ श्रीवर्वन, १० हर्षवर्धन ॥२॥

तीसरी दीपनी जाति से युक्त प्रबन्ध—५

१. सुदर्शन, २ स्वराक, ३ त्रिभगी, ४ कुन्तक, ५ वदन ॥३॥

चौथी भाविनी जाति से युक्त प्रबन्ध—१६

१ वर्ण, २ गद्य, ३ कद, ४ कँवाड, ५ अकचारिणी, ६ वर्तनी, ७ आर्या, ८ गाथा, ९ क्रौंचपद, १० कलहस, ११ तोटक, १२ हसलील, १३ चतुष्पदी, १४ वीरश्री, १५ मगलाचार, १६ दडक ॥४॥

पाँचवीं तारावली जाति से युक्त प्रबन्ध—२२

१ एला, २ ढेंकी, ३ झोपट, ४ लम, ५ रास, ६ एकतालिक, ७ चक्रवाक, ८ स्वरार्घ, ९ मातृका, १० ध्वनिकुट्टनी, ११ त्रिपदी, १२ षट्पदी, १३ झोपट, १४ चच्चरी, १५ चर्या, १६ राहटी, १७ धवल, १८ मगल, १९ ओवी, २० लोली, २१ डोल्लरी, २२ दन्ती ॥५॥

पहले कहे हुए मार्ग के अनुसार दो-दो जातियो से युक्त प्रबन्धो का भी नीचे लिखे अनुसार विभाजन कर सकते हैं। जैसे—

तारावली व दीपनी जातियो से युक्त प्रबन्ध—२

(१) हयलीला और (२) गजलीला ।

भाविनी व तारावली से युक्त प्रबन्ध—३

(१) द्विपदी, (२) द्विपदक और (३) व्रत ।

दीपनी व भाविनी से युक्त प्रबन्ध —१

१ घट

कुल मिलकर दोनो जातियो से युक्त प्रबन्ध छ हुए। ऐसे ही पाचो जातियो से युक्त दो प्रबन्ध हैं। जैसे—तालार्णव व रागकदम्ब, अब क्रम से उनका लक्षण कहा जाता है।

प्रबन्धलक्षण

१. श्रीरग

इस प्रबन्ध की चार खण्डिकाएँ है। हरएक खण्ड के लिए एक-एक राग एव ताल की आवश्यकता है। प्रत्येक खण्ड के अन्त में पदो का प्रयोग करना चाहिए। इसके अलावा स्वर इत्यादि पचाग के प्रयोग में कोई नियम नही, इच्छा हो तो प्रयोग करेंगे। इन चारो खण्डो के पहले आधे भाग को उद्ग्राह कहते हैं। पिछले आधे भाग को ध्रुव कहते है। इसमें आलाप व आभोग नही होते। आभोग के न होने पर भी चौथी खण्डिका के अत में, गायक तथा उद्दिष्ट नायक और प्रबन्धो के नाम का अकन करना है। इसलिए यह द्विधातु प्रबन्ध, ताल आदि के नियमो के विना रचे जाने के कारण अनिर्युक्त प्रबन्ध है।

२. श्रीविलासप्रबन्ध

इसमें पाँच खण्डिकाएँ है। प्रत्येक खण्ड के लिए राग व ताल अनिवार्य है। खण्डिकाओ के अत में स्वरो का प्रयोग आवश्यक है। बाकी पाँच अगो के प्रयोग इच्छानुसृत हैं। बाकी सब लक्षण श्रीरग की भाँति हैं।

३. पचभगिप्रबन्ध

इसकी दो ही खण्डिकाएँ हैं। प्रत्येक के लिए अलग-अलग राग एव ताल होते हैं। प्रत्येक खण्ड के अत में 'तेनक' का प्रयोग करना चाहिए। बाकी लक्षण श्रीरग जैसे हैं।

४. पचाननप्रवन्ध

पचभगी के समान इसमें भी दो खण्डिकाएँ हैं। एक मात्र विशेपता यह है कि प्रत्येक खण्ड के अत में तेनक के वदले पदो का प्रयोग होना है। अवशिष्ट विशेपताएँ पचभङ्गी जैसी हैं।

५. उमातिलक

इसकी तीन खण्डिकाएँ हैं। राग-ताल प्रत्येक के लिए आवश्यक हैं। खण्डो के अत में विरुद की योजना करनी चाहिए। अवशिष्ट वातें श्रीरङ्ग के समान हैं।

६. करण-लक्षण

इष्टस्वर में प्रवन्ध का आरम्भ करके अशस्वरो से मुक्त होकर रास-ताल तथा द्रुत-लय का सयोजन करना ही करण का लक्षण है। वे करण आठ प्रकार के होते हैं—(१) स्वरादि, (२) पाटपूर्वक, (३) प्रवन्धादि, (४) पदादि, (५) तेनादि, (६) विरुदादि, (७) चित्र, (८) मिश्र।

१—स्वरादिकरण

जहाँ उद्ग्राह और ध्रुव मद्रस्वर में होकर गवैया, नेता, प्रवन्ध—इन तीनो के नाम से अकित पदो का आभोग भी पाया जाता है वहाँ स्वरादि करण समझना चाहिए।

२—पाट (पूर्वक) करण

हस्त या हाथ के पाटो अर्थात् घातो से युक्त स्वरो से सवद्ध करण हो तो उसे पाटकरण जानना चाहिए। वह पाटकरण भी दो प्रकार के होते हैं—क्रमपाटकरण और व्यत्यासपाटकरण। पहले स्वर और पीछे हस्तपाट हो, तो उसे क्रमपाटकरण कहते है। पहले हस्तपाट और पीछे स्वर हो तो उसे व्यत्यासपाटकरण कहते हैं। यह विभाजन मतङ्ग एव भरत जैसे आचार्यों को भी समत है।

३—प्रवन्धकरण

स्वरो मे उद्ग्राह और मुरज याने मृदग के पाटो से ध्रुव की रचना हो तो उसे प्रवन्ध या वद्धकरण जानना चाहिए।

४—पदादिकरण

उद्ग्राह और ध्रुव, क्रम मे स्वरो या पदो से रचित होते हैं, तो पदादिकरण होता है।

५—तेनकरण

जिस प्रबन्ध के उद्ग्राह स्वरो से और ध्रुव तेनको से बनाये हुए हैं उसे तेनकरण कहते हैं।

६—बिरुदादिकरण

जिस प्रबन्ध के उद्ग्राह और ध्रुव, क्रमश स्वरो और बिरुदो से निर्मित होते हैं उसे बिरुदकरण जानना चाहिए।

७—चित्रकरण

जिस प्रबन्ध के उद्ग्राह, स्वर और हस्तपाट दोनो से तथा ध्रुव मुरज के पाटो एव पदो से रचित होते हैं, तो उसे चित्रकरण जानना चाहिए।

८—मिश्रकरण

स्वर, पाट और तेनक, इन तीनो के उद्ग्राह तथा ध्रुव की रचना जिस प्रबन्ध में पायी जाती है वही मिश्रकरण है। तिल एव चावल के मिश्रण की भाँति जहाँ की ससृष्टि भली-भाँति प्रतीत होती है वहाँ चित्रकरण और दूध एव पानी के मिलन की भाँति जहाँ का सकर, स्वरूपनाश के कारण, स्पष्ट नही देख पडता वहाँ मिश्रकरण होता है। "रास-ताल" नामक ताल नियम के कारण यह निर्युक्त-प्रबन्ध है। एक-लघु का आदिताल ही रासताल है। मेलापक के अभाव के कारण यह त्रिधातु है।

७ सिहलील

स्वर, पाट, विरुद और तेनक—ये चार करण इस प्रबन्ध में प्रयुक्त होते हैं। सिह-लील नामक ताल से युक्त होने के कारण इसका नाम सिहलील है। सिहलील ताल में ।००० । होते हैं। स्वर और पाट दोनो से उद्ग्राह, विरुदो तथा तेनको से ध्रुव और पदो से आभोग निर्मित रहते हैं। इसीलिए यह त्रिधातु-प्रबन्ध है। ताल के नियम से युक्त होने के कारण निर्युक्त है। स्वरादि अगो से रचित होने के कारण यह मेदिनी-जाति का है।

दूसरी आनदिनी आदि जातियाँ भिन्न-भिन्न प्रदेशो में प्रसिद्ध हैं। तो भी निश्शक श्रीशार्ङ्गदेव के 'सगीत रत्नाकर' में श्रीवर्धन-प्रबन्ध का उल्लेख है। तजौर के महाराष्ट्र राजा तुलजा के आचार्य "व्यासपाचार्यजी" ने, "जय कर्णाटवारा" के पदो से आरम्भ होनेवाले एक श्रीवर्धन प्रबन्ध की रचना की है।

विरुद, पाट, पद, और स्वर इन चारो से युक्त इस श्रीवर्धन-प्रबन्ध का उदाहरण—

नाटराग

मामा पामा पासमनिनिपपनिपपनिपम गममापाप ससनिमा पासससपससरी-ससससा ससममममपाममम मरिमसा मसममरिसनिसा ममारिसारिसानिसा पम-पससानिपनिपम गाममा पासा।

पीछे मध्यमान में सस्स सस्स ससमगमपससा सससपपपममपपमरि ससससस-सासससपममपम ० ० डली इकअरअ ग ० ० ० डा आ त्तु २—द्रु ५ तोगिण अगिण घ ३ द्रु ४ द्रि ३ तो २ तो ओ गिणणणगिणमप।

फिर विलवमान में—पा पाससस सा सा वुशी पनि पससा सा वुशि० मा मापामा प नीपपमपाप्पममामा रिसानि पामपससा, विरुद और पाट से, सरीसरिसममरिस-निसा मा मा मा पा पा सा सा सपा पममारिसा रिसानीसासमापा।

इसके द्विगुणमान में ससरि सससससनिपपनिमम मगमपमपसनिपममरिस मगम-पप्पमपनिप्पपससा मपपममरिरिससनिप रिविवे मसानिपाममारिसा पमापासनीसा रिसारीममरिससनिपमरिसरि मरेणे। ध्रुव।

आभोग—ममपपनिप मममपमममर्रि सममरिसममरिसपममप समसरिग-मपपनिपपमगम पपससप्पपसन्निपममरिसा।

विलव में—पनिपपममापाममापामममा मामारिसारि सानीस पनिपमप-सासामरिसा रिगामामारिसानिसा।

मध्यमान मे—सससममपपसनिपममरिससरिस सनिपमरिस सममपपा।

इम प्रवन्ध में तीन घातु हैं, इसलिए यह त्रिघातु प्रवध है। ताल के नियम नही, इसलिए अनिर्युक्त है। इसमें तेन्नक नही। आनदिनी-जाति का है।

आधुनिक प्रवन्ध

नवीन पद्धति में, प्रवन्व के छ अगो में से (स्वर, पाट, ताल, तेन, पद, विरुद) प्राय तीन अगो में ही प्रवन्व रचे जाने लगे। उनमें पद और विरुद दोनो को ही मुख्यत्व दिया गया। स्वर, पाट, ताल, तेन—इनमें से एक ही अग लिया जाता था।

हिंदुस्थानी पद्धति के प्रवन्घ

इम तरह के ३ अगो से, ध्रुवपद और अन्य प्रवन्व, तानसेन के द्वारा रचे गये। पीछे, नये प्रवन्वो में, दो अगो से रचे हुए प्रवन्व ही अविक हैं। उनके अग हैं पद और विरुद। इनके साथ स्वर से युक्त प्रवन्व, पाट से युक्त प्रवन्व, ताल से युक्त प्रवन्व और तेन से युक्त प्रवन्वो का नाटय में उपयोग करने के लिए अलग-अलग रचे गये। दोनो

अगो से रचे हुए प्रबन्धो में ध्रुवपद, प्रबन्ध, वगैरह हैं। प्रबन्ध में स्वर ही एक अग है। बाकी प्रबन्धो में, पद और विरुद ही रहते हैं। आधुनिक प्रबन्धो में, प्राय तीन अवयव हैं। हिंदुस्थानी पद्धति में इन तीनो के नाम स्थायी, अन्तरा और आभोग हैं। कर्नाटक पद्धति में इनके नाम क्रमश —पल्लवी, अनुपल्लवी तथा चरण हैं। कभी-कभी दो ही अवयव रहते हैं।

प्रचलित प्रबन्ध

ध्रुवपद या ध्रुपद

हिंदुस्थानी पद्धति के प्रबन्धो में, ध्रुवपद श्रेष्ठ साहित्य माना जाता है। यह प्रबन्ध ध्रुपद नाम से प्रचार में है। यह प्रबन्ध प्राय व्रजभाषा या हिंदी में है। मराठी भाषा में भी कई ध्रुवपद हैं। यह शुद्ध राग-रागिनी में रचे गये हैं। तालो में चौताल, त्रिवट, धमार और कभी-कभी सूरफाक और झपाताल प्रयुक्त किये गये हैं। इस प्रबन्व के प्राय तीन अवयव हैं। वे स्थायी, अतरा और आभोग हैं। कुछ लोगो ने दो ही अवयवो से रचनाएँ की हैं। पद और बिरुद अनिवार्य अग माने जाते थे। कही-कही पाट या स्वर का भी तीसरे अग से प्रयोग किया है।

ध्रुपद, ध्रुवपद का विगडा हुआ रूप है। ध्रुवपद प्राचीन काल से प्रत्येक नाटको का गीताग होकर प्रधान हुआ था। भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र के ३२ वें अध्याय में ध्रुवपदो की विस्तृत रूपरेखा खीची थी। नाटको के आदि, मध्य और अत में ध्रुपदो का गाना प्रचार में था। उन पदो में, पात्र, सदर्भ तथा कभी-कभी देवताओ का वर्णन भी हुआ करता है। गाते समय, अभिनय के साथ गाना उन पदो की एक अलग विशेषता है। जब ध्रुवगान में, पात्रो का गुणवर्णन किया जाता है, तब वह पात्र अपने वर्णित गुणो के अनुसार चेष्टा और अभिनय करता है। उसके साथ नर्तन को भी जोड दिया गया।

दक्षिण भारत में, तेलुगु भाषा में, ध्रुवपद 'दरु' नाम से प्रचलित हुए थे। विजय-नगर साम्राज्य के अधीन होने के वाद यानी १५०० ई० के वाद—तमिल देश में भी, तमिल नाटको मे वे पद अपने-अपने अभिनय और नर्तन के साथ प्रयोग में आने लगे। पर आजकल, 'दरु' का प्रयोग, उत्तर तथा दक्षिण भारत के नाटको में क्रमश कम होकर रुक गया। तथापि उत्तर के गायको के सप्रदाय में ध्रुपद नाम से वह न केवल जीवित है, अपितु उच्चस्थान भी पा चुका है। इतने पर भी उन पदो को गाने में जो कठिनता होती है, उसके कारण उत्तर में भी उन पदो के गायको की सख्या कम हो रही है।

दक्षिण भारत में, तो 'दरु' के गान ने गायको के सप्रदाय में स्थान नही पाया,

लेकिन, अब भी, प्राचीन सप्रदाय के नाटको में, जो विरल ही हुआ करते है, तथा नृत्यो में कुछ-कुछ प्रचलित है।

ध्रुपदो के विपय प्राय भक्ति, ईश्वरस्तुति, राजाओ की प्रशसा, मगल उत्सवो का वर्णन, धर्मतत्व, पुराणविपय, मतसिद्धान्त और सगीतशास्त्रो की श्रुतिस्वर, ग्राम मूर्च्छना आदि के लक्षण वर्णन इत्यादि है। शृगार आदि नव रसो में इनकी रचना हुई है।

ध्रुपद गाते समय, रागालाप, रूपकालाप, अलकार, स्वर, करण वोलतान इनका भी उपयोग करना प्रचलित है। कप, आदोलित आदि बहुविध गमको के प्रयोग भी किये जाते है।

ध्रुपद गाने का नियम यह है कि पहले रागालाप बहुविध गमक अलकारो के साथ विस्तार से करके, तत्पश्चात् ही ध्रुवपदो के पदो का उच्चारण करना चाहिए। ध्रुवपद में अश, ग्रह, न्यास तथा अपन्यास स्वरो को उनके उचित स्थान में रखकर शास्त्रोक्त रीति से रचना किये जाने के कारण उन्हें बहुत ध्यान देकर, कुछ भी अदल-बदल के विना, गाना चाहिए। इन कारणो से ही जो विद्वान् ध्रुवपद गा सकते है वे ऊँचे दर्जे के कलावत माने जाते है। ध्रुवपदो की रचना में गोपालनायक, नायक वैजू, राजा मानसिह, तानसेन, चितामणि—ये ही सिद्धहस्त थे।

गवैयो के सप्रदाय में ध्रुपद का स्थान, ग्वालियर नरेश राजा मानसिहजी (१४-८६–१५१६ ई०) से सुप्रतिष्ठित हुआ।

नवीन ध्रुपद का प्रचार

नाटक के सवन्ध के विना मौलिक रूप में, प्रभु तथा इष्टदेवताओ की प्रशसा करने के लिए ध्रुवपदो की रचना आरभ हुई। प्राचीन सप्रदाय के, तेलुगु तथा तमिल में रचे हुए 'दरु' कही-कही प्रचार में है।

ख्याल

ध्रुपद की तरह ख्याल भी एक विस्तारपूर्ण साहित्य है। पर ख्याल भावप्रधान है। विस्तार करने योग्य मुख्य रागो में ही ख्यालो की रचना की गयी है। ताल मे भी पूर्ण अवधान दिया जाता है। ख्याल को गाते समय भाव के विस्तार करने के लिए स्वायभजनी, रूपकभजनी, प्रतिग्रहणिका—इन रूपकालाप के भेदो का अधिक प्रयोग किया जाता है। ख्याल का विपय विप्रलभश्रृगार है। ख्याल में नायक-नायिकाओ के भेद, उनके गुण ये सब वर्णित किये जाते है। ध्रुपद से कुछ समय बाद यह रचना उत्पन्न हुई है। ध्रुपद केवल भारतीय रचना है, पर ख्याल भारतीय-फारसी मिश्रित

रचना है। कहा जाता है कि इस ख्याल का श्रीगणेश जौनपुर के सुलतान हुसेन शर्की (१५ वी सदी) के समय में हुआ था।

ख्याल में, अस्थायी अतरे के दो अवयव और पद बिरुद ये दोनो अग ही रहते है। प्राय विलबित लय मे त्रिताल में रचे जाते हैं। ध्रुपद की तरह, ग्रह, अश, न्यास, वादी-सवादियो का स्थाननियम ख्याल में नही है। केवल रजन ही मुख्य है। ख्यालो के प्रमुख रचयिता सदारग एव अदारग हैं। आजकल, हिंदुस्थानी सगीत में ख्याल का मुख्य स्थान है।

होरी

शृगार रसप्रधान और एक प्रवन्ध है, होरी। इसका विषय है राधाकृष्णलीला। ख्याल की तरह मुख्य रागो में ही रची गयी है। होरी में, स्थायी व अतरा के दो ही अवयव और "पद" एक ही अग है। ताल का मुख्यत्व है। होरी का ताल, प्राय, "धमार" है। कभी झूमरा (१४ मात्रा) या दीपचदी ताल भी प्रयोग किया जाता है। ख्याल के समान होरी भी मुख्य प्रवन्ध माना जाता है। होरी, कभी-कभी ताल के नाम "धमार" से पुकारी जाती है।

टप्पा

शृगाररस प्रधान साहित्य है। सकीर्ण राग में रचा गया है। विलवित, तिवट या धीमा, तिवडा, तिलवाडा और झूमरा वगैरह तालो में होता है। इसमें स्थायी और अतरा दो अवयव है। पद और विरुद दो ही अग हैं। स्फुरित, आहति, प्रत्याहति—इन गमको से युक्त खटका, मुर्की, प्रयोग वहुत हैं। शोरी मियाँ ही टप्पे के प्रमुख रचयिता हैं। कहा जाता है कि टप्पे की उत्पत्ति पजाव में हुई और ऊँट पालनेवाले ही उसको गाते थे। उसकी भाषा पजावी या पजावी मिश्रित हिंदी है। टप्पे का मुख्य विषय है हीर व राझा का प्रणय।

ठुमरी, दादरा, ग़ज़ल

नर्तन के अनुकूल शृगाररस प्रधान चीज हैं। त्रिवट और एकताल मे रची गयी हैं। यह आम जनता को वहुत प्रिय हैं।

त्र्यश्रजाति के विलवित लय में, एकताल में या दादरा नामक छ मात्राओ के ठेके से युक्त ताल में रची हुई चीज़ का मुख्य नाम है दादरा।

त्र्यश्रजाति में गजल नामक पाच मात्राओ के ठेके से युक्त रूपक ताल में रची हुई चीज का नाम ग़ज़ल है।

वैत, रुवाई, रेखता, कजरी, रसिया, लेज

ये सव फारसी या उर्दू में, चतुरश्र जाति में वनायी गयी हैं। पिछली तीनो चीजें एकलाताल में रची हुई हैं। ये तीनो, नीचे दर्जे के नर्तन में प्रयोग करने लायक हैं। ये चीजे पीलू, खमाच, झिझोटी, काफी वगैरह रागो में रची जाती है। इनमें कुछ चीजो के सचार को राग नाम देना युक्त नही है। अनिश्चित और अनियमित स्वरूप होने के कारण उनका धुन कहा जाना ही उपयुक्त है।

भजन

ये चीजें भक्तिरस प्रधान हैं। सतो के द्वारा रचित है। ईश्वरस्तुति रूप में हैं। उत्तर हिन्दुस्थान की व्रजभापा, राजस्थानी और गुजराती में मीरावाई के भजन प्रसिद्ध है। पजाव में नानक पथ के भजन प्रसिद्ध हैं। वगाल में, गौडीय सप्रदाय के भजन भी प्रसिद्ध है। इन भजनो में करुणरस ही प्रधान है। राग, ताल, करुणरम, ईश्वर की प्रार्थना, नम्रभाव आदि इनके अनुकूल रहते हैं। भजन में, पद और विरुद ये दोनो अग हैं।

प्रवन्ध

ईश्वर और राजाओ के स्तोत्रो के रूप में, सस्कृत भापा में रची हुई चीजें है। शात, वीर, अद्भुत तथा भक्तिरस प्रधान हैं। प्राय मुख्य रागो में ही हैं। तेवरा और झपा ताल में है। इस कारण इन प्रवन्धो को झपा प्रवव भी कहते है। इन प्रवन्धो में ध्रुव, अतर और आभोग—ये तीन अवयव हैं। पद और विरुद दो अग हैं। कुछ प्रवन्धो में स्वर तथा पाट भी हैं। इन प्रवन्धो को सस्कृत कविता प्रवन्ध कहते है।

गद्य

सस्कृत भापा प्रवन्ध है। ईश्वरस्तोत्र रूप में या सामान्य वर्णन के रूप मे है। ताल का निवन्ध नही। इनमें ध्रुव और आभोग ये दो अग हैं। अग दो हैं, पर उनमें एक तो पद है, और दूसरा स्वर या पाट। इनमें अनुप्रास आदि शब्दाल्कार का विशेप है।

अष्टपदी

प्रसिद्ध भक्तकवि जयदेव के गीतगोविंद और उनके अनुकर्ता दूसरे कवियो के द्वारा रचित प्रवन्ध है। इनमे ध्रुव और आभोग के दो अवयव हैं। पद और विरुद दो अग है। उनके राग और ताल भावो के अनुकूल रहते हैं। जयदेव की अष्टपदी में हरएक पद का राग और ताल कवि के द्वारा ही निश्चित किये गये हैं। परतु

वहुत-से पडितमन्य लोग दूसरे राग और तालो में गाकर इसके रस और भावो का भग करते हैं।

तिल्लाना या तराना

स्वर, ताल और वाद्य शव्दाक्षर इन तीनो से बनाये हुए प्रवन्ध हैं। स्थायी और अतरा दो अवयव है। गाने और नाचने में बहुत प्रयोग किये जाते हैं। परतु मनोहरतम चीज है।

पद[1]

इन प्रवन्धो में पद ही मुख्य अग है। इनमें दो ही अग है पद और विरुद या ध्रुव और आभोग। ये मराठी, कन्नडी और हिंदी भाषा में हैं। हिंदी भाषा में तुलसीदास, सूरदास, नानक, चैतन्य कवीर इत्यादि साधुओ और कवियो ने तथा कनडी भाषा में पुरदरदास वगैरह दासरू कवियो ने, मराठी भाषा में केशवस्वामी, रगनाथस्वामी, उद्धवचिद्धन, प्रेमावाई, अमृतराव आदि ने बनाये हैं।

द्विपदी, चतुष्पदी, षट्पदी

इन्हें हिंदी भाषा मे क्रमश दोहा, चौपाई, छप्पय कहते है। दोहे में पद एव विरुद दो अग हैं। दो चरण है। इसका विषय सामान्यनीति और दृष्टान्त है। इनके प्रवर्तक तुलसीदास और कवीर वगैरह साधु कवि हैं। चौपाई व छप्पय में चार और छ चरण हैं। पद और विरुद दो अग हैं। इनका विषय राजाओ का पराक्रम वर्णन है। पृथ्वीराज के दर्वारी कवि चदवर्दाई चौपाई और छप्पय शैली में प्रसिद्ध हैं। ये वीररस प्रधान है। उनमे राग और ताल का नियम है।

लावणी, पोवाडा, कटाव, फटका

ये प्रवन्ध शुद्ध मराठी मे हैं। इनमें ध्रुव और आभोग य दो ही अवयव है। पद और विरुद ये दो ही अग है। मिश्रित रागो में त्रिवट, रूपक और एक्कताल में है। लावणी शृगाररस विषयक और वेदातपरक है। पोवाडा, वीर, रौद्र, अद्भुत और करुणरस प्रधान है। इसमें आभोग का छौक नाम है। कटाव विविध सदर्भो में वर्णन करते हैं। इनमे अनुप्रास एव यमक की प्रचुरता है। फटका, ससार मे विरक्ति पैदा करके सन्मार्ग का अवलवन करने के लिए प्रेरित करनेवाला है।

१ ये साहित्य-पद सरस्वती महल पुस्तकालय में वहुत हैं।

भूपाली, आरती, पालना

ये तीनो प्रबन्ध इष्टदेवता की पूजा में उपयोग करने के लिए हैं। भूपाली देवता को जगाने का स्तोत्र है। 'आरती' नीराजन का साहित्य है। इसमें अवतार लीलाएँ वर्णित रहती हैं। पालना (हिंदोला) शयन कराने का साहित्य है। भूपाली प्रात -काल के रागो में—अर्थात् भूप, विभास, भैरव, रामकली इत्यादि रागों में—गाते है। पालना, सारङ्ग, आरभी इत्यादि रागो मे मध्याह्नकाल में गाते हैं। आरती मिश्र रागो में गाते हैं। इनके ताल रूपक और त्रिपुट हैं। ये साहित्य मराठी, गुजराती और हिंदी में हैं। इन साहित्यो में ध्रुव और आभोग के दो अवयव तथा पद और विरुद दो ही अग हैं।

अभंग, ओवी, आर्या, साकी, दिण्डी, घनाक्षरी, अंजनीगीत

ये साहित्य मराठी भाषा में रचे गये है। इनमें एक ही अग पद है। इनमें राग और ताल के नियम नही। तुकाराम का अभग, ज्ञानेश्वर की ओवी, मोरोपत की आर्या, रघुनाथपडित की दिण्डी—ये प्रसिद्ध हैं। घनाक्षरी और अजनीगीत मोरोपत के साहित्य वृत्तात के वर्णन रूप में हैं।

कर्नाटक पद्धति में प्रचलित प्रबन्ध

कीर्तना या कृति

ये प्रबन्ध, कर्नाटकी, तेलुगु, तमिल भाषा और सस्कृत भाषाओ मे रचित हैं। प्राय इष्टदेवता का गुणवर्णन या इष्टदेवता की प्रार्थना ये ही इनके विषय रहते हैं। इनमें ध्रुवा, अतरा और आभोग ये तीन अवयव हैं, परतु इनके नाम में परिवर्तन हुआ है। ध्रुवा का नाम पल्लवी है। अतरा का नाम अनुपल्लवी है। आभोग का नाम चरण है। इनमें कुछ कीर्तना अनुपल्लवी रहित रहते हैं। ये सब कर्नाटक रागो में है। पद विरुद दो ही अग हैं। ये कीर्तन पुरदरदास के पदो के अनुसार हैं।

पल्लवी, अनुपल्लवी, चरण के सप्रदाय के प्रवर्तक पुरदरदास, भद्राचल रामदास, ताल्लपाक्क, चिन्नमार्युल्ल, महोदरुल हैं। प्रचलित कीर्तनो के रचयिता श्रीत्यागय्या, श्रीमुत्तुस्वामि दीक्षितार, श्रीश्यामाशास्त्री, स्वातितिरुनाल महाराज, पट्टण सुब्रह्मण्य अय्यर, सदाशिव ब्रह्म, गोपालकृष्ण भारती, सुब्बराम दीक्षितार, पापनाश शिवन्, पोन्नय्या, पल्लवि गोपालय्यर, सदाशिव राव, मैनूर वासुदेवाच्चार, मुत्तय्या भागवतार, मोसु कृष्णय्यर, पून्छि श्रीनिवास आय्यगार, लक्ष्मण पिल्लै, कोटीश्वर अय्यर इत्यादि हैं।

इनमें से पहले के—त्यागय्या, श्यामाशास्त्री और मुत्तुस्वामि दीक्षितार—इन तीनो को सगीत की त्रिमूर्ति कहते है। कीर्तन में दो पद्धतियाँ हैं। एक में "चरण", पिछली आधी अनुपल्लवी की धातु में ही रहते हैं। दूसरी पद्धति में इस तरह नही रहते। त्यागय्या और श्यामाशास्त्री ने पहले की पद्धति का अनुसरण किया है। दीक्षितार ने दूसरी पद्धति का अनुसरण किया है। दीक्षितार की कृतियाँ सस्कृत भाषा में है। त्यागय्या और श्यामाशास्त्री की कृतियाँ तेलुगु में है।

कई कीर्तनो में तीसरा अग स्वर भी जोडा गया है। इसे चिट्टास्वर कहते हैं। अनुपल्लवी तथा चरण के बाद इसे गाते है। कई कीर्तनो में चिट्टास्वर को अनुपल्लवी के बाद गाकर चरण के बाद चिट्टास्वर के अनुसार पदसाहित्य रूप मे गाते है। श्यामाशास्त्री की कृतियो की यह एक विशेषता है। श्रीत्यागय्या के कीर्तनो में, पचरत्न-कीर्तन नामक कीर्तनाएँ विशेष रचनाओ का एक गुच्छा है। इसमें पल्लवी तथा अनुपल्लवी गाने के बाद चरण में चिट्टास्वर के अनुरूप रचित मातु को भी गाकर पल्लवी या चरण के पहले भाग का ग्रहण करना अर्थात् मुक्तायि करना होता है।

प्राय कीर्तनो को गाते समय पहले गवैये लोग, प्राय उस कीर्तन के राग का आलाप करके फिर कीर्तन आरम्भ करते है। रूपक तथा आलाप के दोनो भेदो का भी प्रयोग करते है। प्रतिग्रहणिका स्वराक्षर के रूप में गाते है। इसका अन्त पल्लवी या चरण में करते हैं।

१ गीतम्

यह प्रबन्ध सालगसूड प्रबन्ध के अनुसार उसके राग और तालो मे ही रचा गया है। आजकल के प्रचलित गीतो में उद्ग्राह, ध्रुवा, आभोग—ये तीनो अवयव है। इनमें स्वर, पद और विरुद ये तीनो अग हैं। स्वर रूप धातु के अनुसार सब धातुओ की रचना है। गीतो को प्रारभिक शिक्षा में रागो से परिचय कराने के लिए सिखाते हैं। प्राचीन गीतो में पुरदरदास और वेंकट मखी दोनो के गीत ही प्रचार में हैं। इनका अनुसरण करके समीपकाल में गीतो की रचना हुई है।

२ वर्ण

यह प्रबन्ध ३०० वर्ष पहले उत्पन्न रचना है। प्रत्येक राग के योग्य आरोही, अवरोही, सचारी, स्थायी इन चारो वर्णो मे राग के प्रकाशन करने के लिए रचे जाने के कारण इस प्रबन्ध का नाम 'वर्ण' पडा। आजकल, रागस्वरूप को निर्धारित करने के लिए वर्ण एक मुख्य साधन है। इसमें उद्ग्राह और आभोग दो ही अवयव हैं। पद स्वर और विरुद ये तीन अग है। हरएक अवयव में पद, पद के बाद चिट्टास्वर, प्रति-

ग्रहणिका के रूप में रचे गये हैं। शिक्षा देते समय, पद के धातु को सिखाने के लिए उनको स्वररूप में पहले सिखाते हैं। इनके रचयिता वेंकट मखी, सुब्बराम दीक्षितार, वीणै कुप्पय्यर, कुलशेखर, पल्लवि गोपालय्यर, पट्टण सुब्रह्मण्य अय्यर, गजपति राव, पूच्छि अय्यगार, पोन्नय्या आदि हैं। वर्ण मुख्य रागो में ही रचे जाते हैं।

वर्णों में दो प्रकार हैं। एक का नाम तानवर्ण है। दूसरा है पदवर्ण। पहला भेद रागप्रधान है। वह केवल गाने के लिए है। पदवर्ण भाव ताल प्रधान है और नृत्य में उपयोग करने के लिए रचा गया है।

३. पद

पद ज्यादातर नीति, भक्ति और शृगाररस प्रधान है। भाव ही इसके प्राण हैं। इसी कारण से रसभाव-प्रकाशक राग के सचारो को पदो से ही जान सकते हैं। इसमें भी पल्लवी, अनुपल्लवी और चरण ये तीन अवयव है। चिट्टास्वर और जाति भी जोडते हैं। पद, तमिल, तेलुगु तथा कन्नड भाषाओ में रचे गये है। क्षेत्रज्ञर, सुब्बराम-य्यर, मुत्तुत्ताण्डवर, कविकुजर भारती, शाहजी राजा (तजौर के महाराष्ट्र राजा), चिन्नय्या, पोन्नय्या, आदि के द्वारा रचे हुए पद आज प्रचार में है। ये विशेपतया नृत्य में उपयुक्त किये जाते है। गाने में भी उपयोग होता है। मुख्य रागो में ही पद रचे जाते हैं।

४ जावलि

यह शृगाररस प्रधान छोटा-सा प्रवन्ध है। इसकी गति मध्य और द्रुत है।

५. चिन्दु

यह मध्य और द्रुतगति के मिश्र रागो तथा आम जनता को पसद आनेवाली रीति में, तमिल भाषा में रची जाती है। इसमें कई भेद हैं। कावडिचिन्दु, नोडिचिन्दु, ईरडिचिन्दु, ओरडिचिन्दु, वलिनडैचिन्दु वगैरह है। कावडिचिन्दु रचना में सेन्नि-कुळ अण्णामलै रेड्डियार वहुत प्रसिद्ध है। दूसरी चिन्दुओ में सिरुमणऊर मुनुस्वामि प्रसिद्ध है। प्राय शृगाररस प्रधान और सभववर्णनात्मक भी हैं।

६. तिरुप्पुकळ्

अनेक तरह के तालो में, अनुप्रासयुक्त तमिल और सस्कृत पदो से रचित प्रवन्ध है। राग का नियम नही पर ताल का नियम है। हर एक चीज में ताल के रूप—"तन तन तनताना" के रूप—में दिये गये हैं। इस तरह की रचना के प्रवर्तक और

प्रमुख रचयिता "अरुणगिरिनाथ" हैं। उन्होने स्कद पर ही तिरुप्पुकळ की रचना की है। हर एक तिरुप्पुकळ के पहले भाग मे शृगार का वर्णन करके उसे छोड़कर इष्ट-देवता स्कद की उपासना और स्तोत्र करने का मार्ग पिछले भाग में है। इन्हें अनुसरण करके दूसरी तिरुप्पुकळ भी रची गयी हैं।

७ ओडम्

यह नाव को खेने का अनुसरण करके पुन्नागवराळी जैसे रागो मे गाया जाता है। ध्रुवा विलवकाल मे रहता है। आभोग का नाम है मुडुगु और द्रुत काल में रहता है।

८ लाली ऊजल

यह झूला-गान है। लाली तालबद्ध है। ऊजल अनिबद्ध है। लाली और ऊजल, प्राय नवरोज, रीति-गौड तथा भैरवी में, क्रमश गाये जाते हैं।

९ तालाट्टु

पालना गान है। नीलाबरी राग में ही प्राय गाते हैं।

१० देवार

तमिल देश की तमिल सगीत पद्धति का प्रबन्ध है। ये सातवी या आठवीं शताब्दी की रचनाएँ हैं। इनके राग प्राचीन तमिल राग हैं। उनके नाम हैं फण् और तिरम्। इनके रचयिता ३ शैव आचार्य हैं। वे हैं ज्ञानसबधर अप्पर् या वागीशर् और सुदरमूर्ति। प्रचलित देवारो में २४ राग या फण हैं। उन २४ फणो के नाम प्राय मतग, दत्तिल और शार्ङ्गदेव के ग्रथो में पाये जानेवाले रागो के जैसे हैं। गाने की पद्धति अब भी प्रचार में है। शिवजी के मदिरो में प्रतिदिन गाये जाते हैं।

११ चार हजार दिव्यप्रबन्ध

जैसे शैव-सप्रदाय को लेकर देवार रचे गये हैं वैसे ही प्राय उसी काल में वैष्णव-सप्रदाय को लेकर दिव्यप्रबन्ध रचे गये हैं। उनके रचयिता १२ विष्णुभक्त हैं। उनके नाम आलवार हैं। शुरू में, ये चार हजार पाशुर या छद, देवार के जैसे प्राचीन तमिल रागों मे—अर्थात् फणों में—रचे गये हैं। पर, बाद में, फण को भूल जाने के कारण वे देवगाधारी और आरभी मिश्रित रागो में गाये जाते हैं।

१२ मगलम्

सभा के सामने या मेले में होनेवाले गान, नाच या नाटक के अत मे, शुभ प्रार्थना रूप में गाये जानेवाले गीत को मगल कहते हैं। यह चीज कीर्तना-रूप में है। तालबद्ध है। प्राय, सुरटी व मध्यमादि रागो में रचे गये हैं।

गीतो के गुण-दोष

गीत-गुण—

१. श्लक्ष्ण—तीनो स्थानो में सुखभाव के साथ श्रमरहित सचार करना।

२. व्यक्त—स्पष्ट रूप मे अक्षर और स्वरो का उच्चारण।

३. पूर्ण—गमक और अलकारो का पूर्ण स्वरूप में गाना।

४. सुकुमार—कण्ठध्वनि में मृदुत्व।

५ अलकृत—तीनो स्थानो में अलकारो सहित गाना।

६ सम—वर्ण, लय और स्थान की समता होना।

७. सुरक्तम्—वीणा, वेणु आदि वाद्य शब्दो के साथ कण्ठ ध्वनि को लीन करना।

गीत-दोष

१. लोकदुष्ट—लौकिक सप्रदाय के विरुद्ध।

२. शास्त्रदुष्ट—सगीतशास्त्र के विरुद्ध।

३ श्रुतिविरोधी—आधार श्रुति और स्वरो की नियतश्रुति इनमें न्यूनता या अधिकता करना।

४ कालविरोधी—लयभ्रष्टता।

५ पुनरुक्त—एक ही स्थाय या पद का बार-बार प्रयोग करना।

६ कलाबाह्य—सगीत कला के नियमो का उल्लघन करना।

७ गतत्रय—राग, भाव और ताल—इनमे किसी एक की हानि हो जाना।

८ अपार्थक—अर्थ या भाव से रहित गाना।

९ ग्राम्य—ग्राम्य या अनागरिक रीति की रचना या गाना।

१० सदिग्ध—पद, स्वर या तालप्रयोग में सदेह या अनिश्चय।

ग्यारहवाँ परिच्छेद

वाद्याध्याय

वीणा आदि तन्त्री वाद्य, वेणु, काहल आदि सुपिर वाद्य, पटह, मुरज, मृदङ्ग, आदि अवनद्ध वाद्य, कास्य, तालादि घनवाद्य हमारे देश में वैदिककाल से रहे हैं। वेदप्रोक्त यज्ञ करते समय वीणा-वादन के साथ सामवेद का गान विहित है। सामवेद के साथ वजाई जानेवाली वीणाओ के दस प्रकार रहते थे। उनके नाम ये हैं—

"आघाटी, पिच्छोला, कर्कटिका, अलावु, वक्रा, कपिशीर्षणी, शीलवीणा, महा-वीणा, काण्डवीणा, वाण।" इनमें आघाटी लोह शलाका से वजायी जाती थी।

कर्कटिका दो तन्त्रियो की वीणा है।

अलावु कद्दू से युक्त वीणा है।

वक्रा और कपिशीर्पणी नाम के अनुरूप हैं। अर्थात् वक्र वीणा वक्र है और कपि' शीर्पणी वन्दर के सिर के समान होती है।

'वाण' वीणा में १०० तन्त्रि थी। औदुम्बर (अन्जीर या गूलर) पेड की लकडी से वनायी जाती थी। लाल रग की गाय के चर्म से मढी होती थी। पीछे दस द्वार होते थे और हरएक द्वार के जरिये दस तन्त्रियो को वाँध देते थे। सौ तन्त्रियो को तीन भागो में वाँट देते थे। दर्भ और मूँज से इनका विभाजन करते थे। मध्य में ३४ तन्त्री, और तिरछी ३३ तन्त्रियो के दो समूह रहते थे। इस वाद्य को एक वारीक वक्र पलाश की शलाका से वजाते थे।

सामगायको और उनकी स्त्रियो के द्वारा भी वीणा वजायी जाती थी। नारदीय शिक्षा में वेणु वाद्य स्वरो की तुलना सामगायको के स्वरो से की गयी है।

'यस्सामगाना प्रथम म वेणोर्मध्यमस्वर'

यज्ञ में नर्तन भी विहित है। तैत्तिरीय ब्राह्मण के सप्तम (?) काण्ड में इसका उल्लेख है। नृत्य के उपयुक्त मृदङ्ग या पुष्कर वाद्य और कास्य ताल भी रहे होंगे। इसलिए यह निश्चित होता है कि हमारे भारतवर्ष में विविध वाद्य—गीत और नृत्य के साधनरूप में रहकर—विकसित हुए हैं।

वाद्यो के वारे में लिखे हुए प्रथम ग्रन्थ के कर्ता नारद और स्वाति हैं। यह तथ्य भरतमुनि के द्वारा ही नाट्यशास्त्र में स्पष्टतया वताया गया है। वाद्याध्याय के आरभ मे (अध्याय ३३ नाट्यशास्त्र) भरतमुनि कहते हैं—

'मृदङ्ग पणवानाञ्च दर्दुरस्य तथैव च।
गान्धर्वञ्चैव वाद्यञ्च स्वातिना नारदेन च।
विस्तारगुणसम्पन्नमुक्त लक्षणकर्मत ।
अनुवृत्या तदा स्वातेरातोद्याना समासत ।
पौष्कराणा प्रवक्ष्यामि निर्वृत्ति सम्भव तथा।'
(नाट्यशास्त्र अध्याय ३३ श्लोक २–४)

'गान्धर्वमेतत् कथित मया हि,
पूर्वं यदुक्त त्विह नारदेन।
कुर्याद्य एव मनुज प्रयोग,
सम्मान योग्य कुशलेपु गच्छेन् ।'
(नाट्यशास्त्र, अध्याय ३२, श्लोक ४७८)

इसका तात्पर्य यह कि "स्वाति और नारद ने मृदङ्ग, पणव, दर्दुर आदि अवनद्ध वाद्यो, तन्त्रीवाद्यो और अन्य वाद्यो के भी विस्तारपूर्वक सुस्पष्ट लक्षण और वादन-क्रम वताये है। उनका अनुमरण करके मै भी पुष्कर (तीन मुख युक्त अवनद्ध वाद्य) आदि वाद्यो की उत्पत्ति, वनाने का क्रम और वादनक्रम वताऊँगा।"

'स्वातिनारदसवाद' नामक एक ग्रन्थ अव भी खोज करें तो मिल सकता है। 'सगीत मकरन्द' नामक एक मुद्रित ग्रन्थ नारदोक्त कहा जाता है। पर इसमें वहुत से पश्चाद्वर्त्ती सप्रदाय भी जोड दिये गये हैं। उपलव्व ग्रन्यो में नाट्यशास्त्र ही वाद्यो पर भी प्रामाणिक आदि ग्रन्थ है। उसके ३३ वें अध्याय में पुष्कर, पणव, दर्दुर, मुरज, झल्लरी, पटह आदि के वादनक्रम उनमें वोलनेवाले अक्षर इत्यादि अवनद्ध वाद्यो के विवरण के रूप में विस्तारपूर्वक दिये गये हैं।

वाद्यो में चार भेद हैं। तत, सुपिर, अवनद्ध और घन। तन्त्री वाद्य को ही 'तत-वाद्य' कहते हैं। छिद्रो में फूँक मारने से ध्वनित होनेवाले वाद्यो का नाम 'सुपिरवाद्य' है। चमडे से मढे हुए वाद्यो का नाम 'अवनद्ध' है। कास्यादि धातुओ से निर्मित घन रूप करताल आदि वाद्यो का नाम है 'घन'।

ततवाद्य अनेक तरह की वीणाएँ—अर्थात् एक तन्त्री, नकुल, त्रितन्त्रिका, चित्रा, विपञ्ची, मत्तकोकिला आलापिनी, किन्नरी, पिनाकी, और आधुनिक तन्त्री वाद्य

अर्थात् जन्त्र, चतुस्तन्त्री, विचित्र वीणा, रुद्रवीणा, सितार, सरोद, स्वरवत, वाल-सरस्वती, स्वरमण्डली, सारङ्गी, दिलरुवा, वायलिन, तवूरा या तानपूरा, मोरसिंह आदि हैं।

सुपिर वाद्यो मे वशी आदि विविध प्रकार की बाँसुरियाँ, शहनाई, सुन्दरी, नाग-स्वर, मुखवीणा या छोटा नागस्वर, काहल, श्रीचिह्न (तिरुच्चिन्न), शख, शृङ्ग, क्लारिनट, ट्रम्पेट, साक्सफोन आदि हैं।

अवनद्ध वाद्यो में प्राचीन काल के वाद्य मृदङ्ग या मार्दल या मद्दल, मुरज, पणव, दर्दुर, हुडुक्का, पुष्कर, घट, डिंडिम, ढक्का, आवुज, कुडुक्का, कुड्डुवा, ढवस, घढस, रुञ्जा, डमरुक, मण्डि ढक्का, ढक्कुलि, सेल्लुका, झल्लरी, भाण, त्रिवली, दुन्दुभि, भेरी, निस्साण, तुम्वकी आदि हैं।

इनमें प्राय सब किसी न किसी जगह आज भी प्रयुक्त किये जा रहे हैं। इनके साथ ढोल, ढोलक, तवला, खञ्जरी, ड्रम, कुन्तल, किरिक्कट्टी, जुमिडिका, दासरीका तप्पट्टा, तमुक्कु, पम्वै, तवुल (डिंडिम), शुद्ध, मद्धल, ढोलकी आदि भी हैं।

घन वाद्यो में ब्रह्मताल, कास्यताल, घण्टा, क्षुद्रघण्टा, जयघण्टा, कम्रा, शुक्ति पट्ट आदि हैं।

तन्त्री वाद्य

वीणा वादन में नारद और तुम्वुरु आदिकाल से अति प्रसिद्ध है। भरतमुनि ने भी अपने नाट्यशास्त्र में नारदस्वाति के मत का ही अनुसरण किया है। नारदरचित कहे जानेवाले मुद्रित ग्रन्थ 'सगीत मकरन्द' मे वीणा के उन्नीस भेद वताये गये है। उनके नाम कच्छपी, कुब्जिका, चित्रा, वहन्ती परिवादिनी, जया, घोपावती, ज्येष्ठा, नकुली, महती, वैष्णवी, ब्राह्मी, रौद्री, कूर्मी, रावणी, सारस्वती, किन्नरी, सैरन्ध्री, घोपका हैं। पर इनका विवरण नही दिया गया है।

वीणा वादन के अगो को पुरुपाकृति रूप मे वर्णित किया गया है। तीन ग्राम तीन शिर हैं (नारदजी तीनो ग्रामो का वादन कर सकते थे)। मन्द्र मध्य आदि तीन स्थान तीन मुख हैं। वादी, सवादी, अनुवादी और विवादी चार जिह्वाएँ है। दूसरे तन्त्री वाद्यो, सुपिरवाद्यो और मृदङ्गादि अवनद्ध वाद्यो, कास्य तालादि घन वाद्यो का वादन उपाङ्ग है। सात स्वर आँखें हैं। रागालप्ति और रूपकालप्ति दो हाथ हैं। पाडव, औडव, सपूर्ण राग, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र रूप है। विविध राग सदर्भ त्रिमूर्त्ति की सन्तान है। १९ गामक पांव है। वीणावादन और श्रवण का परिणाम पापक्षय, पुत्रपौत्र, धन, धान्य आदि की प्राप्ति, शत्रु की निवृत्ति, राज्य वृद्धि और मोक्ष भी हैं।

नारदजी के मत का अनुमरण करके ही याज्ञवल्क्य भी सगीत की प्रशसा करते समय कहते हैं कि 'वीणावादन का ज्ञान मोक्ष को भी प्राप्त कराता है।'

नाट्यशास्त्र में सप्ततन्त्री चित्रा, नवतन्त्री और विपञ्ची ये दो वीणाएँ वतायी गयी हैं। उँगलियो से चित्रा का वादन विहित है। धातु से वनाये एक 'कोण' नामक उपकरण को उँगली में धारण कर विपञ्ची का वादन करना विहित है।

एक तन्त्री का वर्णन 'सगीतरत्नाकर' में अच्छी तरह किया गया है। वीणा के दण्ड की लवाई तीन हस्त अर्थात् ७२ अगुल (५४ इच) होती थी। दण्ड की परिधि या घेरे का नाप एक वितस्ति या वित्ता (९ इच) होता था। दण्ड का छिद्र पूरी लवाई में १½ अगुल (१⅛ इच) व्यास का रहता था। एक सिरे से १७ अगुल की दूरी पर अलावु या कद्दू को वाँधना होता था। दण्ड आवनूस की लकडी से वनाया जाता था। कद्दू का व्यास ६० अगुल (४५ इच) होता था। दूसरे सिरे में ककुभ रहता था। ककुभ के ऊपर धातु से वनायी हुई कूर्म पृष्ठ की भाँति पत्रिका होती थी। कद्दू के ऊपर नागपाश सहित रस्सी बाँधी जाती थी। ताँत अर्थात् स्नायु की तन्त्री को नागपाश में वाँधकर ककुभ के ऊपर की पत्रिका के ऊपर लाकर शकु या खूँटो से वाँधा जाता था। तन्त्री और पत्रिका के वीच में नाद सिद्धि के लिए वेणु निर्मित 'जीवा' रखते थे। इम वीणा में सारिकाए नही हैं। वायें हाथ के अगूठा, कनिष्ठिका और मध्यमा पर वेणुनिर्मित कम्रिका को धारण कर तर्जनी से आघात करके सारण किया जाता था। तन्त्री को ऊर्ध्वमुख करके तथा कद्दू को अधोमुख करके, ककुभ को दाहिने पाँव पर रखकर, कद्दू को कधे के ऊपर रहने की स्थिति में रखकर, जीवा से एक वित्ता की दूरी पर उँगली से वादन किया जाता था।

इम वीणा को 'घोष' या 'ब्रह्मवीणा' भी कहते हैं। यह सव वीणाओं की जननी है। इसके दर्शन एव स्पर्श भी भुक्तिमुक्तिदायक हैं। यह सव पापों से विमुक्त कर सकती है, क्योंकि इसमें शिवजी दण्ड रूप, पार्वतीजी तन्त्री रूप, ककुभ विष्णु रूप, लक्ष्मीजी पत्रिकारूप, ब्रह्मा तुँव (कद्दू) रूप, सरस्वती कद्दू की नाभिरूप, दोरक वासुकि रूप है, चन्द्र जीवा रूप और सूर्य (सारि से युक्त वीणा में) सारिका रूप है। इसलिए वीणा सर्वदेवमयी होने के कारण सारे मगलो का स्थान है।

एकतन्त्री वीणा या घोषक का वादन क्रम

कम्रिका (वायें हाथ में धारण करने का साधन) की क्रिया के चार भेद हैं—

१ उत्क्षिप्ता—इसमें तन्त्री का स्पर्श करके हाथ ऊपर उठाकर तन्त्री पर तत्काल पात करना।

२ सन्निविष्टा—तन्त्री का स्पर्श के साथ ही सारणा करना।

३ उभयी—उत्क्षिप्ता और सन्निविष्टा को जोडकर प्रयोग करना।

४ कम्पिता—स्वरस्थानो में कम्पन देना।

वादन में हाथो का व्यापार

दाहिने हाथ के व्यापार ९ हैं—

१ घात—मध्यम उँगली को भी जोडकर तर्जनी से आघात करना।

२ पात—मध्यम उँगली के विना तर्जनी मात्र से पातन करना।

३ सलेख—तन्त्री को उँगली के अन्दर रखकर वजाना।

४ उल्लेख—मध्यम उँगली के अन्दर रखकर तन्त्री को वजाना।

५ अवलेख—मध्यम उँगली को तन्त्री के वाहर रखकर वजाना। मतान्तर के अनुसार उल्लेख और अवलेख तर्जनी मध्यमा और अनामिका दोनो से या तीनो से सयुक्त रूप में वज सकते हैं।

६ भ्रमर—चार उँगलियो से क्रमश वेगपूर्वक वजाना।

७ सघित—मध्यमा और अगूठे को वाहर रखकर वजाना।

८ छिन्न—तर्जनी के पार्श्व भाग से तन्त्री का स्पर्श करते समय अनामिका के द्वारा वाहर से वजाने का नाम है 'छिन्न'।

९ नखकर्तरी—चार नखो से वेगपूर्वक क्रमश वजाना।

वायें हाथ के व्यापार २ हैं—

१ स्फुरित—कम्पन देने के समान तन्त्री के पिछले भाग का स्पर्श करके सारण करना।

२ खसित—तन्त्री से हाथ न उठाकर घर्षण कर सारण करना।

उभय हाथो का व्यापार —

१ घोप—दाहिने हाथ के अगूठे के पार्श्व भाग से और दूसरी उँगली से कैंची की तरह एक को सामने से, दूसरी को अपनी ओर से, एक ही समय वजाना। इसका नाम है घोप। अथवा वायें हाथ की छोटी उँगली दाहिने हाथ की छोटी उँगली और वाये हाथ की कम्रिका से कैंची की तरह परस्पर विपरीत दिशाओ में वादन।

२ रेफ—दाहिने हाथ की अनामिका को अन्दर रखकर और वायें हाथ की मध्यम उँगली को वाहर रखकर एक ही समय वजाना।

३ विन्दु—दाहिने हाथ की अनामिका से वजाकर उस ध्वनि को तर्जनी उँगली से धारण करना अर्थात् स्पर्शास्पर्श से शब्द को एकरूप वढाना।

४ कर्तरी—दोनो हाथो की चारो उँगलियो को कैंची की तरह रखकर वाहर की ओर क्रमश वेग से वजाना।

५ अर्धकर्तरी—दाहिने हाथ की उँगलियो से कैंची की तरह वजाने के वाद वायें हाथ की कम्रिका से तन्त्री पर आघात करना।

६ निष्कोटित—वायें हाथ की तर्जनी उँगली से सारण न करके उसी उँगली से तन्त्री पर आघात करना।

७ स्खलित—वायें हाथ से उत्क्षिप्त सारण करके वेग से दाहिने हाथ से कर्तरी के तुल्य वजाना।

८ शुकवक्त्र—अगूठा और तर्जनी दोनो उँगलियो से तन्त्री को पकड कर छेडना है।

९ मूर्च्छना—तर्जनी को पहले उठाकर दाहिना हाथ घुमाने का नाम 'उद्वेष्टन' और छोटी उँगली को पहले नीचे लाकर घुमाने का नाम 'परिवर्तन' है। इन दो प्रकारो से दाहिने हाथ को घुमाकर तन्त्री को वजाते समय वायें हाथ से स्वरस्थानो में वेगपूर्वक कम्रिका से सारण करना।

१० तलहस्त—दाहिनी हथेली से वजाते समय वायें हाथ की तर्जनी के द्वारा तन्त्री का स्पर्श करना या धीरे वजाना।

११ अर्धचन्द्र—दाहिने हाथ के अगूठे और तर्जनी को अर्धचन्द्र रूप में रखकर तन्त्री का स्पर्श करना।

१२ प्रसारक—दाहिने हाथ के अगूठे को हथेली पर रखकर वाकी चारो उँगलियो को सयुक्त करके तर्जनी और छोटी उँगली से वजाना।

१३ कुहर—सव उँगलियो को सिकोडकर छोटी उँगली से वजाना।

दशविध वाद्य (क्रियाओ के जोडने का क्रम)—

१ छन्द—प्रसित (वायें हाथ की क्रिया २) और स्फुरित (वा० १) करके तुरन्त तारस्थान के स्पर्श करने का नाम 'छन्द' है।

२ धारा—स्खलित (उ० ७), मूर्च्छना (उ० ९), कर्तरी (उ० ४) और रेफ (उ० २), उल्लेख (दा० ४) और रेफ इनको जोडने का नाम है 'धारा'।

३ कंकुटी—शुकवक्त्र (उ० ८), स्फुरित (वा० १), घोप (उ० १), अर्धकर्तरी (उ० ५), इनको क्रमपूर्वक जोडने का नाम है 'कंकुटी'।

४ ककाल—स्फुरित (वा० १), मूर्च्छना (उ० ९) इनके साथ तीन वार कर्तरी (उ० ४) के भी प्रयोग करने का नाम है 'ककाल'।

५ वस्तु—स्पष्टतया तारस्वरो के साथ कर्तरी (उ० ४), खसित (वा० २) और कुहर (उ० १३) का प्रयोग करना।

६ द्रुत—कर्तरी (उ० ४), खसित (वा० २), कुहर (उ० १३), रेफ (उ० २), भ्रमर (दा० ६), घोप (उ० १) इनको क्रम से जोडना।

७ गजलील—मूर्च्छना (उ० ९), स्फुरित (वा० १), कर्तरी (उ० ४), खसित (वा० २) इनको जोडना।

८ दण्डक—स्खलित (उ० ७), मूर्च्छना (उ० ९), कर्तरी (उ० ४), रेफ (उ० २), खसित (वा० २) इन्हें जोडना।

९ उपरिवाद्य—ऊपर और नीचे सारण करके रेफ (उ० २), कर्तरी (उ० ४), निप्कोटित (उ० ६) और तलहस्त (उ० १०) का प्रयोग करना।

१० पक्षिरुत—इसमें सव हस्त-व्यापारो का मिलन है।

सकल-निष्कल वादन प्रकार

तन्त्री-सलग्न जीवा के कारण जव ध्वनि स्थूल रूप में उत्पन्न होती है, तव वह मकल 'वाद्य' कहलाता है।

नाद की स्थूलता के लिए तन्त्री-पत्रिका के वीच जीवा को स्पृश्यास्पृश्य रूप में रखना चाहिए। इसे 'कला' कहते हैं। कला स्थापित किये विना वादन किया जाय, तो नाद सूक्ष्म रहता है। इस तरह के वादन का नाम 'निष्कल' है।

एक-तन्त्री वीणा के पर्य्यायवाची नाम ब्रह्मवीणा या घोप है। एक-तन्त्री वीणा ही विविध वीणाओ की जननी है। एक-तन्त्री वीणा के अनुसार ही दूसरी वीणाओ का भी वादन विहित है।

दो तन्त्रीवाली वीणा का नाम 'नकुल' और तीन तन्त्रीवाली का नाम त्रितन्त्री या जन्त्र है।

मात तन्त्रीवाली वीणा का नाम 'चित्रा' और नौ तन्त्रीवाली वीणा का नाम 'विपञ्ची' है। चित्रा और विपञ्ची में कोण और नख दोनो से वादन विहित है। इक्कीस तन्त्रीवाली वीणा का नाम 'मत्तकोकिला' है। इमे 'सुरमण्डल' भी कहते हैं। यह वीणा मव वीणाओ मे मुख्य कही गयी है, क्योंकि इसमे हर एक स्थान या मप्तक के मातो म्वरो के लिए मात-सात तन्त्रियाँ है।[1]

१ मतग की वीणा चित्रा है। स्वाति की वीणा विपञ्ची है। नारदजी की वीणा महती (२१ तन्त्रीवाली) है। इन इक्कीस तन्त्रियो में तीन ग्राम स्थापित किये जाते थे। नारदजी के सिवा और कोई गान्धार ग्राम का वादन नहीं कर सकता। विपञ्ची

वृन्द में वीणा का वादन-प्रकार

विविध वीणाओ का वादन करते समय मुख्य स्थान 'मत्तकोकिला' का ही है। अन्य वीणाएँ उसी की अगरूप हैं। मुख्य वीणा के वादन के अनुसार दूसरी वीणाओं में कुछ-कुछ गति भेद करके बजाने की परम्परा है। ऐसा भेदन 'करण' कहलाता है।

करण के छ भेद हैं। उनके नाम—(१)रूप (२) कृतप्रतिकृत (३) प्रतिभेद (४) रूपशेष (५) ओघ और (६) प्रतिशुष्क हैं।

१ रूप नामक करण में एक ही समय में जब मुख्य वीणा में गुरु-लघु आदि के प्रयोग किये जाते हैं तब अगवीणा में गुरु स्थान पर दो लघु, लघुस्थान में दो द्रुत का—इस प्रकार भञ्जन युक्त प्रयोग विहित है।

२ इसी प्रकार वादन करने में एक ही समय के बदले मुख्य वीणा के बाद अगवीणा के वादन करने का नाम 'कृतप्रतिकृत' है।

३ रूप के विरुद्ध प्रकार में वादन करना 'प्रतिभेद' है। अर्थात् मुख्य वीणा में दो लघु का प्रयोग करते समय अगवीणा में एक गुरु का प्रयोग करना इत्यादि।

४ मुख्य वीणा के वादन के समय विदारी विच्छेद के अवसर पर, अर्थात् 'चीज' के एक भाग के अत और दूसरे भाग के आरभ के मध्य को अगवीणा के वादन से पूर्ण करना 'रूपशेष' है।

की नौ तन्त्रियो में सात स्वर तथा अन्तर एवं काकली स्वर स्थापित थे। यज्ञो में उपयोग करने के लिए ४ तन्त्री, १२ तन्त्री और शत-तन्त्री वीणाएँ थीं। नान्यभूपाल ने, जो 'सगीत रत्नाकर' में आचार्यो में उद्धृत किये गये हैं, अपने 'सरस्वतीहृदयालंकार हार' नामक भरत भाष्य में वीणाओ को शैव आगमो के प्रमाण के अनुसार तीन भेदो में विभाजित किया है। उनके नाम वक्रा, कूर्मा और अलाबु हैं। विपञ्ची, वल्लकी, मत्तकोकिला, ऐन्द्री, सरस्वती, गान्धर्वी, ब्रह्मिका ये सात वक्रवीणा हैं। उनकी तन्त्रियाँ ९ हैं। संवादिनी, वितन्त्री, किन्नरी, परिवादिनी, ग्रासवता—ये पांच कूर्मवीणा हैं। वितान, नकुल, त्रितन्त्रिका, विशोका, ईश्वरी, परिवादिनी—ये सात अलाबुवीणा हैं।

'सगीत नारायण' में रत्नाकर में कही हुई वीणाओ के अलावा वल्लकी, ज्येष्ठा, जया, हस्तिका, कुब्जिका, कूर्मा, सारगी, मिनरी, शततन्त्री, ऐन्द्री, कर्नरी, औदुम्बरी, रावण-हस्त, रुद्रवीणा, स्वरमण्डल, कपिलासी, मधुस्यन्दी और घोणा के नाम भी दिये गये हैं।

५ मुख्य वीणा में विलंबित लय में वादन करते समय अंगवीणा में अतिद्रुत लय मे वादन करने का नाम 'ओघ' है। इस तरह के वादन के लिए राग एवं स्वरो का पूर्ण ज्ञान और अभ्यास तथा हस्तलाघव आवश्यक है।

६ मुख्य वीणा के स्वरो के संवादी या निकट अनुवादियो को अंगवीणा में प्रयुक्त करके वादन को सुशोभित करना 'प्रतिशुष्क' है।[1]

विविध वादनो के धातु

विविध वादनो की समीचीन योजना के द्वारा रक्ति और दोषरहित पुष्टि उत्पन्न कराने की विधि 'धातु' है। धातु के चार भेद है—विस्तार, करण, आविद्ध और व्यञ्जन।

विस्तार धातु के चार प्रकार हैं—विस्तारज, संघातज, समवायज और अनुबन्ध।

विस्तारज प्रकार में एक ही बार तन्त्री को छेडना है। संघातज प्रकार में दो बार छेडना है। समवायज प्रकार में तीन बार छेडना है। अनुबन्ध प्रकार मे इन तीनो प्रकारो को यथोचित जोडना है।

संघातज प्रकार के चार भेद हैं। समवायज प्रकार के आठ भेद हैं। विस्तारज और अनुबन्ध के प्रकार के एक-एक भेद हैं। कुल मिलकर विस्तार धातु के १४ प्रकार हैं।

विस्तार धातु के छेडने में दो प्रकार हैं—उत्तर और अधर। वीणा के उत्तर भाग में छेडने से मन्द्रस्थानीय स्वर की उत्पत्ति होती है। अधर भाग में छेडने से तार-स्थानीय स्वर की उत्पत्ति होती है।

संघातज प्रकार मे उत्तर में दो बार छेडना पहला भेद है। अधर मे दो बार छेडना दूसरा भेद है। अधर के बाद उत्तर में छेडना तीसरा भेद है। उत्तर के बाद अधर में छेडना चौथा भेद है।

समवायज प्रकार के आठ भेद हैं—(१) तीन उत्तर (२) तीन अधर (३) दो उत्तर और एक अधर (४) दो अधर और एक उत्तर (५) एक उत्तर के बाद दो अधर (६) एक अधर के बाद दो उत्तर (७) अधर के बाद उत्तर और उसके बाद फिर अधर (८) उत्तर के बाद अधर और उसके बाद उत्तर।

१. ये छ करण तंजौर के राजा सरफोजी (१८०० ई०) के द्वारा परिष्कृत तंजौर बैण्ड में आज भी सुने जा सकते हैं। यह बैण्ड पाश्चात्य वाद्यों के द्वारा भारतीय संगीत का वादन करनेवाली वाद्यगोष्ठी है।

करण धातु के पांच प्रकार है। इनके नाम—रिभित, उच्चय, नीरटित, ह्लाद और अनुवन्ध हैं।

आविद्ध धातु के पाँच भेद हैं—क्षेप, प्लुत, अतिपात, अतिकीर्ण और अनुवन्ध।

करण और आविद्ध प्रकारो में छेडने के लघु-गुरुत्व कालप्रमाण भेदो से धातु वनाये गये है। करण में गुरु का प्रयोग अधिक नही है। आविद्ध में प्राय गुरु या गुरु की विहीनता है।

करण धातु—'रिभित' में दो लघु के वाद एक गुरु है। 'उच्चय' में चार लघु के वाद एक गुरु है। 'नीरटित' में छ लघु के वाद एक गुरु है। 'ह्लाद' में आठ लघु के वाद एक गुरु। 'अनुवन्ध' में इन प्रयोगो का मिश्रण है।

आविद्ध धातु—आविद्ध धातु के पांच भेद हैं—(१) क्षेप—एक लघु के वाद दो गुरु। (२) प्लुत—लघु, गुरु और लघु (३) अतिपात—लघु, गुरु लघु गुरु या लघु लघु गुरु गुरु (४) अतिकीर्ण—लघु गुरु, लघु गुरु, लघु गुरु, लघुगुरु, या लघुलघु, लघुलघु गुरुगुरु, गुरुगुरु (५) अनुवन्ध—इन चारो प्रकारो का मिश्रण। मतान्तर के अनुसार आविद्ध के पहले चार भेदो में क्रमश दो, तीन, चार और नौ लघु होते है।

व्यञ्जन धातु—व्यञ्जन धातु में उँगलियो के विविध प्रयोग से विचित्रता का संपादन करते हैं। इसमें दस भेद है—पुष्प, कल, तल, विन्दु, रेफ, अनुस्वनित, निष्कोटित, उन्मृष्ट, अवमृष्ट और अनुवन्ध।

अगूठे और छोटी उँगली से समकाल में मारना 'पुष्प' है।

दो तन्त्रियो पर एक ही स्वर को भिन्न-भिन्न स्थानो पर दोनो अगूठो से वजाने का नाम है 'कल'।

वायें हाथ के अगूठे से तन्त्री को छेडने का नाम है 'तल'।

एक ही स्वर पर क्रमश हरएक उँगली से छेडना 'रेफ' है।

'तल' का प्रयोग करके उसके वाद अवरोह में स्वर प्रयोग करना 'अनुस्वनित' है।

वायें हाथ के अगूठे से ऊपर और नीचे छेडने का नाम 'निष्कोटित' है।

तर्जनी के द्वारा अति मधुरता के साथ धीरे से छेडने का नाम है 'उन्मृष्ट'।

तीन तन्त्रियो में तीन जगहो पर दाहिने हाथ की छोटी उँगली और दोनो हाथो के अगूठो से एक ही स्वर का उत्पादन करने का नाम है 'अवमृष्ट'। इन सव का मिश्रण है 'अनुवन्ध'।

इन धातुओं के समस्त भेदो का योग २४ है। ये धातु सव तन्त्रीवाद्यो में प्रयुक्त करने योग्य है। पर एक नियम यह है कि जिन धातु से जिन रागो की रक्ति वढती है उसी धातु को उन रागो में प्रयुक्त करना चाहिए।

वृत्ति

गीत, वाद्य और नृत्त में भिन्न-भिन्न देश की जनता के रुचि-भेद के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार का प्रयोग हुआ करता है। इन प्रकारो का नाम 'वृत्ति' है। ये वृत्तियां तीन हैं। अर्थात् चित्रवृत्ति, वार्तिकवृत्ति और दक्षिणवृत्ति।

चित्र वृत्ति में वाद्य का मुख्यत्व है। वाद्यो का अनुसरण करने में ही गीत का महत्त्व है। वार्त्तिक वृत्ति में गीत का प्राधान्य है। गीत का अनुसरण ही वाद्यो की श्रेष्ठता है। एक दूसरा मत यह है कि द्रुत, मध्य और विलम्ब लय, सम, स्रोतोगत, गोपुच्छ यति, मागधी, सभापिता और पृथुला गीति, ओघ, अनुगत और तत्त्व वाद्य, (इन तीनो का विवरण ऊपर देखिए) चित्र, वार्तिक और दक्षिण ताल का मार्ग, अनागत, सम और अतीत ग्रह, इन्हें इन तीनो वृत्तियो में क्रमश मुख्यत्व देते हैं।

वाद्यवादन का प्रकार

वाद्यो के वादन में तीन प्रकार 'तत्त्व', 'ओघ' और 'अनुगत' हैं।

१ गीत के लय, ताल, विराम (अन्त करने की जगह), उस राग की जाति, अश, ग्रह, न्यासादि के प्रकाशन करने के मार्ग का अवलबन करके गीत में लीन होकर वाद्यों के वादन करने का प्रकार 'तत्त्व' है।

२ गीत का थोडा-थोडा अनुसरण करके वादन करने का नाम 'अनुगत' है।

३ गीत के अन्त में तो वाद्य मिल जाता है, पर अवशिष्ट प्रयोगो को दूसरे प्रकार में विभाजित करके वादन करने का नाम 'ओघ' है।

निर्गीत प्रबन्ध

वाद्यो के गीतरहित वादन का नाम 'निर्गीत' है। इसका पर्य्यायवाची शब्द 'शुष्कवाद्य' है। रक्ति और मनोहरता के साथ वाद्यो का वादन करने के लिए शास्त्र-रीति से धातुओ एव तालो और वादी-सवादी स्वरो का भी सयोजन करना चाहिए। इस तरह के सयोजन प्रबन्धरूप में हैं। इसके दस भेद हैं—आश्रावणा, आरम्भ-विधि, वक्त्रपाणि, सघोटना, परिघट्टना, मार्गासारित, लीलाकृत और त्रिविध आसारित। इनके लक्षण 'सगीत रत्नाकर' के वाद्याध्याय में (श्लोक १८२ से २४० तक) दिये गये है।

हरएक निर्गीत वाद्य-प्रबन्ध के विवरण में धातुओ का विवरण, गुरु, लघु आदि के प्रयोग का विवरण, ताल कलाओ का विवरण, तालो तथा सशब्दादि क्रियाओ के

विवरण दिये गये हैं। इस सप्रदाय का अत्यन्त लोप हो जाने के कारण इनकी सम्यक् जानकारी रखना और इनके अनुसार वादन करना तब तक साध्य नही है जब तक कि इसके अनुसार लक्ष्य-साहित्य की खोज न हो जाय।

आलापिनी

आलापिनी का दण्ड बांस से बनाया जाता था और नौ मुष्टि लबा होता था (लगभग ४५ अगुल—३४ इच)। छिद्र का व्यास दो अगुल था, तन्त्री बकरी की आत से बनी होती थी। मतान्तर के अनुसार दण्ड दस मुष्टि लबा है और रक्त चन्दन, खैर या आबनूस की लकड़ी से भी बनाया जाता है। तन्त्री रेशम या कपास की है।

इस वीणा के ककुभ में पत्रिका नही है। परतु ककुभ पिण्डयुत है। तुम्ब या कद्दू का परिणाह एक वितस्ति है। उसका मुख चार अगुल का है। उसकी नाभि हाथीदात से बनायी जाती है। नीचे से पौने दो मुष्टि की दूरी पर तुम्ब या कद्दू का स्थान है। इसका विशिष्ट लक्षण यह है कि नारियल का कर्पर, दोरक एव सारिका इसमें नही है।

आलापिनी का वादन-क्रम

तुम्ब या कद्दू को वक्ष पर रखकर दण्ड के निचले भाग को बायें हाथ के अगूठे और मध्यमा उँगली से धारण करके बायें हाथ की चार उँगलियो से चार स्वर और दाहिने हाथ की तीन उँगलियो से तीन स्वर का वादन करना है। बिन्दु (उभय हस्त व्यापार) की तरह वादन करना चाहिए। इसमें तालबद्ध गीतो का वादन उल्लेख्य है।

किन्नरी

किन्नरी के दो भेद हैं—लघ्वी और बृहती। इसके दण्ड की लबाई तीन वित्ता और पांच अगुल है। दण्ड बांस का रहना चाहिए। उसके घेरे का नाप पांच अगुल है। उनके ककुभ में धातु की पत्रिका है। उसमें कास्य, गीध (के वक्ष) की हड्डी या लोहे की चौदह नलिकाएँ (सारिकाएँ) छोटी उँगली के परिमाण की स्थापित करनी चाहिए। स्थापना के लिए वस्त्र और मसी (स्याही) का मिश्रण कर और कूटकर लगाना है। नीचे से पहली सारिका दूसरे स्वर-सप्तक के निषाद का स्थान है। उससे एक अगुल दूर पर दूसरी सारिका रखना है और क्रमश दूरी को बढाते हुए सारिकाओ का स्थापन करना है। आठवी सारिका की दूरी दो अगुल हो जाती है।

वृत्ति

गीत, वाद्य और नृत्त में भिन्न-भिन्न देश की जनता के रुचि-भेद के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार का प्रयोग हुआ करता है। इन प्रकारो का नाम 'वृत्ति' है। ये वृत्तियाँ तीन हैं। अर्थात् चित्रवृत्ति, वार्त्तिकवृत्ति और दक्षिणवृत्ति।

चित्र वृत्ति में वाद्य का मुख्यत्व है। वाद्यो का अनुसरण करने में ही गीत का महत्त्व है। वार्त्तिक वृत्ति में गीत का प्राधान्य है। गीत का अनुसरण ही वाद्यो की श्रेष्ठता है। एक दूसरा मत यह है कि द्रुत, मध्य और विलम्ब लय, सम, स्रोतोगत, गोपुच्छ यति, मागधी, सभाषिता और पृथुला गीति, ओघ, अनुगत और तत्त्व वाद्य, (इन तीनो का विवरण ऊपर देखिए) चित्र, वार्त्तिक और दक्षिण ताल का मार्ग, अनागत, सम और अतीत ग्रह, इन्हें इन तीनो वृत्तियो में क्रमश मुख्यत्व देते हैं।

वाद्यवादन का प्रकार

वाद्यो के वादन मे तीन प्रकार 'तत्त्व', 'ओघ' और 'अनुगत' हैं।

१ गीत के लय, ताल, विराम (अन्त करने की जगह), उस राग की जाति, अश, ग्रह, न्यासादि के प्रकाशन करने के मार्ग का अवलबन करके गीत में लीन होकर वाद्यों के वादन करने का प्रकार 'तत्त्व' है।

२ गीत का थोडा-थोडा अनुसरण करके वादन करने का नाम 'अनुगत' है।

३ गीत के अन्त में तो वाद्य मिल जाता है, पर अवशिष्ट प्रयोगो को दूसरे प्रकार मे विभाजित करके वादन करने का नाम 'ओघ' है।

निर्गीत प्रबन्ध

वाद्यो के गीतरहित वादन का नाम 'निर्गीत' है। इसका पर्य्यायवाची शब्द 'शुष्कवाद्य' है। रक्ति और मनोहरता के साथ वाद्यो का वादन करने के लिए शास्त्र-रीति से धातुओ एव तालो और वादी-सवादी स्वरो का भी सयोजन करना चाहिए। इन तरह के सयोजन प्रबन्धरूप में हैं। इसके दस भेद हैं—आश्रावणा, आरम्भ-विधि, वक्त्रपाणि, सघोटना, परिघट्टना, मार्गासारित, लीलाकृत और त्रिविध आसारित। इनके लक्षण 'सगीत रत्नाकर' के वाद्याध्याय में (श्लोक १८२ से २४० तक) दिये गये हैं।

हरएक निर्गीत वाद्य-प्रबन्ध के विवरण में धातुओ का विवरण, गुरु, लघु आदि के प्रयोग का विवरण, ताल कलाओ का विवरण, तालो तथा सशब्दादि क्रियाओ के

विवरण दिये गये हैं। इस सम्प्रदाय का अत्यन्त लोप हो जाने के कारण इनकी सम्यक् जानकारी रखना और इनके अनुसार वादन करना तब तक साध्य नही है जब तक कि इसके अनुसार लक्ष्य-साहित्य की खोज न हो जाय।

आलापिनी

आलापिनी का दण्ड बांस से बनाया जाता था और नौ मुष्टि लबा होता था (लगभग ४५ अगुल—३४ इच)। छिद्र का व्यास दो अगुल था, तन्त्री बकरी की आत से बनी होती थी। मतान्तर के अनुसार दण्ड दस मुष्टि लबा है और रक्त चन्दन, खैर या आबनूस की लकडी से भी बनाया जाता है। तन्त्री रेशम या कपास की है।

इस वीणा के ककुभ में पत्रिका नही है। परतु ककुभ पिण्डयुत है। तुम्ब या कद्दू का परिणाह एक वितस्ति है। उसका मुख चार अगुल का है। उसकी नाभि हाथीदात से बनायी जाती है। नीचे से पौने दो मुष्टि की दूरी पर तुम्ब या कद्दू का स्थान है। इसका विशिष्ट लक्षण यह है कि नारियल का कर्पर, दोरक एव सारिका इसमें नही हैं।

आलापिनी का वादन-क्रम

तुम्ब या कद्दू को वक्ष पर रखकर दण्ड के निचले भाग को बायें हाथ के अगूठे और मध्यमा उँगली से धारण करके बायें हाथ की चार उँगलियो से चार स्वर और दाहिने हाथ की तीन उँगलियो से तीन स्वर का वादन करना है। विन्दु (उभय हस्त व्यापार) की तरह वादन करना चाहिए। इसमें तालबद्ध गीतो का वादन उल्लेख्य है।

किन्नरी

किन्नरी के दो भेद हैं—लघ्वी और बृहती। इसके दण्ड की लबाई तीन वित्ता और पांच अगुल है। दण्ड बांस का रहना चाहिए। उसके घेरे का नाप पांच अगुल है। उनके ककुभ में धातु की पत्रिका है। उसमें कास्य, गीध (कि वक्ष) की हड्डी या लोहे की चौदह नलिकाएँ (सारिकाएँ) छोटी उँगली के परिमाण की स्थापित करनी चाहिए। स्थापना के लिए वस्त्र और मसी (स्याही) का मिश्रण कर और कूटकर लगाना है। नीचे से पहली सारिका दूसरे स्वर-सप्तक के निषाद का स्थान है। उससे एक अगुल दूर पर दूसरी सारिका रखना है और क्रमश दूरी को बढाते हुए सारिकाओ का स्थापन करना है। आठवी सारिका की दूरी दो अगुल हो जाती है।

उसके बाद की ६ सारिकाओं की दूरी उनसे ४ अंगुल तक रहनी चाहिए। ककुभ के नीचे एक कद्दू का स्थापन करना चाहिए। तीसरी और चौथी सारिकाओं के बीच में दूसरे कद्दू को रखना चाहिए। यह कद्दू पहले कद्दू से जरा बड़ा रहना चाहिए। नीचे दण्ड के सिरे से दो अंगुल की दूरी पर छेद करके, उसमें भ्रमण करने योग्य खूंटी रखनी चाहिए। उसके आगे एक अंगुल ऊँची एक स्थिर खूंटी रखनी है। उसका ऊपरी भाग तन्त्री को धारण करने योग्य बाण-पुंख के आकार का होना चाहिए। तन्त्री लोहे की हो जो हाथी के बाल के समान मोटी हो। तन्त्री को ककुभ से बांधकर सारिकाओं के ऊपर लाते हुए स्थिर खूंटी के ऊपर रखकर घुमाई जा सकनेवाली खूंटी से बांध देना है।

दाहिने हाथ की उँगलियों से तन्त्री को छेड़ना और बायें हाथ की उँगलियों से स्वरस्थान में दबाना चाहिए।

बृहती किन्नरी—यह किन्नरी एक वित्ता ज्यादा लंबाई की है। तन्त्री इसमें स्नायुनिर्मित है। कद्दू तीन हैं। तीसरे कद्दू को आलापिनी के समान रखना है।

किन्नरी के देशी भेद तीन हैं—बृहती, मध्यमा और लघ्वी। इनके परिमाण के विषय में अनेक मत हैं।

पिनाकी

पिनाकी आधुनिक वायलिन की जननी है। उसका रूप धनुषाकार है। इस आकार में उसे स्थिर रखने के लिए एक रस्सी से दोनों सिरे बांध रखे गये हैं। हरएक सिरे में एक-एक शिखा है। उसका निचला सिरा एक कद्दू पर स्थापित किया जाता है। शिखाओं पर स्नायु की तन्त्री बांधी जाती है। तन्त्री की दोनों शिखाओं के मध्य में तन्त्री से नीचे पौने दो अंगुल विस्तार का एक साधन स्वरस्थानों पर तन्त्री को दबाने के लिए रखा जाता है। इसका वादन धनुषाकार कोण से होता है, जो घोड़े की पूंछ के बालों से बँधा हुआ है। इस पर राल (रेजिन) रगड़कर वादन किया जाता है। कद्दू को पांव से पकड़े हुए ऊपर की शिखा को कन्धे पर रखकर बायें हाथ से तन्त्री को दबाकर वादन करना है।

वैणिकों के लिए आवश्यक गुण

अंगों का सौष्ठव, स्थिर बैठने की शक्ति, श्रम को जीतने की शक्ति रखनेवाले हृदय, मद रहितता, इन्द्रियों को जीतना, प्रसन्नता, गीत-वाद्य में होशियारी, अवधान से युक्त मन आदि वैणिकों के लिए आवश्यक गुण हैं।

प्रचलित तन्त्री वाद्य

रुद्रवीणा—यह वीणा अब उत्तर भारत में प्रचलित है। सोमनाथ (१६०० ई०—रागविबोध कर्ता) के ग्रन्थ में भी इसका विवरण है। अहोवल (सगीतपारिजात कर्ता—१७ वी शताब्दी) और नारायण (सगीतनारायण कर्ता—१६ वी शताब्दी) इन दोनों ने भी रुद्रवीणा का विवरण दिया है। इसका दण्ड ११ मुष्टि का है। रन्ध्र अगूठे के व्यास का है। दोनो सिरो में कास्य की टोपी लगी हुई है। दण्ड का घेरा साढ़े पाँच अगुल है। उसके ककुभ के तीन सिरे हैं, वे उच्च, उच्चतर तथा उच्चतम हैं। ऊर्ध्व सिरे में चार मूल तन्त्रियो का स्थापन करना है। दाहिने सिरे मे 'सुर' देने-वाली दो या तीन तन्त्रियो का स्थापन करना है। ककुभ से सात अगुल दूर एक कद्दू का स्थापन करना है। २४ अगुल की दूरी पर दूसरे कद्दू का स्थापन करना है। दोनो कद्दुओ के मुख के घेरे १८ अगुल के हैं। उसके ऊपर कुम्भ का स्थापन करना है। पिछले कद्दू की ऊँचाई कुछ अधिक चाहिए। इस वीणा में सारिकाएँ १८ हैं। दस बडी हैं और आठ छोटी। छोटी सारिकाएँ तारस्थान के लिए हैं। चारों मूलतन्त्रियाँ क्रमश षड्ज, पञ्चम, षड्ज-पञ्चम का वादन करती हैं।

तजौर वीणा या दाक्षिणात्य वीणा—इसमे एक ही कद्दू है। पर दाहिने सिरे में लकडी का घट दण्ड के साथ जोड दिया जाता है। एक ही लकडी में भी दण्ड और घट खुदवाये जाते हैं। तब उसे 'एकाण्ड वीणा' कहते हैं। कद्दू का स्थान बायी ओर है। सारिकाएँ २४ हैं। हरएक स्थान की बारह सारिकाएँ हैं। मूलतन्त्रियाँ चार हैं और चिकारियाँ तीन हैं। चिकारी दण्ड के पार्श्व में रहती है। मूल तन्त्रियाँ पर मुक्तावस्था में मध्य षड्ज, मन्द्र पञ्चम, मन्द्र षड्ज, अति मन्द्र पञ्चम बोलते हैं। चिकारियो पर तारस्थानीय षड्ज, पञ्चम और अतितारस्थानीय षड्ज बोलते हैं। तीनो चिकारियाँ और मूल तन्त्रियो में पहली दो तन्त्रियाँ लोहे की हैं। बाकी दो मूलतन्त्रियाँ पीतल की हैं।

महानाटक वीणा या गोट्टुवाद्य—कर्नाटक पद्धति का यह एक नवीन वाद्य है। इसमें अनुध्वनि के लिए सात तन्त्रियाँ दण्ड के अन्दर हैं। आकार वीणा के अनुसार है। उँगली से बजायी जाती है, पर सारण उँगलियो से नही किया जाता। एक लकडी के टुकडे से तन्त्री को दबाकर स्वरों का उत्पादन करते हैं। यह काष्ठदण्ड लबाई में ३ इच है और १ इच इसका व्यास है। यह आबनूस की लकडी से बनाया जाता है। इनमें विविध गमकों को अच्छी तरह उत्पन्न किया जा सकता है, परन्तु वीणा के कुछ विशेष प्रयोग इनमें साध्य नही हैं।

सारगी—सारङ्गी का विवरण 'सगीत नारायण' में बताया गया है। यह विवरण प्राय आधुनिक सारङ्गी के समान है। सगीत नारायण में पाये जानेवाले विवरण यो है—उसका वदन साल, पनस या घनता से युक्त अन्य लकड़ी से बनाया जाता है। उसकी लबाई तीन वित्ते की है। सिर का विस्तार १५ अगुल है (लगभग ११ इच)। सिर सर्पफणाकार है। सिर के मध्य भाग मे एक शिखर है। गला पतला है। दण्ड गले के नीचे है। उसकी लबाई १७ अगुल है। ऊपर स्थूल होता जाता है और नीचे क्रमश कृश है। दण्ड और सिर इन दोनो का गर्भ खुदा हुआ है। दण्ड के पिछले भाग में और सिर के गर्भ भाग में सारण करने का स्थान चतुरस्र रूप में है। उसकी लबाई छ अगुल और चौडाई चार अगुल है।

उसके सिर का प्रदेश चमड़े से मढा जाता है। उसकी तीन तन्त्रियाँ रेशमी धागे की हैं। धनुप (गज) से इसका वादन करना है। धनुप (गज) घोडे की पूँछ के वालो का रहता है। इसमे राल रगडकर वादन करना है। धनुप की लबाई ३० अगुल (२२½ इच) है।

आधुनिक सारङ्गी का रूप इसके समान है, पर वादन करते समय वाद्य को रखने में अन्तर है। सिर को नीचे रखकर वादन करते हैं। इसकी तीन तन्त्रियाँ ताँत की है और चौथी तन्त्री लोहे की है। इसके अतिरिक्त अनुध्वनि के लिए मुख्य तन्त्रियो के नीचे लगभग लोहे की १५ तन्त्रियाँ हैं। सब तन्त्रियाँ घूम सकनेवाली खूँटी से बाँधी जाती हैं।

सितार—सितार भारतीय त्रितन्त्री वीणा का एक भेद है। कहा जाता है कि उसके नाम और रूप की कल्पना अमीर खुसरो ने की। सितार का 'घट' पनस की लकड़ी से या कद्दू के आधे भाग से बनाया जाता है। घट के ऊपरी भाग पर पतला तख्ता लगाया जाता है। उसका ककुभ सीधा रहता है। इसमें कद्दू नही है। घट के ऊपरी भाग में छोटे-छोटे द्वार हैं। तन्त्रियाँ चार है। दण्ड और उसके ऊपर की पीतल की सारिकाएँ कूर्मपृष्ठ के आकार की हैं। कुछ सितारो में अनुध्वनि के लिए मुख्य तन्त्रियो के नीचे तन्त्रियाँ रखी जाती है। सारिकाएँ सरकने योग्य रखने के लिए कमानी स्प्रिङ्ग से बाँधी जाती हैं। सारिकाएँ अठारह से बीस तक होती हैं।

सरोद—सारङ्गी, सितार और वीणा के गुणो से युक्त है और लबाई दो हाथ की है। घट से ककुभ तक की चौडाई में क्रमश कमी होती है।

दिलरुबा—सारङ्गी के आकार में रहता है, पर दण्ड की लबाई कुछ ज्यादा है। धनुप (गज) से बजाया जाता है, इसमें सारिकाएँ हैं। सारङ्गी की तरह इसके घट-स्थान के नीचे के भाग चमडे से मढे जाते हैं। चार मुख्य तन्त्रियाँ है और अनुध्वनि

के लिए उनके नीचे २२ तन्त्रियां रहती है। सारिकाएँ १९ हैं और वे सरकने योग्य है। चार मुख्य तन्त्रियो में दो लोहे की और दो पीतल की है।

सुरबहार—सितार के आकार में रहता है, परतु इसकी सारिकाएँ सरकने योग्य नही हैं, स्थिर रहती है। इसे उँगलियो से और कोण से वजाते है।

इसराज—सारङ्गी के आकार और प्रकार में रहता है। पर सब तन्त्रियां लोहे की हैं।

तबूरा—भारतीय सगीत का, 'सुर' देने का वाद्य है। आकार में वीणा के समान है। पर इसमें कद्दू और सारिकाएँ नही है। घट मात्र है। इसमें चार तन्त्रियाँ है। उन्हें क्रमश वजाने से 'प स स स' बोलते हैं।

सुषिर वाद्य

बांसुरी—वेणु (वाँस), आवनूस की लकडी, हाथी दाँत, चन्दन, रक्त चन्दन, लोहे, कासे, चाँदी या सोने से बनायी जा सकती है। यह ग्रन्थि, भेद, और व्रण से रहित रहती है। इसका रध्र-प्रमाण छोटी उँगली का व्यास है। यह रध्र पूरी बांसुरी में एक-सा रहता है। सिर स्थल वद रहता है। दो, तीन या चार अगुल की दूरी पर फूँकने के लिए एक उँगली के प्रमाण का पहला रध्र वनाना है।

अग्र भाग में एक या दो अगुल छोडकर उसके पीछे वदरी-बीज के समान परिधि-वाले आठ रध्र करना है। इन आठ में से पहला रध्र वायु के निर्गमन या बाहर जाने के लिए नियत है। बाकी सात रध्र सात स्वरो के लिए निर्धारित हैं। ये आठ रध्र उनके बीच में समान दूरी के स्थान छोडकर करना है।

मुखरध्र के निकटतम रध्र से, सप्त स्वररध्रो को मूँदकर उत्पन्न होनेवाले स्वर का तारस्वर] निकलता है। मुखरध्र औरताररध्र के बीच में जो जगह छोडी जाती है उस जगह की दूरी से विविध भेद होते हैं। सगीत रत्नाकर में इस बात पर पहले एक नियम बताया है, उस नियम को शास्त्रीय नियम कहा गया है। उसके बाद देशी-मत नाम का दूसरा नियम बताया, परतु उसी ग्रन्थ में बताया गया है कि ये दोनो नियम ठीक नही। ऐसा कहकर स्वकल्पित नये नियम को प्रस्तुत किया गया है।

पहले-पहल बताया हुआ शास्त्रीय नियम यह है—"स्वररध्रों का परस्पर अतर आधा अगुल और मुखरध्र से ताररध्र की दूरी एक, दो, तीन, चार, पाँच, छ, सात, आठ, नौ, दस, ग्यारह, बारह, चौदह, सोलह या अठारह अगुल हो सकती है। इन पद्रह प्रकार के वशो के अलग-अलग नाम—एकवीर, उमापति, त्रिपुरुष, चतुर्मुख,

क्रोध और अभिमान की अवस्था का प्रदर्शन करने के लिए द्रुत लय में कम्पित, एव स्फुरित गति में बजाना है। यह मतङ्ग मुनि का कथन है।[1]

बांसुरी के नाद अर्थात् फूत्कार के गुण

१. स्निग्धता—रूखापन न रहना।
२ घनता—स्थूलता।
३ रक्ति—रञ्जन शक्ति।
४ व्यक्ति—स्पष्टता।
५ प्रचुरता—नादपूर्णता।
६ लालित्य—ललित भाव।
७ कोमलत्व—मृदुलता।
८ अनुरणन—अनुरणनत्व।
९ त्रिस्थानत्व—तीनो सप्तको मे विना रुकावट के सचार करना।
१० श्रावकत्व—सुनने में रमणीय रहना।
११ माधुर्य—मधुरता।
१२ सावधानता—अनवधान राहित्य अर्थात् फूंकने में न्यूनाधिकता के बिना एक सा फूंकना।

फूंकने के दोष

१ यमल—फूत्कार के साथ प्रतिफूत्कार की उत्पत्ति।
२ स्तोक—फूत्कार की कमी, नाद स्थूल होने पर भी स्थान को पाने की शक्ति का लोप।
३ कृश—स्थान प्राप्ति होने पर भी नाद का अस्थूल रहना।
४ स्खलित—बीच-बीच में ध्वनि स्थगित होना।

मतान्तर के अनुसार और पाँच दोष हैं—

१ कम्पित—कफ की युक्तता के कारण ध्वनि का विकृत भाव।
२ तुम्बकी—कद्दू के नाद की तरह रहना।

१. बताया गया है कि बांसुरी वाद्य मतग मुनि ने ही परिष्कृत किया और बांसुरी वादन में उनका मत ही प्रमाण माना जाता है, परन्तु मतग मुनि के उपलब्ध ग्रन्थ 'बृहद्देशी' में वाद्याध्याय लुप्त है।

३ काकी—तारप्राप्ति के अभाव के कारण कौए-जैसी ध्वनि रहना।
४ सन्दष्ट—दाँत पीसने की तरह फूँकना।
५ अव्यवस्थित—नाद की एकरूपता न होना।

बाँसुरी बजानेवाले के गुण

उँगलियो के चलाने का अभ्यास, अच्छी तरह स्थानो की प्राप्ति, मधुरता से रागभाव को व्यक्त करने की शक्ति, वेग से आगे और पीछे सचार करने की शक्ति, गीत और वादन में कुशलता, गवैयो को सुर देना, गायक के दोष को छिपाना, मार्ग और देशी रागो की अच्छी जानकारी, अपस्थान स्वरो में भी रागभाव को उत्पन्न करने की शक्ति—आदि ही बाँसुरी बजानेवाले के गुण हैं।

बाँसुरी बजानेवाले के दोष

मिथ्या प्रयोग अर्थात् अनुचित स्थान में आलाप करना या गमक का ज्यादा प्रयोग करना, इष्ट स्थान तक पहुँचने में अशक्तता, सिर का कम्पन आदि बाँसुरी बजानेवाले के दोष हैं।

बाँसुरी का वृन्द

एक मुख्य बाँसुरी बजानेवाला और चार लोग अग-बाँसुरी बजानेवाले रहने चाहिए।

मुरली—मुरली की लबाई दो हस्त की है। वादन करने के लिए मुखरध्र है और स्वरो के लिए ४ द्वार हैं। नाद रमणीय है। शृङ्ग से या लकडी से बनायी जाती है। आकार काहल के समान है। लबाई २८ अगुल है।

काहल—पीतल, ताम्र और चाँदी से बनाया जाता है। धतूरे के फूल के आकार में रहता है। लबाई तीन हाथ की है। उससे उत्पन्न होनेवाले शब्द 'हा' और 'हू' हैं। वीर-विरुद के प्रकाश के लिए इनका प्रयोग करते है।

तुण्डकी या तुण्डुरी या त्तित्तिरी या तुरुत्ति—दो हस्त की लबाई का जोडेवाला सुषिर वाद्य है। ४ हस्त की लबाई हो तो उसका नाम 'चुक्की' है।

शृङ्ग—भैंस के शृङ्ग से बनाया जाता है। उसके मूल मे साँड का आठ अगुल लबा सीग रखना चाहिए। उसके मूल में फूँकने का छिद्र करना चाहिए। इसका आकार हाथी की सूँड की तरह और इसके अन्तिम भाग का आकार धत्तूर के फूल की तरह रहता है। वादन में 'तुथुकार' उत्पन्न होता है। इसकी ध्वनि गभीर है। गोपकेलि में इसका उपयोग होता है।

शख—दोषरहित ११ अगुल लबाई के एक शख की नाभि को खुदवाकर उसके शिखर में एक रध्र बाहर से आधा अगुल और अदर से उरद के प्रमाण का करना है। उसे कर्कट मुद्रा हस्त से पकडकर पूर्ण बल से फूंक मारना चाहिए। इसके शब्द 'हु, घु तो, दिगिद् दी'--इत्यादि है।

नागस्वर या तूर्य—ये दक्षिण भारत के देवालयो में उत्सव, शादी, जुलूस आदि मगल अवसरो पर बजाये जाते हैं। इनका आकार लबे धत्तूर जैसा है। 'अच्चा' (द्राविडी) नामक लकड़ी से बनाये जाते हैं। इनकी लबाई डेढ हाथ होती है। मुख का व्यास धीरे-धीरे बडा होता जाता है। अन्त में फूल के खिलने की जगह व्यास दो अगुल का रहता है। उसमें सप्त स्वरो के रध्र ½ अगुल व्यास के बनाये जाते हैं। वायु-सचार के लिए सातो रध्रो के नीचे कुछ दूर पर आठवाँ रध्र है। सातवें रध्र के नीचे दोनो तरफ दो रध्र हैं, और आठवें रध्र के नीचे इसी तरह के और दो रध्र दोनो तरफ रहते हैं। फूंकने का एक उपकरण शीवाली नामक है। वह शीवाली गोलाकार न रहकर उभरा हुआ एव खुलने तथा बद करने योग्य छोटे नाल जैसा है। उसका अधर भाग वाद्य के मुँह मे सलग्न करने योग्य एक शलाका जैसा है। उसे वाद्य के मुख में लगाकर बजाते हैं। अधर के चालन से विविध घन, नय आदि ध्वनि, स्वरो के वर्णालकार उत्पन्न कर सकते हैं। और इसी क्रिया से स्वरो की एक या दो श्रुतियाँ ऊँची और नीची भी कर सकते हैं। नागस्वर सुर देने के लिए है। 'ओत्तु' नामक स्वर-द्वारो से रहित, नागस्वर के आकार का वाद्य और ताल रखने के लिए कास्य ताल, अवनद्ध वाद्य के लिए 'डिडिम' रहते हैं। वाद्यवादको में पूर्ण सगीत-सप्रदाय-विशारद बहुत हैं।

मुखवीणा—यह छोटा नागस्वर है। इसका उपयोग नाट्य में है। पर आजकल इसका स्थान क्लारिनट ले रहा है।

शहनाई—नागस्वर का प्रतिरूप है शहनाई। यह उत्तर भारत में बजायी जाती है, परतु उसकी लबाई नागस्वर से आधी है। उसका नाद कोमलतर है। नागस्वर-वालो की तरह शहनाई बजानेवालो में सप्रदायकुशल लोग बहुत हैं।

क्लारिनट--पाश्चात्य नागस्वर है। इसमें स्वरस्थानो को बद करने या खोलने के लिए उँगलियो का प्रयोग सीधे नही करते हैं। हरएक रध्र को बद करने और खोलने का एक उपकरण है। उसे दबाकर स्वरो का उत्पादन करते हैं। दक्षिण भारत में आज इस वाद्य में कर्नाटक और हिन्दुस्थानी सगीत को अच्छी तरह बजाया जाता है। इसके साथी साज दूसरे पाश्चात्य वाद्य हैं। उनके नाम साक्सफोन, ट्रम्पेट आदि हैं।

अवनद्ध वाद्य

मृदङ्ग शब्द आदिकाल में 'पुष्कर' वाद्य का नाम था। पुष्कर वाद्य में चमडे से मढ़े हुए तीन मुख थे। दो मुख बायी और दाहिनी ओर रहते थे, तीसरा मुख ऊपर रहता था। उसका पिण्ड मृत् या मिट्टी से बनाया जाता था। इसी कारण इसका नाम मृदङ्ग पडा। कुछ समय के बाद बायी और दाहिनी ओर दो ही मुख वाले वाद्य की सृष्टि हुई। फिर उसका पिण्ड लकडी से बनाया गया। इन पुष्कर आदि वाद्यो की उत्पत्ति के बारे में नाट्यशास्त्र में एक वृत्तान्त है।

पहले भी बताया गया है कि स्वाति और नारद ही सगीत वाद्यो के आदि ग्रन्थ-कर्ता है। इनमें स्वाति एक बार छुट्टी के दिन (अनध्ययन दिन) एक सरोवर पर पानी लाने के लिए गये थे। आकाश बादलो से घिरा हुआ था, वेगपूर्वक वर्षा होने लगी। तब वायु वेग से सरोवर में पानी की बडी-बडी बूंदो के पडते समय पद्म की बडी, छोटी और मझोली पखुड़ियो पर वर्षा-बिन्दुओ के आघात से विभिन्न ध्वनियाँ उत्पन्न हुईं। उनकी अव्यक्त मधुरता को सुनकर आश्चर्यचकित स्वाति ने उन ध्वनियो को अपने मन में धारण कर लिया और आश्रम पहुँचने पर विश्वकर्मा से कहा कि इसी तरह के शब्द उत्पन्न करने के लिए एक वाद्य बनाना चाहिए। फलत पहले-पहल तीन मुख से युक्त 'मृत्' से पुष्कर की सृष्टि हुई। बाद में उसका पिण्ड लकडी या लोहे से बनाया गया। तब हमारे मृदङ्ग, पटह, झल्लरी, दर्दुर आदि चमडे से मढे हुए वाद्यो की सृष्टि हुई।

आगमो में बताया गया है कि लकडी से बनाये हुए मृदङ्ग की सृष्टि ब्रह्मा ने की है और शिवताण्डव का साथ देने के लिए ही उसकी उत्पत्ति हुई। पुष्कर आज व्यवहार में नही है। पर मृदङ्ग आदिकाल से अब तक अवनद्ध वाद्यो में मुख्य स्थान पाता रहा है।

मृदङ्ग का पिण्ड बीजवृक्ष (तमिल में वेङ्गै) या पनस की लकडी से बनाया जाता है। उनकी लबाई २१ अगुल (१५$\frac{3}{4}$ इच) है। लकड़ी का दल आधे अगुल का है। दाहिना मुख १४ अगुल और बाया मुख १३ अगुल है, मध्य में १५ अगुल है। दोनो ओर के मुख चमडे से मढे जाते थे। किनारे पर चमडा घनता से युक्त रहता था। उस चमड़े के घेरे में २४ छिद्र रहते थे। छिद्रो का पारस्परिक अन्तर एक अगुल रहता था। उन छिद्रो में से वेणी की तरह चमडे की रस्सी (वध्र, वद्धी) से बांधा जाता था। इन दोनो 'पुढियो' को चमड़े की रस्सी से दोनो ओर खीचकर दृढता से बांधा जाता था। रस्सी के बधन को ढीला करने या तानने से मृदङ्ग के स्वर को ऊँचा या नीचा कर सकते थे। पकाये हुए चावल को अपामार्ग के भस्म के साथ मिलाकर दोनो पुढियो के मध्य

में लगाया जाता था। उसका नाम 'वोहण' है। सगीतरत्नाकर में कहा गया है कि वायी ओर अधिक और दाहिनी ओर थोडा कम लगाया जाता था। पर आजकल वायें मुख में, वजाने से पूर्व गुंथा हुआ आटा छोटी आकृति में लगाते हैं और दाहिने मुख में मृदङ्ग वनाते समय ही लकडी का कोयला, पकाया हुआ चावल, गोद—इनको मिश्रित कर तीन इच व्यास के चक्राकार में लगाते हैं। उसे स्थिर रहने देते हैं।

इस तरह के मृदङ्गो में तीन प्रकार हैं। आङ्किक, आलिङ्ग्य, ऊर्ध्वक। आलिङ्ग्य भूमि में रखकर वजाने योग्य है। आङ्किक कटि में बांधकर वजाने योग्य है। ऊर्ध्वक छाती में बाँधकर वजाने योग्य है। रक्तचन्दन और आवनूस की लकड़ी से भी मृदङ्ग वन सकते हैं। पर उनकी मोटाई एक अगुल (¾ इच) रहनी चाहिए। लवाई तीस अगुल रहती है। दाहिना मुख ११½ अगुल और वाया मुख १२ अंगुल व्यास का रहता है। इस वाद्य का देवता नन्दिकेश्वर है।

इस वाद्य में वोलनेवाले पाट या वाद्यशव्द ये हैं—दाहिने मुख में तद्धि, थे, टें, हें, न, दें। बायें मुख में त, ट, ह्ला, द, घ, ल—इनका नाम 'शुद्ध सज्ञा' है। इनके सिवा इस वाद्य से उत्पादित किये जा सकनेवाले अक्षर भी शास्त्रो में वताये गये हैं। उन्हें 'कूट सज्ञा' कहते हैं। क, ख, ग, घ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द, घ, न, य, र, ल, ह, म, झ—ये सब व्यञ्जन कई स्वर अक्षरो के साथ बोलते हैं।

ककार अ, ई, उ, ए, ओ, अ से युक्त बोलता है। उसके रूप क, कि, कु, के, को, क हैं।

खकार इ, उ, ओ के साथ आता है, इसके रूप खि, खु, खो हैं।

गकार से उ, ए, ओ के साथ गु, गे, गो वनते हैं। घकार अ, ए, ओ के साथ घ, घे, घो, के रूप में आता है।

टकार से अ, ई, ओ, अ के साथ ट, टि, टो, ट बनते हैं।

ठकार अ, ई, ओ, अ के साथ ठ, ठि, ठो, ठ के रूप में आता है।

डकार अ, ओ, के साथ ड, डो बन जाता है।

ढकार आ, ए, अ के साथ ढा, ढे, ढ बन जाता है।

तकार अ, आ, इ, ए के साथ त, ता, ति, ते बनता है।

थकार अ, आ, इ, ए के साथ थ, था, थि, थे के रूप में वोलता है।

दकार अ, उ, ए, ओ के साथ द, दु, दे, दो के रूप में ध्वनित होता है।

धकार अ, इ, ओ, अ के साथ ध, धि, धो, ध के रूप में आता है।

रकार या रेफ अ, आ, इ, ए के साथ र, रा, रि, रे बन जाता है।

लकार अ, आ, ई, ए के साथ ल, ला, लि, ले बन जाता है।

हकार यकार के साथ अर्थात् ह और य मिलकर आते हैं।

मकार अ के साथ 'म' के रूप में आता है और ज्ञकार अ, ए और अ के साथ ज्ञ, ज्ञे, ज्ञ बोलता है।

क, घ, त, ध—इनके साथ रेफ का अनुबन्ध होता है, अर्थात् क्र, घ्र, त्र, ध्र—इस तरह रूप होते हैं। ककार, पकार और तकार के साथ लकार भी आता है, जैसे—क्ला, प्ला, त्ला—आदि।

उन्हें उत्पादन करने का मार्ग—

दोनों हाथों से एक ही समय बजाने से 'घ' शब्द निकलता है। एक मुख से भी 'घकार' की उत्पत्ति होती है।

दोनों मुखों में उँगलियों को सरकाने से 'कु' शब्द निकलता है।

दोनों मुखों में अवष्टम्भ (उठाने की तरह की क्रिया) करने से 'यकार' शब्द निकलता है।

बजाते समय पुड़ी के आधे भाग में ही हाथों को खींच लेने से 'थ' कार शब्द निकलता है।

दाहिने मुख में पीडन करने से 'क्ल' कार, उँगलियों से घर्षण करने से 'क्षकार', दोनों तर्जनियां बलपूर्वक रखने से 'क्ले', एक मुख में नख के द्वारा 'र', बायें मुख में 'द' कार।

दाहिने मुख के ऊपरी भाग में 'म' कार और बायें मुख के ऊपरी भाग में ओकार की उत्पत्ति होती है।[1]

पञ्च पाणि प्रहतम्

अक्षरों की उत्पत्ति के लिए कराघात पांच प्रकार के हैं—समपाणि, अर्धपाणि, अर्धार्धपाणि, पार्श्वपाणि, प्रदेशिनी। नाम से ही इनकी क्रिया स्पष्ट है।

समपाणि से मारकर हाथ खींच लेने से मकार की उत्पत्ति होती है।

अर्धपाणि से मारते समय हाथ को आधा खींच लेने से गकार, दकार, धकार आदि शब्द निकलते हैं।

पार्श्वपाणि से मारकर खींच लेने से ककार, ग्कार, णकार, ढकार आदि शब्द निकलते हैं।

१. वाद्य शब्द-अक्षरों का विवरण और उनका उत्पत्ति-क्रम नाट्यशास्त्र, ३३वें अध्याय से उद्धृत है।

अर्वार्धपाणि से मारने से त, थ, हृ कार शब्द निकलते हैं।

प्रदेशिनी से बजाते है तो गकार, थकार, णकार शब्द निकलते हैं।

हस्तपाट या वाद्यशब्दों की योजना

१. आदि हस्तपाट—शिवजी के पाँच मुखो में हरएक से सात सयुक्त हस्त-पाट उत्पन्न हुए हैं। उनमें सद्योजात मुख से उत्पन्न हस्तपाट—

वनगिन गिननगि	--	इसका नाम है	नागवन्ध
ननगिड गिडदगि	—	,,	पवन
गिडगिडगिडदत्था	—	,,	एक
किटतत किटतत	—	,,	एक सर
नखु नखु	—	,,	दुस्सर
खिर्रतकिट	—	,,	सचार
थोगि थोगि	—	,,	विक्षेप

वामदेव मुख से उत्पन्न हस्तपाट

ततकिट	—	इसका नाम है	स्वस्तिक
थोहता	—	,,	वलिकोहल
थोगिन थो थोगिन	—	,,	फुल्लविक्षेप
थो थो गो गो	—	,,	कुण्डली विक्षेप
थोगिण तत्ता	—	,,	सचारविलिखी
किटथोयो गिनखेंखें	—	,,	खण्ड नागबन्ध
टकुझेंझें	—	,,	पूरक

अघोरमुख से उत्पन्न हस्तपाट

ननगिडगिडदगिदा	--	इसका नाम है	अलग्न
दत्थरिकि दत्थरिकि	—	,,	उत्सर
तकिधिकि तकिधिकि	—	,,	विश्राम
टगुनगु टगुनगु	—	,,	विषमखली अथवा विषमस्खलित
खिरिट खिरिट	—	,,	सरी
खिरि खिरि	—	,,	स्फुरी
नरकित्थरिकि	—	,,	स्फुरण

तत्पुरुष मुख से उत्पन्न हस्तपाट

दरिगिड गिडदगिदा	—	इसका नाम है	शुद्धि
टटकुटट	—	,,	स्वरस्फुरण
ननगिनखिरिखिरि	—	,,	उच्छल्ल
दखें दखें दखें खें	—	,,	वलित
थो गिनगि थो गिनगि	—	,,	अवघट
तत्ता	—	,,	तकार
घिघि	—	,,	माणिक्यवल्ली

ईशान मुख से उत्पन्न हस्तपाट

तझें तझें झें	—	इसका नाम है	समस्खलित अथवा समस्खली
गिरिग्ड गिरिग्ड	—	,,	विकट
किण किणकि	—	,,	सदृश
घिघि किटकि	—	,,	अड्डुखली अथवा स्खलित
गिदिनगि दिगिनगि	—	,,	खली
घरकट घरकट	—	,,	अनुच्छल अथवा अनुच्छल्ल
दो नकट दो नकट	—	,,	खुत्त

मृदङ्ग वादको में चार कोटियाँ हैं। वादक, मुखरी, प्रतिमुखरी और गीतानुग। 'वादक' का वादन इस प्रकार रहना चाहिए—

पहले 'ग्राटन' नामक वादन करना चाहिए। मृदङ्ग में ताल का अनुसरण न करके 'वोहण' लगाने से पहले 'देहडडग'—इत्यादि ध्वनियो की उत्पत्ति करनी चाहिए। उसके वाद 'ओडवाड' नामक घन ध्वनि की अधिक उत्पत्ति करनी चाहिए।

उसके वाद 'उथार' नामक अनुरणन ध्वनि रूप 'देहडडाद' आदि शब्दो का वादन करना उचित है। उसके वाद 'स्थापन' का वादन करना है। वायें मुख में वोहण को लगाकर वायें मुख में 'गडदग घो' और दाहिने मुख में 'गडदग घा' इत्यादि शब्द उत्पन्न करना चाहिए। उसके वाद द्वितीय ताल (१०८ ताल देखिए) के मध्य लय में दोनो मुखो में तीन वार क्रमश शब्दो को अधिक करते हुए वादी सवादी का सयोग करके वादन करना चाहिए। उसके वाद विलम्ब, मध्य, द्रुत लय में क्रमशः एक, दो, तीन थोकार से अत करके वादन करना चाहिए। उसके वाद तीनो स्थानो में आलाप करने की तरह विलम्ब, मध्य, द्रुत लय में मनोधर्म का विस्तार

करते हुए मधुरता और सुन्दर रचना के साथ वादन किया जाना चाहिए। इस प्रकार के वादन का नाम 'स्थापन' है।

इसके वाद 'अन्तर' नामक वादन करना चाहिए, इसमें थोंकार का वहुत्व है। उसके वाद 'टाकणी' और 'वाद' का वादन करना चाहिए। टाकणी में दो प्रकार—सर टाकणी और जोडा टाकणी है। वाद में भी एक सरवाद, जोडा वाद होता है। इनमें चतुरश्र, त्र्यश्र, मिश्र, खण्ड तालो में एक तरह का ताल लेकर वादन करना। टाकणी में पहले श्रमवहनी नामक शब्द समूह का वादन करना। इसका रूप यह है—

तद्धितोटें
तत धिधि थोयो टेंटें
ततत धिधिधि थोयोयो टेंटेंटें
ततत्त धिधिधिधि थोयोयोयो टेंटेंटेंटें

उसके वाद एक सर टाकणी में 'तकधिकट तकधिकट, धिकटतक, तकधिकट, तकतकधिकट, धिकटकतधिकट'—इत्यादि के रूप में आठ वाद्यखण्डो का ताल की आठ कलाओ में वादन करना चाहिए। जोड़ा टाकणी में ऐसा वादन दो वार करना चाहिए।

'वाद' में पहले श्रमवहनी का वादन करके शुद्ध वर्णाभ्यास से 'द द टिरिटिद्धि कड्द—कड्दगझेक-उदवाझे-थरिक्कुथरि टगणगणथरि-गणगण घरि-घथरिगडदग-घथरिगडदग-हथरिगडदग-धतरि घतरि-तर्गड्दक्-तरिक्क टत्तक—इत्यादि ताल के सोलह खण्डो में वादन करना चाहिए।

'जोडावाद' में इसी प्रकार का दो वार वादन करना है। उसके वाद 'ताट' और 'वाद' का वादन करना उचित है। इनमें अतिद्रुत लय में दिगि दिगि दिग्दिग्—इत्यादि शब्दो का वादन करना। इसी प्रकार दूसरे वादन क्रम भी ऊहनीय हैं। इस तरह वादन करने से मृदङ्गवादक स्पर्धा में विजयी होता है।

मुखरी—वाद्य प्रवन्ध का रचयिता, नर्तन की शिक्षा में कुशल, गीत और वादन में पारङ्गत, सुस्वरूप, अवधान के साथ रहने के लिए अतर्मुख रहनेवाला, नृत्य के अर्वाङ्ग के समान नृत्य में लीन होनेवाला, दूसरे वादको के आगे खडा होनेवाला वादक 'मुखरी' कहलाता है।

इससे कुछ न्यून कोटि के वादक का नाम 'प्रतिमुखरी' है। शुद्ध, सालग गीतो के वर्ण, कठिन, कोमल, सम, विपम, मन्द्र, मध्य, तार, प्रौढ या मधुर शब्दो का अनुसरण वादन के द्वारा भली-भाँति करनेवाला, सालगगीत के उद्ग्राह नामक पूर्वभाग में तथा आभोग में, निस्सारुक ताल में अनुलोम, प्रतिलोम, उभयमिश्र गति रचना से वादन

करनेवाले, तकार से आरभ करके थोकार से अत करनेवाले वादक का नाम है 'गीतानुग'।

मद्दल आदि वाद्यों के प्रबन्ध

गीत प्रवन्व के समान उद्ग्राह आदि खण्डो के साथ वाद्य शब्दो का प्रवन्व भी बनाया गया है। उनके भेद ४३ हैं। वाद्य प्रवन्वो के अन्त में 'दें' कार रहता है।

मृदङ्ग वादको के गुण

अक्षरो की स्पष्टता, मुख आदि अगो की सुरूपता, दूसरे वाद्यो का अनुसरण करने की पटुता, मधुर और गभीरता के साथ वादन करने का कौशल, हस्तलाघव, सावधानी, श्रम को जीतने की शक्ति, मुख (आरभ) वाद्य में पटुता, रञ्जनशक्ति, दूसरे अवनद्ध वाद्यो का अनुसरण करना, शब्दो की बहुलता, यति, ताल और लय की अच्छी जानकारी, गीत का अनुसरण करना—ये मृदङ्ग वादको के गुण हैं। इनसे रहित होना 'दोष' है।

पञ्च संच

वादन करते समय वादको के पाँच अग हिलते हैं। इन्ही कन्धे, कोहनी, अगूठा, कलाई और बायें पाँव में होनेवाले कम्पन का नाम 'पञ्च सच' है। श्रेष्ठ वादको के अंगूठे और मणिवन्ध (कलाई) ही हिलते हैं। मध्यम वादको की कोहनी हिलती है। कन्धा अधम वादको का हिलता है। वायें पाव का कम्पन हो तो वह सर्वश्रेष्ठ है।

मृदङ्ग वृन्द

दो, तीन या चार मृदङ्ग वादक वृन्द में रह सकते हैं। सब वादक 'मुखरी' का अनुसरण करते हैं।

मृदङ्ग के अलावा पटह, आवुज आदि प्राचीन अवनद्ध वाद्य हैं। पर आज इन सब का प्रयोग नही हो रहा है। ढूंढा जाय तो कही देखने को मिल सकते हैं।

पटह—आवनूस की लकड़ी से बनाया जाता था। उसकी लबाई २½ हाथ की है। मध्य में घेरे का नाप ६० अगुल है। दाहिने मुख का व्यास ११½ अगुल है। बायें मुख का व्यास १० अगुल है। दाहिनी ओर लोहे का पट्टा होता है। बायी ओर लताओं का पट्टा लगाना होता है। उससे चार अगुल दूर पर लोह-निर्मित तीसरा पट्टा लगता है। दोनो ओर मृत बछड़े के चमड़े से मढाया जाता है। बायी ओर के चमड़े के घेरे में सात छिद्र बनाकर उनमें पतली रस्सी से, सोने चांदी आदि से बनाये हुए चार अंगुल लम्बे सात कलशो को ढीला बांधा जाता है। दाहिनी

ओर से उन्हें फिर उस चमडे से बाँध दिया जाता है। इसे 'कोण' नामक साधन से या हाथ से बजाते हैं। इसी तरह का पटह कुछ छोटा रहे तो उसे 'देशी पटह' या 'अड्डावुज' कहते हैं। पटह का देवता स्कन्द है।

हुडुक्का—इसकी लबाई एक हस्त की होती है। परिधि या घेरे का नाप २८ अगुल होता है। पिण्ड का दल एक अगुल होता है। दोनो मुखो का व्यास ७ अगुल होता है। हरएक मुख में चमडे से बनी हुई मण्डली बाँधी जाती है। मण्डली का व्यास ग्यारह अगुल है। दोनो मण्डलियो को रस्सी से बाँध दिया जाता है। रस्सी के मध्य में रहनेवाली स्कन्ध-पट्टिका को बायें हाथ से पकडकर दाहिने हाथ से बजाया जाता है। उसमें बोलनेवाले १६ अक्षर हैं, पर देंकार नही है। हुडुक्का की देवी सप्त माता हैं—ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी और चामुण्डा।

करटा—लबाई में २१ अगुल और घेरे का नाप ४० अगुल है। मुख का व्यास १४ या १२ अगुल है। दोनो मुखो में चमडे से मढी हुई लोह-मण्डली है। मण्डली की परिधि ४२ अगुल है। दोनो मण्डलियाँ चमडे से मढी हुई हैं। हरएक चमड़े में १४ छिद्र हैं। दो-दो छिद्रो के बीच में विघ्निका नामक लोह-कर्पर रहते हैं, जो कपाल की तरह हैं। 'कुडुप' नामक कोण से इसका वादन करते हैं। इसके पाट 'करट' और 'तिरिकिरि' हैं। इसका देवता 'चर्चिका' (देवी का एक रूप) है।

घट—घट का उदर बड़ा रहता है। मुख छोटा है। इसका पिण्ड घनतायुक्त है। अच्छी तरह पका रहता है। हाथो से इसका वादन किया जाता है। मर्दल में बोलनेवाले पाट घट में भी बोलते हैं।

घडस—इस वाद्य का दाहिना मुख मात्र चमडे से मढा जाता है। बायां मुख रस्सी से बाँधा जाता है। बायें हाथ की तर्जनी से रस्सी को दबाते हैं। दाहिनी ओर हाथ से और बायी ओर उँगली से वादन किया जाता है। वादन करते समय हाथ में मोम लगा लेते हैं। इसका पाट 'धोकार' है। दाहिने हाथ से घर्षण के द्वारा धोकार की उत्पत्ति होती है।

ढवस—इसकी लबाई एक हस्त की है। परिधि ३९ अगुल और मुख का व्यास १२ अगुल है। लता का वलय है। चमडे से मढा रहता है। चमडे में सात छिद्र रहते हैं। यह छिद्रो के द्वारा रस्सी से बाँधा जाता है। मध्य भाग को हाथ से पकड़कर दाहिने हाथ से 'कुडुप' नामक कोण के द्वारा वादन किया जाता है। इसका पाट 'ढकार' है।

ढक्का—ढवस के समान है, परन्तु मुख का व्यास १३ अगुल है। उसका पाट 'ढंकार' है।

कुडुक्का—हुडुक्का का एक भेद है। हाथ से या कोण से वजाया जाता है।

कुडुवा—इसकी लंवाई २१ अगुल है। वीज वृक्ष या लोहे का वनाया जाता है। दो मुख रहते हैं। पिण्ड और दोनो मुखो का व्यास सात अगुल है। दोनो मुखों में चमडे के अन्दर लता का वलय रहता है। उन्हें भी रस्सी से वांध देते है। कोण से मोम को रगडकर वजाना होता है। इसका पाट 'झेंकार' है।

डमरुका—इसकी लवाई एक वित्ता है। मुखो का व्यास ८ अगुल है। मुख को मण्डली से वांधा करते हैं, जो मण्डली चमडे से मढ़ी जाती है। मध्य में व्यास कम है। मध्य में कटि-प्रदेश के आकार में रस्सी से वांवना होता है। वादन के लिए मध्य में मिट्टी और मोम की गोली से लिपटी हुई एक रस्सी टांगी जाती है। मध्यभाग को हाथ से पकडकर वादन किया जाता है। इसका पाट 'डग' है। मतान्तर के अनुसार 'कख, रट' भी हैं।

ढक्का—इसकी लवाई एक वित्ता है। मध्य भाग कृश रहता है। मुखो का व्यास आठ अगुल है। पिण्ड की घनता आधा अगुल है। हरएक मुख में दो-दो तन्त्रियाँ हैं। तन्त्रियो को वांवने के लिए हरएक मुख में ताम्र की दो-दो खूंटियाँ हैं। अन्य विपयो में हुडुक्का के समान है।

दिण्डिमा या तवुल—यह वाद्य नागस्वर की भाँति है। एक या सवा हाथ की लवाई है। दोनो मुखो का व्यास पौन हाथ है। वदन कठोर लकडी से वनाया जाता है। दोनो मुख चमडे से मढे जाते हैं। दोनो मुखो के घेरे में चमडे की डेढ अगुल घनता की मण्डली वांधी जाती है। वायी ओर का मुख मण्डली के अदर है। दाहिनी ओर की मण्डली सीधी है। दाहिने मुख को हाथ से वजाते हैं और वायें मुख को एक वित्ता की लवाई की लकडी से। इस लकडी की घनता एक अगुल से क्रमश ½ अगुल हो जाती है। इस वाद्य को गले और दाहिने पार्श्व में टागकर वजाते हैं। इसके शव्दो में 'डि डिं' मुख्य है। इसी कारण से इसका नाम 'डिंडि' पड़ा।

तवला—तवले में मृदङ्ग के दो भाग अलग-अलग हैं। दोनो भागो में मुख रहते हैं। दाहिने भाग में मृदङ्ग की दाहिनी ओर उत्पन्न होनेवाले शव्द उत्पन्न होते हैं। उसी तरह वनाया जाता है। वायें में मृदङ्ग की वायीं ओर के शव्द वोलते हैं। दाहिना भाग लकडी से और वाया भाग धातु से वनाया जाता है। उत्तर भारत में तवला मृदङ्ग के स्थान में है।

पखावज—मृदङ्ग से कुछ वड़ा रहता है। उत्तर भारत मे ध्रुपद गाते समय वजाया जाता है।

ढोलक—मृदङ्ग की तरह है। पर इसके मध्य भाग का व्यास मुखों के समान है।

बारहवाँ परिच्छेद

वाग्गेयकारों का संक्षिप्त इतिहास

१. श्रीशार्ङ्गदेव

यह, "दौलताबाद" के राजा सिहण, जिन्होने ई० १२१० से १२४७ तक राज्य किया था, के समकालिक थे। काश्मीरी भास्कर देव के पुत्र और सोढलदेव के पौत्र थे। इन्होने "सगीतरत्नाकर" नामक ग्रथ की रचना सस्कृत भाषा में की, जिसके सातो अध्यायो में सगीतशास्त्र के सारे विषय, क्रम से यो प्रतिपादित हैं, जैसे—१ अध्याय स्वरगताध्याय, २ अ० रागविवेकाध्याय, ३ अ० प्रकीर्णकाध्याय, ४ अ० प्रबधाध्याय, ५ अ० तालाध्याय, ६ अ० वाद्याध्याय, ७ अ० नृत्याध्याय।

इसकी सात व्याख्याएँ हैं जिनमें गगाराम की ब्रजभाषा-व्याख्या भी एक है, जो सरस्वती महल पुस्तकालय में भी उपलभ्य है। शार्ङ्गदेव की दूसरी रचना "अध्यात्म-विवेक" वेदात विषयक है।

उन्होने भरत, मतग, कीर्तिधर, कोहल, कबल, अश्वतर, आजनेय, अभिनव गुप्त और सोमेश्वर जैसे प्राचीन आचार्यो के मतो की विवेचना की है।

२. अहोबल पडित

यह अहोवल में कोई ४५० वर्षों के पहले रहे होगे। इन्होने शार्ङ्गदेव व आजनेय के मतानुसार "सगीतपारिजात" की रचना की, जिसके कई लक्ष्य-लक्षण आजकल की पद्धति से मेल खाते हैं।

३. रामामात्य

यह, नियोगी तेलुगु ब्राह्मण तिम्मामात्य के पुत्र थे। इन्होने "स्वरमेलकलानिधि" की रचना वेंकटाद्रिराय की इच्छा के अनुसार की, जो विजयनगर सम्राट् कृष्णदेव राय के दामाद का भाई था। इन्होने दूसरे कई प्रबधो की—जैसे एला, रागकदब, गद्यप्रबध, पंचतालेश्वर, स्वराक, श्रीरगविलास इत्यादि की रचना की थी, लेकिन उन प्रबधो में किसी एक का भी पता नही। स्वरमेलकलानिधि के अनुसार इनका समय १५५० ई० है।

४. गोविंद दीक्षित

यह पंडित तंजौर के नायकराजा अच्युतप्प एवं उनके पुत्र रघुनाथ नायक दोनों के दरबार के मुख्य मंत्री थे। प्रसिद्ध अप्पय्य दीक्षित के समकालिक होने के कारण इनका समय ई० १५५४ से १६२६ तक है। शिष्ट व नयनिष्ठ ब्राह्मण-मंत्री होने के कारण इनकी शासन-पद्धति की प्रसिद्धि अब भी सुनाई पड़ती है। इन्होंने रघुनाथ नायक के साथ संगीतशास्त्र में "संगीतसुधा" की रचना की। इस लक्षणग्रंथ का उल्लेख मात्र, इनके पुत्र वेंकट मखी की "चतुर्दण्डिप्रकाशिका" में पाया जाता है।

५. वेंकट मखी

यह गोविंद दीक्षित के कनिष्ठ पुत्र और अपने बड़े भाई यज्ञनारायण दीक्षित के शिष्य भी हैं। इन्होंने तानप्पाचार्य से संगीत की शिक्षा पायी। इनकी पहले-पहल की रचना "गंधर्वजनता खर्व दुर्वार गर्वभंजनु रे" अब भी गायी जाती है। तंजौर के नायकराजा रघुनाथ के पुत्र विजयराघव राजा की प्रेरणा से "चतुर्दण्डिप्रकाशिका" नामक लक्षणग्रंथ की रचना इन्होंने की। इसमें वेंकट मखी ने वीणा, श्रुति, स्वर, मेल, राग, आलाप, ठाय, गीत, प्रबंध और ताल—इन दस विषयों को दस प्रकरणों में बाँटा है। इन्होंने कई गीत और प्रबंध निर्मित किये हैं।

६. गोविंदामात्य

यह षट् सहस्र-नियोगी ब्राह्मण थे। इन्होंने संगीतशास्त्र की रचना तेलुगु भाषा में की। उसमें, कई स्थानों पर संगीतरत्नाकर का तथा मेल एवं राग के विषय में स्वरमेलकलानिधि का अनुसरण किया है। ये वेंकट मखी से पहले और रामामात्य से पीछे रहे होंगे।

७. पुरंदर विट्ठलदास

ये कर्णाटक ब्राह्मण एवं भक्तकवि थे। सरलि, अलंकार तथा गणेशगीत—इनके प्रवर्तक ये ही महानुभाव हैं। इन्होंने प्राय. सूलादि प्रबंधों और हजारों की संख्या में पदों की रचना की है। दक्षिण भारत में आज भी इनकी कृतियों का अधिक सम्मान होता है। इनका काल सोलहवीं शताब्दी का मध्यभाग है।

८. रामदास

ये नियोगी ब्राह्मण गोपन्नामात्य के पुत्र हैं। इन्होंने रामभक्त होने के कारण संगीतसाहित्य में आत्मनैपुण्य के निदर्शक कीर्तन प्राय श्रीराम की सेवा के रूप में बनाये हैं। वे कीर्तन तेलुगु भाषा में हैं।

थी। कहा जाता है कि देवीजी की आज्ञा से तजौर के राजा प्रतापसिह ने ही, दस हजार रुपये देकर उन्हें बचाया था।

१९. आदिप्पय्य एव उनकी संतान

यह आदिप्पय्य कर्णाटक ब्राह्मण हैं। तेलुगु तथा सस्कृत के पडित है। इन्होने वीरभद्रय्य के मार्ग पर चलकर, रक्तिपूर्ण देशी रागो में अनेक कीर्तन, विशेष गमक-जातियो से युक्त रचे हैं जो "श्रीवेंकटरमण" की मुद्रा से मुद्रित हैं। रागालापन की मध्यमकाल-पल्लवी का परिष्कार इन महाशय के द्वारा हुआ है। इनका तानवर्ण "विरिबोणि" जो भैरवी राग का है, बहुत प्रसिद्ध है। वह वर्ण मौखिक व वीणागान में समानरूपेण रजक है।

आदिप्पय्य के पुत्र वीणा-कृष्णय्य हैं, जो प्रसिद्ध वैणिक हैं। इनके तीन प्रबध, जो "सप्ततालेश्वरम्" नाम से प्रसिद्ध हैं, मैसूर, विजयनगर तथा पुदुक्कोट्टै के राजाओ के विषय में रचे हुए हैं। इनके पुत्र वीणा-सुब्बुक्कुट्टि अय्य भी प्रसिद्ध वैणिक थे, इनका तालज्ञान, जो वैणिको में थोडा ही पाया जाता है, बेजोड था।

२० सोंटि वेंकटसुब्बय्य

यह तैलग ब्राह्मण हैं। तेलुगु भाषा में तथा सगीतशास्त्र में निपुण थे। वेंकट मखी के रागागादि रागो के सप्रदायज्ञ थे। तजौर के महाराष्ट्र राजा तुलजा के बारे में इनका बिलहरी राग में रचित एक वर्ण, विचित्र कल्पनाओ से युक्त एव मनोरजक है। इनके पुत्र वेंकटरमणय्य भी सगीत-साहित्य तथा गान दोनो मार्गों में अपने पिता की अपेक्षा भी निपुणतर निकले थे।

२१. रामस्वामी दीक्षित

ये द्राविड ब्राह्मण हैं। सस्कृत व तेलुगु भाषा के पडित हैं। पहले वीरभद्रय्य से तथा पीछे वेंकटवैद्यनाथ दीक्षित से इन्होने शिक्षा पायी। इनकी तथा इनके पुत्र मुद्दुस्वामी दीक्षित की कई रागतालमालिकाओ, तानवर्णों और कीर्तनो ने इनकी आर्थिक परिस्थिति की श्रीवृद्धि की और वे ही इनकी ख्याति के कारण भी हुए।

२२ श्यामाशास्त्री

इन्होंने १७६३ ई० में जन्म लिया, सस्कृत व तेलुगु के पडित होकर एक यतीन्द्र से सगीत का भी अभ्यास किया था। श्रीविद्या के प्रसाद से प्राप्त इनकी प्रखर प्रतिभा की झलक इनके प्रत्येक कीर्तन में पायी जानेवाली गेय-कल्पना व साहित्य-चमत्कार के कारण स्पष्ट दिखाई पड़ती है। इनकी रचनाएँ "श्यामकृष्ण" की मुद्रा से अकित हैं। ये महानुभाव सगीत की त्रिमूर्तियो में अन्यतम हैं।

इनके दूसरे पुत्र सुब्बराय शास्त्री भी सस्कृत और तेलुगु, दोनो भाषाओ में प्रवीण और सगीतमर्मज्ञ थे। इनके बहुत-कुछ कीर्तन एव स्वरजातियाँ अब भी प्रसिद्ध हैं।

२३ वीण पेरुमालय्य

यह आध्र ब्राह्मण और तजौर आस्थान के पडित थे। घनराग के तानो को बजाने में सिद्धहस्त थे। भैरवी जैसे रक्तिरागो को लगातार नौ या दस दिनो तक बजाकर पूर्ण करना इनकी अपनी विशेषताओ में से एक है। सौराष्ट्र और सावेरीराग के दो तानवर्णो की रचनाएँ, उनकी गेयरचना की चातुरी के नमूने हैं।

२४. श्री त्यागराजय्य

ये गिरिराज कवि के पौत्र और दरबारी विद्वान् सोंटि वेंकटरमणय्य के शिष्य थे। सस्कृत तथा तेलुगु भाषा की शिक्षा पाकर एक ही वर्ष के अभ्यास से सगीत के विविध विषयो के विज्ञ निकले। इसके पहले ही वेदाध्ययन कर चुके थे। अचानक ही काचीनगरी के एक भागवतोत्तम का साक्षात्कार इनसे हुआ। उन्होने रामनाम का उपदेश दिया था। इन्होने इसी तारकमत्र के प्रभाव से भगवद्दर्शन किये थे। पहले-पहल जब दर्शन पाया था, वही समय इनकी रचना का आरभकाल था। भगवान् नारदजी ने भी इनकी भक्तिपरायणता से मुग्ध होकर, "स्वरार्णव" नामक पुस्तक दी थी। उस समय में ही नारदजी के विषय में कई एक कीर्तन रचे हैं। इनकी रचनाएँ प्राय. समयानुकूल हैं और "रामचद्रजी" की सेवा के रूप में रची हुई हैं। प्रत्येक कीर्तन "त्यागराज" की मुद्रा से अकित, तेलुगु भाषा में है। इनकी कृतियो में बहुत प्रसिद्ध पाँच हैं, जो "पचरत्न कीर्तन" कहाते हैं। सारी रचनाओ में भक्ति रस की ही प्रधानता है। इन्होने अपने जीवन को राम की सेवा में ही अर्पित किया था। तजौर के राजा शरभोजी की आज्ञा एव प्रार्थना का अनादर करके आदर एव सपत्ति से वचित रहने का साहस इन्होने ही किया था। ऐसे समयो में जो परिस्थिति सामने आ पडी थी, उससे लाचार होकर इन्होने कई कीर्तन रचे थे। वे कृतियाँ भी अब गायी जाती हैं।

ये तीर्थयात्रा के कारण अनेक स्थानो में घूमे। श्रीरग, शेषाद्रि आदि तीर्थों के देवताओ के बारे में कीर्तन गाते थे। अतिम दिनो में इन्होने प्रव्रज्या ले ली थी। सत त्यागराज स्वामीजी सतहत्तर वर्ष की अवस्था में गोलोकवासी हुए थे। इनकी समाधि तजौर के पास के पचनदक्षेत्र में है।

ये सगीत की त्रिमूर्तियो में अन्यतम हैं। केवल ये महात्मा ही तेलुगु तथा अतेलुगु लोगो में समानरूपेण लोकप्रिय हुए हैं।

२५ वीणा कुप्पय्य और उनके पुत्र

गायन एव वीणावादन में ये वहुत श्रेष्ठ है। इन्होने गेयचमत्कृति से युक्त तानवर्ण कीर्तनो की रचना की है। इनके पुत्र त्यागय्य ने, जिसका नामकरण अपनी गुरुभक्ति के कारण कुप्पय्या ने किया था, कई तानवर्ण रचे थे। इनके अलावा "पल्लवी-स्वरकल्पवल्ली" के रचयिता भी ये ही है।

२६ वैकुठ शास्त्री

शास्त्रीजी सस्कृत वाग्गेयकारो में प्रमुख है। अन्य काव्य नाटक अलकारशास्त्रों की तरह सगीतशास्त्र भी इनके अध्ययन का विषय था। गेयकल्पनायुक्त सस्कृत-कीर्तन, रक्ति एव देशी रागो में इन्होने रचे थे। "वैकुठ" की मुद्रा से इनके कीर्तन अकित है।

२७. कुप्पुस्वामी अय्यर

यह द्रविड ब्राह्मण है। तेलुगु भाषाविज्ञ भी थे। इनके कीर्तन प्राय भक्ति रस के हैं। कई एक शृगार रस के भी है। दोनो गेयकल्पनाएँ वहुत चमत्कारयुक्त हैं। पदविन्यास ललित है। "वरदवेकट" की मुद्रा से मुद्रित है।

२८ पल्लवि गोपालय्यर

इनकी इस "पल्लवि" पदवी का मुख्य कारण इनकी प्रतिभा थी, जिससे ये पल्लवी के गाने में बेजोड हुए थे। इनके रचे हुए एक "वनजाक्षी" कल्याणी नामक तानवर्ण से ही, सगीतकल्पनाचमत्कार, गमक, स्वरकल्पनाशय्या इत्यादि का पता चलेगा। इन्होंने "वेंकट" की मुद्रा से अकित अन्य कई तानवर्णों की रचना भी की है। ये अमरसिह तथा शरभोजी के समकालिक हैं।

२९. मुद्दुस्वामी दीक्षित

ये रामस्वामी दीक्षित के पुत्र थे। ई० सन् १७७५ में उत्पन्न हुए थे। सोलह बरस में ही साङ्गवेदाध्ययन कर चुके थे। ज्योतिष, वैद्यक तथा मत्रशास्त्र में भी विशेष प्रज्ञा थी। सौभाग्य से चिदवरनाथ योगी नामक एक सिद्धपुरुष ने इनको श्रीविद्या का उपदेश दिया था। पीछे सुब्रह्मण्य का अनुग्रह भी इन्हें मिला था। इन्होने प्राय: सभी तीर्थों की यात्रा की है। वहाँ के देव-देवियो के स्तोत्ररूप विविध कीर्तन रचे हैं। इनकी भाषा पूर्णरीति से सस्कृत है, तो भी गेयकल्पना, अर्थपुष्टि, ललितपदविन्यास आदि से युक्त है। इनके कीर्तन "गुरुगुह" की मुद्रा से अकित हैं। इनके कीर्तन

वेंकट मखी के सप्रदाय के अनुसार हैं। रागो के नाम से भी शोभित हैं। अर्थपुष्टि, विन्यासचातुरी इत्यादि उच्चकोटि की है। इनके अलावा मूडादि सात तालो में रचे हुए नवग्रह कीर्तन और कमलाबा देवीजी की नवावरणपूजा के अनुसार रचित नौ कीर्तनो से इनकी प्रशस्ति सर्वतोमुखी हुई।

ये महानुभाव सगीत की त्रिमूर्ति में अन्यतम हैं। ई० सन् १८३५ में, एट्टयपुर राजा के अनुरोध से वहाँ चले गये थे। वही उसी साल में उनका वियोग हुआ था।

३०. चिन्नस्वामी दीक्षित

यह मुद्दुस्वामी दीक्षित के भाई है। सस्कृत और आध्र भाषा के विद्वान् है। सगीतशास्त्र का अध्ययन करके वैणिकश्रेष्ठ हुए थे। कई राजसभाओ मे इन्होने वैणिकश्रेष्ठ के रूप में प्रशसा पायी है। तोडी तथा कल्याणी के इनके दो कीर्तन प्रसिद्ध है।

३१ वालस्वामी दीक्षित

ये भी मुद्दुस्वामी दीक्षित के भाई है। वीणा ही नही, इनके लिए सितार, फिडिल, मृदग इत्यादि वाद्यो का वजाना वायें हाथ का खेल था। मणलि मोदलियार के सौजन्य से इन्होने एक अग्रेजी फिडिल वादक का शिष्य होकर पाश्चात्य सगीत की शिक्षा भी पायी थी। एट्टयपुर राजा के सभापडित होकर उस राजा के वारे में कई कीर्तन रचे थे। उस राजा के पुत्र को सगीत सिखाया था। पीछे उस कुँवर राजा के द्वारा रचित विविध रागो के सस्कृत कीर्तनो को, विशेष चमत्कार व कल्पनायुक्त मुक्तायिस्वरो से सज्जित किया था। इनके नाट तथा दूसरे रागो के तानवर्ण, जो चमत्कृतिजनक स्वरो और जातियो से युक्त है, वेजोड है। इनका समय ई० सन् १७८६ से १८५९ तक है।

३२. चौक सीनु अय्यर

यह द्रविड ब्राह्मण एव सगीत के चतुर विद्वान थे। रागालाप आदि को वहुत विलब से गाने में चतुर थे। इसी कारण "चौक सीनु अय्यर" नाम से प्रसिद्ध हुए थे। शरभोजी तथा उनके पुत्र शिवाजी के समय हुए थे।

३३. मय्यार्जुन प्रतापसिंह महाराज

तजोर के महाराष्ट्र राजा अमरसिंह के पुत्र हैं। सस्कृत तथा महाराष्ट्री में विचक्षण थे। इनके मृदगवादन का कौशल प्रसिद्ध है। इनकी साहित्य रचना में,

२५. वीणा कुप्पय्य और उनके पुत्र

गायन एव वीणावादन में ये बहुत श्रेष्ठ हैं। इन्होने गेयचमत्कृति से युक्त तानवर्ण कीर्तनो की रचना की है। इनके पुत्र त्यागय्य ने, जिसका नामकरण अपनी गुरुभक्ति के कारण कुप्पय्या ने किया था, कई तानवर्ण रचे थे। इनके अलावा "पल्लवी-स्वरकल्पवल्ली" के रचयिता भी ये ही हैं।

२६. वैंकुठ शास्त्री

शास्त्रीजी सस्कृत वाग्गेयकारो मे प्रमुख हैं। अन्य काव्य नाटक अलकारशास्त्रों की तरह सगीतशास्त्र भी इनके अध्ययन का विषय था। गेयकल्पनायुक्त सस्कृत-कीर्तन, रक्ति एव देशी रागो में इन्होने रचे थे। "वैंकुठ" की मुद्रा से इनके कीर्तन अकित हैं।

२७ कुप्पुस्वामी अय्यर

यह द्रविड ब्राह्मण हैं। तेलुगु भाषाविज्ञ भी थे। इनके कीर्तन प्राय भक्ति रस के हैं। कई एक शृगार रस के भी हैं। दोनो गेयकल्पनाएँ बहुत चमत्कारयुक्त हैं। पदविन्यास ललित है। "वरदवेंकट" की मुद्रा से मुद्रित हैं।

२८. पल्लवि गोपालय्यर

इनकी इस "पल्लवि" पदवी का मुख्य कारण इनकी प्रतिभा थी, जिससे ये पल्लवी के गाने में बेजोड हुए थे। इनके रचे हुए एक "वनजाक्षी" कल्याणी नामक तानवर्ण से ही, सगीतकल्पनाचमत्कार, गमक, स्वरकल्पनाशय्या इत्यादि का पता चलेगा। इन्होने "वेंकट" की मुद्रा से अकित अन्य कई तानवर्णों की रचना भी की है। ये अमरसिंह तथा शरभोजी के समकालिक हैं।

२९. मुद्दुस्वामी दीक्षित

ये रामस्वामी दीक्षित के पुत्र थे। ई० सन् १७७५ में उत्पन्न हुए थे। सोलह बरस में ही साङ्गवेदाध्ययन कर चुके थे। ज्योतिष, वैद्यक तथा मन्त्रशास्त्र में भी विशेष प्रज्ञा थी। सौभाग्य से चिदबरनाथ योगी नामक एक सिद्धपुरुष ने इनको श्रीविद्या का उपदेश दिया था। पीछे सुब्रह्मण्य का अनुग्रह भी इन्हें मिला था। इन्होने प्रायः सभी तीर्थों की यात्रा की है। वहाँ के देव-देवियो के स्तोत्ररूप विविध कीर्तन रचे हैं। इनकी भाषा पूर्णरीति से सस्कृत है, तो भी गेयकल्पना, अर्थपुष्टि, ललितपदविन्यास आदि से युक्त हैं। इनके कीर्तन "गुरुगुह" की मुद्रा से अकित हैं। इनके कीर्तन

वेंकट मखी के सप्रदाय के अनुसार हैं। रागो के नाम से भी शोभित हैं। अर्थपुष्टि, विन्यासचातुरी इत्यादि उच्चकोटि की हैं। इनके अलावा मूडादि सात तालो में रचे हुए नवग्रह कीर्तन और कमलावा देवीजी की नवावरणपूजा के अनुसार रचित नौ कीर्तनो से इनकी प्रशस्ति सर्वतोमुखी हुई।

ये महानुभाव सगीत की त्रिमूर्ति में अन्यतम हैं। ई० सन् १८३५ में, एट्टयपुर राजा के अनुरोध से वहाँ चले गये थे। वही उसी साल में उनका वियोग हुआ था।

३०. चिन्नस्वामी दीक्षित

यह मुद्दुस्वामी दीक्षित के भाई हैं। सस्कृत और आध्र भाषा के विद्वान् हैं। सगीतशास्त्र का अध्ययन करके वैणिकश्रेष्ठ हुए थे। कई राजसभाओ मे इन्होंने वैणिकश्रेष्ठ के रूप में प्रशसा पायी है। तोडी तथा कल्याणी के इनके दो कीर्तन प्रसिद्ध हैं।

३१. वालस्वामी दीक्षित

ये भी मुद्दुस्वामी दीक्षित के भाई हैं। वीणा ही नही, इनके लिए सितार, फिडिल, मृदग इत्यादि वाद्यो का बजाना बायें हाथ का खेल था। मणलि मोदलियार के सौजन्य से इन्होंने एक अग्रेजी फिडिल वादक का शिष्य होकर पाश्चात्य सगीत की शिक्षा भी पायी थी। एट्टयपुर राजा के सभापडित होकर उस राजा के बारे में कई कीर्तन रचे थे। उस राजा के पुत्र को सगीत सिखाया था। पीछे उन कुँवर राजा के द्वारा रचित विविध रागो के सस्कृत कीर्तनो को, विशेष चमत्कार व कल्पनायुक्त मुक्तायिस्वरो से सज्जित किया था। इनके नाट तथा दूसरे रागो के तानवर्ण, जो चमत्कृतिजनक स्वरो और जातियो से युक्त हैं, बेजोड हैं। इनका समय ई० सन् १७८६ से १८५९ तक है।

३२. चौकं सीनु अय्यर

यह द्रविड ब्राह्मण एव सगीत के चतुर विद्वान थे। रागालाप आदि को बहुत विलब से गाने में चतुर थे। इसी कारण "चौक सीनु अय्यर" नाम से प्रसिद्ध हुए थे। शरभोजी तथा उनके पुत्र शिवाजी के समय हुए थे।

३३. मय्यार्जुन प्रतापसिंह महाराज

तजौर के महाराष्ट्र राजा अमरसिंह के पुत्र हैं। सस्कृत तथा महाराष्ट्री में विचक्षण थे। इनके मृदगवादन का कौशल प्रसिद्ध है। इनकी साहित्य रचना में,

"नवरत्नमालिका" नाम को रागतालमालिका वर्णक्रम और स्वरचमत्कृति से लसित है।

३४ कुलशेखर पेरुमाळू

तिरुवनतपुर के राजा कुलशेखर सस्कृत, केरली, तेलुगु, हिंदुस्तानी, अग्रेजी इत्यादि भाषाओ में प्रवीण थे। साथ ही सगीत के प्रतिभावान् विद्वान् थे। इनके द्वारा रचित तरह-तरह के रक्ति व देशी रागो के सस्कृत-चौकवर्ण, जो गेयकल्पना तथा चातुरी से रजित और "पद्मनाभ" की मुद्रा से अकित है, असख्य हैं। इनके अलावा तेलुगु तथा केरली भाषा में भी सगीत साहित्य की रचनाएँ इन्होने की है।

३५. शेषाचल भागवत

यह पुदुक्कोट्टै के आस्थानपडित थे। प्राचीन सप्रदाय के रागालापन और कीर्तन के गाने में अद्वितीय थे। प्रसिद्ध श्यामाशास्त्रीजी के शिष्य थे। इनके भाई, पुत्र तथा पौत्र, सब वशानुगत सगीतविशारद थे और उसी आस्थान के विद्वान् भी हुए थे।

३६. सदाशिव ब्रह्म

सत सदाशिव ब्रह्म अमानुषिक विभूतिवाले महानुभाव थे। ब्रह्मानद में निमग्न ये योगिराट् अखड कावेरी के प्रान्तो में गाते-गाते विचरते थे। गेय वाक्-रूप इनके सस्कृत कीर्तनो में पदलालित्य व श्रवणसुख के अलावा अलौकिक शक्ति भी सुननेवाले अनुभव करते हैं। विविध रागो में इनके सस्कृत कीर्तन, सस्कृतज्ञो और असस्कृतज्ञो में प्रसिद्ध हैं। इनकी समाधि नेरूर में है, जो आजकल एक तीर्थस्थान है।

३७. अक्किल स्वामी

ये यतीद्र कृष्णभक्त थे। चिदबर के पास रहा करते थे। सस्कृत में इन्होने कीर्तन रचे थे। कहा जाता है, श्रीकृष्ण के प्रसाद से इनकी एक शारीरिक व्याधि नष्ट हुई थी। उसी समय इन्होने एक कीर्तन रचा था जो कल्याणी राग का "तावक-करकमले" कीर्तन है।

३८ शिवरामाश्रमी

ये तैलग ब्राह्मण थे। इन्होने सगीतकीर्तन और भक्तिमार्ग के पदो को सीखकर "निजभजनसुखपद्धति" की रचना की और बीस ही वर्ष की आयु में प्रव्रज्या ग्रहण की थी। सारे देश का भ्रमण करके, अन्तत तिरुवारूर में रहकर त्यागराज स्वामी की भक्ति की। इनकी रचनाएँ तेलुगु और सस्कृत, दोनो में पायी जाती हैं।

३९. सारगपाणि

इनके पद शृगार और हास्यरस-प्रधान हैं। हास्यरस की रचनाओं में ग्राम्योक्तियां तथा चाटु मुख्य है। "वेणुगोपाल" की मुद्रा मे अकित हैं। यह भी तैलग ब्राह्मण है।

४०. मेलट्टूर वेंकटराम शास्त्री

यह तैलग ब्राह्मण और शरभोजी के समसामयिक एव तेलुगु भापा के पडित थे। इनके पद, कैशिकी रीति के पदविन्यास से युक्त शृगाररस-प्रधान हैं।

४१. तोडि सीतारामय्य

तोडी राग इनकी सपत्ति थी। कहा जाता है कि आर्थिक परिस्थिति जव विगड़ जाती, तव तोडी को धरोहर रखकर उससे प्राप्त धन द्वारा ये कालयापन करते थे। राजा-रईसो की सहायता से ऋण चुकाकर ही तोडी गाते। इनके तोडीराग को सुनने के लिए लोग तरसते रहते थे। इन्होने कई और रचनाएँ भी की थी, जो कल्पना की खान हैं।

४२ तच्चूरु शिगराचार्य

यह आध्र वैष्णव ब्राह्मण थे। फिडिल वजाने में वहुत समर्थ थे। इनके कई सस्कृत कीर्तन गेय कल्पनाओ से युक्त हैं। स्वरमजरी, गायकपारिजात, सगीतकलानिधि, गायकलोचन और गायकसिद्धाजन आदि पुस्तको के प्रकाशन में इनका वड़ा हाथ था।

४३ अरुणगिरिनाथ

इनका वासस्थान सीयाळि था। तमिल भापा के पचलक्षणो के विज्ञ थे। इनके समय में तुळजा राजा ने तजौर का शासन किया था। यह सगीत शास्त्र मे दक्ष थे। श्रीमद्रामायण के प्रत्येक कथासदर्भ को सदर्भानुसृत रसो के ह्लादजनक रागो में, तमिल कीर्तन के रूप में इन्होने रचा था। प्रत्येक कीर्तन वर्णक्रमचातुरी से निवद्ध है। इन रामायण-कीर्तनो को इन्होने मणलि मुद्दूकृष्ण मोदलियार की सभा में गाकर उनके हाथो कनकाभिपेक पाया था। तमिल प्रात में इनकी वहुत ख्याति है।

४४. मुत्तुताडवर्

यह द्रविड भापा और सगीत के पडित और शिवभक्त शिरोमणि हैं। चिदवर के सभापति के वारे में, भक्ति और शृगाररस के विविध पद तथा कीर्तन इन्होने रचे हैं। इनका समय अरुणगिरिनाथ के पूर्व है।

"नवरत्नमालिका" नाम की रागतालमालिका वर्णक्रम और स्वरचमत्कृति से लसित है।

३४. कुलशेखर पेरुमाळ्

तिरुवनंतपुर के राजा कुलशेखर संस्कृत, केरली, तेलुगु, हिंदुस्तानी, अंग्रेजी इत्यादि भाषाओं में प्रवीण थे। साथ ही संगीत के प्रतिभावान् विद्वान् थे। इनके द्वारा रचित तरह-तरह के रक्ति व देशी रागों के संस्कृत-चौकवर्ण, जो गेयकल्पना तथा चातुरी से रंजित और "पद्मनाभ" की मुद्रा से अंकित हैं, असंख्य हैं। इनके अलावा तेलुगु तथा केरली भाषा में भी संगीत साहित्य की रचनाएँ इन्होंने की हैं।

३५. शेषाचल भागवत

यह पुदुक्कोट्टै के आस्थानपंडित थे। प्राचीन संप्रदाय के रागालापन और कीर्तन के गाने में अद्वितीय थे। प्रसिद्ध श्यामाशास्त्रीजी के शिष्य थे। इनके भाई, पुत्र तथा पौत्र, सब वंशानुगत संगीतविशारद थे और उसी आस्थान के विद्वान् भी हुए थे।

३६. सदाशिव ब्रह्म

संत सदाशिव ब्रह्म अमानुषिक विभूतिवाले महानुभाव थे। ब्रह्मानंद में निमग्न ये योगिराट् अखंड कावेरी के प्रान्तों में गाते-गाते विचरते थे। गेय वाक्-रूप इनके संस्कृत कीर्तनों में पदलालित्य व श्रवणसुख के अलावा अलौकिक शक्ति भी सुननेवाले अनुभव करते हैं। विविध रागों में इनके संस्कृत कीर्तन, संस्कृतज्ञों और असंस्कृतज्ञों में प्रसिद्ध हैं। इनकी समाधि नेरूर में है, जो आजकल एक तीर्थस्थान है।

३७. अक्किल स्वामी

ये यतींद्र कृष्णभक्त थे। चिदंबर के पास रहा करते थे। संस्कृत में इन्होंने कीर्तन रचे थे। कहा जाता है, श्रीकृष्ण के प्रसाद से इनकी एक शारीरिक व्याधि नष्ट हुई थी। उसी समय इन्होंने एक कीर्तन रचा था जो कल्याणी राग का "तावक करकमले" कीर्तन है।

३८ शिवरामाश्रमी

ये तैलंग ब्राह्मण थे। इन्होंने संगीतकीर्तन और भक्तिमार्ग के पदों को सीखकर "निजभजनसुखपद्धति" की रचना की और बीस ही वर्ष की आयु में प्रव्रज्या ग्रहण की थी। सारे देश का भ्रमण करके, अन्तत तिरुवारूर में रहकर त्यागराज स्वामी की भक्ति की। इनकी रचनाएँ तेलुगु और संस्कृत, दोनों में पायी जाती हैं।

३९. सारगपाणि

इनके पद शृगार और हास्यरस-प्रधान हैं। हास्यरस की रचनाओ में ग्राम्योक्तियाँ तथा चाटु मुख्य हैं। "वेणुगोपाल" की मुद्रा से अकित हैं। यह भी तैलग ब्राह्मण हैं।

४०. मेलट्टूर वेंकटराम शास्त्री

यह तैलग ब्राह्मण और शरभोजी के समसामयिक एव तेलुगु भाषा के पडित थे। इनके पद, कैशिकी रीति के पदविन्यास से युक्त शृगाररस-प्रधान हैं।

४१. तोडि सीतारामय्य

तोडी राग इनकी सपत्ति थी। कहा जाता है कि आर्थिक परिस्थिति जव विगड जाती, तव तोडी को धरोहर रखकर उससे प्राप्त धन द्वारा ये कालयापन करते थे। राजा-रईसो की सहायता से ऋण चुकाकर ही तोडी गाते। इनके तोडीराग को सुनने के लिए लोग तरसते रहते थे। इन्होने कई और रचनाएँ भी की थी, जो कल्पना की खान हैं।

४२ तच्चूरु शिगराचार्य

यह आध्र वैष्णव ब्राह्मण थे। फिडिल वजाने मे वहुत समर्थ थे। इनके कई सस्कृत कीर्तन गेय कल्पनाओ से युक्त हैं। स्वरमजरी, गायकपारिजात, सगीतकलानिधि, गायकलोचन और गायकसिद्धाजन आदि पुस्तको के प्रकाशन में इनका वडा हाथ था।

४३. अरुणगिरिनाथ

इनका वासस्थान शीयाळि था। तमिल भाषा के पचलक्षणो के विज्ञ थे। इनके समय मे तुलजा राजा ने तजौर का शासन किया था। यह सगीत शास्त्र में दक्ष थे। श्रीमद्रामायण के प्रत्येक कथासदर्भ को सदर्भानुमृत रसो के ह्लादजनक रागो में, तमिल कीर्तन के रूप में इन्होने रचा था। प्रत्येक कीर्तन वर्णक्रमचातुरी से निवद्ध हैं। इन रामायण-कीर्तनो को इन्होने मणलि मुद्दुकृष्ण मोदलियार की सभा में गाकर उनके हाथो कनकाभिषेक पाया था। तमिल प्रात में इनकी वहुत ख्याति है।

४४. मुत्तुताडवर्

यह द्रविड भाषा और सगीत के पडित और शिवभक्त शिखामणि हैं। चिदवर के सभापति के वारे में, भक्ति और शृगाररस के विविध पद तथा कीर्तन इन्होने रचे हैं। इनका समय अरुणगिरिनाथ के पूर्व है।

४५. पापविनाश मोदलियार

तजौर के तुलजा राजा के समकालिक मोदलियारजी तमिल तथा सगीत के विशारद थे। उनके पद "पापविनाश" की मुद्रा से अकित हैं। वे निंदास्तुति के रूप में रचे हुए हैं।

४६. घन कृष्णय्यर

यह प्रसिद्ध त्यागय्य के समकालिक ब्राह्मण है। इनका पल्लवि-गायन बहुत रजक होता था। इनके पद शृगाररस में प्रसिद्ध है। इनका स्थान उडयार पालयम् था। वहाँ के राजा को सम्बोधित करके कई पद रचे है। उन पदो में सारी विशेषताएँ पायी जाती है।

४७. शंकराभरणं नरसय्य

शरभोजी के समकालिक इन सज्जन ने तमिल भाषा में कई पदो की रचना की थी जो गेय कल्पनाओ से रजक है। इन ब्राह्मण-विद्वान् का शकराभरण राग अनुपम है। इसी कारण इनका नाम शकराभरण नरसय्य पडा है।

४८. आनतांडवपुर बालकृष्ण भारती

यह ब्राह्मण शिवभक्त है। रक्ति व देशी रागो के अलावा और कई रागो के कीर्तन गेय कल्पना एव चमत्कार से युक्त रचे थे, जो "गोपालकृष्ण" की मुद्रा से मुद्रित है। इस भक्त-ब्रह्मचारी ने "नदनार" नाम के प्रसिद्ध शिवभक्त का चरित रचा था।

४९. वैद्दीश्वरनकोइल सुब्बरामय्य

इन्होने शृगाररस के कीर्तन , "मुद्दुक्कुमरन" की मुद्रा से अकित रचे है। द्राविडी भाषा और संगीत शास्त्र के विद्वान् थे।

५० व्रेंकटेश्वर एट्टप्प महाराज

इनका शासन समय ई० सन् १८१६ से १८३९ तक का था। यह राजा सस्कृत, आध्र और द्राविड के पडित थे। सगीत शास्त्र के मर्मज्ञ थे। वैणिक श्रेष्ठ भी थे। "शिवगुरुनाथ" की मुद्रा से अकित मुखारि राग का द्राविड कीर्तन इन्ही का है। इन्होने कई द्राविड वृत्त रचे थे।

५१. सुब्बराम दीक्षित

मुद्दुस्वामी दीक्षित के दत्तक पुत्र है। इन्होने सस्कृत तथा तेलुगु भाषा की और सगीत शास्त्र की भी ऊँची शिक्षा पायी थी। वीणा की शिक्षा पिता से मिली थी।

पहले-पहल श्री कार्तिकेय के बारे में दरबार राग का एक तानवर्ण रचकर राजसभा में गा सुनाया था। इनके कर्तृत्व में संदेह होने के कारण, संदेह को दूर कराने के लिए यमुना राग का एक जातिस्वर इनसे रचाया गया था। इनकी रचनाओं में कीर्तन, तानवर्ण, चौक-वर्ण, रागमालिका आदि हैं।

५२. पट्टण सुब्रह्मण्यय्य

यह तमिल ब्राह्मण १९ वीं सदी के उत्तरार्ध में थे। इनका वासस्थान तंजौर के आस-पास का पंचनद क्षेत्र था। आंध्र भाषा और संगीत शास्त्र दोनों की शिक्षा पायी थी। इनके तेलुगु कीर्तन बहुत प्रसिद्ध हैं।

५३. वेंकटेश्वर शास्त्री

संस्कृत और तमिल के पंडित थे। साथ ही संगीत शास्त्रज्ञ तथा श्रेष्ठ वैणिक भी। संगीतस्वरबोधिनी के प्रकाशक हैं। इनके रचे हुए संस्कृत-कीर्तन कई एक मिलते हैं।

५४. गर्भपुरी धर्मपुरी वाले

ये यमल विद्वान् "गर्भपुरी" और "धर्मपुरी" की मुद्राओं से अंकित शृंगाररस की जावलियों के रचयिता हैं।

५५. रावबहादुर नागोजीराव

यह महाराष्ट्र ब्राह्मण बहुभाषाविज्ञ तथा संगीतज्ञ भी थे। रागविबोधिनी तथा सुन्दरी संगीत पुस्तकों के प्रकाशक हैं। इन्होंने पाठशालाओं के इंस्पेक्टर के पद पर रहकर संगीत पुस्तकों के प्रकाशन में काफी दिलचस्पी ली थी।

कल्लिनाथ

संगीतरत्नाकर की प्रसिद्ध व्याख्या "कलानिधि" के रचयिता हैं। विद्यानगर के महाराज इम्मडि देवराय के आस्थान पंडित थे। इनका समय ई० सन् १५५० के आसपास था।

वेंकटरामय्य

जातीय ज्ञान के साथ कीर्तनों के गाने में जो कठिनता होती है उसका तनिक भी अनुभव किये बिना, यह महाशय गाते थे। इसलिए "इनुपननिगेल"—अर्थात् "लोहे के चने" की उपाधि इन्हें मिली थी। वीरेंद्र स्वामी के बारे में रचा हुआ इनका "मत-

मनि" तोड़ी कीर्तन प्रसिद्ध है। इनकी कृतियो में "गोपालकृष्ण" की मुद्रा सुनाई पड़ती है। इनका समय भी आदिप्पय्य का अतिम काल है।

त्यागराजय्य के शिष्य

१ वीण कुप्पय्य (२५ देखिए)

२ वालाजीपेट वेंकटराम भागवत

इनके शिष्य प्राय सौराष्ट्रभाषी थे। उनके द्वारा त्यागराजय्य के कीर्तन का प्रचार व प्रसार इन्होंने कराया था।

अन्य शिष्य—

अय्या भागवत

सुब्बराम भागवत

तिल्लस्थान रामय्यगार

उमयापुर कृष्णभागवत

सुदर भागवत

गोविंदसामय्य

यह तैलग ब्राह्मण थे। इनकी रचनाएँ शृगाररस प्रधान हैं। कावेरी नगर सस्थान के राजा के प्रति मोहनराग में एक वर्ण इन्होने रचा था। इनके कई अन्य वर्ण देवताओ के विषय में रचे हुए हैं। नवरोज व केदारगौड राग के इनके वर्ण बहुत प्रसिद्ध हैं।

विजयगोपाल

ये भक्त-विद्वान् थे। सस्कृत तथा तेलुगु में इनके कीर्तन भक्तिरस-स्निग्ध हैं। इनकी कृतियाँ "विजयगोपाल" की मुद्रा से अकित है। इनका समय १७ वी सदी का अतिम भाग है।

मुद्दुस्वामी दीक्षित (२९) के शिष्य

(१) सगीत व द्राविडी के पडित तिरुक्कडयूर भारती।

(२) आवडयार कोयिल वीणा वेंकटरामय्यर।

(३) तेवूर सुब्रह्मण्यय्य।

(४) सगीत-मृदग-लक्ष्य-लक्षणदक्ष तिरुवारूर शुद्ध मृदग तवियप्पा।

(५) भरतश्रेष्ठ तजाऊर पोन्नय्या।

(६) वडिवेलु।

(७) भरतलक्ष्यलक्षणविशारद कोरनाडु रामस्वामी।
(८) नागस्वरप्रज्ञ तिरुवळुदूर विल्लवन।
(९) तानवर्णपद रचयिता तिरुवारूर अय्यास्वामी।
(१०) नाट्यगानविद्या विदुषी तिरुवारूर कमल।
(११) गानयशस्विनी वळ्ळलार कोडल अम्मणि।

दोरसामय्य

इनकी तेलुगु कृतियो में "सुब्रह्मण्य" की मुद्रा से अकित कीर्तन प्रसिद्ध है। सहज शैली और रजनयुक्त हैं। ये द्रविड ब्राह्मण है। इनका समय शरभोजी का अतिम तथा शिवाजी का आदिम काल है।

रामानंद यतींद्र

ये सस्कृत साहित्य रचना में दक्ष थे। इनके गौरीराग-प्रवन्ध को देखने से इनके पाडित्य की स्पष्ट झलक दिखाई पडती है। ये अहोवल पडित के पिछले समय में थे।

नारायण तीर्थ

इनकी रची हुई तरगो से सस्कृत साहित्य की रचना का पता चलेगा। प्राय ३५० वर्षों के पहले इनका समय है।

स्वयप्रकाश यतींद्र

मायूर क्षेत्र के रहनेवाले ये यतिराट् सस्कृत तथा तेलुगु के प्रकाण्ड पडित थे। साथ ही सगीत शास्त्र निष्णात भी थे। इनके सस्कृत कीर्तन प्रसिद्ध हैं।

युवरगपद

उडयारपालय सस्थान के अधीश युवरग, रसिकशिखामणि एव उदार दाता थे। इनके वारे में, कई वाग्गेयकारो के द्वारा गेयकल्पनायुक्त पद रचे गये। वे ही युवरगपद नाम से प्रसिद्ध हैं। तुलजा राजा के समकालिक थे।

परिमलरग

"परिमलरग" की मुद्रा से जो पद, प्रास तथा गमक से युक्त सुनाई पडते है उनके रचयिता यही परिमलरग हैं। इन्होने तेलुगु भाषा में रचना की थी। प्राय २५० वर्ष पहले, चेन्नपुरी के उत्तर प्रात में रहते थे।

शृंगारपद के रचयिता तेलुगु कवि

१	घटपल्लिवाला	—	कैलासपति की मुद्रा से युक्त पदो के रचयिता
२	बोल्लपुरवाला	—	बोल्लवर ,, ,, ,, ,,
३	जटपल्लिवाला	—	जटपल्लिगोपाल ,, ,, ,, ,,
४	शोभनगिरिवाला	—	शोभनगिरि ,, ,, ,, ,,
५	इनुकोडवाला	—	इनुकोडविजयराम ,, ,, ,, ,,
६	शिवरामपुरीवाला	—	शिवराम पुरम् रामपुर ,, ,, ,, ,,
७	वेणगिवाला	—	वेणगि ,, ,, ,, ,,
८	मल्लिकार्जुन	—	मल्लिकार्जुन ,, ,, ,, ,,

ये कवि आन्ध्रदेशस्थ तैलग ब्राह्मण थे। लगभग २५० वर्ष पहले रहे होगे।

अनुबन्ध १

(कर्नाटक पद्धति के रागों का आरोहण-अवरोहण-क्रम)

कर्नाटक संप्रदाय की आधुनिक पद्धति (शिङ्गराचार्य के गायकलोचन के अनुसार)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की संगीत सम्प्रदाय प्रदर्शिनी के अनुसार
(१) कनकांगी मेल-जन्य—९	(रि$_1$,ग$_1$,म$_1$,ध$_1$,नि$_1$)		
१ कीर्तिप्रिय	सरिमपधस–	सनिधपमगरिस।	
२ कनकाबरी	सरिगमपधनिधस–	सनिधपमगरिगरिस।	सारिमपधसा। सानीधपमगारिरीस्सा।
३ वागीश्वरी	सरिगमपधस–	सधपमगरिस।	
४ मुक्ताबरी	सरिगमपनिस–	सनिधमगरिस।	
५ शुद्धमुखारी	सरिगमपधनिस–	सनिधमगरिस।	सरिमपधसा। सनिधपमगरिस।
६ भोगचिंतामणि	सरिपमपधनिस–	सधपमगरिगरिस।	
७ मोहनमल्लार	सरिगमधनिधस–	सधनिधपमगरिस।	
८ खड्‌गप्रिय	सगरिगमपधपनिस–	सधपधमगरिस।	
९ तपोल्लासिनी	समरिगमपधनिस–	सधपगरिस।	
(२) रत्नांगी मेल-जन्य– ११	(रि$_1$,ग$_1$,म$_1$,ध$_1$,नि$_2$)		
१ ऋषभागी	सरिमपधनिस–	सनिधपमगरिस।	
२ वसंतभूपाल	सरिगपधनिस–	सनिधपमधमगरिस।	
३ फेनद्युति	सरिमपधनिस–	सनिधमगरिस।	सरिमपधधपनिनिस। सनिधधपमगगरिस।
४ गौरीगांधारी	समरिगमपधनिधस–	सनिधपमगरिस।	
५ जयसिंधु	सरिगमपस–	सपनिध गरिस।	

६. श्रीमणि — सरिगपधस— सनिधप॑रिस ।
७. वसतमनोहरी — सरिगमधनिस— सनिधमगरिस ।
८ जीवरजनी — सरिगमपधनिस— सधपमगरिस ।
९ घटारव — सरिसगमपनिस— सनिवपमगरिस । सगरिगम पधपनि धनिस । सनिधपमगरिस ।
१० भूपालचिंतामणि — सरिगमपधनिधस— सधनिधपमरिस ।
११ पुष्पवसत — सरिगपमधनिस— सधनिपमगरिस ।

३) गानमूर्ति मेल-जन्य—९ (रि, ग, म, ध, नि,)

१ गिरिकर्णिक — सरिमपधनिस— सनिधपमगरिस ।
२ सुरटिमल्लारु — सरिमपनिस— सनिधपमगरिस ।
३ सामवराली — सरिमपधनिस— सनिधपमगरिस ।
४ छायागौड़ — सरिगरिमपधनिस — सधनिपमगरिस ।
५ ललिततोडी — सरिगमपस— सनिधमगरिस ।
६ मगलगौरी — समपधनिस— सनिपधमगरिस ।
७ भिन्नपचम — सगमपधनिस— सनिवपमगरिस । सरिगगरिमपधपनिनीस्सा । सनिधमागगरिस ।
८ सारगललित — सरिगमरिमपनिस— सनिवपमरिस ।
९ त्र्यबकप्रिय — समरिगमपस— सनिसधपमगरिस ।

४) वनस्पति मेल-जन्य—९ (रि, ग, म, ध, नि,)

१ वीरविक्रमी — सरिगमपधनिस— सनिपधमगरिस ।
२ कर्णाटकसुरटी — सरिगमपधस— सनिधपमरिस ।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
३ सुरभूपणी	सरिगमपस–	सनिधनिपमरिस ।	
४ भानुमती	सरिगरिमपस–	सनिधपमगरिस ।	सरिमपधनिस । सनिधपमगारिस ।
५ इदुशीतल	सरिगमपधनिधस–	सधनिपमगरिस ।	
६ लीलारजनी	समरिगमपस–	सनिधपमगरिस ।	
७ रसाली	सरिमपधनिप–	सधपमरिस ।	
८ सुगात्री	समपधनिस–	सधपमगरिस ।	
९ श्वेताबरी	सरिगमपमधनिस–	सनिपमगरिस ।	

(५) भानवती मेल-जन्य—९ (रि, ग, म, ध, नि,)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
१ मानलोचनी	सरिगमपधनिपस–	सनिधमगरिस ।	
२ मगलदेशिक	सरिगमपनिधस–	सनिपधमगरिस ।	
३ देश्यगौरी	सरिगमधपनिस–	सधनिपमगरिस ।	
४ मनोरजनी	सरिमपधनिस–	सनिधपमगरिस ।	सरिमपधनीस । सनिसधप मपम रिग रिस ।
५ जयसावेरी	समरिगमपधनि–	धपमगरिसनिसा ।	
६ मगलभूषणी	पधसनिसरिगमप–	मगरिसनिधप ।	
७ घनश्यामल	सगमपधस–	सनिधपमगरिस ।	
८ पूर्वकन्नड	सरिगमपमपस–	सधनिधपमगरिस ।	
९ पूर्वसिधु	सरिगमपसनिस–	सधपमधमगरिस ।	

(६) तानरूपी मेल-जन्य—९ (रि$_2$ ग$_2$ म$_1$ ध$_1$ नि$_1$)

१	तिलकप्रकाशिनी	सरिगमपधनिस—	सनिपमगरिस।
२	देश्यनारायणी	सरिगमपनिस—	सनिधनिपमरिस।
३	सिंधुमालवी	सरिगमपधनिपनिस—	सनिपमरिस।
४	तनुकीर्ति	सरिमपनिस—	सनिधनिपमगमरिस। अव० सनिधनिपमगरिस।
५	छायानारायणी	सपमपधनिस—	सनिधनिपमगरिस।
६	श्रीमालवी	सरिगमपनिधनिपस—	सपमगरिस।
७	शृंगारिणी	सरिगमपस—	सनिधपमगरिस।
८	देश्यसुरटी	समरिगमपधनि—	पमगरिसनिस।
९	गौडमालवी	सरिगमपधनिपनिस—	सपधनिपमगरिस।

(७) सेनावती मेल-जन्य—१० (रि$_1$ ग$_2$ म$_1$ ध$_1$ नि$_1$)

१	सैंधवगौड़	सरिगमपधनिस—	सनिधमगमरिस।
२	सेनाग्रणी	सरिगरिमगमधनिस—	सनिधपमगरिस। सरिगगरिम गमप निधस्सा। सानीधप म गमागगरिस।
३	सिंधुगौरी	सगरिगमपस—	सधपमगरिस।
४	ईशगौड़	समगमपधनिस—	सधपधमगरिस।
५	भोगी	सगमपधनिधस—	सनिधपमगस।
६	छायागौरी	सरिमगमपनिधनिस—	सनिधपमगमरिस।
७	गौडचन्द्रिक	सरिमपधस—	सनिधपगरिस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० सं० प्र० के अनुसार
८ चिंतामणि	सरिगमसमपधनिस–	सधनिपमगरिस।	
९ छायामालवी	सगरिगमपधनिधस–	सनिधपमगमरिस।	
१० भानुगौड़	धसरिगमपधनि–	धपमगरिसनिधप।	

(८) हनुमत्तोडी मेल-जन्य—१९ (रि, ग, म, ध, नि,)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० सं० प्र० के अनुसार
१ हिमांगी	सरिगमपधनिधस–	सनिपधमगरिस।	
२ तोडी	सरिगमधनिस–	सनिधमगरिस।	सरिगामपधनीस। सनिधपमगारिस।
३ चंद्रिकागौड़	सरिगमपधस–	सधपमरिस।	
४ भूपाल	सरिगपधस–	सधपगरिस।	
५ भानुचंद्रिक	समधनिस–	सनिधमगस।	
६ नागवराली	निसगरिगमपध–	पमगरिसनि।	सरिगमप मधनिस। सनिधमपगरिस।
७ छायाबौली	सरिगामसपमधनिस–	सनिपधमगारिस।	
८ शुद्धसामंत	धसरिमपध–	धपमगरिस।	
९ इंदुसारंगनाट	सरिगमपमधनिस–	सधपमगरिस।	
१० असावेरी	सरिमपधस–	सनिसपधमपरिगरिस।	सरिमपधसा। सनिधपमगारिस।
११ शुद्धमारुव	सगमपधस–	सधपमरिगरिस।	
१२ पुन्नागवराली	सरिगमपधनि–	निधपमगरिसनि।	निसरिगमपध। धपमगरिसनि।
१३ शुद्धसीमंती	सरिगमपधस–	सधपमगरिस।	
१४ आहिरी	सरिसगमपधनिस–	सनिधपमगरिस।	सरिसगमपधनिस। सानिधपमगारिस।

१५	देशिकाबङ्गल	सरिगपमधनिस—	सधपमगरिस।	
१६	धन्यासि	सगमपनिस—	सनिधपमगरिस।	निसगामपनीस्सा। निधपमगरिस।
१७	नाधनालि	सरिगमपनिस—	सनिधपमगरिस।	
१८	चद्रकान्त	सरिगमपधनिस—	सनिधपमगरिस।	
१९	कलासावेरि	सरिगमपधनिस—	सनिधपमगरिस।	

(९) धेनुक मेल-जन्य—१० (रि, ग, म, ध, नि)

१	धैर्यमुखी	सरिगमपधस—	मनिपमपरिगरिस।	
२	ललितश्रीकठी	सरिगमपधनिस—	सनिधपमधमगरिस।	
३	सिंवुचिंतामणि	सरिमगमधपधस—	सधपमगरिस।	
४	भिन्नषड्ज	सरिगरिपमपनिस—	सधपमगरिस।	सरिगागपधनिस। सनिधपमगारिस।
५	देश्यआधाली	सरिगमपनिधस—	सधपमगरिस।	
६	पूर्वफरजु	समगमधनिस—	सनिधपमगरिस।	
७	शोकवरालि	सगमनि—	धपमगरिस।	
८	गौरीबगाल	धसरिमपधनि—	धपमगरिसनिधप।	
९	देशिकारुद्रि	समरिगमपनिस—	सनिपधमगरिस।	
१०	टक्क	सगमपमधनिस—	सनिधपमगरिस।	१ सगमधधनिधस। सधमगरि गस। २ सगमप मग मधनिस। सनिधमपम गमरिगस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
(१०) नाटकप्रिय मेल-जन्य—१० (रि$_1$ ग$_2$ म$_1$ ध$_1$ नि$_2$)			
१ निरजनी	सरिगमपधस–	सनिधपमगरिस।	
२ कन्नडसौराष्ट्र	सरिमगमधपधनिस–	सनिधपमगस।	
३ पूर्वरामक्रिय	सरिगमपनिधनिस–	सनिपधमगरिस।	
४ दीपर	सरिगमपधनिस–	सनिधनिपमगरिस।	
५ वसतकन्नड	सरिगमपनि–	धमपगरिसनि।	
६ सिंधुभैरवी	मपधनिधसरिगम–	गरिसनिधपमगम।	
७ नटाभरण	सरिगमपधपनिस–	सनिधपमगमरिस।	सगमप्पानिध निससा। सनिधनिपा निपपम-गग रिरिसा।
८ सारगवौलि	समगमपधनिधस–	सनिधपमगारिस।	
९ हिन्दोलदेशिक	समरिगमपधनिस–	सपनिधमगारिस।	
१० मागधश्री	सगरिमपधस–	सनिपगस।	
(११) कोकिलप्रिय मेल-जन्य—९ (रि$_1$ ग$_2$ म$_1$ ध$_1$ नि$_1$)			
१ कौमारी	सरिगमपधस–	सनिधपमगरिस।	
२ मारुवदेशिक	सगमपधपनिस–	सनिधपमपमगरिस।	
३ वसतनारायणी	सरिगमपस–	सनिधपमगरिस।	
४ कोकिलारव	सरिगरिमपधनिस–	सनिधपमगरिस।	सारिममप मपधनिस।। सनिधधप मगरिरिस।
५ छायासैंधवी	सरिगमपधपनिस–	सधनि[illegible]गरिस।	

६. शुद्धमजरी सगमपमधनिस— सनिपध‍मगरिस।
७ वर्धनी सगमपमपधनिस— सनिपधपमगस।
८ सिंधुक्रिय सरिगमपमधनिस— सधपमगरिस।
९. शुद्धललित सपमधनिस— सनिसधपमगरिस।

(१२) रूपवती मेल-जन्य—९ (रि१ ग२ म१ ध१ नि१) रूपवती राग— सरिमप पससा। सनिधनिप मगस।

१ रेखावती सरिगमपनिधस— सनिधपमगरिस।
२. प्रतापवसत समरिगमपनिस— सनिपमरिस।
३ भोगवराली सरिगमपनिस— सनिपमगरिस।
४ भानुकोकिल समपधनिस— सधनिपमगस।
५. रौप्यसग समपधनिस— सधनिपमगरिस।
६. पूर्णस्वरावलि सगमपधनिस— सधनिपमरिगस।
७. सामकुरजि सगपधनिस— सनिधनिपमगरिस।
८ सोमभैरवी सरिगमपस— सनिपधनिपमगरिस।
९. श्यामकल्याणी समगमपधनिस— सनिपधनिपमगरिस।

(१३) गायकप्रिय मेल-जन्य—१५ (रि१ ग१ म१ ध१ नि१)

१ गीतप्रिय सरिगमपधनिस— सधपमगरिस। अव० सनिधपमगरिस।
२. सामनारायणी सरिमपधनिस— सपधनिपमरिस।
३ हेज्जज्जि सरिगमपधस— सनिधपमगरिस। सरिम गगपधस। सनीधपमगरिस।
४ फतलकाभोजी सगमपधनिधस— सनिधपमगस।

	राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१४	सालगनाट	सरिसमपधस—	सधपसनिसधपमगरिस।	सरिमपधस। सनिधपमगरिस।
१५	मगलकैशिक	समगमपमधानिस—	सनिधपमगरिस।	सरिगमपमग पधनिस सरिमगधपस सनिधपमगरिस।
१६	ललितपचम	सरिगमधनिस—	सनिधमपमगरिस।	रिसगा मधनिस। सानिधपमगरिस।
१७	माख्व	सगमपधनिधपस—	सनिधपमधमपमगरिस।	सगमधनिस। सनिधपगम गरिस रिगरिस।
१८	शुद्धक्रिय	सरिपमपधस—	सधपमगरिस।	
१९	देश्य रेगुप्ति	सरिगरिमपधनिस—	सधनिधपमगस।	
२०	मेघरंजि	सरिगमनिस—	सनिमगरिस।	अव० सनिमगसरि स।
२१	पाडि	सरिमपनिस—	सनिपधपमरिस।	रिमपधपनिस। सनिप धा पपमरीस।
२२	पूर्णपचम	सरिगमपध—	धपमगरिस।	सरिगमपधस। सधपमगरिस।
२३	सुरसिंधु	समगमधपधनिधस—	सनिधपमगरिस।	
२४	देश्यगौड	सरिसपधनिस—	सनिधपसरिस।	
२५	शुद्धमलहरि	सरिगपमधस—	सधपगरिस।	
२६	गौरी	सरिमपनिस—	सनिधपमगरिस।	सरिमपधनिस। सानिध पम मप मगरिस।
२७	सिंधुरामक्रिय	सगमपधनिस—	सनिपधपमगस।	सरिगमपधधनीस्सा। सनिधपमगरिगस।
२८	गौडिपतु	सरिगरिमपधपनिस—	सनिधपमगरिस।	
२९	सौराष्ट्र	सरिगमपधनिस—	सनिधापमगरिस।	अव० सनिधपमगरिस।
३०	आर्द्रदेशिक	सरिगमपधनिस—	सधपमगरिस।	१ सरिगमपधनिस। सनिधपमगगगरिस। २ (रिसनिध) निसरिगमपधप। (धस) धपमगगगरिस। धधधसनिस।

३१	वसतप्रिय	सरिगमपधपनिस–	सनिपमगरिस।	
३२	गुज्जरि	सरिगमपधनिस–	सधनिपमगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।
३३	कन्नडवगाल	सरिमगमधपधस–	सधपमगरिस।	सरिमपधस। सधपमगरिस।
३४	गुण्डक्रिय	सरिमपनिस–	सनिपधपमगरिस।	सारिगमपधनिस। सानिपमगम धपमगरिस।
३५	मार्गदेशिक	सरिगपधस–	सधमपगरिस।	सरिगरि गधमपधस। सधमपगरिस।
३६	फरजु	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगारीस।	अव० सनिधपमगरिस।
३७	ललितक्रिय	सरिगमपमधानिस–	सनिधमगरिस।	
३८	पूर्वी	सरिगमपधनिधस–	सनिधपमधमगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।
३९	वसत	सगमधनिस–	सनिधमगरिस।	रिसगमधनिस। सानिधनिधमाग मम पमगरिस।
४०	घर्नसिधु	समगमपधनिधस–	सनिधपमगरिस।	
४१	छायागौड	सरिमपनिस–	सनिधपमगरिस।	

(१६) चक्रवाक मेल-जन्य—२८ (रि$_2$ ग$_3$ म$_1$ ध$_2$ नि$_2$)

१.	चिन्मय	सरिगामपमधनिस–	सनिधनिपमगारिस।
२	शुद्धश्यामल	सगपधनिस–	सनिधपमगरिस।
३	विंदुमालिनी	सगरिमपधनिगनिस–	सपनिधपगारिस।
४	मलयमारुत	सरिगपधनिस–	सनिधपगरिस।
५	गणितविनोदिनी	सगमपनिस–	सनिधपमगरिस।
६	चद्रकिरणी	सगमपमधनिस–	सनिधनिपमगमरिस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
७ वीणाधरी	सरिगपधनिस–	सनिधपमगारिस।	
८ शशिप्रकाशी	सरिगमपधनिस–	सनिधपगारिस।	
९ कलावती	सरिमपधस–	सवपमगसरिस।	सारिगम, पधनिधपधसा। सानीधसम रिग मरिस।
१० कुतल	सरिगमपधनिस–	सधनिपमगमरिस।	
११ भक्तप्रिय	सगमपधनिस–	सनिधपमरिमगस।	
१२ शातस्वरूपी	सगरीमपधनि–	सनिधनिपमरिस।	
१३ घोपणी	समगमपधनिधस–	सनिधपमगमरिस।	
१४ वेगवाहिनी	सरिगमपवनिधस–	सनिवपमगरिस।	सारिगमपधनिसा। सानिधपमगरिसा।
१५ नभोमार्गिणी	सगमपधनिस–	सधापमगरिस।	
१६ मनसिजप्रिय	सरिगमपधनिधपमधनिस–	सधनिपमगरिस।	
१७ शिवानदी	समगमपधनि–	धपमगरिसनिस।	
१८ सुभाषिणी	सधनिसरिगमप–	मगरिसनिधनिस।	
१९ पूर्णगाधारी	पवनिवसरिगमपधा–	पमगरिसनिधनिप।	
२० कुवलयानदी	सरिगमनिवनिपनिस–	सनिधमगस।	
२१ रविकिरणी	सगमनिधनिस–	सनिधपमगरिस।	
२२ भुजगिनी	सरिसमगमनिधनिस–	सनिधमगरिस।	
२३ रसकलानिधि	सपमधनि–	धपमगमरिसनिस।	
२४ कुसुमागी	सरिसपधनिस–	सनिधपमगरिस।	

२५	भुवनमोहिनी	सगमनिधस—	सनिपधमगारिस।	
२६	गुहप्रिय	सरिगामसपमधनिस—	सनिधपमगसरिस।	
२७	जनाकर्पणी	सरिगपमधनिस—	सधनिपमगधमगरिस।	
२८	धनपालिनी	सरिगमपमपस—	सनिधपमधमगरिस।	

(१७) सूर्यकान्त मेल-जन्य—९ (रि$_1$ ग$_1$ म$_1$ ध$_2$ नि$_1$)

१.	सेनामणि	सरिगमपधस—	सनिधपमगरिस।	
२	सामकन्नड	सरिमगमपधनिस—	सनिधापमरीस।	
३	ललित	सरिगमधनिस—	सनिधमगरिस।	सरिगमधधनिस। सनिधमामगरिस।
४	सुप्रदीप	सरिमपधनिस—	सनिधपमगमरिस।	
५	सोमतरगिणी	सरिसगमपमधनिस—	सनिसधपमगमरीस।	
६	नागचूडामणि	सगामपधनिस—	सनिधपमगस।	
७	भैरव	सरिगमपधनिस—	सधपमगरिस।	अव० सधपमपमगरिस।
८	सामतमल्लार	सगमपनिस—	सनिपधमगरिस।	
९.	दिव्यतरगिणी	सरिगमपस—	सनिधपमगरिस।	

(१८) हाटकाबरी मेल-जन्य—११ (रि$_1$ ग$_1$ म$_1$ ध$_1$ नि$_1$)

१	हितभापिणी	सरिगमपनिधनिस—	सनिपमगरिस।	
२	नागतरगिणी	सरिगमपनिस—	सनिपधनिपमगास।	
३	शुद्धमालवी	सगरिगमपधनिस—	सधनिपमगरिस।	सरिगमपनिस। सनिध निपमगरिस।
४.	भानुचूडामणि	सरिगमपस—	सनिधनिपमगरिस।	

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
५ सिंहोल	सरिगमपधनिस–	सनिधनिपमगरिस।	
६ चद्रचूडप्रिय	सगमपनिधनिस–	सनिपमरिस।	
७ हसनटनी	सगमपस–	सपमगरिस।	
८. भूपालतरगिणी	सरिमपनिस–	सनिधनिपमगमरीस।	
९ कल्लोल	सपधनिस–	सनिधनिपमगस।	
१०. शुद्धकन्नड	समपधनिस–	सनिपमगस।	
११ दिव्यगाधारी	समगरिपधनिस–	सधनिपमगसरिस।	

(१९) झकारध्वनि मेल-जन्य—१० ($रि_2$ $ग_2$ $म_1$ $ध_1$ $नि_1$)

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
१ झकारी	सरिगमपधस–	सधपमगरिस।	
२ प्रभातरगिणी	समरिगमपस–	सनिधपमगरिस।	
३ देश्यबेगड	सगमपस–	सनिधपमगरिस।	
४ झकारभ्रमरी	सरिगमपधनिधस–	सनिधपमगरिस।	सारिगमपधनिधपधसा। सनिधपम गरिगारिरीसा।
५ छायासिंधु	सरिमपधस–	सधपमगरिस।	
६ सिंधुसालवि	समपधनिधस–	सनिधपमगरिस।	
७ पूर्णललित	सरिगमपस–	सनिधपमगरिस।	
८ अमृततरगिणी	सरिगमधनिस–	सधनिधपमगरिस।	
९ पूर्वसालवि	सगमधनिस–	सनिधपमरिस।	
१० चित्तरजनी	सरिगरिगमपध–	निधपमरिगरिस।	

(२०) नटभैरवी मेलॅ-जन्य—३४ (रि$_2$ ग$_2$ म$_1$ ध$_1$ नि$_1$)

क्र.	राग	आरोह	अवरोह	विशेष
१	नीलवेणी	सरिगमपधनिवस—	सधपमगरिस।	
२	भैरवी	सरिगमनिधनिस—	सनिधमगरिस।	सा। रिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।
३	रीतिगौड	सगरिगमनिधमपनिस—	सनिधमपधमगरिस।	सरींगम्म पध पनिनिसा। सानिनीध मागग-रिस।
४	जयतश्री	सगमधनिस—	सनिधमपमगस।	
५	नारायणदेशादि	सरिसगमपधपनिस—	सनिधपमगरिस।	
६.	कमलातरगिणी	सरिगमपधनिस—	सनिधपमरिस।	
७	हिंदोल	समगमधनिस—	सनिधमगस।	सगगमनिधनिस। सानीधमगस।
८	आभेरी	सगमपनिस—	सनिधपमगरिस।	समगमपपसस। सानिधपमागरिस।
९	उदयरविचद्रिक	सगमपनिस—	सनिपमगस।	सगमपनिनिस। सनिपममगस।
१०	आनदभैरवी	सगरिगमपधपनिस—	सनिधपमगरिस।	सगगमपध पसनिस। सानिधपममगगरिस।
११	कन्नड	सगमपधस—	सनिधमगस।	
१२	देवक्रिय	सरिगमनिधनि—	पधमगरिसनि।	सरिमपधस। सधपमरिस।
१३	इदुघण्टारव	सगमपधपनि—	धापमगरिसनि।	
१४	वसतवरालि	सरिमपधनि—	निधापगरिसनि।	
१५	नागगाधारी	सरिगमपधनि—	निधापमगरिसनि।	सरिमगमपधनिस। सनिधगमगरिस।
१६	दिव्यगाधारी	सगमपधनिस—	सनिपमगस।	
१७.	माजी	सरिगमपधनिस—	सनिधपमगरिस।	निसरीगमपधनिस। सनिधपमगरिस।
१८.	शुद्धदेशी	सरिमपधनिस—	सनिधपमगरिस।	सरिमपधनिध स। सनिधपधममगरिस।

	राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
१९	मार्गहिंदोल	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगस।	सगगमपाम धनिस। सावमगसरि स।
२०	नायकी	सरिमपधनीधपस–	सनीधपमगारिस।	सारिगामपधनीसा। सानीधपमगारीस।
२१	शुद्धसालवि	सगमपनिस–	सनिपमरिस।	
२२	कनकवसत	सगमपनिधस–	सनिधपमगरिस।	
२३	पूर्णपड्ज	सपमपधपम–	सनिधमगरिस।	
२४	गोपिकावसत	समपनिधनिधस–	सनिधपमगस।	रि सरिगमपध पनिनीस्सा। सनिधपमगरि मगस।
२५	चापघटारव	सगमपनि–	धमगरिसनि।	
२६	भुवनगाधारी	सरिमपनिस–	सनिधपमगस।	
२७	हिंदोलवसत	सगमपधनिधस–	सनिधपमगधमगस।	सगगमपधसस। सनिधपधनीधमगस।
२८	सारगकापि	सरिपमरिपरिमपनिस–	सनिधपमगरिस।	
२९	सारमती	सरिगमपधनिस–	सनिधमगस।	
३०	शुद्धतरगिणी	सगमपनिस–	सनिधमगरिस।	
३१	अमृतवाहिनी	सरिमपधनिस–	सनिधमगरिस।	
३२	जिंगल	सरिगमपधनिधपस–	मनिधपमगरिस।	
३३	पूर्वभैरवी	सरिगमनिधनिस–	सनिधपमगरिस।	
३४	कोकिलवराली	सरिगरिमपधनिधस–	सधनिधपमरिगरिस।	

(२१) कीरवाणी मेल-जन्य—१३ (रि२ ग२ म१ ध१ नि१)

१	कुलभूपणी	सरिगमपनिस–	सधपमगरिस।

२	सामतसालॅव	सरिगमपवस–	सनिध‸पगरिस।	
३	जयश्री	सरिगमपधनिधस–	सनिध५मगरिस।	
४	इन्दुधवली	सरिगमममपधनिस–	सनिधपमगस।	
५,	किरणावली	सरिगमपधनिस–	सधपमगरिस।	सरिमप धपधनिस। सनिपधपमप गरिस।
६	सोमगिरि	निसरिगमपध–	पमगरिसनिस।	
७	माधवी	समगमपधनिस–	सनिधपमसमगरिस।	
८	हंसपंचम	सगमपनिधनिपस–	सनिधमगरिस।	
९	कल्याणवसंत	सगमधनिस–	सनिधपमगरिस।	
१०	गगनभूपाल	समगमपधनिस–	सनिधमगरिस।	
११	कर्णाटकदेवगांधारी	निसगमपा–	धापमगरिसनि।	
१२	नागदीपक	सरिगमपस–	सनिधमगस।	
१३	सजीवनी	सरिसगमपनिस–	सनिधनिपमगरिस।	

(२२) खरहरप्रिय मेल-जन्य—५६ (रि$_2$ ग$_2$ म$_1$ ध$_2$ नि$_2$)

१	खलावली	सरिगामपस–	सनिपमगरिस।
२	सुगुणभूषणी	सगमपमधनिस–	सनिधपमगगरिस।
३	स्वररंजनी	सरिगमधनिस–	सनिपमगामरिस।
४	भगवत्प्रिय	सरिगामरिमपधनिस–	सनिधपमरिस।
५	स्वरकलानिधि	समगामपधनिस–	सनिधनिपमरिगस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार	
६ श्रीराग	सरिमपनिग–	सनिपधनिपगरिगरिस।	रीमपनिस। सनिप धनिपगरिग रिस।	राय गेय—ग्रामराग या रागांग अल्पधैवत, सरिगम और मगरिस प्रयोग नहीं—सारामृत। राचार—रिमपनिसनि-पधनिपमरिगारिस —सपादक। मुख्यसचार— रिगारि सनिपानीसा।
७ मालवश्री	सगमपनिधनिपधनिस–	सनिधपमगस।	सगगमपनिनिस। नि-निधपमप निधममगस।	रि वर्ज्य—मपधनिसा; सनिनि धनि धपममम-गसा —सारामृत। सदा गेय—रागांग
८ कन्नडगौड़	सरिगमगनिस–	सनिधपगगस।	सरिगमपधनिस। स-निपमगस। सगगामपनिनीसा। स-निनीधममगसा। (मगरिस) प्रयोग भी है। निसनीधममगसा।	उपांग—दिन का पश्चिम याम, आरोह और अवरोह में वक्रसंचार, उदाहरण— सनिपधनिसनिनिस। रिगमगमपनिपम। पनि निसा मगस। मधनिस। निरीगमम राक्ति—सारामृत।

९	मध्यमावती	सरिमपनिस–	सनिप' ध्रिस।	
१०.	फलमजरी	सगमधस–	सनिधपमगामरिस।	
११.	रुद्रप्रिय	सरिगमनिस–	सनिपमगारिस।	सारिगमपधनिनिसा। सनीपमगारीसा।
१२	वृन्दावनसारग	सगरिमपनिस–	सनिपमरिगस।	
१३.	नटनप्रिय	सगरिगमधनिस–	सनिपमगरिस।	
१४	ललितमनोहरी	सगमपधनिस–	सनिपमगरिस।	
१५.	मणिरगु	सरिमगामपनिस–	सनिपमगारिस।	रिममपनिनिस। सनिपमगरिरिस।
१६	जयतसेन	सगमपधस–	सनिधपमगस।	
१७	सैन्धवी	निधनिसरिगम–	पमगरिसनिधनिस।	सारिगमपनिधनिस। सनिधपमगरिस।
१८.	शुद्धधन्यासी	सगमपनिपस–	सनिपमगस।	सगमपनिस। सनिपमगस।
१९	पूर्णकलानिधि	सगमपधनिस–	सधपमगरिस।	
२०	हरिनारायणी	सरिगामपमधनिस–	सनिपमगरिस।	
२१	पूर्वमुखारी	समगमपधनिधस–	सनिपमगरिस।	
२२.	ललितगाधारी	सरिगामपनिस–	सनिपमगामरिस।	
२३	शुद्धभैरवी	सगमनिधस–	सनिधमगरिस।	
२४.	आभोगी	सरिगमधस–	सधमगरिस।	
२५.	सालगभैरवी	सरिमपधस–	सनिधपमगरिस।	सरिगमपधसा। सनिधमगरिस। सरिगरिपमपधपसा। निसधपमगरिस।
२६	जयनारायणी	सरिगामपधस–	सनिधपमगरिस।	
२७.	मनोहरी	सगरिगमपधस–	सधपमगरिस।	सागमपनिसा। सनिधपमगसा।

	राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
२८	मारुवधन्यासी	सगमपधनिधपमपनिस—	सनिधपमधमगरिस।	
२९	कलानिधि	सरिगमसपमधनिस—	सनिधपमगरिस।	
३०	नागरी	सरिमपधनिस—	सनिधपमगस।	
३१	स्वरभूपणी	सगमपधनिस—	सनिधपमरिस।	
३२	वज्रकाति	सगमपनिस—	सनिधापमगरिस।	
३३	पचमराग	सरिधपनिस—	सनिधपमगरिस।	
३४	शुद्धबगाल	सरिमपधस—	सधपमरिगरिस।	
३५	मजरी	सगरिगमपनिधनिस—	सनिधपमगरिस।	
३६	हुसेनी	सरीगामपधनिस—	सनिधपमागरिस।	सरिगमापधनिसा। निधपमागरिस।
३७	कापि	सरिगामरिपमपधनिस—	सनिधपमगरिस।	सारिगमपधनिस। निधपमगगरीस्मा।
३८	श्रीरजनी	सरिगमधनिस—	सनिधमगरिस।	
३९	शुभागी	समरिगमपधनि—	धपमगरिसनिस।	
४०	कलास्वरूपी	सरिगामपधनिपस—	सनिपमगारिस।	
४१	शुद्धवेलावलि	सरिमपनिस —	सनिधनिपमगरिस।	
४२	दरवार	सरिमपधानिस —	सनीधपमगारिस।	गारिगमपधनिसा। नीधपमगारिसा।
४३	देवरजनी	सगरिमपधनिस—	सधपमगारिम।	ममपध पनिध पनिस। सनिधपमसा। धनिस धसस।
४४	बालचद्रिका	सगमपधनिस—	सनिधमगरिस।	
४५	मडमारि	सरिमपधस—	सनिस[illegible]मरिगस।	

४६	शुद्धमनोहरी	सरिगमपधस—	सनिपमरिगस।	
४७	सिद्धसेन	सगरिगमपधस—	सनिधमपमरिगरिस।	
४८	कालिंदी	समगामपस—	सनिधमगरिस।	
४९	कह्लार	सरिमगमपधपस—	सधपमरिम।	
५०	नादमूर्ति	सगमधनिस—	सनिपमरिगस।	
५१	मुखारि	सरिमपधनिधस—	सनिधपमगरिस।	सरिमपधसा। सनिधपमगरिम।
५२	धातुमनोहरी	सपमपधनिस—	सनिपमगरिस।	
५३	कुमुदप्रिय	सरिगामपस —	सनिधनिपमगस।	
५४	देवमनोहरी	सरिमपधनिस—	सनिधनिपमरिस।	सरिमपधनिपमपनिनीस्स।। सनिधनिप मरिस।
५५	बालघोषी	सरिगपमनिधस—	सनिधपमगरिस।	
५६	नादवरांगिणी	सपमरिगरिम—	सपनिधपमगरिगस।	

(२३) गौरीमनोहरी मेल-जन्य—९ (रि₂ ग₂ म₁ ध₂ नि₁)

१	गभीरिणी	सरिगमपधनिधस—	सनिधपमगरिस।	
२	सालविवगाल	सरिमपधस—	सनिधपमरिस।	
३	हंसदीपक	सरिगमधस—	सनिधपमगरिस।	
४	नागभूपाल	सरिगमनिस—	सनिमगरिस।	
५	वेलावली	सरिमपधस—	सनिधपमगरिस।	सरिगगस रिममपधधस्सा सनिधपमगगरिस।
६	सामसालवी	सरिगमपस—	सनिधपमगरिस।	
७	कोकिलदीपक	सगमधनिस—	सनिधमगरिस।	

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
८ सिहमेलभैरवी	सगमपधस–	सनिधमगरिस।	
९ नागपचम	समपनिधस–	सधमगरिस।	
(२४) वरुणप्रिय मेल-जन्य—९ (रि$_2$ ग$_2$ म$_1$ ध$_1$ नि$_1$)			
१ वीरवसत	सरिगमपस–	सनिधपमगरिस।	रिममपनिध निस। सनिपमरिगस।
२ भानुदीपक	सरिगमपधनिस–	सनिपमरिस।	
३ गौडपचम	सरिमपनिस–	सनिपमगरिस।	
४ हसभूपाल	सरिगमपस–	सनिधनिपमगस।	
५ सिह्मेलकापि	सरिमपधनिस–	सनिधनिपमगस।	
६ हसभूपणी	सगमधनिस–	सनिपगरिस।	
७ गधर्वनारायणी	समपधनिस–	सनिधनिपमस।	
८ सोमदीपक	सगपधनिस–	सनिपमगस।	
९ नवनीतपचम	सगमधपधनिस–	सनिपमरिस।	
(२५) माररजनी मेल-जन्य—१० (रि$_2$ ग$_1$ म$_1$ ध$_1$ नि$_1$)			
१ मित्ररजनी	सरिगमपधपस–	सनिधपमगरिस।	
२ रम्यपचम	सरिगमपधनिस–	सधमगरिस।	
३ शरद्द्युति	सरिगमपधनिधस–	सनिधपमगरिस।	
४ सिह्मेलवसत	सरिगमपमधनिस–	सधपमगरिस।	
५ कल्लोलसावेरी	सरिमपधम–	सनिधमगरिस।	

	राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
४	पद्मराग	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगस	
५	सोममुखी	सगमपधनिस–	सनिधपमरिमगस।	
६	भानुकिरणी	सगमधानिर–	सनिधपमगरीस।	
७	सुरसेन	सरिमपधस–	सनिधपमगरिस।	
८	जलजवासिनी	सगमपनिस–	सनिधपमरिस।	
९	सारसप्रिय	सरिमगामपधनिस–	सनिपधामगरिस।	
१०	जयाभरणी	सगमपमरिगमपसा–	सनिधापमरिस।	
११	हरिप्रिय	सरिगमपस–	सनिधपमगस।	
१२	रत्नमणि	समगामरीगमपधनिस–	सनिधापमरिगस।	
१३	नादप्रिय	समगामपधनिस–	सनिसमगस।	
१४	मानाभरणी	सरिगपमधानिस–	सनिधपमगरिस।	
१५	दिव्यपचम	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगरिस।	
१६	नयनरजनी	सरिगमपधपनिस–	सनिपनिधमगरिस।	
१७	मणिमय	सनिसरिगमपधा–	पमगरिसनिस।	कुरजिच्छाय
१८	मजुल	पसनिसरिगमप–	मगरिसनिधप।	
१९	माधुर्य	पनिसरिगमप–	मगसनिधप।	
२०	मधुकरी	समगमपधनि–	पमगरिसनिस।	
२१	कमलामनोहरी	सगमपनिस–	सनिधपमगस।	
२२	भिन्नगाधारी	सरिगमपधनी–	धपमगमरिस।	

दिनकरकांति	समगमपस–	सनिधपधगस।	
दिव्यावरी	सपमपधनिस–	सपनिधमगरिस।	
नागाभरणी	सरिगपमरिमपर –	सधापमगरिस।	सरीगमपनिध निस। सनिपमगमरिस मग-रिस।
नलिनकांति	सगरिमपनिस–	सनिपमगरिस।	
रत्नाभरणी	सरिपाधनिस–	सनिधपगस।	
कुसुमप्रिय	सरिगमपधनिस–	सनिपमगारिस।	केदारच्छाय
भोगलोल	समगमपधनिस–	सनिधपगरिस।	

हरिकांभोजी मेल-जन्य—५३ (रि$_2$ ग$_3$ म$_1$ ध$_2$ नि$_2$)

हितप्रिय	सरिगमधनिस–	सनिधनिपमरिमगस।	
कांभोजी	सरिगमपधस–	सनिधपमगरिस।	सरिमग पधनि धसा। सनिधपमगरिस।
केदारगौड	सरिमपनिस–	सनीधपमगरिस।	सारिमपनिस। सानिधपमगरिस।
नवरसकलानिधि	सरिमपसनिस–	सनीधपमगरिस।	
नारायणी	सरिमपधस–	सनिधपमरिस।	सारिमगरिगम पधसा। सनिप निधपधमपमग-रिस।
नारायणगौड	सरिमपनिधनिस –	सनिधपमगरिगरिस।	रिमपनिधनिस। निधपमगरिगरिस।
प्रतापचिंतामणि	सगमपमधनिस–	सनिधपमगमरिस।	
सुरभैरवी	सरिपमपधनिस–	सनिधपमस।	
द्वैतचिंतामणि	सगमधनिस–	सनिपधमगरिस।	

	राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
१०	मालवी	सरिगमपनिमधनिस–	सनिधनिपमगमरिस।	
११	प्रतापरुद्री	समगमपधनिस–	सनिपमगमरिस।	
१२	छायातरंगिणी	सरिमगमपनीस–	सनिधपमगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।
१३	बलहंस	सरिमपधस–	सनिधपमरिमगस।	सरिगमपधस सनिधपमगरिस।
१४	नटनारायणी	सरिगमधनिस–	सनिधपमगमरिस।	सरिगसरिमपधस। सधपमगरिस।
१५	मोहन	सरिगपधस–	सधपगरिस।	अव०पधपगरिस।
१६	प्रबालशोवी	सरिमपधनिस–	सनिधनिपमगस।	
१७	सिंवुकन्नड	समगमरिगमपस–	सनिधपमगरिस।	
१८	कापिनारायणी	सरिमपधनिस–	सनिधपमगारिस।	
१९	जझाटि (झिंझोटी)	धसरिगमपधनि–	धपमगरिसनिधपधस।	
२०	शहन (शहाना)	सरिगमपमधनिस–	सनीधपमगमरिगरिस।	सरिगमपमधनिसा। निनिधपमगगरीगरिस।
२१	प्रतापनाट	सरिगमधपधनिस–	सनिधपमगस।	
२२	स्वरचिंतामणि	सरिगमपनिधनिपस–	सनिधपमरिस।	
२३	द्वैतानदी	सरिगमपस–	सनिधनिपमरिस।	
२४	रत्नाकरी	सगमपनिधनिस–	सनिधपमरिस।	
२५	ईशमनोहरी	सरिगमपधनिस–	सनिधपमरीमगरिस।	अव० सनिधपमगरिसास।
२६	प्रतापवराली	सरिमपस–	सधपमगरिस।	
२७	कुतलवराली	समपधनिधस–	सनिधपमस।	
२८	सरस्वतीमनोहरी	सरिगमधस–	सधनिपमगारिस।	सरिगमधधनिस। सनिधपमगमरि स।

२९ नीलावरी	सरिगमपधपनिस—	सानिपमगरिगस।	सरिगममासध पनिनिसा। पानिपमागरि गसा। निध निसा।
३० साम	सरिमपधस—	सधपमगरिस।	सारिगस रिपपधधस्स। सधपमगरिस। (रिपमधधसा) प्रयोग भी है।
३१ आधाली	सरिमपनिस—	सनिपमरिगमरिस।	सरिगमपनिस। सनिपमगरिस।
३२ द्विजावती	सरिमगमपधनिस—	सनिधपमगरिगस।	
३३ द्वैतपरिपूर्णी	सरिगमपधनि—	पमरिमगसनिस।	
३४ मत्तकोकिल	सरिधपनि—	धपसरिसनि।	
३५ वगाल	सरिगमपमरिपस—	सनिपमरिगरिस।	
३६ रागपजर	सरिमपधनिधस—	सनिधमरिस।	
३७ रविचन्द्रिक	सरिगमधनिधस—	सनिधमगरिस।	
३८ वेदघोपप्रिय	निधनिसरिगम—	पमगरिसनिधनिप।	
३९ कोकिलध्वनि	सरिगमधनिधस—	सनिधनिपमगरिस।	
४० नवरसकन्नड	सगमपस—	सनिधमगरिस।	
४१. स्वरावलि	समगमपनिधनिस—	सनिपधमगरिस।	
४२ नागस्वरावलि	सगमपधस—	सधपमगस।	
४३ सूक्ष्मरूपी	सपमरिगमपस—	सनिधपमस।	
४४ बहुदारी	सगमधपधनिस—	सनिपमगस।	
४५ यदुकुलकाभोजी	सरिमपधस—	सनिधपमगरिस।	सरिमप, धनिधपधसा। सानिधपमगरिसा।
४६ शुद्धवरालि	सरिगमधनिस—	सनिधनिपमगस।	

	राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
१०	मालवी	सरिगमपनिमधनिस–	सनिधनिपमगमरिस।	
११	प्रतापरुद्री	समगमपधनिस–	सनिपमगमरिस।	
१२	छायातरंगिणी	सरिमगमपनीस–	सनिधपमगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमगरिस।
१३	वलहस	सरिमपधस–	सनिधपमरिमगस।	सरिगमपधस सनिधपमगरिस।
१४	नटनारायणी	सरिगमधनिस –	सनिधपमगमरिस।	सरिगसरिमपधस। सधपमगरिस।
१५	मोहन	सरिगपधस –	सधपगरिस।	अव०पधपगरिस।
१६	प्रवालशोधी	सरिमपधनिस–	सनिधनिपमगस।	
१७	सिंधुकन्नड	समगमरिगमपस–	सनिधपमगरिस।	
१८	कापिनारायणी	सरिमपधनिस–	सनिधपमगारिस।	
१९	जझाटि (झिंझोटी)	धसरिगमपधनि–	धपमगरिसनिधपधस।	
२०	शहन (शहाना)	सरिगमपमधनिस–	सनीधपमगमरिगरिस।	सरिगमपमधनिस। निनिधपमगगरीगरिस।
२१	प्रतापनाट	सरिगमधपधनिस–	सनिधपमगस।	
२२	स्वरचिंतामणि	मरिगमपनिधनिपस–	सनिधपमरिस।	
२३	द्वैतानदी	सरिगमपस–	सनिधनिपमरिस।	
२४	रत्नाकरी	सगमपनिधनिस–	सनिधपमरिस।	
२५	ईशमनोहरी	सरिगमपधनिस–	सनिधपमरीमगरिस।	अव० सनिधपमगरिसास्स।
२६	प्रतापवराली	सरिमपस–	सधपमगरिस।	
२७	कुतलवराली	समपधनिधस–	सनिधपमस।	
२८	सरस्वतीमनोहरी	सरिगमधस–	सधनिपमगरिस।	सरिगमधधनिस। सनिधपमगमरि स।

२९ नीलावरी	सरिगमपधपनिस—	सानिपमगरिगस।	सरिगममासध पनिनिसा। पानिपमागरि गसा। निध निसा।
३० साम	सरिमपधस—	सधपमगरिस।	सारिगस रिपपधधस्स। सधपमगरिस। (रिपमधधसा) प्रयोग भी है।
३१ आवाली	सरिमपनिस—	सनिपमरिगमरिस।	सरिगमपनिस। सनिपमगरिस।
३२ द्विजावती	सरिमगमपधनिस—	सनिधपमगरिगस।	
३३ द्वैतपरिपूर्णी	सरिगमपधनि—	पमरिमगसनिस।	
३४ मत्तकोकिल	सरिधपनि—	धपसरिसनि।	
३५ बगाल	सरिगमपमरिपस—	सनिपमरिगरिस।	
३६ रागपजर	सरिमपधनिधस—	सनिधमरिस।	
३७ रविचद्रिक	सरिगमधनिधस—	सनिधमगरिस।	
३८ वेदघोपप्रिय	निधनिसरिगम—	पमगरिसनिधनिप।	
३९ कोकिलध्वनि	सरिगमधनिधस—	सनिधनिपमगरिस।	
४० नवरसकन्नड	सगमपस—	सनिधमगरिस।	
४१. स्वरावलि	समगमपनिधनिस—	सनिपधमगरिस।	
४२ नागस्वरावलि	सगमपधस—	सधपमगस।	
४३ सूक्ष्मरूपी	सपमरिगमपस—	सनिधपमस।	
४४ बहुदारी	सगमधपधनिस—	सनिपमगस।	
४५ यदुकुलकाभोजी	सरिमपधस—	सनिधपमगरिस।	सरिमप, धनिधपधमा। सानिधपमगरिसा।
४६ शुद्धवरालि	सरिगमधनिस—	सनिधनिपमगस।	

	राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
२५	विवर्धनी	सरिमपस–	सनिधपमगरिस।	
२६	सिंधु	सरिगरिमपस–	सनिधपनिधपमगरिस।	
२७	पूर्वगौड	सरिमगरिमपनिधनिस–	सनिधपमगरिस।	सगरिग सरिमपधनिस। सनिधपमगरिस।
२८	शंभुक्रिय	सगरिमपनिस–	सनिपनिमगरिस।	
२९	गौडमल्लार	सरिमपधस–	सनिधमगरिस।	
३०	नागभूषणी	सरिमपधनिस–	सधपमरिस।	
३१	धीरमती	सगरिगमपमनिधस–	सनिपधसपमगरिस।	

(३०) नागानंदिनी मेल-जन्य—९ (रि$_2$ ग$_1$ म$_1$ ध$_1$ नि$_1$)

	राग	आरोही	अवरोही	
१	निर्मलांगी	सरिमपधस–	सनिधनिपमगरिस।	
२	सामंत	सरिगमपधनिस–	सनिधनिपमगरिस।	अव० सनिधपमगरिस।
३	नागभाषिणी	सगरिगमधनिस–	सनिपमरिस।	
४	सिह्लेलमावेरी	समगमपधनिस–	सनिधनिपमगस।	
५	ललितगंधर्व	सरिगमपधनिस–	सनिपगरिस।	
६	प्रतापकोकिल	सपमपधनिस–	सनिपमगस।	
७	हंसगंधर्व	सरिगमपस–	सनिधनिपमरिस।	
८	सोमभूपाल	सरिमपमधस–	सधनिपमगरिस।	
९	भानुक्रिय	समगमपधनिस–	सनिपधनिपमरिस।	

श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार

	राग	आरोही	अवरोही
५	श्रुतिरजनी	सरिगपधनिस–	सपमगस।
६	गभीरनाट	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगरिस।
७)	**सालग मेल-जन्य—१०**	(रि$_1$ ग$_1$ म$_2$ ध$_1$ नि$_1$)	
१	सिंधुनाट	सगरिगमनिधनिस–	सनिधमगरिस।
२	सिंधुघटाण	सगरिगमपधस–	सधमगरिस।
३	नादभ्रमरी	सगरिगमपधनि–	धपमगरिसनिस।
४	सालवी	सगरिगमपधनिधस–	सनिधपमगरिस।
५	शुद्धभोगी	सरिगमपनिधस–	सधनिपमगरिस।
६	ललितभारुव	सरिगमपधनिस–	सनिधमगरिस।
७	भोगसावेरी	सरिमपधनि–	धपमगरिस।
८	सोमप्रभावी	सरिगमपधस–	सधपमगरिस।
९	भोगवराली	सरिगमपनिधनिस–	सनिधमगरिस।
१०	आलापी	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगरिस।
(३८)	**जलार्जव मेल-जन्य—८**	(रि$_1$ ग$_1$ म$_2$ ध$_1$ नि$_2$)	
१	जीवरत्नभूषणी	सरिगमपधनिधस–	सनिधपमगरिस।
२	नागदीपर	सरिगमधनिस–	सनिधनिमगरिगस।
३	रविप्रभावल्लि	सरिगमधस–	सधपम[illegible]रिगस।

४ जगन्मोहन	सरिमपधसनिध—	सनिधप[illegible]गरिस ।	सागमपधनिस । सनिधपमगरिस ।
५ मारुवचन्द्रिक	सनिसरिगमपधनि—	निधपमगरिगस ।	
६ कुमुदाभरण	सरिगमपनिधस—	सधनिपमगरिस ।	
७ हंसभोगी	सरिगमधनिस—	सनिधपमगरिस ।	
८ भोगरसाली	सरिगमधपनिस—	सनिधनिपमगरिस ।	

मालकवराली मेल-जन्य—९ (रि$_{1}$ ग$_{1}$ म$_{2}$ ध$_{1}$ नि$_{1}$)

झिनालि	सगरिगमपधनिधस—	सनिधपमगरिस ।	
नागघटाण	सगरिगमनिधस—	सनिधमगरिस ।	
हंसनीलावरी	सरिगमधनिस—	सनिपधमगरिस ।	
कोकिलपंचम	पधनिसरिगरि—	सनिधपधनिस ।	
अमृतवर्षिणी	सरिगमपधनिपस—	सनिपधमगरिस ।	सगमपनिस । सनिपमगस ।
नटनवेलावली	सरिमपधनिस—	सनिपमगरिस ।	
भूपालपंचम	सगरिगपमधस—	सपमधमसरिस ।	
नागभोगी	सरिगमपधनि—	धपमगरिसनिस ।	
मारुवबगाल	सपमपधनिस—	सनिधपमगरिस ।	

नवनीत मेल-जन्य—८ (रि$_{1}$ ग$_{1}$ म$_{2}$ ध$_{2}$ नि$_{1}$)

निपादप्रिय	सरिगमपनिधस—	सनिपमगरिस ।
नागवेलावली	सरिगमधस—	सनिधमगरिस ।
सोमघटाण	सरिगमनिधनिस—	सनिपधमगरिस ।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
४ नभोमणि	सरिगरिमपस–	सनिधपमगरिस।	सागरि मपध पनिस। सनिधपमगरिस।
५ सुखनीलावरी	सरिगमपधस–	सनिधपमगरिस।	
६ सुखप्रिय	सगरिगमनिस–	सनिधमगरिस।	
७ नवरसकुतली	समपधनिस–	सनिधपधमगरिस।	
८ सिंधुनाटकुरजी	सरिगमधनिधस–	सनिधपमगरिस।	

(४१) पावनी मेल-जन्य—९ (रि$_1$ ग$_1$ म$_2$ ध$_2$ नि$_1$)

राग	आरोही	अवरोही
१ पीतावरी	सरिगरिमपधनिस–	सनिधपमगरिस।
२ कोकिलस्वरावली	सरिगमधनिस–	सधमगरिस।
३ कुतलभोगी	सरिगमधपनिस–	सनिधनिमगरिस।
४ प्रभावली	सरिमपधनिप–	सनिधमपमरिगरिस।
५ शुद्धगीर्वाणी	सरिगमपधनिस–	सधपमगरिस ।
६ नटनदीपर	सरिगमधनिस–	सनिमगरिगस।
७ चद्रज्योति	सरिगमपधस–	सधपमगरिस ।
८ हसरसाली	सरिगमधपधनिस–	सनिधपमगस ।
९ श्यामनीलाबरी	सरिगमपधनिस–	सधनिधमगरिस।

(४२) रघुप्रिय मेल-जन्य—११ (रि$_1$ ग$_1$ म$_2$ ध$_1$ नि$_1$)

राग	आरोही	अवरोही
१ ऋषभवाहिनी	सरिगमपधनिस–	सनिपधमगरिस।

२	रघुलील	समरिपमगमपमरिमप-निस–	सनिधनिपमगमरिमग-रिस।
३	हुसवेलावली	सरिगमपधपनिस–	सनिपमगरिस।
४	इन्दुगीर्वाणी	सरिगमपस–	सनिपधनिपमगरिस।
५	ललितदीपर	सरिगमपधनिस–	सनिधनिपमगरिस।
६	गधर्व	मपधनिसरिग–	रिसनिपमपधनिस।
७	मेचसावेरी	सरिमपनिस–	सनिपमगरिस।
८	आनदभोगी	सरिगमपनिधनि–	धपमगरिसनिस।
९	गोपति	सरिगमपधनि–	पमरिगरिस।
१०	मारुवललित	पधनिसरिगमप–	पमगरिसनिप।
११	हुसदीपर	सरिगमपनिपस–	सनिपधनिपमगरिस।

(४३) गवांभोधि मेल-जन्य—९ (रि$_1$ ग$_2$ म$_2$ ध$_1$ नि$_2$)

१	गीर्वाणी	सरिगरिमगमधनिपनिधस–	सनिधपमगरिस। सरिगमप धनिधपधस्सा। सनिधपमगगरिस।
२	विजयभूषावली	सरिगमपमपस–	सनिधपमगरिस।
३	जयवेलावली	सरिगमधपधनिस–	सनिधमगरिस।
४	कोकिलदीपर	सरिगमनिधप–	सनिधमगरिस।
५	मारुवगौड़	सरिगपमधनिस–	सनिधपमगरिस।
६	कलवसत	सगमपधनिस–	सनिपमगस।
७	कोकिलगीर्वाणी	सरिगमपधस –	सनिमगरिस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
४ नभोमणि	सरिगरिमपस–	सनिधपमगरिस।	सागरि मपध पनिस। सनिधपमगरिस।
५ सुखनीलावरी	सरिगमपधस–	सनिधपमगरिस।	
६ सुखप्रिय	सगरिगमनिस–	सनिधमगरिस।	
७ नवरसकुतली	समपधनिस–	सनिधपधमगरिस।	
८ सिंधुनाटकुरजी	सरिगमधनिधस–	सनिधपमगरिस।	

(४१) **पावनी मेल-जन्य—९** (रि१ ग१ म२ ध२ नि१)

१ पीतावरी	सरिगरिमपधनिस–	सनिधपमगरिस।
२ कोकिलस्वरावली	सरिगमधनिस–	सधमगरिस।
३ कुतलभोगी	सरिगमधपनिस–	सनिधनिमगरिस।
४ प्रभावली	सरिमपधनिप–	सनिधमपमरिगरिस।
५ शुद्धगीर्वाणी	सरिगमपधनिस–	सधपमगरिस।
६ नटनदीपर	सरिगमधनिस–	सनिमगरिगस।
७ चद्रज्योति	सरिगमपधस–	सधपमगरिस।
८ हसरसाली	सरिगमधपधनिस–	सनिधपमगस।
९ श्यामनीलाबरी	सरिगमपधनिस–	सधनिधमगरिस।

(४२) **रघुप्रिय मेल-जन्य—११** (रि१ ग१ म२ ध१ नि१)

१ ऋषभवाहिनी	सरिगमपधनिस–	सनिपधमगरिस।

२	रघुलील	समरिपमगमपमरिमप-निस–	सनिधनिपमगमरिमग-रिस।
३	हसवेलावली	सरिगमपधपनिस–	सनिपमगरिस।
४	इन्दुगीर्वाणी	सरिगमपस–	सनिपधनिपमगरिस।
५	ललितदीपर	सरिगमपधनिस–	सनिधनिपमगरिस।
६	गधर्व	मपधनिसरिग–	रिसनिपमपधनिस।
७	मेचसावेरी	सरिमपनिस–	सनिपमगरिस।
८	आनदभोगी	सरिगमपनिधनि–	धपमगरिसनिस।
९	गोपति	सरिगमपधनि–	पमरिगरिस।
१०	मारुवललित	पधनिसरिगमप–	पमगरिसनिप।
११	हसदीपर	सरिगमपनिपस–	सनिपधनिपमगरिस।

(४३) गवाभोधि मेल-जन्य—९ (रि$_1$ ग$_2$ म$_2$ ध$_1$ नि$_2$)

१	गीर्वाणी	सरिगरिमगमधनिपनिधस–	सनिधपमगरिस। सरिगमप धनिधपधस्सा। सनिधपमगगरिस।
२	विजयभूपावली	सरिगमपमपस–	सनिधपमगरिस।
३	जयवेलावली	सरिगमधपधनिस–	सनिधमगरिस।
४	कोकिलदीपर	सरिगमनिधस–	सनिधमगरिस।
५	मारुवगोड़	सरिगपमधनिस–	सनिधपमगरिस।
६	कलवसत	सगमपधनिस–	सनिपमगस।
७	कोकिलगीर्वाणी	सरिगमपधस –	सनिमगरिस।

	राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
४	सौवीर	सरिगरिमपधनिस—	सनिपधपमगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधमगरिस।
५	मारुवनारायणी	सरिगमपधस—	सधनिपमगरिगस।	
६	नवरसबगाल	सरिगमधपधनिस—	सनिधमगस।	
७	रतिक	सगरिगमपधनिस—	सनिधपमगरिस।	
८	मारुवसारग	सनिसरिगमपमधनि—	धपमगरिगस।	
९	आभीर	पधनिसमगम—	पमगसनिधनिस।	
१०	विजयश्री	सगरिगमपनिस —	सनिपमगारिस।	

(४८) दिव्यमणि मेल-जन्य—११ (रि, ग, म, ध, नि,)

	राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
१	दुन्दुभिप्रिय	सरिगमपधनिस—	सनिपमगरिस।	
२	भोगधन्यासी	सगमपनिस—	सनिपधनिपमगरिस।	
३	कुतलदीपर	समपधनिस—	सनिधनिपमगस।	
४	जीवतिनी	समपधनिस—	सनिपमगस।	सरिगमपधनिस। सनिपमगरिस।
५	शुद्धगाधारी	सरिगमनिस—	सनिधनिपमरिस।	
६	मारुवदेशी	सगरिगमपस—	सपधनिपमगरिस।	
७	भोगिसिंधु	सपमपधनिस—	सनिधनिपमस।	
८	अमृतपचम	सरिगमधनिस—	सनिधमगसरिस।	
९	आदिपचम	सरिपधनिस —	सनिधनिपमगरिस।	
१०	कन्नडवेलावली	पनिसरिगमप—	पमगरिसनिधनिप।	
११	सुखस्वरावली	सनिसरिगमपधनि —	पमगरिसनिस।	

	राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
४	सौवीर	सरिगरिमपधनिस—	सनिपधपमगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधमगरिस।
५	मारुवनारायणी	सरिगमपधस—	सधनिपमगरिगस।	
६	नवरसबगाल	सरिगमधपधनिस—	सनिधमगस।	
७	रतिक	सगरिगमपधनिस—	सनिधपमगरिस।	
८	मारुवसारग	सनिसरिगमपमधनि—	धपमगरिगस।	
९	आमीर	पधनिसमगम—	पमगसनिधनिस।	
१०	विजयश्री	सगरिगमपनिस —	सनिपमगारिस।	
(४८)	**दिव्यमणि मेल-जन्य—११** (रि, ग, म, ध, नि,)			
१	दुन्दुभिप्रिय	सरिगमपधनिस—	सनिपमगरिस।	
२	भोगधन्यासी	सगमपनिस—	सनिपधनिपमगरिस।	
३	कुतलदीपर	समपधनिस—	सनिधनिपमगस।	
४	जीवतिनी	समपधनिस—	सनिपमगस।	सरिगमपधनिस। सनिपमगरिस।
५	शुद्धगाधारी	सरिगमनिस—	सनिधनिपमरिस।	
६	मारुवदेशी	सगरिगमपस—	सपधनिपमगरिस।	
७	भोगिसिंधु	सपमपधनिस—	सनिधनिपमस।	
८	अमृतपचम	सरिगमधनिस—	सनिधमगसरिस।	
९	आदिपचम	सरिपधनिस —	सनिधनिपमगरिस।	
१०	कन्नडवेलावली	पनिसरिगमप—	पमगरिसनिधनिप।	
११	सुखस्वरावली	सनिसरिगमपधनि —	पमगरि[illegible]निस।	

(६१) कातामणि मेल-जन्य—९ (रि$_2$ ग$_1$ म$_1$ ध$_1$ नि$_1$) सनिधपमगरिस।

१ कीर्तिविजय सरिगमपनिधस– सधपमगरिस।

२ कनककुसुमावलि सरिगमपधस– सपमगरिस।

३ कर्णाटकतरंगिणी सरिगमपनिस– सनिधपमगमरिस। सरिगमपधस। सनीधपमगरिस।

४ कुतल सरिगमपधनिधस– सधनिपमगरिस।

५ विजयदीपिका सरिगमपनिधस– सनिधपमगरिस।

६ शुद्धज्योतिष्मती सगमपस– निधपमगसरिस।

७ श्रुतिरंजनी सरिगमपधनि– सनिधपमगरिस।

८ रामकुसुमावली सगमपनिधपनिस– सनिधपमरिस।

९ कनकसिंहारव सगमपनिम–

(६२) ऋषभप्रिय मेल-जन्य—९ (रि$_1$ ग$_1$ म$_2$ ध$_1$ नि$_2$) सगपमगरिस।

१ रुचिरमणी सगमपधनिधस– सनिधपमगरिस।

२ रत्नभास सरिमगरिमपनिधनिस– सनिपमगरिस।

३ पद्मकांति सरिगमपधनिस– सनिपमरिगरिस।

४ सोममंजरी सरिमपधनिधस– सधपमगरिस।

५ वृन्दावनदेशाक्षी सरिगमपमधम– सनिधपमगरिस।

६ कनकनासामणि सरिगरिमपधनिस– सधपमगरिस।

७ शुद्धसारंग सगमपनिस– सनिधपमगरिस।

८ विजयगोत्रारि सरिगमपधनिस– धपमगरिसनिस।

९ शुद्धवुत्तरी सनिसरिगमपध–

	राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
५	वसतगीर्वाणी	सरिगमपनिधस–	सधनिपमगरिस।	
६	शुद्धनवनीत	सरिगमधनिस–	सनिपमगरिस।	
७	रजनी	सरिगमधस–	सनिधमगसरिस।	
८	विजयश्रीकठी	सगमपस–	सनिधमगरिस ।	
९	धीरकुतली	समपधनिस–	सनिधपमगरिस।	

(६०) नीतिमती मेल-जन्य—११ (रि$_2$ ग$_2$ म$_1$ ध$_1$ नि$_1$)

	राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
१	नूतनचद्रिक	सरिगमपधनिस–	सनिपधनिपमगस।	
२	विजयरत्नाकरी	सरिमपधनिस–	सनिपमगस।	
३	निषाद	सगरिमपस–	सनिधमपनिपमगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिपमगरिस।
४	कनकश्रीकठी	सरिगमपस–	सनिधनिपमरिस।	
५	हृसनाद	सरिमपधनिस–	सनिधनिपमरिस।	
६	शुद्धगौरीक्रिय	सगमपनिधनिस–	सनिधपमगस।	
७	कुतलरजनी	समगमपधनिस–	सनिपधनिपमगस।	
८	देश्यगानवारिधि	सरिगमपधनिपस–	सनिसपमगरिस।	
९	देवकुसुमावलि	समगमपस–	सनिपमगरिस।	
१०	गौरीक्रिय	सगमपधनिस–	सनिधनिपमगस।	
११	कैकवशी	सरिगमपधनिस–	सनिपमगरिस।	

(६१) कातामणि मेल-जन्य—९ (रि$_1$, ग$_1$, म$_1$, ध$_1$, नि$_1$)

	राग	आरोह	अवरोह	
१	कीर्तिविजय	सरिगमपनिधस—	सनिधपमगरिस।	
२	कनककुसुमावलि	सरिगमपवस—	सधपमगरिस।	
३	कर्णाटकतरंगिणी	सरिगमपनिस—	सपमगरिस।	
४	कुतल	सरिगमपधनिवस—	सनिधपमगमरिस।	सरिगमपधस। सनीधपमगरिस।
५	विजयदीपिका	सरिगमपनिवस—	सधनिपमगरिस।	
६	शुद्धज्योतिष्मती	सगमपस—	सनिधपमगरिस।	
७	श्रुतिरंजनी	सरिगमपधनि—	निधपमगसरिस।	
८.	रामकुसुमावली	सगमपनिधपनिस—	सनिधपमगरिस।	
९	कनकसिंहारव	सगमपनिम—	सनिधपमरिस।	

(६२) ऋषभप्रिय मेल-जन्य—९ (रि$_1$, ग$_1$, म$_2$, ध$_1$, नि$_2$)

	राग	आरोह	अवरोह
१	रुचिरमणी	सगमपधनिधस—	सगपमगरिस।
२	रत्नभास	सरिमगरिमपनिधनिस—	सनिधपमगरिस।
३	पद्मकांति	सरिगमपधनिस—	सनिपमगरिस।
४	सोममंजरी	सरिमपधनिधस—	सनिपमरिगरिस।
५	वृन्दावनदेशाक्षी	सरिगमपमधम—	सधपमगरिस।
६	कनकनासामणि	सरिगरिमपधनिस—	सनिधपमगरिस।
७	शुद्धसारंग	सगमपनिस—	सधपमगरिस।
८	विजयगोत्रारि	सरिगमपधनिस—	सनिधपमगरिस।
९	शुद्धवुत्तरी	सनिसरिगमपध—	धपमगरिसनिस।

	राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
५	वसतगीर्वाणी	सरिगमपनिधस–	सधनिपमगरिस।	
६	शुद्धनवनीत	सरिगमधनिस–	सनिपमगरिस।	
७	रजनी	सरिगमधस–	सनिधमगसरिस।	
८	विजयश्रीकठी	सगमपस–	सनिधमगरिस।	
९	धीरकुतली	समपधनिस–	सनिधपमगरिस।	
(६०) नीतिमती मेल-जन्य—११ (रि$_2$ ग$_2$ म$_1$ ध$_1$ नि$_1$)				
१	नूतनचद्रिक	सरिगमपधनिस–	सनिपधनिपमगस।	
२	विजयरत्नाकरी	सरिमपधनिस–	सनिपमगस।	
३	निषाद	सगरिमपस–	सनिधमपनिपमगरिस।	सरिगमपधनिस। सनिपमगरिस।
४	कनकश्रीकठी	सरिगमपस–	सनिधनिपमरिस।	
५	हसनाद	सरिमपधनिस–	सनिधनिपमरिस।	
६	शुद्धगौरीक्रिय	सगमपनिधनिस–	सनिधपमगस।	
७	कुतलरजनी	समगमपधनिस–	सनिपधनिपमगस।	
८	देश्यगानवारिधि	सरिगमपधनिपस–	सनिसपमगरिस।	
९	देवकुसुमावलि	समगमपस–	सनिपमगरिस।	
१०	गौरीक्रिय	सगमपधनिस–	सनिधनिपमगस।	
११	कैकवशी	सरिगमपधनिस–	सनिपमगरिस।	

४	कुंतलश्रीकंठी	सगमपधनिस–	सनिपमगरिस ।	
५	शुद्धकोमल	सगमपस–	सनिधमगरिस ।	
६	हमीरकल्याणी	सपमपधनिस–	सनिधपगमगरिस ।	सरिगमपधनिस । सनिधपमगरिस ।
७	सुनादविनोदिनी	सगमधनिस–	सनिधमगस ।	
८	कुतलकुसुमावली	सरिगमपमपस–	सनिधनिपमगस ।	
९	यमुनाकल्याणी	सरिगपमपधस–	सधपमगरिस ।	सरिगमपधनिसा । सानिधापमगारीसा ।
१०	चद्रकान्त	सरिगमपधनिस–	सनिधपमगरिस ।	

(६६) चित्रावरी मेल-जन्य—९ (रि$_2$ ग$_1$ म$_2$ ध$_1$ नि$_1$)

१	चूर्णिकाविनोदिनी	सरिगमपधनिस–	सनिधनिपमगरिस ।	
२	चतुरगिणी	समगमपनिस–	सनिधनिपगमगरिस ।	सरिगमपधनिस । सनिपमगरिस ।
३	विजयकोसल	सरिगमपमपस–	सनिपमगस ।	
४	गगनरजनी	सगमपस–	सधनिपमगरिस ।	
५	नागकुतलो	सरिगमपनिस–	सनिपधनिपमगरिस ।	
६	कनकभवानी	समगमपधनिस–	सनिपमरिस ।	
७	कनकगिरि	सरिगमपसनिस–	सनिधनिपमगस ।	
८	देवगीर्वाणी	सगरिमपस–	सपमगरिस ।	
९	शुद्धनिर्मद	सरिगमपधनिपस–	सनिपमगस ।	

(६७) सुचरित्र मेल-जन्य—९ (रि$_1$ ग$_1$ म$_2$ ध$_1$ नि$_1$)

१	सेनाजयती	सरिगमपधनिस–	सधपमगरिस ।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की स० स० प्र० के अनुसार
२ सत्यवती	सरिमपधनिधस–	सनिधपमगमरिस।	
३ कुतलभवानी	सरिगमपमपस–	सनिधनिपमरिस।	
४ सोममजरी	सगमपधस–	सधपमगरिस।	सरिगमपधस। सनीधपमरिस।
५ कनकगीर्वाणी	सरिमपमधनिस–	सधपमरिस।	
६ भानुज्योतिष्मती	सरिगमपधनिधस–	सनिधपमगमरिस।	
७ कनकनिर्मद	सरिगमपमधस–	सनिधपमगरिस।	
८ रामकुतली	सरिगमपधनि–	धपमगरिसनिस।	
९ शुद्धसिंहरव	सरिमगमपधनिस–	सधनिधपमरिस।	
(६८) ज्योतिस्स्वरूपिणी मेल-जन्य—९ (रि, ग, म₂ ध, नि₂)			
१ जौडगाधारी	सरिगमपधस–	सनिधपमगरिस।	
२ ज्योतिष्मती	सरिगमपस–	सनिधमपमरिगस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमगस।
३ कुतलरजनी	सरिमपनिधनिस–	सनिधपमगरिस।	
४ भुवनकुतली	सरिगमपधस–	सधपमगस।	
५ कुसुमभवानी	सरिमपधस–	सनिधमपमरिस।	
६ रामगिरि	सरिमगमपधनिस–	सधनिधपमगरिस।	
७ कुतलगीर्वाणी	सरिगमपधनिस–	सधमपमगरिस।	
८ हिंदोलदेशाक्षी	सनिसरिगमपध–	निधपमगरिस।	
९ शुद्धश्रुतिरजनी	सरिमपधनिधस–	सनिधपमगमरिस।	

(६९) धातुवर्धनी मेल-जन्य—९ (रि$_1$, ग$_1$, म$_1$, ध$_1$, नि$_1$)

१	धीरसावेरी	सरिगमपधनिस–	सधपमगरिस।	
२	नलिनकुसुमावली	सरिगमपमपस–	सनिधनिपमरिस।	
३	धौतपचम	सरिगमपनिपस–	सनिधपमरिगमरिस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमरि गास।
४.	वृदावनकन्नड	सगमपधस–	सधपमगरिस।	
५	कुतलसिंहारव	सरिमपमधनिस–	सधपमरिस।	
६	ललितकोसली	सरिगमपधनिधस–	सनिधपमगमरिस।	
७	पद्मभवानी	मरिगमपमधस–	सनिधपमगरिस।	
८	ईशगिरि	सरिगमपधनि–	धपमगरिसनिस।	
९	कुसुमज्योतिष्मती	सरिमगमपधनिस–	सधनिधपमरिस।	

(७०) नासिकाभूषणी मेल-जन्य—६ (रि$_1$, ग$_1$, म$_1$, ध$_2$, नि$_2$)

१	निगमसचारी	सगमपधनिस–	सनिधनिपमरिस।	
२	कुतलघटाण	सरिगमपमपस–	सनिपमरिस।	
३	नासामणि	सरिगमपमपस–	सनिधनिपमरिस।	
४	गौरीसीमती	सरिगमपधनिम–	सनिपमगस।	सरिगमपधनिस। सनिधपमरि गस।
५	नीतिकुतली	समगमपधनिस–	पधनिपमगस।	
६	हसकोसली	सरिगमपधनिधस–	सनिधपमगमरिस।	

(७१) कोसल मेल-जन्य—६ (रि$_1$, ग$_1$, म$_2$, ध$_2$, नि$_1$)

१	कौस्तुभप्रिय	सरिगमपधनिस–	सधपमगमरिस।

	राग नाम	थाट	वादी	सवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
७७	देशकार	बिलावल	ध	ग	सा रे ग प ध सा	साध प गपधप गरेसा	दिन प्रथम प्रहर	
७८	देशाख्य	काफी	प	सा	निसामरे पम निपसा	सा निप मप गम रेसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
७९	देश	खमाज	रे	प	सारे मप नि सा	सनिधपमगरे-गसा	,,	
८०	देशी	आसावरी	प	रे	सारे मप नि सा	सानि धपमगरेसा	दिन दूसरा प्रहर	
८१	धनाश्री	काफी	प	सा	सागम पनिसा	सानिधपमगरेसा	दिन तीसरा प्रहर	
८२	धानी	काफी	ग	नि	साग म प निसा	सा निप मगसा	सर्वकालिक	
८३	नट	बिलावल	म	सा	सारेगमपधनिसा	सानिपमरेसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
८४	नट बिलावल	,,	म	सा	सा गमपमग मप धनिसा	सानिधनिपमग मरेसा	दिन दूसरा प्रहर	
८५	नट बिहाग	,,	सा	प	सारे गम पनिसा	सानिपधपपम-गरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	
८६	नट मल्लार	काफी	म	सा	सा रेग मरे गमप निधसा	म्ग निधनिपमगम रेसा	वर्षाकाल	

८७	नट हमीर-नट	कल्याण	प	सा	सा रे सा गॅमध निसा	सधमपगमरे नि-रेस	रात्रि दूसरा प्रहर	सारेग मरेग मप साध प (नि?) मप गमरेसा
८८.	नन्द	,,	सा	प	सागमपधनिपध मपसा	सानिधप मपगम रेसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
८९.	नायकी कान्हरा	काफी	म	सा	सा रे ग म प-निसा	सानिपमपगम-रेसा	मध्यरात्रि	
९०.	नागस्वरावली	खमाज	म	सा	साग मप धसा	साधपम पग मगसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
९१.	नाटकुरंजिका	,,	सा	म	निसा गम ध-निसा	रे निसाधम गम-रेसा	,,	
९२	नारायणी	,,	रे	प	सा रे म प ध सा	सानिधपमरेसा	,,	
९३.	नीलावरी	काफी	रे	प	सा रे म प ध सा	सानिधपमगरेसा	,,	
९४	परज	पूर्वी	सा	प	निसाग मपध-निसा	सा निधप मप-मगरेसा	रात्रि अंतिम प्रहर	
९५	पट विहाग	विलावल	प	सा	सारेग मप निसा	सा निधप निधप मगरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	
९६.	पहाडी	विलावल	सा	प	सा रे ग प ध सा	सा ध प ग प गरेसा	सर्वकालिक	

	राग नाम	थाट	वादी	सवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड
९७	पटमजरी (वि०)	बिलावल	सा	प	सारेगमपधप मपनिसा	सा नि ध नि प मगरेसा	मध्यरात्रि	
९८	पटमजरी (का०)	काफी	सा	प	सा रे ग म पध नि सा	सा नि ध प म ग रे सा	दिन तीसरा प्रहर	
९९	पीलू	,,	ग	नि	सारेग मपधप निधपसा	निधप मग निसा	,,	
१००	पूर्वी	पूर्वी	ग	नि	सारे ग म प ध नि सा	सा नि ध प म ग रेसा	दिन अतिम प्रहर	
१०१	पूरिया	मारवा	ग	नि	निरेसा ग मध निरेंसा	सा नि ध म ग रे सा	सधि प्रकाश काल	
१०२	पूर्विया	,,	ग	नि	निरेधसा रेगम-धसा	सा निध म ग रे सा	सध्याकाल	
१०३	पूर्वकल्याण	,,	रे	ध	सारेगम पध निसा	सा निधप मग-रे सा	,,	
१०४	पूर्याधनाश्री	पूर्वी	प	रे	निरे गमप धप निसा	रें निधप मग मरे-गरेसा	,,	
१०५	पचम	मारवा	म	सा	साम मग मध-निध सा	सानिध ममग म-गरेसा	उत्तर रात्रि	
१०६	प्रदीपकी	काफी	सा	म	साग मप निसा	सा निधप मग-मप गरेसा	दिन तीसरा प्रहर	

१०७	प्रभात	भैरव	म	सा	सारे गम पंध- निसा	सानिधप मम गरेसा	प्रात काल	
१०८	वहार	काफी	म	सा	सा गम पगम निधनिसा	सा निपमप गम रे सा	मध्यरात्रि	
१०९	वसत वहार	पूर्वी	सा	प	सा मपगमनिध- निम	रें सा निधप मग मग मगरेसा	वसत ऋतु मध्य- रात्रि	स म प ग म नि ध प मप मग मग मप गम
११०	वागेश्री वहार	काफी	म	सा	सा गम धनि धसा	सानि सानि धम- प गमरेसा	वसतऋतु मध्य	गमधनिधमप गमरेसा
१११	वागेश्री कानडा	,,	म	सा	सारे ग ($म_2$) मपग ($म_2$) म- ध निसा	सा निध मप गम रे सा	रात्रि तीसरा प्रहर	मधनिध मपधग ($म_2$) मरेसा
११२	वरवा	,,	रे	प	सारे मप धनिसा	सानि धप मप गरे गसा	दिन दूसरा प्रहर	
११३	वडहस सारग	,,	रे	प	सा रे म प निसा	सानि पम रे सा	,,	
११४	वसत	पूर्वी	सा	म	मा ग म ध रें सा	रेंनि धप मगमध मगरेसा	रात्रि अन्तिम प्रहर	
११५	वागेश्री	काफी	म	सा	सा मग मधनिसा	सा नि ध म ग मगरेसा	मध्यरात्रि	
११६	विलासखानी तोडी	रवी	ध	ग	सा रे गमग पध निसा	सा निधम गमग- रेसा	दिन दूसरा प्रहर	

	राग नाम	थाट	वादी	संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड
११७	बिलावल	बिलावल	ध	ग	सा रे ग म पध-निसा	सा निधप मग रेसा	सवेरे	
११८	बिहाग	,,	ग	नि	साग मप निसा	सा निधप मग रेसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
११९	बिहागडा	,,	म	सा	साग मप धनिसा	सानिधप मगरेसा	रात्रि पहला प्रहर	
१२०	वृंदावनी सारंग	काफी	रे	प	निस रे मप निसा	सा निप मरे सा	दोपहर	
१२१	बंगाल भैरव	भैरव	ध	रे	सारे गम पधसा	साधप मपगम रेसा	प्रात काल	
१२२	भटियार	मारवा	म	सा	साधप धमपग म-धसा	रें नि धपम पग रेसा	रात्रि आन्तिम प्रहर	
१२३	भवानी	बिलावल	म	सा	सारे मध सा	सा धम रेसा	मध्यरात्रि	
१२४	भिन्नषड्ज	बिलावल	म	सा	साग मध निसा	सा निध मग सा	मध्यरात्रि	
१२५	भीम	काफी	सा	प	सा गमप निसा	गरेसा निधपम		

१२६	भीम	काफी	ध	सा	नि सा ग म प नि सा	सानिपमगसा		निसा गम गस मप निप मप गम पनिस निपमप गमगस
१२७	भीमपलासी	,,	म	मा	निमागम पनिमा	सानिध पमगरेसा	दिन तीसरा प्रहर	
१२८	भूपालतोडी	भैरवी	ध	ग	सारेग पध सा	रें सा धपग पग-रेसा	प्रात काल	
१२९	भूपाली	कल्याण	ग	ध	सारेगप धमा	साधप गरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	
१३०	भैरव	भैरव	ध	रे	सारेगम पध निसा	सानिध पमग-रेसा	प्रात काल	
१३१	भैरव वहार	,,	म	सा	सारेगमा मध-निसा निरेंसा	सानिध पमग रेगरे सा निरेसा निधसा	वसतऋतु प्रात काल	धनि धप मगरे गरेसा
१३२	भैरवी	भैरवी	म	सा	सा रेगम पध-निसा	सा निधप मग रेसा	प्रात काल	
१३३	भरार	मारवा	प	सा	सारेगा गमपम पगमधसा	सा निधप मध-मग पगरेसा	रात्रि अतिम प्रहर	
१३४	मनोहर	पूर्वी	ग	ध	सा रेग मध मा	रेंसा रेंनिधप ग-मगरेसा	,,	

	राग नाम	थाट	वादी	सवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड
१३५	मध्यमाद सारग	काफी	रे	प	सारे मप निसा	सा निप मपरेसा	दिन दूसरा प्रहर	
१३६	मलूहा केदार	विलावल	सा	म	निसा गमप निसा	सा निध पमग मरेसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
१३७	मधुवती	तोडी	प	सा	निसा गमप निसा	सानिध प म ग रेसा	दिन तीसरा प्रहर	
१३८	जयत मह्लार	काफी	प	सा	सारे ग मप निधनि	साध निपमप मग रेग रेसा	वर्षा ऋतु	पगम रेस निस निधप रेरे गमप गमरेसा
१३९	शुद्ध मह्लार	विलावल	म	सा	सारेम प ध सा	सा ध प म रे सा	,,	मरेरे मपमरेपमप धसा ध पमपम रे मस
१४०	चरजूकी मह्लार	काफी	म	सा	सा रे ग स म रे म प धपसा	सा नि ध प गरे रे ग सा	,,	सा मरे मप निसा निप सानिधप गरे रेगसा
१४१	चचल सस मह्लार	,,	म	सा	साम रेप गम रेसा निमपसा	सानि सा पनि म-प रेम सारे गम रेस सा	,,	सा मरे गगमरे सा रेपगग मरेसा। निस धनि मप रेम सा रे सा
१४२	रूपमजरी मह्लार	,,	म	सा	सा रे प म ग म रे म प निधसा	सा नि ध निध-पम गगसा	,,	सामरेप मगमरेस पमनिधनिप मगरे सानिध निपसा

१४३	धूलिया मह्लार	काफी	म	सा	सा रे म प निध- नि सा	सानिध पमरे म- प मरेसा	वर्षा ऋतु	मरेमप निधनिम पसा निसारें सा नि- ध पमस निधप मरे ममप
१४४	मारवा	मारवा	रे	ध	सा रे गमध नि- धमा	सा निध मगरेमा	दिन अतिम प्रहर	
१४५	मारुविहाग	कल्याण	ग	नि	पनिसाग मप- निसा	निरें नि ध प मग रेसा	,,	
१४६	माड	विलावल	सा	प	सागरे मगपम ध- पनिध सा	सा ध निप ध मपग मस	सर्वकालिक	
१४७	मालकौंस	भैरवी	म	सा	निसा गम ध निसा	सा निध मगम- गसा	रात्रि तीसरा प्रहर	
१४८	मालवी	पूर्वी	रे	प	सा रे ग मप म- धसा	सानिपम गरेसा	सायकाल	
१४९	मालश्री	कल्याण	प	सा	सा गप पनिसा	सानिप मगपगसा	,,	
१५०	मालगुंजी	काफी	म	सा	सा गम धनिसा	सानिधप मग मगरेसा	रात्रिसर्व	
१५१	मालारानी	कल्याण	प	रे	गा रे मप निसा	निसधग रेमप ग- रेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	

	राग नाम	थाट	वादी	संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
२१०	सुहा सुघराई	काफी	म	सा	निसा गम पनि मपसा	सा निप मप गम रेसा	दिन का अथवा रात्रि का दूसरा प्रहर	निस रे गमरेसा निप धमपग रेमपध गम-रेसा
२११	सूर मल्लार	,,	म	सा	सारे मप निसा	सा निध मप म-रेसा	वर्षा ऋतु	
२१२	सूहा (कान्हरा)	,,	म	सा	निसा गम पनि मप सा	सा निप मपगम-रेसा	दिन दूसरा प्रहर	
२१३	सैंधवी (सिंदूरा)	,,	सा	प	सा रे म प ध सा	सा निधपमगरेम गरेसा	सायंकाल	
२१४	सोरठ	खमाज	रे	ध	सा रे मप नि सा	सारें निधमपध मरेनिसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
२१५	सोहनी	मारवा	ध	ग	सा ग म ध नि सा	सारेंसानिध मध-मगरेसा	रात्रि अंतिम प्रहर	
२१६	सौराष्ट्र टक	भैरव	म	सा	सा रे ग म प म ध सा	सानिधम निधप मगरेसा	प्रात काल	
२१७	हमीर	कल्याण	ध	ग	सा रे सा गमध निधसा	सानिधप मपधप गमरेस	रात्रि प्रथम प्रहर	
२१८	हिजाज	भैरव	म	सा	सारेगमप धनिसा	सानिधप म गमप	दिन दूसरा प्रहर	

२१९	हिंडोल	कल्याण	ध	ग	साग मधनिध सा	सानिध मग सा	दिन प्रथम प्रहर
२२०	हुसेनी कान्हरा	काफी	सा	प	सा रेग म प ध निसा	सानिधप गमरेसा	मध्यरात्रि
२२१	हेम कल्याण	बिलावल	सा	प	सा रेग प सा	सा धप ग रे सा	रात्रि दूसरा प्रहर
२२२	हंसकंकिणी	काफी	प	सा	साग मप निसा	सानिधप मपग मगरेसा	दिन तीसरा प्रहर
२२३	हंसध्वनि	बिलावल	सा	प	सारे गपगरे गप- नि सा	सा निप गरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर
२२४	हंसमंजरी	काफी	प	रे	सा रे मपध निसा	साधप मप धप मरेनिसा	दिन तीसरा प्रहर
२२५	हंसश्री	ममाज	प	सा	सा गमपनि सा	सा नि मप पग- मग सा	रात्रि दूसरा प्रहर

	राग नाम	थाट	वादी	सवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड
२१०	सुहा सुघराई	काफी	म	सा	निसा गम पनि मपसा	सा निप मप गम रेसा	दिन का अथवा रात्रि का दूसरा प्रहर	निस रे गमरेसा निप धमपग रेमपध गम-रेसा
२११	सूर मल्लार	,,	म	सा	सारे मप निसा	सा निध मप म-रेसा	वर्षा ऋतु	
२१२	सूहा (कान्हरा)	,,	म	सा	निसा गम पनि मप सा	सा निप मपगम-रेसा	दिन दूसरा प्रहर	
२१३	सैंधवी (सिंदूरा)	,,	सा	प	सा रे म प ध सा	सा निधपमगरेम गरेसा	सायकाल	
२१४	सोरठ	खमाज	रे	ध	सा रे मप नि सा	सारें निधमपध मरेनिसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
२१५	सोहनी	मारवा	ध	ग	सा ग म ध नि सा	सारेंसानिध मध-मगरेसा	रात्रि अतिम प्रहर	
२१६	सौराष्ट्र टक	भैरव	म	सा	सा रे ग म प म ध सा	सानिधम निधप मगरेसा	प्रात काल	
२१७	हमीर	कल्याण	ध	ग	सा रे सा गमध निधसा	सानिधप मपधप गमरेस	रात्रि प्रथम प्रहर	
२१८	हिजाज	भैरव	म	सा	सारेगमप धनिसा	सानिधप म गमप रेसा	दिन दूसरा प्रहर	

राग नाम	पंकड
२५ गौड मल्हार (काफी ठाठ)	सा, रेपम, मपग (म रे) मरेसा, समरेपम, ग (म रे) मरेसा, साध, निपम, पसाधनिपम, पग (म रे) रे सा।
२६ गौडसारङ्ग	सा, रेनिसा, गरेमग, प, रे, सा, मपसा, ध, निपमपमग, गरेमग, परेसा।
२७ गौरी (पूर्वी ठाठ)	सा, निधनि, रे ग, रेमगरे, सारे, निसा, रे, रेगरेसा, म, ग, मधपम, रेग, रेम, गरे सारे निसा।
२८ ,, (भैरव ठाठ)	सा, निधनि, रेगरेम, गरे सारे निसा, मधनिसा, ममरेगरेसा, मपधपम, रेग, रे रे सा।
२९ चन्द्रकान्त	ग, रे, सा, निधनिधपसा, गरेग, धमग, परेसा, निरेग, रेगरेसा, गपरेग, पमग, निरेगरेसा, धमगप, रे, निसा।
३० चन्द्रकौंस	सा, निसा, ग, धनिस, गमगसा, मधनिस, सानिधमधनिसा, निसाध, म, गमगसा।
३१ ,, (काफी ठाठ)	सा, धनिसा (ग२), गस, मग मगमध, निध, मग, मगसा, मध, निसा, निधमगमगसा।
३२ छायानाट	प, रे, गमप, मग, मरेसा, रे रे गम, निधप मपरे गमप, मगमरेसा।
३३ जलधर केदार	सा, रें, सा, धपम, ममप, धपम, रेसा, सा रे प, मरे, सा, सा रे म रें सा धप, मपसा, धप, मरेसा।
३४ जैजैवन्ती	रे ग रे सा, निधपरे गमगरे गरेसा, मप, निसा, निधपगम रेगमप, गमरेगरेसारे निधपरे।
३५ जैत	सा, सा रे गरेसा, रेरेसा, रेगप, प, धग, पधग, रेग, धपग, रेसा, सारेसा, पपसा, सारेंसा, पग, रेगपसा पधग, सागप, धपग, रेसा।
३६ जैत कल्याण	सा, ग, पग, पधपग, रेसा, पग, पधग, सासा गगम, प, पधग, पधपरे, ससारेसा, गपधसाप, पधग।

रेग, मग, रेस।

८५ विलावल — गरेगप, मग, मरेस, गरेगप, धनिधनिस, सनिधपधगप, मगरेगपमग, मरेस।

८६ विहागडा — गमध, पधनिध, पमगस, गग, पम, मगम, पधनिसासा, नि ध, प, मपम, गरेस।

८७ विहाग — सनिसमग, पमधप, धगमगरेस, पमगमम, निपनिसामगपमगमग।

८८ वृन्दावनी सारग — सा रेमप, मप, निप, निमनि निपमरेनिस।

८९ भटियार — सा ध, धप, म, म, पग, मधसा रेनिधपम पग, मधमगपगरेसा, मधसा, निरेंगरेंसा, सनि, मपग, मधसा, रेनिध, मग, मगरेस।

९० भरवार — गरेस, ग, मपमग, म ध, पगरेसा, निसा, रेग, मग, मध मग, गरेस, निसा, गमप, मप, मग, ग, पमग, रेसा, नि, सरेग, मग, धमग, पग, रेस।

९१ भिन्न षड्ज — सा, ग, गम, मगसाध, निसा, गमधमग, निस, ध नि सगम, ध, मध, निधप, गमधसा, निसधमगस धनिसग मधनिम।

९२ भीमपलासी — निसमगरेस, ममपगम, पनिपनिसरेंस निधप, मप, गमनिस, गरेस।

९३ भूपाल तोडी — धस, रे ग सा रेस, रेस रेग, प, धप, रेगस, रेग पधस प धपगरेगस।

९४ भूपाली — सरेगमा धप गप धस, रेग, पग, धपग, रेगरे धस, रेपग।

९५ भैरव — स, गम धधप, मपम, गमरेस, धधपमपम, निसधप, गमधधपगम, मगमरेस।

९६ भैरवी — स, रेग मरे स धपमरेगपम, गसरेम, गमपधप धपमपम, ग, सरेग, ममरेगस।

राग नाम	पकड
७३ पूर्वकल्याण	रेग, मपधनि, धप, रे, मप धमग, रेस, निरेनिध, निरेगमप, मम, निनिधमगरेस, मधमसा, सारेसा, निरेंनिधप, गमपधनिस, मधमग, निनिधमगरेस।
७४ पूरिया धनाश्री	निरेग, मप, धप , मग, मरेग, ध, मगरेस, निरेगमप, मधप, मग, मरेग।
७५ प्रदीपकी	निसा, मगरेस, निधप, मनिप, निस, ग, मपम, गम, निधप, म, गम, पग, रेस, मपसरेसा, निसमग-रेसा निधप, म, गम, पनिधप, गम, पग, रेस।
७६ प्रभात	सा, रे रेसा, ग, म, प धप, म, रे, गमम, गम, गरेस, धस, रेगमम, गमगरेस, धनिस, पध धनिस, रेरेसनि धप, मगम, धपमगरेगममगमगरेस।
७७ बहार	सरेसा, ममप, गम, ध, निसरे निस, निनिप, मप, गम, धनिसरेनिस।
७८ बरवा	सा, रेगरेसा, रेमपधमप, रेगरेस, निसमगरेसा, रेम रेमपधसा, निधम, धपगरे, गरेगस, मपधनिस, सनिरेसा, निनिस, निधप, निधम, पग, रेसा।
७९ बडहंस सारंग	निनिपमरेसा, रेमप, निप, निसरेसा, निप, निप, मरेसा, रेम, मप, मप, निप, निसा, सारेसा, सानिप, मपनिप, रेस, विसा, रेमप।
८० बसन्त	स, ग, मधरेसा, धसानिधप, ममग, मधसारेसानिधपमगमग, मनिधप मग, मगरेस।
८१ वसन्त बहार	सानिधप, मग, ममग, मधनिसरेसा निधपममगममपगगमध, निसरेसा निधपमगमग, रेसममपगम।
८२ बागेश्री	सारेस, धनिसम, मगग, मधनिध, मधनिसानिध, मग, मगरेसधनिसम।
८३ बागेश्री बहार	साम, गम, पगम, रेसा, मधनिसानिप, मपनिनि पमपगम, गरेसा, गमरेस।

८४	विलासखानी तोडी	म, रेनिसा, रेग, रेग, मग, रेमा, सरेधस रेग, मग, रेगस, धप, निधमपग, रेगमग, रेस, सधसरेग, रेग, मग, रेस।
८५	बिलावल	गरेगप, मग, मरेस, गरेगप, धनिधनिस, सनिधपधगप, मगरेगपमग, मरेस।
८६	बिहागडा	गमध, पधनिध, पमगस, गग, पम, मगम, पधनिसासा, नि ध, प, मपम, गरेस।
८७	बिहाग	सनिसमग, पमधप, धगमगरेस, पमगमम, निपनिसामगपमगमग।
८८	वृन्दावनी सारग	सा रेमप, मप, निप, निसनि निपमरेनिस।
८९	भटियार	सा ध, धप, म, म, पग, मधसा रेनिधपम पग, मधमगपगरेसा, मधसा, निरेंगरेंसा, सनि, मपग, मधसा, रेनिध, मग, मगरेस।
९०	भखार	गरेस, ग, मपमग, म ध, पगरेसा, निमा, रेग, मग, मध मग, गरेस, निसा, गमप, मप, मग, ग, पमग, रेसा, नि, सरेग, मग, धमग, पग, रेस।
९१	मिश्र पउ्ज	सा, ग, गम, मगसाध, निसा, गमधमग, निस, ध नि सगम, ध, मध, निधप, गमधसा, निसधमगस धनिसग मधनिम।
९२	भीमपलासी	निगमगरेस, ममपगम, पनिपनिसरेंस निधप, मप, गमनिस, गरेस।
९३	भूपाल तोडी	धस, रे ग सा रेस, रेस रेग, प, धप, रेगस, रेग पधस प धपगरेगस।
९४	भूपाली	सरेगसा धप गप धस, रेग, पग, धपग, रेगरे धस, रेपग।
९५	भैरव	स, गम धधप, मगम, गमरेस, धधपमपम, निमधप, गमधधपगम, मगमरेस।
९६	भैरवी	म, रेग गरे स धपगरेगपम, गसरेस, गमपधप गपमपम, ग, सरेग, ममरेगस।

राग नाम	पकड
९७ मध्यमाद सारग	निपस, निरेस, रेमपनिपमपम, रेनिसरेम, पनिमप, निपमरे पमरे निरेस।
९८ मलूहा केदार	स, रेसा, म, म, पस, गगमरेगमप, गमरेनिस, धप, मप, निस, मग, मरेस, मगप, मपधनि धप, मगमरे, निस।
९९ मधुवन्ती	निसगमप, मपधप, मपगरेसरेनिस, गमप।
१०० मारवा	धनिरे, गमगरे निधनिरे, गमध, धमगरे, गमधनिध, मगरे, निधस।
१०१ मारूविहाग	रे, निस, गरे, गमपमप, मप, ग, मग, रेस, रेनिस, मग, मग, रेस, निधप, मग, पगरेस, रेनिस, मग, मगरेसा।
१०२ माँड	सा, रेगस, रेममप, ध, पधस, सनिसनि ध, धनिप, पध, म, पग, मस, रेग, गस।
१०३ मालकौंस	मधनिस, निम ध निमधमगनिस, गमस।
१०४ मालश्री	पप, मगस, सासगाप, पमप, पगस, निमगपमग, गपसनिपनिसनिपमग, निपगपगगस।
१०५ माल्गुजी	स, मगरेस, निधनिस, धनिसरेग, म, मध, धनिध, म, रेगम, गमध, निस, रेंस, निधसा, धप, म, मग, मगरेस।
१०६ मालीगौरा	धनिसरेनिध, निधप, मग, मगम ध सा, निरेग, निरेस, प, मधमग, गरेसा, मधस, निरेस, निरेनिध, मनिधमगरेस।
१०७ मिया की सारग	रेस, धनिप, निध, निध, सनिस, सरे, मम, पप, धप, मरेसा, पनिध, निधस, निस, सरेस, निधसा निप, मरे, सा।

१०८	मिर्या मल्हार	रेमरेसा, निपमप, निध, निम, रेप, मरेप, गमरेम, निधनिसा।
१०९	गौरामल्हार	मरे, सरे, निम, गग, मरेप, मप, निधनिस, रेंसा, धधनिप, मपम, साधनिप, मपगम, मग, निप, रेम, पधमप।
११०	मुलतानी	निसा, मगप, पमप, गमगरेस, निसगमप।
१११	मेघरञ्जनी	निरेगग, म, मग, रेग, रेस, म, निमरेंरेंमनिम, ग, मरेगरेस, निरेगम, गममग, म, गरेस।
११२	मेघमल्हार	रे, रेमरेम, निपस, सरेरेमम, रे, सरेमरे, सनिप, मपसा, निप, मरेम, मप, निम, रेंम, निसरेंगरेंस, निग ग, निप, रेरेमरेसा।
११३	गगन	निरेगरे, निरेस, मपरेगरे, धनिरेमरेगधनिरेम।
११४	यमनी बिलावल	मारेग, मग, पमधग, गमगरे, गरेम, निधनि धप धनिस, पमप, गमग, गमगरे, गरेस।
११५	रागेश्री	सा, रेम, निध, निस, मग, मध, निध, गग, मग, सरेसा, गमधनिस, मगरेंस, मनिध, मधनिध, मगरेस, निधसा।
११६	रामकली	स, गमपप, मप, ग, निधप, मग, गम, रेस, धप, मप।
११७	रामदासी मल्हार	पगमरेगा, रेनिसा, सरेग, मग, गगमरे, पमनिप, गमरेस, प धनिसा, सरेंस, निम, निप, ममप, गम, निप, गगरेस।
११८	ललित (पूर्वी)	निरेगम, ममग, ममम, ग, मगरेम, निरेगग, ममग, मममा, रें निधमम, ग, मगरेस, निरेगम।
११९	विभाग (भैरव)	ग, गप, गपधप, गग, गप, गरेम, गरेस, पगप, धग प, धपगगरेस, गप धपगप।

	राग नाम	पकड
१२०	विभास (मार्वा)	स, निरेग, पग, रेस, निध, मध, सारेस, गप, पध, पग, मगरेसा, मधसा, रेसा, निधमधस, सरें निध मग, पग, रेस।
१२१	शहाना	निधनिप, धमप, सा, निनिप, मप, गम, पगमप, गमरेसा, सम, म, धप, गम, मपनिसा, स, निस-रेंसा, निप, निनिप, निमपस, निपमपगम।
१२२	श्यामकल्याण	सा, रेममप, पधप, मपधप, मरे, निस, रेमप, गमरे, निसा, रेमप, गम, रेसा, रेमप।
१२३	सामन्त सारङ्ग	प, म, पनिप, रेरेसा, निस, रेम, प, म, निधप, मप, निस, स निस, रेंरेंसा, निप, म, निधप।
१२४	श्याम केदार	स, म, रेस, रेमप, मपधपम, पग, मरेस, रे, रे, मप, निस, सनिरेंस, निपप, मपधप, रे, प, मरे, गम, रे, सा, रे, रेमप मपधपम।
१२५	शिवरञ्जनी	गा, गपधस, रेंगरेस धपगरे, ग रे स धसरेगरे पगरे धसा रेगपधस धपगरेस।
१२६	शिवमत भैरव	ग, ग, मरेगप, मग, मरेस, रेसा, रे ग रेसा, पधनिस, रेस, रें ग रेंस, निस, धनिधप, पधनिसा।
१२७	शुक्ल विलावल	स, ग, गम, मपम, रेप, मपधनिग, गम, मपमग, मरे, स, रेग म, मपमग, मरेप, धस गम, प, मग, मरेस, निग, मसनिध, निपमग।
१२८	शुद्ध कल्याण	ग, रेस, निधप सा, गपरेस, सरेगपधसा, धपरेगपरेस।
१२९	शुद्ध सारग	निसा, रेमप, मपमरेमप, निसनिप, धप, मप, मरेगा, रेमप।
१३०	शकरा	गप, निधसनि, पगपगरि।
१३१	श्रीराग	सा, रे रे गरे, स, मप, धप, रे, ग, रे प, मप, निस, रेंरेंस रेसनिस रेनिधप रेरे मपरेगरेरेस।

१३२ दीपक (पूर्वी) सा, प, गपगरेसा मगप, मधप, गमधपसा, निसारेसा, प, गपगरेसा।

१३३ भटियार (नमाज) सा, ध, ध, निधसा नि ध, स, नि ध, मप, ग, रेस, ध, ध, नि ध सा, निनि, ध, मप, ग, रेस।

१३४ गायनी कल्याण ग, रेम, निधनिधप पसा, रेगरेसा, ससमग, पपधप धपग, रेस, ध, गरेस।

१३५ सारा का हिंडोल मग, सनिधसनि, मधस गसनि मगनि धसनि मग, सनि धसनि।

१३६ सुघराई स ध, धनिप, परेम, मप, निप, स, निसा, गग मनिप, मप, गग, मरेंस, धधनिप, मप, निप, निस, रेंगमरेंम निसरेंस, पनिप, पगमरेस।

१३७ सूहासुघराई सारे, निम, ग ग मप, गमरेम, निप, स, रेगग सरेस, मप, निपस, निसरेंनिस, निपम, मपम, गग (म म ... मम ... मम)
मपरेस, निसरे गग मरेस, निस गग मप। (मम ... मम)

१३८ सूरमल्हार निस, रेमप, निधप, मपमरेस, निनिपमरेस, रेम, पनिधप, निस, रेंनिस, निधमप, मपनिपमरेस, सनिधप, मपनिधप, मरेनिस।

१३९ सूहाकानड सा, निमगमप, ग, मरेसा, निस, निप, सा, मरे, पग, म, रेम, सग, मपस, निप, मप गमरेस, निमगमप, निमपसा।

१४० सिंदूरा मा, रेमपधस, निधमगगरे, मगरेम, धमप, निस, रेंग, रेंस, निधस, रे, मपधनिधमप गरेनिस।

१४१ सोरठ रेमपनिस, रेनिधप, धमरे, रेपमरेरेमा, रे, प, मपम, मरे, निध, मरे, रेमपनिस रेंनिधमरे, पमरे, निम।

१४२ सोहनी ग, म धनिमरेग, निधनि धग, मगरेम, ग, मधनिम, निधमग, मधनिमरेंस ॥

राग नाम	पकड
१४३ हमीर	सा, गमध, निध, स, निधप, मपगमध , पगमरेस, गमध।
१४४ हिन्दोल	सा, गमधसा ध, मग, मगस, धसा, मग मधसा निधसा धमगमगस।
१४५ हेमकल्याण	पप धप स, रेसा, गमरेस, गमपगमरेसा, धपसा, गमरेस, मगरेसा, पधपसा धप, गमपगमरेस, पधपसा।
१४६ हसकिंकणी	गमप, गरे, निस, गम, मपग, मपनिसा, निस, मपनिसगरेंसनिधप, मग, म, निसा, गमप, पमपग, म, प, ग, रेसा।
१४७ हसध्वनि	सा रे स, गप, निस निपगपगसरे, निपसनिगरे, गपगरेसरेस।
१४८ कीरवाणी	स, गम पध, नि, निधपमगरें, मगरेस, निसा, गमपधपमगरेगरेसा।
१४९ वराटी	पधग, पधमग, गरे, रेग, धमग, रेस, सरे रेग, रेस, सा, निरेग, पग, प, पधस, पधग, मग, ग, रेस।
१५० पञ्चम	मधसा, सनिध, मधमग, मगरेस, निसम, म, मग, मधस, निधनिमध।
१५१ साजगिरि	निरेगरे, मगरेस, सनिधस, निरेग, निरेनिध, मधसा, गम, नि, मधम, ममगरेस, मग, मप, धप, सा, सनिरेंनिधप, पधग, पपधसा, निरेनिमधगममगरेसा।
१५२ ललिता गौरि	मध, निरेगरेसनिसा, निधप, धनिप, मप, गरेगरेस, सनिधस, रेरेसपपधनि, पगमप, मधस, रेरेसनिधप, पधनिप, गमप।
१५३ लकदहन मारग	मम स, रेमप, प, निनिप, मरेस, रेमरेस, सनिधनिप, मप, गगमरेम, मप, निस, मरेंमरेंम निपमपस,

म म
निधनिप, गरेस।

१५४ पटमञ्जरी — साग, गमरेरेसा, माध, सारेसा, धधग, पपरेरेरेरेगसा, साग, गमप, मगमरेसा, पपसा, सारेस, सागगगप, मगमरेसा, पधग, गरेगमगरेस।

१५५. श्रीरञ्जनी — मगरेसा, धनिसा, म, गमध, मधनिधम, गमधनिसा, सानिध, मग, रे, सा।

१५६. गौड — सा, मरेसा, निसा, ग, मरेप, धप, मरेप, मपधरेस, धनिप, मपग, मरेसा, मप, निधसा, सनिरेगा, धनिप, मरेस, रेनिस, पनिपम, प, पसनिप, मपगमरेस।

निनिनि
१५७ कोमल देशी — पप धधध प, धमप, ध, निसा, सनिधनिधपमरेमप, धपगरेरेसा, समप, रेमप, धपगरेस, प, धप, सरेग, रेम पधमपधमपगरेस।

१५८ खटतोडी — गगरेस रेमपमप धनिनिधनिप, पमधम, मपसासा, निपमपगरेस, मपधनिसा, धनिसरेगरेरेसनिधप, धनि धप, धममगरेस।

१५९ जगत्रा — गरेगगा, रेमप, धनिधप, ध, मप, रेगरेसा, म, पनिसा, निसरेगरेस, निसधप, धधनिस, धनि, पनि, धप, धम, प, गरेगस, रेमप, धनिध, प।

१६०. सिंध भैरवी — सा, रेगम, रेग, रेनिग, धपधगपगरेग, सा, रेगरेनिसा, धपधसा, निधग।

नि
१६१. वसन्त मुखारी — निसागमप, धप, पपनिस, धनिधप, पनिधप, गपमग, मगमरेस, मपधनिसा, सरेसा, निसाधप, पनिधप, गपगमग, मरेसा।

१६२ उत्तरी गुणकली — मगगप, ध, पधम, गधमपग, गमरेसा, सरेनि, सारेगम, पधनिस, निधपम, पधनिस, गरेसा, निसाधप,

राग नाम	पकड
	मगमग, मधनिसरेसा धप, धम, सध ।
१६३ अञ्जनि तोडी	सारेमप, सनिसा, धप, मपगरेसा, गस, मरेमप, निधप, निनिस, रेनिधप, रेगसरे, मप, साधप, मप, ग, रे, मगरेगसा, रेम, रेमपसधप ।
१६४ बहादुरी तोडी	धप, मपध, ममधस, धनिस, रेस, सनिध, रेनि, गरेग, मरेग, रेगमधनिध, गमरेग, रेसा, मधसानिध गमरे, गरेसा ।
१६५ औडव देवगिरि	सासारेग, गगरेगप, पध, गगरेगपधसा, पधपधपगरेसा, सासापधपधपगरेसस ।
१६६ लच्छासाख	प, मग, रेपमग, धनिसा, निध,'प, मग, मरेसा, सारेगम, निधपमग, मरेसा, सम, गपप धनि धप मग, मरेसा ।
१६७ नटनारायण	सारेसा, साप, पधगमसरेस, गमपसा, रेंसा, धपरे, गमपगमसरेसा, पपसा, रेंसा, साधसरेंस धप, सरेगमपगम, सरेसा ।
१६८ सावनी (बिहाग)	सारेसा, गमग, पनिसा, सारेंसा, पग, मप, स, पमगसगमपनिस, सानिधस, निपगमगरेसा, मग, मपनिसा ।
१६९ नटबिलावल	साग, गम, मप, मग, मरे, निधप, म, पमग, रे, ग, मप, मग, मरेसा, साग, गम, मपमगमरेसा ।
१७० सवन	मगनिसा, रे, गमप, ध, पमगम, निसा, सानिधपमग, सा, साममपनिसा, निसरेंनिसा, निसारेंसा नि धप, धममगरेगनिसा ।
१७१ ललित पञ्चम	ग, मगरेसा, धनिसागम, ममम, ममग, मधनिसा, सारेंसानिधप, मपमधपम, गमधनिसा, सानिरें, सानिधनि, सागमगरेसनि धप मप, गमगरेसा ।

१७२	रेवा	ग, रेग, पग, रे, सा, सारेग, प, पध, पग, सारेग, रेग, सारेंसा, धप, ग, पग, रेसा।
१७३	हुगनारायण	निरेगम, पमगरे, गमपम, गरेसा, निरेनिप, मग, निरे गम, रेगरेसा।
१७४	मनोहर	धमगरे, गरेसा, मधरें निधप, गमगरेसा, मधम, रेंस, रेंनिधप।
१७५	दीपक (बिलावल)	गा, गमप, म, गमपमग, रेसा, प, म, मग, रेसा, मा, निधप, पधसा, साग, गरेमा, गमपधप, निधप।
१७६	गुणश्री	मरेमग, धमरे, स, पधम, मपधस, रेंमाधप, मप ध ध मरेरे, मपमरेस, धम।
१७७	देवरञ्जनी	गाम, मप, ग्प, धसा, धप, माध, निध, पम, मप धसा, म, मपम, मप ध सा, निसा धाप, पनिध, गमसा, मपधमा, मपम।
१७८	सर्पर्दा बिलावल	मा, रेगम, ध, प, निध, निसा, निध, प, मग, मरे, मा, सरेगम, धप, गमधप, सारेग, मरेस, सारेग, रेग, मपमग, मरेसा।
१७९	मालवी	मानिप, ग, मग, रेमा, साग, मधरेंसा, सा, नि, प, मग, मग, रे, सा।
१८०.	कामोद नाट	गमपगमरेगरे, गम (प) म, ग, म, रेगा, धनिप, सामगप, धप, पसा, प (प) पग, गमपगम, रेगरे।
१८१.	कौंगी कानडा	पग, पधग, मप, गमरेसा, रेनिसा, साधनधनिप, धनिसारेंम, सा, धनिपम, पधम, निमा, रेंनिगा, निप, ग मग, निप, धनिरेंसा धम, पधम।
१८२	जोग	गा, गमपमगम, गम, पनिप, निगनिप, मगमपमगस, निपग।
१८३	जोग कौंगा	ग गमगगा मगग, धनिमा निधम, ग, मगग, धनिग गम।
१८४.	ललित (मार्वा)	निरेगम, ममग, मग, मग, निरे निध मम, गनिरे गम ममग, मगरेमा, निरेगस।

अनुबन्ध ३

(तालो का प्रस्तार क्रम)

सख्या

नियत मात्रावाले अमुक ताल को कुल कितने प्रस्तार मिल सकते हैं इस प्रश्न का, अक-पक्ति-रूप जो उत्तर पाया जाता है वही सख्या है।

चतुर्मेरु प्रस्तार के एक-द्रुतवाले ताल का प्रस्तार—१
,, ,, ,, द्वि-द्रुतवाले ,, के ,, —२

आगे ३, ४, ५, ६, ७, ८ इत्यादि द्रुतवाले तालो को, मिलने योग्य सारे प्रस्तारो को, अक-पक्ति के रूप में खोजने की विधि बतायी जाती है—

अत्य (अन्तिम अक) उपात्य (अत्य से पहला अक) तुरीय (चौथा अक) षट्क (छठा अक) इनको जोडकर लिखें तो अगला अक पक्ति में मिलेगा। जहाँ-जहाँ तुरीय और षट्क नही उपलब्ध होते वहाँ, क्रम से तृतीय और पचम को मिला लीजिए। यो लिखने पर—

३ द्रुतवाले का अत्य— २
,, ,, ,, उपात्य— १
कुल मिलकर— ३   १, २, ३   (अक-पक्ति)

४ द्रुतवाले का अत्य — ३
,, ,, ,, उपात्य— २
(तुरीय की अनुपस्थिति— १
के कारण) तृतीय
कुल — ६   १, २, ३, ६   (अक-पक्ति)

५ द्रुतवाले का अत्य— ६
,, ,, ,, उपात्य— ३
,, ,, ,, तुरीय— १
कुल — १०   १, २, ३, ६, १०   (अक-पक्ति)

६ द्रुतवाले का अंत्य—१०
" " " उपांत्य— ६
" " " तुरीय — २
(पट्क की अनुपस्थिति— १
के कारण) पंचम ———
कुल — १९ १, २, ३, ६, १०, १९ (अंक-पंक्ति)

७ द्रुतवाले का अंत्य —१९
" " " उपांत्य—१०
" " " तुरीय — ३
" " " पट्क — १
कुल — ३३ १, २, ३, ६, १०, १९, ३३ (अंक-पंक्ति)

८ द्रुतवाले का अंत्य — ३३
" " " उपांत्य—१९
" " " तुरीय — ६
" " " पट्क — २
कुल — ६० १, २, ३, ६, १०, १९, ३३, ६० (अंक-पंक्ति)

इस अंक-पंक्ति के द्वारा किसी ताल के समग्र प्रस्तारों की संख्या की जानकारी-मात्र नहीं, अपितु उन प्रस्तारों के बीच द्रुतांत्य, लघ्वंत्य, गुर्वंत्य और प्लुतांत्य प्रस्तार कितने-कितने होते हैं, इस बात का भी पता चलता है। इनमें, ये चार अंक नीचे जोड़े गये हैं वे ही यों इसे समझा देते हैं। जैसे—

अंत्यांक द्रुत में समाप्त होने का बोधक है
उपांत्यांक लघु " " " " "
तुरीयांक गुरु " " " " "
पट्कांक प्लुत " " " " "

सख्या

नियत मात्रावाले अमुक ताल को कुल कितने प्रस्तार मिल सकते हैं इस प्रश्न का, अक-पक्ति-रूप जो उत्तर पाया जाता है वही सख्या है।

चतुर्मेरु प्रस्तार के एक-द्रुतवाले ताल का प्रस्तार—१
,, ,, ,, द्वि-द्रुतवाले ,, के ,, —२

आगे ३, ४, ५, ६, ७, ८ इत्यादि द्रुतवाले तालो को, मिलने योग्य सारे प्रस्तारो को, अक-पक्ति के रूप में खोजने की विधि बतायी जाती है—

अत्य (अन्तिम अक) उपात्य (अत्य से पहला अक) तुरीय (चौथा अक) पट्क (छठा अक) इनको जोडकर लिखें तो अगला अक पक्ति में मिलेगा। जहाँ-जहाँ तुरीय और षट्क नही उपलब्ध होते वहाँ, क्रम से तृतीय और पचम को मिला लीजिए। यो लिखने पर—

३ द्रुतवाले का अत्य— २
,, ,, ,, उपात्य— १
कुल मिलकर— ३ १, २, ३ (अक-पक्ति)

४ द्रुतवाले का अत्य — ३
,, ,, ,, उपात्य— २
(तुरीय की अनुपस्थिति— १
के कारण) तृतीय
कुल — ६ १, २, ३, ६ (अक-पक्ति)

५ द्रुतवाले का अत्य— ६
,, ,, ,, उपात्य— ३
,, ,, ,, तुरीय— १
कुल — १० १, २, ३, ६, १० (अक-पक्ति)

६ द्रुतवाले का अत्य—१०
,, ,, ,, उपात्य— ६
,, ,, ,, तुरीय — २
(पट्क की अनुपस्थिति— १
के कारण) पचम ———
कुल — १९ १, २, ३, ६, १०, १९ (अक-पक्ति)

७ द्रुतवाले का अत्य —१९
,, ,, ,, उपात्य—१०
,, ,, ,, तुरीय — ३
,, ,, ,, पट्क — १
कुल — ३३ १, २, ३, ६, १०, १९, ३३ (अक-पक्ति)

८ द्रुतवाले का अत्य — ३३
,, ,, ,, उपात्य—१९
,, ,, ,, तुरीय — ६
,, ,, ,, पट्क — २
कुल — ६० १, २, ३, ६, १०, १९, ३३, ६० (अक-पक्ति)

इस अक-पक्ति के द्वारा किमी ताल के समग्र प्रस्तारो की सख्या की जानकारी-मात्र नही, अपितु उन प्रस्तारो के बीच द्रुतान्त्य, लघ्वत्य, गुर्वत्य और प्लुतात्य प्रस्तार कितने-कितने होते है, इस बात का भी पता चलता है। इसमें, ये चार अक नीचे जोड़े गये है वे ही यो इसे समझा देते है। जैसे—

अत्याक द्रुत में समाप्त होने का बोधक है
उपात्याक लघु ,, ,, ,, ,, ,,
तुरीयाक गुरु ,, ,, ,, ,, ,,
पट्काक प्लुत ,, ,, ,, ,, ,,

उदाहरण—

६ द्रुतवाले	ताल के	द्रुत	में समाप्त	होनेवाले	प्रस्तार—	१०
,,	,,	,,	लघु	,,	,,	,,	६
,,	,,	,,	गुरु	,,	,,	,,	२
,,	,,	,,	प्लुत	,,	,,	,,	१

नष्ट

तालो की प्रस्तार-श्रेणी में, अमुक प्रस्तार कैसा होगा ? यह प्रश्न यदि कोई पूछे तो उसे नष्ट प्रश्न कहते हैं। किसी नष्ट के बारे में पूछा जानेवाला प्रश्न, इसका अर्थ है। इस प्रश्न का उत्तर देने का मार्ग 'सगीतरत्नाकर' में कही हुई रीति के अनुसार यो है—

उद्दिष्ट ताल के जिस प्रस्तार के बारे में प्रश्न किया जाता है उसके अक तक की अक-पक्ति को पहले लिखिए। उस प्रस्तार के जो कुल-अक हैं उसमें उस अक को जो प्रश्न में दिया गया है घटा दीजिए। घटित होकर बाकी जो अक रह गया है उससे अत्याक को, सभव हो तो उपात्य को तथा इसी प्रकार दूसरे अको को भी घटा दीजिए। ऐसे घटा देने में, यदि कोई अक न घटेगा, तो प्रस्तार का एक द्रुत मिलेगा, घटेगा तो उससे एक लघु मिलेगा। लगातार दो लघु मिलने पर दोनो को एक गुरु मान लीजिए। इसी तरह गुरु के मिलने के बाद उसका तृतीय अक भी घटा तो गुरु को प्लुत में बदल लीजिए। घटे हुए अक से एक लघु के मिलने के बाद, चाहे दूसरा अक घटे ही, पर उससे द्रुत की प्राप्ति न होगी—यानी दूसरे अक से द्रुत को मत लीजिए। ऐसे प्राप्त अको को लिखते समय यदि वे ताल की कालमात्राओ से न्यून हुए तो कमी को द्रुत करके मिला दीजिए।

उदाहरण—जैसे कोई पूछे कि ६, द्रुतकाल की मात्रा के ताल-प्रस्तार मे पद्रहवं भेद कैसा है तो अक-पक्ति को पहले लिखिए। जैसे—१, २, ३, ६, १०, १९।

प्रश्नविषयक प्रस्तार-भेद की क्रम-सख्या १५ है। इसे, कुल-अक से—अर्थात् १९ से घटा दीजिए तो बाकी ४ मिलेगा। इस शेष-अक (४) से अत्याक (१०) को घटा देना असम्भव है। इससे हमारा आवश्यक एक द्रुत प्राप्त होता है।

बाद में, उसी शेष-अक (४) से उपात्याक (६) को भी घटा देना असम्भव होने के कारण और एक द्रुत मिलता है। तदनतर उसी शेषाक (४) से उपात्य के बगल-वाले तृतीयाक (३) को घटाना सभव है। घट जाने से एक लघु की प्राप्ति होती है। अब के शेष-अक (१) से ३ के बगलवाले २ को घटाना चाहे सभव क्यो न हो, परतु उससे द्रुत की प्राप्ति इसलिए नही स्वीकृत की गयी है कि वह एक लघु के मिलने के पीछे

मिली है। इसलिए इस द्रुत को छोड दीजिए। पीछे, शेषांक (१) से आखिरी अंक (१) को घटाना मुमकिन है। इससे एक लघु मिल जाता है। इसके पश्चात् शेष के न रहने के कारण खतम हो जाता है। अब प्रस्तार का रूप यों हुआ है—।।००
इसकी अधिकता ताल की काल-मात्रा के समान रहने से द्रुतो के मिलाने की कोई जरूरत नहीं। ऐसे ही नष्ट प्रश्न का उत्तर देना साध्य है।

उद्दिष्ट

किसी रूप के बारे में यह कहना कि इस रूप का प्रस्तार अमुक भेद का—अर्थात् चतुर्थ, पचम इत्यादि का—है, उद्दिष्ट है। इसे खोज लेने के लिए, पहले-पहल, नष्ट की पहचान के निमित्त जो रीति, प्रयुक्त की गयी है, उसी प्रकार अक-पक्ति को लिखिए। नष्ट में जो अक घटित न हुए हो उनसे द्रुत, और जो घटित हुए हो उनसे लघु, गुरु प्लुत इत्यादि प्राप्त होकर, अन्तत कुछ शेष न रहने के कारण उसकी ठीक उलटी रीति में प्रस्तार की सख्या को जान सकते है। वह रीति यह है कि द्रुत-प्राप्ति के कारण जो अक है उनको छोड दीजिए। लघु आदि की प्राप्ति के कारण जो अक है उन सबो को जोड कर कुल-सख्या से घटा देने पर अभीष्ट प्रस्तार की भेद-सख्या मिल जायगी।

उदाहरणतया इस प्रश्न को, कि प्लुतप्रस्तार के ।।०० रूपवाले प्रस्तार की क्रम-सख्या कौन है, लीजिए। शुरू में, अक-पक्ति को लिखें। जैसे—१, २, ३, ६, १०, १९।

हमारे अभीष्ट प्रस्तार के आदि में दो द्रुत है। अत्याक से पहला अक (१०) और उसके बगल का अक (६) ये दोनो अक, नष्ट में नही घटे है। इसलिए इनको छोड दीजिए। अब उनके बगल में लघु है। इस लघु की प्राप्ति घटे हुए अक से ही उत्पन्न हुई होगी। इसी कारण "३" को लीजिए। इसके पार्श्व में और एक लघु है। साधारणतया दो लघु मिलकर एक गुरु हो जाता है। यहाँ तो दो लघु अलग-अलग है, इसलिए गुरु के रूप में अपरिवर्तित रहने के कारण—इनके बीच कोई अक न घटा होगा। अत "२" को भी छोडकर बगलवाले "१" को लेना चाहिए। अब हमारे लिये हुये अक "३" और "१" ही है। इन दोनो को मिलाकर प्राप्त "४" को कुल-अक (१९) से घटाने पर (१५) मिलेगा। यही "१५" इस प्रस्तार की क्रमसख्या है। दूसरे शब्दो में यह प्रस्तार पन्द्रहवें भेद का है।

दूसरा उदाहरण—प्लुतप्रस्तार के १००। रूपवाले प्रस्तार की क्रम-सख्या कौन है ?

अभीष्ट प्रस्तार के आदि में लघु है। इसकी प्राप्ति का कारण अक '१०" है। उसे लीजिए। लघु के पार्श्व में दो द्रुत है। इस नियम के अनुसार कि घटे हुए अक

से एक लघु के मिलने के बाद, चाहे कोई दूसरा घट भी जाय, परतु उससे द्रुत की प्राप्ति न होगी, विवरणतया "६" को और दोनो द्रुतो की प्राप्ति के कारण "३" तथा "२" को भी छोड दीजिए। तदनतर एक लघु होने के कारण घटे हुए अक "१" को भी लीजिए। हमारे लिए हुए अक "१०" और "१" है। इनको मिलाकर प्राप्त "११" को कुल-अक "१९" से घटा देने पर शेष "८" है। वही प्रस्तार की क्रमसख्या अथवा अभीष्टप्रस्तार "आठवें भेद का है"।

पाताल

पाताल एक तालिका है जिससे यह पता चलता है कि किसी एक ताल के समग्र प्रस्तारो में लघु, गुरु, प्लुत, द्रुत इत्यादि कितने-कितने है।

इसकी जानकारी के लिए, पहली पक्ति में ताल की क्रम-सख्या को लिखिए। दूसरी पक्ति के आदि के दो अको को "१" "२" लिखकर तीसरे अक से, "अत्य", "उपात्य", "चतुर्थ" और "षष्ठ" के शीर्षक के नीचे लिखे हुए अको तथा अत्य के ऊपरी अको को भी जोडकर लिखते जाइए। इसमें, सख्या की कही हुई रीति की भाँति चतुर्थ और षष्ठ की अनुपस्थिति में तृतीय और पचम को न जोडिए। अक-पक्ति की प्राप्ति का ब्यौरा यो है—

तालो के द्रुत

	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
सख्या	१	२	३	६	१०	१९	३३	६०	१०६	१९१
पाताल	१	२	५	१०	२२	४४	९१	१८०	३५८	६९८

पहले के दो अक—१, २

		अत्य	+	उपात्य	+	चतुर्थ	+	पष्ठ	+	अत्य का ऊपरी अक		
तीसरा	=	२	+	१	+	नही		नही	+	२	=	५
चौथा	=	५	+	२	+	,,		,,	+	३	=	१०
पाँचवाँ	=	१०	+	५	+	१	+	,,	+	६	=	२२
छठवाँ	=	२२	+	१०	+	२	+	,,	+	१०	=	४४
सातवाँ	=	४४	+	२२	+	५	+	१	+	१९	=	९१

इस तालिका के अत्य, उपात्य, चतुर्थ और षष्ठाको से, प्रस्तार के सारे द्रुतो का पता चल सकता है। उसका एक उदाहरण देखिए—

६ द्रुतवाले एक ताल को लीजिए। उनके पाताल-अंक १, २, ५, १०, २२, ४४, इन अंको की पंक्ति के अंत्यांक (४४) से प्रस्तार के समग्र द्रुतों की, उपांत्यांक (२२) से कुल लघुओं की, चतुर्थांक (५) से सारे गुरुओं की और षष्ठांक (१) से सब प्लुतों की संख्या जानी जाती है। ऐसे ही आगे देखिए।

द्रुतमेरु

द्रुतमेरु भी एक तालिका है जिससे यह पता चलता है कि तालप्रस्तारो के बीच, बिना द्रुत और द्रुत के १, २, ३, ४ आदि द्रुतवाले प्रस्तार कितने-कितने हैं।

इस तालिका में, विषम संख्या के द्रुतो के अधिक मात्रा वाले तालप्रस्तारो के बीच, एक द्रुतवाले, तीन द्रुतवाले, पाँच द्रुतवाले तथा अन्य विषम संख्या के द्रुतवाले भेदो के अंको की और समसंख्या के द्रुतवाले तालप्रस्तारो के बीच, बिना द्रुत के, दो द्रुतों के, चार द्रुतों के तथा दूसरे समसंख्या के द्रुतवाले भेदो के अंको की जानकारी प्राप्त करने की श्रेणियाँ रहेगी। इसे बनाने की विधि यों है—

नीचे से, क्रमश, कम कोठेवाली श्रेणियों को ऊपर बनाते जाए। नीचे की पहली श्रेणी में, हमारे अभीष्ट द्रुतो की संख्या जितने कोठो में भर जायगी, उतने कोठे बना लीजिए। उसके ऊपर कोठो की ऐसी पंक्ति बनायी जाय कि जिसमें एक कोठा बाईं ओर कम रहे। इसी तरह, इस पंक्ति की ऊपरवाली पंक्ति की रचना भी उसी बाईं ओर दो कोठे कम करके की जाय। इसी प्रकार दो-दो कोठे कम करके ऊपर बढ़ाते रहें तो अन्त में दो या एक कोठेवाली श्रेणी पाकर रुक जाइए। सबसे नीचे द्रुतों की संख्या के सूचनार्थ, बाईं ओर से १, २, ३ आदि अंको से अंकित कीजिए। तब कोष्ठ-विन्यास यों होगा—

							१	१
					१	१	८	८
			१	१	५	६	२०	२३
	१	१	३	४	९	१४	२५	४४
१	१	२	३	५	८	१२	७	२६
१	२	३	४	५	६	७	८	९

पाँचवी पंक्ति के ऊपरी भाग में एक कोठा कम करके बाकी कोठो की रचना की जाय। उसकी पार्श्व-पंक्ति भी और दो कोठो से कम कोठेवाली हो। उसकी बगलवाली दोनो पंक्तियो में भी और एक कोठे की कमी करना है। इन दोनो की बगलवाली ३ पंक्तियो की रचना ऐसी हो कि जिससे इन तीनो के कोठे और एक से कम हो। इन तीनो की पार्श्ववर्ती पंक्ति और दो कम कोठेवाली हो। उसकी पार्श्वपंक्ति में और एक कोठा कम करो। उसकी बगलवाली पंक्ति मे और एक कोठा कम हो। तब, उसका रूप यो होगा—

०	०	।	ऽ	ऽ̀											
१	१	०	०	०											
२	१	१	०	०	०।										
३	१	०	०	०	२										
४	१	१	१	०	३	०ऽ									
५	१	०	०	०	७	२	०ऽ̀	।ऽ							
६	१	१	०	१	११	३	०	२	।̀	ऽऽ̀	०।ऽ				
७	१	०	०	०	२०	४	२	०	०	०	६				
८	१	१	१	०	३२	५	३	३	२	०	१२	०।ऽ̀			
९	१	०	०	०	५४	९	४	०	०	०	३२	६			
१०	१	१	०	०	८७	१३	५	७	३	२	६०	१२	०ऽऽ̀		
११	१	०	०	०	१४३	१८	६	०	०	०	१३४	३२	६	।ऽऽ̀	
१२	१	१	१	१	२३१	२४	७	११	४	०	२५१	६०	१२	६	०।ऽऽ̀
१३	१	०	०	०	३७६	३५	११	०	०	०	५००	१२२	२०	०	२४

संयोग मेरु

ऊपर से नीचे की ओर पहली चार पंक्तियों की पहली पंक्ति के कोठों में हमारे अभीष्ट ताल के सर्वद्रुत भेदों की संख्या, दूसरी पंक्ति के कोठों में, सर्वलघु भेदों की संख्या, तीसरी पंक्ति के कोठों में सर्वगुरु भेदों की संख्या और चौथी पंक्ति के कोठों में सर्वप्लुत भेदों की संख्या पायी जाती है। प्रत्येक पंक्ति में किन-किन अंगों के भेद दिखाये जाते हैं, इनकी याद दिलाने के निमित्त, उनको पंक्तियों के ऊपर लिखना चाहिए। पाँचवीं पंक्ति द्रुतलघु-मिश्रित भेदों की संख्या की द्योतक है। छठी पंक्ति द्रुतगुरु-मिश्रित भेदों की संख्या की द्योतक है। सातवीं पंक्ति से द्रुत-प्लुत मिश्रित भेदों की जानकारी होती है। आठवीं पंक्ति में लघु-गुरु मिश्रित भेदों का बोध होता है। नौवीं पंक्ति लघु-प्लुत मिश्रित भेदों की बोधक है। दसवीं पंक्ति गुरुप्लुत-मिश्रित भेदों का बोध कराती है। ग्यारहवीं पंक्ति द्रुतलघुगुरु मिश्रित भेदों की और तेरहवीं पंक्ति द्रुतगुरुप्लुत मिश्रित भेदों की द्योतक है।

इन पंक्तियों के कोठों में अंक भरने की विधि—

पहली पंक्ति के सर्वद्रुत भेद एक ही होने से पहले कोठे में "१" लिखो। दूसरी पंक्ति के आद्य कोठे में शून्य और दूसरे कोठे में "१" लिखो। तीसरी पंक्ति के आद्य तीन कोठों में शून्य और चौथे कोठे में "१" लिखो। चौथी पंक्ति के पहले पाँच कोठों में शून्य और छठवें कोठे में "१" लिखो। पहली चार पंक्तियों के दूसरे कोठों में क्रम से, द्रुत की पंक्ति हो तो अंत्यांक, लघु की हो तो उपांत्यांक, गुरु की हो तो चतुर्थांक तथा प्लुत की हो तो षष्ठांक लिखो।

दो-दो अंगों से मिश्रित इकाइयों की पंक्तियों में अंक भरने की विधि—

प्रत्येक इकाई के द्रुत, लघु, गुरु और प्लुत के लिए उसी पंक्ति के अंत्य, उपांत्य, चतुर्थ और षष्ठ को एवं पहली चार पंक्तियों के अंत्य, उपांत्य चतुर्थ और षष्ठ के अंकों को क्रम से मिला लेना है। वैसे, आद्य ४ पंक्तियों से अंक लेते समय, इकाई के अंगों के लिए जो-जो अंक-अंत्य, उपांत्य, चतुर्थ या षष्ठ का अंक—नियत है उनको बदल कर लेना चाहिए। उदाहरणार्थ द्रुतलघु-इकाई की पंक्ति में अंक इस प्रकार भरना है—

पहले, उसी पंक्ति के अंत्य को द्रुत के लिए एवं लघु के लिए उपांत्य को लेना चाहिए। उनके साथ द्रुत और लघु की पंक्तियों से भी कोई-एक अंक जोड़ लेना है। द्रुत व लघु के लिए जो अंत्य तथा उपांत्य अंक नियत थे, उनके बदले द्रुतपंक्ति से उपांत्य और लघुपंक्ति के अंत्य को लेना है।

द्रुतगुरु की इकाई की पंक्ति में अंक भरने की विधि—

पहले, द्रुत के लिए उसी पंक्ति के अंत्य और गुरु के लिए चतुर्थ को मिला लेना है।

उनके साथ द्रुत और गुरु की पक्तियो से भी जोड लेने के कई-एक अक है। द्रुत एव गुरु के लिए नियत अत्य और चतुर्थ के वदले द्रुतपक्ति के चतुर्थ तथा गुरुपवित के अत्य को लेना चाहिए। इसी तरह, दूसरी इकाइयो के नियम भी यो ही जान लेना है। तव, आगे लिखे अनुसार अक का पूरण होगा।

द्रुतलघु-ईकाई

			उसी पंक्ति के				पहली चार पंक्तियों के				
			अन्त्य	+	उपान्त्य	+	द्रुत-पंक्ति का उपान्त्य	+	लघु पंक्ति का अन्त्य		
पहले	कोठे	में	नहीं	+	नहीं	+	१	+	१	=	२
दूसरे	,,	,,	२	+	,,	+	१	+	०	=	३
तीसरे	,,	,,	३	+	२	+	१	+	१	=	७
चौथे	,,	,,	७	+	३	+	१	+	०	=	११
पाँचवें	,,	,,	११	+	७	+	१	+	१	=	२०
छठे	,,	,,	२०	+	११	+	१	+	०	=	३२
सातवें	,,	,,	३२	+	२०	+	१	+	१	=	५४
आठवें	,,	,,	५४	+	३२	+	१	+	०	=	८७

इसी तरह इन पंक्ति के अन्य कोठों में भी अंक भरना है।

द्रुतगुरु-इकाई

			उसी पंक्ति के				पहली चार पंक्तियों के				
			अन्त्य	+	चतुर्थ	+	द्रुत-पंक्ति का चतुर्थ	+	गुरु-पंक्ति का अन्त्य		
पहले	कोठे	में	नहीं	+	नहीं	+	१	+	१	=	२
दूसरे	,,	,,	२	+	,,	+	१	+	०	=	३
तीसरे	,,	,,	३	+	,,	+	१	+	०	=	४
चौथे	,,	,,	४	+	,,	+	१	+	०	=	५

पाँचवें	,,	,,	५	+	२	+	१	+	१	=	९
छठे	,,	,,	९	+	३	+	१	+	०	=	१३
सातवें	,,	,,	१३	+	४	+	१	+	०	=	१८
आठवें	,,	,,	१८	+	५	+	१	+	०	=	२४
नौवें	,,	,,	२४	+	९	+	१	+	१	=	३५

द्रुत-प्लुत-इकाई

			उसी पक्ति के				पहली चार पक्ति के				
			अत्य	+	षष्ठ	+	द्रुत-पक्ति का षष्ठ	+	प्लुत-पक्ति का अंत्य		
पहले	कोठे	में	नही	+	नही	+	नही	+	०	=	०
दूसरे	,,	,,	०	+	,,	+	१	+	१	=	२
तीसरे	,,	,,	२	+	,,	+	१	+	०	=	३
चौथे	,,	,,	३	+	,,	+	१	+	०	=	४
पाँचवें	,,	,,	४	+	,,	+	१	+	०	=	५
छठवें	,,	,,	५	+	,,	+	१	+	०	=	६
सातवें	,,	,,	६	+	,,	+	१	+	०	=	७
आठवें	,,	,,	७	+	२	+	१	+	१	=	११

लघुगुरु-इकाई

			उसी पंक्ति के				पहली चार पंक्तियों के				
			उपात्य	+	चतुर्थ	+	लघु-पंक्ति का चतुर्थ	+	गुरु-पंक्ति का उपात्य		
पहले	कोठे	में	नही	+	नही	+	१	+	१	=	२
दूसरे	,,	,,	,,	+	,,	+	०	+	०	=	०
तीसरे	,,	,,	२	+	,,	+	१	+	०	=	३
चौथे	,,	,,	०	+	,,	+	०	+	०	=	०
पाँचवें	,,	,,	३	+	२	+	१	+	१	=	७
छठें	,,	,,	०	+	०	+	०	+	०	=	०
सातवें	,,	,,	७	+	३	+	१	+	०	=	११
आठवें	,,	,,	०	+	०	+	०	+	०	=	०

लघु-प्लुत-इकाई

			उसी पंक्ति के				पहली चार पंक्तियों के				
			उपात्य	+	षष्ठ	+	लघु-पंक्ति का षष्ठ	+	प्लुत-पंक्ति का उपात्य		
पहले	कोठे	में	नही	+	नही	+	०	+	०	=	०
दूसरे	,,	,,	,,	+	,,	+	१	+	१	=	२
तीसरे	,,	,,	०	+	,,	+	०	+	०	=	०
चौथे	,,	,,	२	+	,,	+	१	+	०	=	३

पांचवें	,,	,,	५	+	२	+	१	+	१	=	९
छठे	,,	,,	९	+	३	+	१	+	०	=	१३
सातवें	,,	,,	१३	+	४	+	१	+	०	=	१८
आठवें	,,	,,	१८	+	५	+	१	+	०	=	२४
नौवें	,,	,,	२४	+	९	+	१	+	१	=	३५

द्रुत-प्लुत-इकाई

			उसी पक्ति के				पहली चार पक्ति के				
			अत्य	+	षष्ठ	+	द्रुत-पक्ति का षष्ठ	+	प्लुत-पक्ति का अत्य		
पहले	कोठे	में	नही	+	नही	+	नही	+	०	=	०
दूसरे	,,	,,	०	+	,,	+	१	+	१	=	२
तीसरे	,,	,,	२	+	,,	+	१	+	०	=	३
चौथे	,,	,,	३	+	,,	+	१	+	०	=	४
पांचवें	,,	,,	४	+	,,	+	१	+	०	=	५
छठवें	,,	,,	५	+	,,	+	१	+	०	=	६
सातवें	,,	,,	६	+	,,	+	१	+	०	=	७
आठवें	,,	,,	७	+	२	+	१	+	१	=	११

द्रुतलघुगुरु-इकाई

	उगी पंक्ति के अंत्य	+ उपांत्य	+ चतुर्थ	+ लघु-गुरु पंक्ति का अंत्य	+ द्रुतगुरु-पंक्ति का उपांत्य	+ द्रुत-लघु पंक्ति का चतुर्थ	=
पहले कोठे में	नही	+ नही	+ नही	+ २	+ २	+ २	= ६
दूसरे " "	६	+ "	+ "	+ ०	+ ३	+ ३	= १२
तीसरे " "	१२	+ ६	+ "	+ ३	+ ४	+ ७	= ३२
चौथे " "	३२	+ १२	+ "	+ ०	+ ५	+ ११	= ६०
पांचवें " "	६०	+ ३२	+ ६	+ ७	+ ९	+ २०	= १३४
छठें " "	१३४	+ ६०	+ १२	+ ०	+ १३	+ ३२	= २५१
सातवें " "	२५१	+ १३४	+ ३२	+ ११	+ १८	+ ५४	= ५००

(दो अंगों की इकाई के)

द्रुतलघुप्लुत-इकाई

	उगी पंक्ति के अंत्य	+ उपांत्य	+ षष्ठ	+ लघु-प्लुत पंक्ति का अंत्य	+ द्रुत-प्लुतपंक्ति का उपांत्य	+ द्रुत-लघुपंक्ति का षष्ठ	=
पहले कोठे में	नही	+ नही	+ नही	+ २	+ २	+ २	= ६
दूसरे " "	६	+ "	+ "	+ ०	+ ३	+ ३	= १२
तीसरे " "	१२	+ ६	+ नही	+ ३	+ ४	+ ७	= ३२
चौथे " "	३२	+ १२	+ "	+ ०	+ ५	+ ११	= ६०
पांचवें " "	६०	+ ३२	+ "	+ ४	+ ६	+ २०	= [illegible]

(दो अंगों की इकाई के)

पाँचवें	,,	,,	०	+	,,	+	०	+	०	=	०
छठे	,,	,,	३	+	,,	+	१	+	०	=	४
सातवें	,,	,,	०	+	०	+	०	+	०	=	०

गुरु-प्लुत-इकाई

			उसी पक्ति के				पहली चार पक्तियो के				
			चतुर्थ	+	**षष्ठ**	+	**गुरु-पक्ति का षष्ठ**	+	**प्लुत-पक्ति का चतुर्थ**		
पहले	कोठे	में	नही	+	नही	+	०	+	०	=	०
दूसरे	,,	,,	,,	+	,,	+	०	+	०	=	०
तीसरे	,,	,,	,,	+	,,	+	०	+	०	=	०
चौथे	,,	,,	,,	+	,,	+	१	+	१	=	२
पाँचवे	,,	,,	,,	+	,,	+	०	+	०	=	०
छठे	,,	,,	०	+	,,	+	०	+	०	=	०
सातवें	,,	,,	०	+	०	+	०	+	०	=	०

तीन अगो की इकाई की पक्तियो में अक भराने के लिए, पहले, उन अगो की नियत पक्ति के अत्य, उपात्य, चतुर्थ और पष्ठाको को मिला लेना है। पीछे, इकाई के अगो को जोडे-जोडे के रूप में ऐसे लेकर मिलाना है जैसे दो अगो की इकाई के, पहली चार पक्तियो के अत्य, उपात्य, चतुर्थ और पष्ठाक वदलकर लिये गये है। अर्थात्—वडे अगो की इकाई की अत्य और उपात्य पक्तियो मे आद्याक को तथा छोटे अगो की इकाई में अत्याक को जोड लेना है।

द्रुतलघुगुरु-इकाई

	उसी पंक्ति के कोठे में				दो अंगों की इकाई के				
	अंत्य	+ उपांत्य	+ चतुर्थ	+	लघु-गुरु पंक्ति का अंत्य	+ द्रुतगुरु-पंक्ति का उपांत्य	+ द्रुत-लघु पंक्ति का चतुर्थ		
पहले कोठे में	नहीं	+ नहीं	+ नहीं	+	२	+ २	+ २	=	६
दूसरे " "	६	+ "	+ "	+	०	+ ३	+ ३	=	१२
तीसरे " "	१२	+ ६	+ "	+	३	+ ४	+ ७	=	३२
चौथे " "	३२	+ १२	+ "	+	०	+ ५	+ ११	=	६०
पांचवें " "	६०	+ ३२	+ ६	+	७	+ ९	+ २०	=	१३४
छठे " "	१३४	+ ६०	+ १२	+	०	+ १३	+ ३२	=	२५१
सातवें " "	२५१	+ १३४	+ ३२	+	११	+ १८	+ ५४	=	५००

द्रुतलघुप्लुत-इकाई

	उसी पंक्ति के कोठे में				दो अंगों की इकाई के				
	अंत्य	+ उपांत्य	+ षष्ठ	+	लघु-प्लुत पंक्ति का अंत्य	+ द्रुत-प्लुतपंक्ति का उपांत्य	+ द्रुत-लघुपंक्ति का षष्ठ		
पहले कोठे में	नहीं	+ नहीं	+ नहीं	+	२	+ २	+ २	=	६
दूसरे " "	६	+ "	+ "	+	०	+ ३	+ ३	=	१२
तीसरे " "	१२	+ ६	+ नहीं	+	३	+ ४	+ ७	=	३२
चौथे " "	३२	+ १२	+ "	+	०	+ ५	+ ११	=	६०
पांचवें " "	६०	+ ३२	+ "	+	४	+ ६	+ २०	=	१२२

द्रुतगुरुप्लुत-इकाई

	उसी पक्ति के				दो अगो की इकाई के				
	अत्य	+ चतुर्थ	+ षष्ठ	+	गुरुप्लुत-पक्ति का अत्य	+ द्रुतप्लुत-पक्ति का चतुर्थ	+ द्रुतगुरु-पंक्ति का षष्ठ	=	
पहले कोठे में	नही	+ नही	+ नही	+	२	+ २	+ २	=	६
दूसरे ,, ,,	६	+ ,,	+ ,,	+	०	+ ३	+ २	=	१२
तीसरे ,, ,,	१२	+ ,,	+ ,,	+	०	+ ४	+ ४	=	२०

इसी रीति से दूसरे कोठो का पूरण कर सकते है। चार अगो की इकाइयो में, अक भरने के लिए, पहले, उसी पंक्ति के उन अगो के नियत अत्य, उपात्य, चतुर्थ और षष्ठाको को मिला लेना है। बाद में, उन-उन इकाइयो के अगो को तीन-तीन करके मिलाना। उन तीन अगो की इकाइयो की नियत-पंक्ति की बडे अगवाली इकाई की अत्य व उपात्य श्रेणियो के आद्याक को एव छोटे अगवाली इकाई में अत्याक को जोड़ लो।

द्रुतलघुगुरुप्लुत-इकाई

उसी पंक्ति के				३ अगो की इकाई के			
अत्य +	उपात्य +	चतुर्थ +	षष्ठ +	लघुगुरुप्लुतपंक्ति का अत्य +	द्रुतगुरुप्लुतपंक्ति का उपात्य +	द्रुतलघुप्लुतपंक्ति का चतुर्थ +	द्रुतलघुगुरुपंक्ति का षष्ठ
पहले कोठे में	नही		+	६ +	६ +	६ +	६ = २८

खंडप्रस्तार

यह तालिका ही द्रुतमेरु के रूप में नीचे बनायी गयी है जो अभीष्ट मात्राकालवाले ताल के, प्लुत, गुरु, लघु और द्रुत जैसे अगो सहित, प्रस्तारो को क्रमश लिखने पर, उनमें से बिना द्रुत के द्विद्रुत के तथा चतुर्द्रुत आदि के प्रस्तार भेदो की एव एकद्रुत के त्रिद्रुत के और पचद्रुत आदि के प्रस्तार भेदो की सख्या को जान लेने में काम आनेवाली है। इसी प्रयोजन के लिए, लघुमेरु, गुरुमेरु प्लुतमेरु आदि की रचना हुई है।

अब प्रस्तार रचने समय, बिना द्रुत के, एकद्रुत, द्विद्रुत, त्रिद्रुत आदि के, एव बिना लघु के, एकलघु आदि के समस्त प्रस्तार क्रमश. कैसे लिखे जायें और ऐसे ही प्रकार गुरु और प्लुतो के प्रस्तारो की रचनामात्र कैसी की जाय, यह बात अवशिष्ट रह गयी है। इसे रचकर दिखाने की रीति का नाम है खडप्रस्तार।

खड प्रस्तार बनाने की विधि

अभीष्ट मात्राकालवाले द्रुत, लघु, गुरु या प्लुतो से युक्त केवल इच्छित प्रस्तारो को क्रमश लिखिए। उनके बीच अन्य जाति के प्रस्तार आ जायें तो, पहले लिखने योग्य नीचे के अग को छोड़कर, उसके न्यूनाग को एव उसकी दाहिनी ओर के अग की नीची श्रेणी को लिखने की विधि को प्रयोग में लाना चाहिए। ऐसे करके, दाहिनी ओर के ऊपरवाले अगो को लिखने के बाद, बची को पूरा करने के लिए बाईं ओर

द्रुतगुरुप्लुत-इकाई

	उसी पक्ति के						दो अगो की इकाई के						
	अत्य	+	चतुर्थ	+	षष्ठ	+	गुरुप्लुत-पक्ति का अत्य	+	द्रुतप्लुत-पक्ति का चतुर्थ	+	द्रुतगुरु-पक्ति का षष्ठ		
पहले कोठे में	नही	+	नही	+	नही	+	२	+	२	+	२	=	६
दूसरे ,, ,,	६	+	,,	+	,,	+	०	+	३	+	२	=	१२
तीसरे ,, ,,	१२	+	,,	+	,,	+	०	+	४	+	४	=	२०

इसी रीति से दूसरे कोठो का पूरण कर सकते है। चार अगो की इकाइयो मे, अक भरने के लिए, पहले, उसी पंक्ति के उन अगो के नियत अत्य, उपात्य, चतुर्थ और पष्ठाकों को मिला लेना है। बाद में, उन-उन इकाइयो के अगो को तीन-तीन करके मिलाना। उन तीन अगो की इकाइयो की नियत-पंक्ति की बडे अगवाली इकाई की अत्य व उपात्य श्रेणियो के आद्याक को एव छोटे अगवाली इकाई में अत्याक को जोड़ लो।

द्रुतलघुगुरुप्लुत-इकाई

	उसी पंक्ति के				३ अगो की इकाई के			
	अत्य +	उपात्य +	चतुर्थ +	पष्ठ +	लघुगुरुप्लुतपंक्ति का अत्य +	द्रुतगुरुप्लुतपंक्ति का उपात्य +	द्रुतलघुप्लुतपंक्ति का चतुर्थ +	द्रुतलघुगुरुपंक्ति का पष्ठ
पहले कोठे में	नही			+	६ +	६ +	६ +	६ = २४

खंडप्रस्तार

यह तालिका ही द्रुतमेरु के रूप में नीचे बनायी गयी है जो अभीष्ट मात्राकालवाले ताल के, प्लुत, गुरु, लघु और द्रुत जैसे अगो सहित, प्रस्तारो को क्रमश लिखने पर, उनमें से बिना द्रुत के द्विद्रुत के तथा चतुर्द्रुत आदि के प्रस्तार भेदो की एव एकद्रुत के त्रिद्रुत के और पचद्रुत आदि के प्रस्तार भेदो की संख्या को जान लेने में काम आनेवाली है। इसी प्रयोजन के लिए, लघुमेरु, गुरुमेरु प्लुतमेरु आदि की रचना हुई है।

अब प्रस्तार रचते समय, बिना द्रुत के, एकद्रुत, द्विद्रुत, त्रिद्रुत आदि के, एव बिना लघु के, एकलघु आदि के समस्त प्रस्तार क्रमश कैसे लिखे जायें और ऐसे ही प्रकार गुरु और प्लुतो के प्रस्तारो की रचनामात्र कैसी की जाय, यह बात अवशिष्ट रह गयी है। इसे रचकर दिखाने की रीति का नाम है खंडप्रस्तार।

खंड प्रस्तार बनाने की विधि

अभीष्ट मात्राकालवाले द्रुत, लघु, गुरु या प्लुतो मे युक्त केवल उच्छित प्रस्तारो को क्रमश लिखिए। उनके बीच अन्य जाति के प्रस्तार आ जायें तो, पहले लिखने योग्य नीचे के अग को छोडकर, उसके न्यूनाग को एव उसकी दाहिनी ओर के अग की नीची श्रेणी को लिखने की विधि को प्रयोग में लाना चाहिए। ऐसे करके, दाहिनी ओर के ऊपरवाले अगो को लिखने के बाद, कमी को पूरा करने के लिए, बाई ओर

द्रुतगुरुप्लुत-इकाई

	उसी पक्ति के					दो अगो की इकाई के						
	अत्य	+	चतुर्थ	+	षष्ठ	+ गुरुप्लुत-पक्ति का अत्य	+	द्रुतप्लुत-पक्ति का चतुर्थ	+	द्रुतगुरु-पक्ति का षष्ठ		
पहले	कोठे में नही	+	नही	+	नही	+ २	+	२	+	२	=	६
दूसरे	,, ,, ६	+	,,	+	,,	+ ०	+	३	+	२	=	१२
तीसरे	,, ,, १२	+	,,	+	,,	+ ०	+	४	+	४	=	२०

इसी रीति से दूसरे कोठो का पूरण कर सकते हैं। चार अगो की इकाइयो में, अक भरने के लिए, पहले, उसी पक्ति के उन अगो के नियत अत्य, उपात्य, चतुर्थ और षष्ठाको को मिला लेना है। बाद में, उन-उन इकाइयो के अगो को तीन-तीन करके मिलाना। उन तीन अगो की इकाइयो की नियत-पक्ति की वडे अगवाली इकाई की अत्य व उपात्य श्रेणियो के आद्याक को एव छोटे अगवाली इकाई में अत्याक को जोड़ लो।

द्रुतलघुगुरुप्लुत-इकाई

उसी पक्ति के				३ अगो की इकाई के				
अत्य +	उपात्य +	चतुर्थ +	षष्ठ +	लघुगुरुप्लुतपक्ति का अत्य +	द्रुतगुरुप्लुतपक्ति का उपात्य +	द्रुतलघुप्लुतपक्ति का चतुर्थ +	द्रुतलघुगुरुपक्ति का षष्ठ	
पहले कोठे में		नही		+ ६	+ ६	+ ६	+ ६	= २८

खंडप्रस्तार

यह तालिका ही द्रुतमेरु के रूप में नीचे बनायी गयी है जो अभीष्ट मात्राकालवाले ताल के, प्लुत, गुरु, लघु और द्रुत जैसे अगो सहित, प्रस्तारो को क्रमश लिखने पर, उनमें से विना द्रुत के द्विद्रुत के तथा चतुर्द्रुत आदि के प्रस्तार भेदो की एव एकद्रुत के त्रिद्रुत के और पचद्रुत आदि के प्रस्तार भेदो की सख्या को जान लेने में काम आनेवाली है। इसी प्रयोजन के लिए, लघुमेरु, गुरुमेरु प्लुतमेरु आदि की रचना हुई है।

अव प्रस्तार रचते समय, विना द्रुत के, एकद्रुत, द्विद्रुत, त्रिद्रुत आदि के, एव विना लघु के, एकलघु आदि के समस्त प्रस्तार क्रमश कैसे लिखे जायें और ऐसे ही प्रकार गुरु और प्लुतो के प्रस्तारो की रचनामात्र कैसी की जाय, यह वात अवशिष्ट रह गयी है। इसे रचकर दिखाने की रीति का नाम है खडप्रस्तार।

खड प्रस्तार वनाने की विधि

अभीष्ट मात्राकालवाले द्रुत, लघु, गुरु या प्लुतो से युक्त केवल इच्छित प्रस्तारो को क्रमश लिखिए। उनके बीच अन्य जाति के प्रस्तार आ जायें तो, पहले लिखने योग्य नीचे के अग को छोडकर, उसके न्यूनाग को एव उसकी दाहिनी ओर के अग की नीली श्रेणी को लिखने की विधि को प्रयोग में लाना चाहिए। ऐसे करके, दाहिनी ओर के ऊपरवाले अगो को लिखने के वाद, कमी को पूरा करने के लिए, वाई ओर

लिखे जानेवाले अगो को, इच्छित सख्यावाले द्रुत आदि जैसे लिखने पर स्थान पायें, वैसे लिखना चाहिए।

उदाहरणार्थ एक प्लुतमात्रावाले ताल के प्रस्तार को लीजिए। पहले केवल विना द्रुत के प्रस्तारो को लिखें। तव प्रस्तारो का पहला भेद "ऽ", उसके नीचे का दूसरा प्रस्तार "। ऽ" हम, क्रम से, प्रस्तार करते जायँ तो लघु के नीचे "०" लिखना पडेगा। पर, हमें तो वे ही प्रस्तार चाहिए, जिनके रूप में द्रुत ही न आये। इसलिए लघु के नीचे द्रुत न लिखकर उसकी दाहिनी ओर के गुरु के नीचे लघु लिखना चाहिए। अव की कमी को पूरा करने के लिए केवल एक गुरु लिखें, तो प्रस्तार का रूप "ऽ।" होगा। आगे का प्रस्तार, गुरु के नीचे लघु, उसकी दाहिनी ओर ऊँचेवाले लघु का प्रतिरूप एक लघु और कमी के पूरणार्थ वाई ओर एक और लघु लिखकर वना सकते है। अर्थात् प्रस्तार का रूप "।।।" होगा। इससे प्रस्तार की रचना समाप्त कर लेनी पडती है, क्योकि आगे के प्रस्तार की रचना में द्रुतहीन होने का अवकाश नही है। अत हमने विना द्रुत के चार प्रस्तार पाये हैं। द्रुतमेरु की तालिका में, जो वात लिखी हुई है कि ६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारो में विना द्रुत के चार ही प्रस्तार होगे, वह सच्ची निकली।

इसी तरह, द्विद्रुत-प्रस्तार की रचना करनी पडती है, तो प्रत्येक प्रस्तार में दो द्रुत होने चाहिए। तव, पहला प्रस्तार "००ऽ" होगा। पहले प्रस्तार के द्रुत के नीचे लघु लिखिए। न्यूनता-पूर्ति-निमित्त गुरु का प्रयोग न करके, एक लघु और उसके पार्श्व में दो द्रुत लिखिए। लीजिए, अव हुआ दूसरा प्रस्तार "०० ।।" तीसरे प्रस्तार में, लघु के नीचे द्रुत लिखो। दाहिनी ओर के लघु को ज्यो-का-त्यो उतारकर लिखो। कमी के पूरणार्थ एक लघु और एक द्रुत लिख सकोगे। तीसरा प्रस्तार हुआ है ०।०।, चौथा प्रस्तार ।००।, पाँचवाँ प्रस्तार ०ऽ०, छठा प्रस्तार ०।।०, सातवाँ प्रस्तार ।०।०, आठवाँ प्रस्तार ऽ००, नौवाँ प्रस्तार ।।००,

आगे, प्रस्तार कर जायँ तो, ज्यादा दो द्रुतो के प्रस्तार ही अवश्य आ पडेंगे। इससे यह मालूम पडता है कि हमें अभीष्ट इस खड-प्रस्तार में नौ ही द्विद्रुत-प्रस्तार मिलेंगे। द्रुतमेरु की तालिका में भी इसे भली-भाँति समझ सकते हैं। इसी तरह, दूसरे प्रस्तार भी लिखने योग्य हैं।

द्रुतमेरु का नष्ट—१

द्रुतमेरु की तालिका द्वारा, विना द्रुत के तथा एक, दो, तीन आदि द्रुतो के प्रस्तार-भेदो की सख्या हमें मिलती है। उन भेदो के वीच, किसी भेद के वारे में यदि कोई पूछे,

पर शून्य शेष हुआ है। घटाने से एक और गुरु मिला, तालाग भी पूर्ण हुआ। इससे दूसरा प्रस्तार ऽऽ हुआ है। ऐसे ही दूसरे भेदो को समझ लेना चाहिए।

(आ) विषमसख्याक द्रुतवाले कोठो के निर्दिष्ट भेदो का नष्ट-प्रश्न।

इसको जानने के लिए, सर्वप्रस्तार के नष्ट-प्रकरण मे जो रीति कह आये है उससे काम लेना चाहिए। उसके अनुसार, पहले अत्याक से नष्ट को घटाने पर जो अक बच जाता है उससे अत्याक के पूर्वांको को क्रमश घटाते जाइए। घटा तो लघु मिलेगा, नही तो द्रुत मिलेगा, साथ-साथ दो अक घटे, तो गुरु मिलेगा, गुरु के मिलने बाद उसका तीसरा अक भी घटा, तो गुरु प्लुत हो जाता है। लघु की प्राप्ति के बाद (पहला) एक अक न घटकर द्रुत प्राप्त हुआ हो तो भी उसे मत लेना। प्लुत एव गुरु इन दोनो की प्राप्ति के बाद, दो अक न घटे हो तब भी उनसे प्राप्त होनेवाले द्रुतो को मत लेना। सर्वप्रस्तार की रीति में, नष्ट की खोज करते समय एक द्रुत मिल गया तो, उसके आगे इस विधि से काम करना है कि जो द्रुतमेरु के समसख्याक पक्ति के कोठो के नष्टान्वेषण के योग्य हुई हो। उदाहरणतया, ७ द्रुतमात्रावाले ताल के एक-द्रुत प्रस्तारो को लीजिए। द्रुतमेरु की तालिका से यह जाना जाता है कि वे प्रस्तार १२ है। इनके पहले प्रस्तार-भेद के बारे मे प्रश्न किया है, तो उत्तरनिमित्त "१२" से नष्ट "१" को घटाना। तब शेष ११ हुआ। उस शेषाक "११" से उसके पूर्वांक "४" को घटाने पर "७" शेष हुआ। घटने के कारण मिलता है एक लघु। उस अक "७" से पूर्वांक "५" को घटाओ। तब "२" बच जाता है, और एक लघु की प्राप्ति के कारण लघु गुरु हो जाता है। उस शेषाक "२" से तीसरे अक "२" को घटा देने पर शेष रहा शून्य। और लघु के मिलने से गुरु प्लुत के रूप में बदल जाता है। कमी के पूरणार्थ सिर्फ एक द्रुत को जोड देना। अब यह रूप ० ऽ पहले भेद का है।

दूसरा उदाहरण—पूर्वोक्त (विषम) कोठो के भेदो के बीच कोई पूछे कि ११ वाँ भेद कैसा है, तो उसे जान लेने के लिए "१२" से नष्टाक "११" को घटाना है। शेष हुआ "१"। इससे पूर्वांक "४" को घटाना असम्भव है। इसलिए एक द्रुत मिला। द्रुत-प्राप्ति के कारण, भेद के दूसरे अगो की जानकारी के लिए समसख्याक पक्तियो की पद्धति का प्रयोग करना है। "४" को अत्य बनाकर उसके तृतीयाक "२" को "१" से घटाना है, परन्तु यह भी असभव है। इससे एक लघु की प्राप्ति हुई। इसके बाद, पचमाक "१" को "१" से घटाने पर बाकी शून्य हुआ। घटने से गुरु मिला। अन्तत ११ वाँ भेद ऽ।० हुआ। इसी तरह, अन्य विषमसख्याक कोठो के नष्ट की जानकारी भी प्राप्त कर लेनी चाहिए।

नीचे वाली पंक्ति से अन्य पंक्तियों में

इन कोठों के नष्ट को खोज लेने के लिए, नीचे से पहली पंक्ति के समसंख्याक द्रुतकाल के कोठों के बारे में जिस रीति का प्रयोग किया गया है, उसके अनुसार तृतीय पंचमांकों को घटाना है। साथ ही उपान्त्य के नीचेवाले अंक को भी घटा देना है। घटे, तो लघु मिलेगा। नहीं तो द्रुत मिलेगा। प्रस्तार के अंग पूर्ण न हों और अंक शेष भी रह जाते हों, तो पंचम को अन्त्य बनाकर फिर, पहली रीति के अनुसार, घटाकर जाना है। अन्त्य हो जानेवाला पंचम, विषमसंख्याक द्रुतपंक्ति में रहे तो, नीचेवाली पंक्ति के विषमसंख्याक प्रभेद और समसंख्याक द्रुतपंक्ति में रहता तो उसी पंक्ति के (नीचेवाली) समसंख्याक प्रभेद के अनुसार घटाने की क्रिया करना है।

उदाहरण—द्रुतमेरु-तालिका से यह समझा जाता है कि ६ द्रुतमात्राकालवाले ताल के प्रस्तारों में द्विद्रुत के भेद ९ हैं। उनमें से यदि कोई पूछे कि पहला भेद कौन है तो उसे समझा देने के लिए पहले, ९ से नष्टांक "१" को घटाओ। शेष ८ हुआ उससे उसके उपान्त्य "५" को घटाने पर बाकी हुआ "३"। घटाने से एक लघु मिला। "३" से तृतीयांक "३" को घटाने पर बाकी शून्य हुआ। घटने के कारण लघु गुरु हुआ। घटाने के लिए बाकी अंक न रहने के कारण तालांग की कमी के पूरणार्थ "२" द्रुतों को जोड़ लो। अब पहला भेद ००ऽ सिद्ध हुआ है।

द्रुतमेरु का उद्दिष्ट—२

नष्ट प्रश्न में, जिन अंकों के घटित होने के कारण हमें तालांग मिले थे उन्हीं सारे अंकों को एक-साथ जोड़कर प्रस्तार संख्या से घटाने पर भेद (अभीष्ट) की क्रम-संख्या प्राप्त होती है।

नीचे से पहली पंक्ति में

(अ) समसंख्याक द्रुतवाली पंक्ति के कोठों का उदाहरण—

८ द्रुतमात्रावाले ताल-प्रस्तारों के बीच, बिना द्रुत के भेदों में ।।ऽ स्वरूपवाले भेद की क्रमसंख्या क्या है? इसे जानने के लिए प्रस्तार के आदि अंग गुरु की प्राप्ति कैसी हुई होगी—यह समझ लेना है। गुरु होने के कारण, तृतीयांक "८" के घटित होने से प्राप्त होना चाहिए। इसलिए उसे लेना चाहिए। लघु तो जो घट न घटे होंगे उनसे मिले हैं। इसी कारण उनके सूचक अंकों को मत लो। तदनन्तर समस्त भेदों की संख्या "७" से "४" को घटाने पर बाकी "३" बचा। इससे यह जाना जाता है कि अभीष्ट प्रस्तार बिना द्रुत के प्रस्तारों के तीसरे भेद का है।

पर शून्य शेष हुआ है। घटाने से एक और गुरु मिला, तालाग भी पूर्ण हुआ। इससे दूसरा प्रस्तार ऽऽ हुआ है। ऐसे ही दूसरे भेदो को समझ लेना चाहिए।

(आ) विपमसख्याक द्रुतवाले कोठो के निर्दिष्ट भेदो का नष्ट-प्रश्न।

इसको जानने के लिए, सर्वप्रस्तार के नष्ट-प्रकरण में जो रीति कह आये है उससे काम लेना चाहिए। उसके अनुसार, पहले अत्याक से नष्ट को घटाने पर जो अक बच जाता है उससे अत्याक के पूर्वांको को क्रमश घटाते जाइए। घटा तो लघु मिलेगा, नही तो द्रुत मिलेगा, साथ-साथ दो अक घटे, तो गुरु मिलेगा, गुरु के मिलने बाद उसका तीसरा अक भी घटा, तो गुरु प्लुत हो जाता है। लघु की प्राप्ति के बाद (पहला) एक अक न घटकर द्रुत प्राप्त हुआ हो तो भी उसे मत लेना। प्लुत एव गुरु इन दोनो की प्राप्ति के बाद, दो अक न घटे हो तब भी उनसे प्राप्त होनेवाले द्रुतो को मत लेना। सर्वप्रस्तार की रीति में, नष्ट की खोज करते समय एक द्रुत मिल गया तो, उसके आगे इस विधि से काम करना है कि जो द्रुतमेरु के समसख्याक पक्ति के कोठो के नष्टान्वेषण के योग्य हुई हो। उदाहरणतया, ७ द्रुतमात्रावाले ताल के एक-द्रुत प्रस्तारो को लीजिए। द्रुतमेरु की तालिका से यह जाना जाता है कि वे प्रस्तार १२ है। इनके पहले प्रस्तार-भेद के बारे में प्रश्न किया है, तो उत्तरनिमित्त "१२" से नष्ट "१" को घटाना। तब शेष ११ हुआ। उस शेषाक "११" से उसके पूर्वांक "४" को घटाने पर "७" शेष हुआ। घटने के कारण मिलता है एक लघु। उस अक "७" से पूर्वांक "५" को घटाओ। तब "२" बच जाता है, और एक लघु की प्राप्ति के कारण लघु गुरु हो जाता है। उस शेषाक "२" से तीसरे अक "२" को घटा देने पर शेष रहा शून्य। और लघु के मिलने से गुरु प्लुत के रूप में बदल जाता है। कमी के पूरणार्थ सिर्फ एक द्रुत को जोड देना। अब यह रूप ० ऽ पहले भेद का है।

दूसरा उदाहरण—पूर्वोक्त (विषम) कोठो के भेदो के बीच कोई पूछे कि ११ वाँ भेद कैसा है, तो उसे जान लेने के लिए "१२" से नष्टाक "११" को घटाना है। शेष हुआ "१"। इससे पूर्वांक "४" को घटाना असम्भव है। इसलिए एक द्रुत मिला। द्रुत-प्राप्ति के कारण, भेद के दूसरे अगो की जानकारी के लिए समसख्याक पक्तियो की पद्धति का प्रयोग करना है। "४" को अत्य बनाकर उसके तृतीयाक "२" को "१" से घटाना है, परन्तु यह भी असभव है। इससे एक लघु की प्राप्ति हुई। इसके बाद, पचमाक "१" को "१" से घटाने पर बाकी शून्य हुआ। घटने से गुरु मिला। अन्तत ११ वाँ भेद ऽ।० हुआ। इसी तरह, अन्य विपमसख्याक कोठो के नष्ट की जानकारी भी प्राप्त कर लेनी चाहिए।

नीचे वाली पंक्ति से अन्य पक्तियो में

इन कोठो के नष्ट की खोज लेने के लिए, नीचे मे पहली पक्ति के समसंख्याक द्रुतकाल के कोठो के बारे में जिस रीति का प्रयोग किया गया है, उसके अनुसार तृतीय पचमाको को घटाना है। साथ ही उपात्य के नीचेवाले अक को भी घटा देना है। घटे, तो लघु मिलेगा। नही तो द्रुत मिलेगा। प्रस्तार के अग पूर्ण न हो और अक शेष भी रह जाते हो, तो पचम को अत्य बनाकर फिर, पहली रीति के अनुसार, घटाकर जाना है। अत्य हो जानेवाला पचम, विषमसंख्याक द्रुतपक्ति में रहे तो, नीचेवाली पक्ति के विषमसंख्याक प्रभेद और समसंख्याक द्रुतपक्ति में रहता तो उसी पक्ति के (नीचेवाली) समसंख्याक प्रभेद के अनुसार घटाने की क्रिया करना है।

उदाहरण—द्रुतमेरु-तालिका मे यह समझा जाता है कि ६ द्रुतमात्राकालवाले ताल के प्रस्तारो में द्विद्रुत के भेद ९ हैं। उनमें से यदि कोई पूछे कि पहला भेद कौन है तो उसे समझा देने के लिए पहले, ९ मे नष्टाक "१" को घटाओ। शेष ८ हुआ उससे उसके उपात्य "५" को घटाने पर बाकी हुआ "३"। घटाने से एक लघु मिला। "३" मे तृतीयाक "३" को घटाने पर बाकी शून्य हुआ। घटने के कारण लघु गुरु हुआ। घटाने के लिए बाकी अक न रहने के कारण तालाग की कमी के पूरणार्थ "२" द्रुतो को जोड लो। अब पहला भेद ००ऽ सिद्ध हुआ है।

द्रुतमेरु का उद्दिष्ट—२

नष्ट प्रश्न में, जिन अको के घटित होने के कारण हमें तालाग मिले थे उन्ही सारे अको को एक-साथ जोडकर प्रस्तार सख्या से घटाने पर भेद (अभीष्ट) की क्रम-सख्या प्राप्त होती है।

नीचे से पहली पक्ति मे

(अ) समसंख्याक द्रुतवाली पक्ति के कोठा का उदाहरण—

८ द्रुतमात्रावाले ताल-प्रस्तारो के बीच, बिना द्रुत के भेदो में ।।ऽ स्वरूपके भेद की क्रमसंख्या क्या है ? इसे जानने के लिए प्रस्तार के आदि अग गुरु की प्राप्ति कैसी हुई होगी—यह समझ लेना है। गुरु होने के कारण, तृतीयाक "४" से घटित होने से प्राप्त होना चाहिए। इसलिए उसे लेना चाहिए। लघु तो जो अक न घटे होंगे उनसे मिले हैं। इसी कारण उनके मूलभूत अको को मत लो। तदनन्तर समग्र भेदो की सख्या "७" से "४" को घटाने पर बाकी "३" बचा। इससे यह जाना जाता है कि अभीष्ट प्रस्तार बिना द्रुत के प्रस्तारो के तीसरे भेद का है।

पर शून्य शेष हुआ है। घटाने से एक और गुरु मिला, तालाग भी पूर्ण हुआ। इससे दूसरा प्रस्तार ऽऽ हुआ है। ऐसे ही दूसरे भेदो को समझ लेना चाहिए।

(आ) विषमसख्याक द्रुतवाले कोठो के निर्दिष्ट भेदो का नष्ट-प्रश्न।

इसको जानने के लिए, सर्वप्रस्तार के नष्ट-प्रकरण में जो रीति कह आये है उससे काम लेना चाहिए। उसके अनुसार, पहले अत्याक से नष्ट को घटाने पर जो अक बच जाता है उससे अत्याक के पूर्वांको को क्रमश घटाते जाइए। घटा तो लघु मिलेगा, नही तो द्रुत मिलेगा, साथ-साथ दो अक घटे, तो गुरु मिलेगा, गुरु के मिलने बाद उसका तीसरा अक भी घटा, तो गुरु प्लुत हो जाता है। लघु की प्राप्ति के बाद (पहला) एक अक न घटकर द्रुत प्राप्त हुआ हो तो भी उसे मत लेना। प्लुत एव गुरु इन दोनो की प्राप्ति के बाद, दो अक न घटे हो तब भी उनसे प्राप्त होनेवाले द्रुतो को मत लेना। सर्वप्रस्तार की रीति में, नष्ट की खोज करते समय एक द्रुत मिल गया तो, उसके आगे इस विधि से काम करना है कि जो द्रुतमेरु के समसख्याक पक्ति के कोठो के नष्टान्वेषण के योग्य हुई हो। उदाहरणतया, ७ द्रुतमात्रावाले ताल के एक-द्रुत प्रस्तारो को लीजिए। द्रुतमेरु की तालिका से यह जाना जाता है कि वे प्रस्तार १२ है। इनके पहले प्रस्तार-भेद के बारे में प्रश्न किया है, तो उत्तरनिमित्त "१२" से नष्ट "१" को घटाना। तब शेष ११ हुआ। उस शेषाक "११" से उसके पूर्वांक "४" को घटाने पर "७" शेष हुआ। घटने के कारण मिलता है एक लघु। उस अक "७" से पूर्वांक "५" को घटाओ। तब "२" बच जाता है, और एक लघु की प्राप्ति के कारण लघु गुरु हो जाता है। उस शेषाक "२" से तीसरे अक "२" को घटा देने पर शेष रहा शून्य। और लघु के मिलने से गुरु प्लुत के रूप में बदल जाता है। कमी के पूरणार्थ सिर्फ एक द्रुत को जोड देना। अब यह रूप ० ऽ पहले भेद का है।

दूसरा उदाहरण—पूर्वोक्त (विषम) कोठो के भेदो के बीच कोई पूछे कि ११ वाँ भेद कैसा है, तो उसे जान लेने के लिए "१२" से नष्टाक "११" को घटाना है। शेष हुआ "१"। इससे पूर्वांक "४" को घटाना असम्भव है। इसलिए एक द्रुत मिला। द्रुत-प्राप्ति के कारण, भेद के दूसरे अगो की जानकारी के लिए समसख्याक पक्तियो की पद्धति का प्रयोग करना है। "४" को अत्य बनाकर उसके तृतीयाक "२" को "१" से घटाना है, परन्तु यह भी असभव है। इससे एक लघु की प्राप्ति हुई। इसके बाद, पचमाक "१" को "१" से घटाने पर बाकी शून्य हुआ। घटने से गुरु मिला। अन्तत ११ वाँ भेद ऽ।० हुआ। इसी तरह, अन्य विपमसख्याक कोठो के नष्ट की जानकारी भी प्राप्त कर लेनी चाहिए।

नीचे वाली पक्ति से अन्य पक्तियो में

इन कोठो के नष्ट को खोज लेने के लिए, नीचे से पहली पक्ति के समसख्याक द्रुतकाल के कोठो के बारे में जिस रीति का प्रयोग किया गया है, उसके अनुसार तृतीय पचमाको को घटाना है। साथ ही उपात्य के नीचेवाले अक को भी घटा देना है। घटे, तो लघु मिलेगा। नही तो द्रुत मिलेगा। प्रस्तार के अग पूर्ण न हो और अक शेष भी रह जाते हो, तो पचम को अत्य बनाकर फिर, पहली रीति के अनुसार, घटाकर जाना है। अत्य हो जानेवाला पचम, विषमसख्याक द्रुतपक्ति में रहे तो, नीचेवाली पक्ति के विषमसख्याक प्रभेद और समसख्याक द्रुतपक्ति में रहता तो उसी पक्ति के (नीचेवाली) समसख्याक प्रभेद के अनुसार घटाने की क्रिया करना है।

उदाहरण—द्रुतमेरु-तालिका से यह समझा जाता है कि ६ द्रुतमात्राकालवाले ताल के प्रस्तारो में द्विद्रुत के भेद ९ हैं। उनमें से यदि कोई पूछे कि पहला भेद कौन है तो उसे समझा देने के लिए पहले, ९ से नष्टाक "१" को घटाओ। शेष ८ हुआ उसमें उसके उपात्य "५" को घटाने पर बाकी हुआ "३"। घटाने से एक लघु मिला। "३" से तृतीयाक "३" को घटाने पर बाकी शून्य हुआ। घटने के कारण लघु गुरु हुआ। घटाने के लिए बाकी अक न रहने के कारण तालाग की कमी के पूरणार्थ "२" द्रुतो को जोड लो। अब पहला भेद ००ऽ सिद्ध हुआ है।

द्रुतमेरु का उद्दिष्ट—२

नष्ट प्रश्न में, जिन अको के घटित होने के कारण हमें तालाग मिले थे उन्ही सारे अको को एक-साथ जोडकर प्रस्तार सख्या से घटाने पर भेद (अभीष्ट) की क्रम-सख्या प्राप्त होती है।

नीचे से पहली पक्ति मे

(अ) समसख्याक द्रुतवाली पक्ति के कोठो का उदाहरण—

८ द्रुतमात्रावाले ताल-प्रस्तारो के बीच, बिना द्रुत के भेदो में ।।ऽ रूपवाले भेद की क्रमसख्या क्या है? इसे जानने के लिए प्रस्तार के आदि अग गुरु की प्राप्ति कैसी हुई होगी—यह समझ लेना है। गुरु होने के कारण, तृतीयाक "४" के घटित होने से प्राप्त होना चाहिए। इसलिए उसे लेना चाहिए। लघु तो जो अक न घटे होगे उनसे मिले है। इसी कारण उनके मूलभूत अको को मत लो। तदनन्तर समस्त भेदो की सख्या "७" से "४" को घटाने पर बाकी "३" बचा। इससे यह जाना जाता है कि अभीष्ट प्रस्तार बिना द्रुत के प्रस्तारो के तीसरे भेद का है।

उदाहरण—६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारो में विना गुरु के भेद "१४" है, यह गुरुमेरु की तालिका से ज्ञात होता है। इनमें पहला भेद कौन सा है ? यह प्रश्न पूछा जाय, तो इसका जवाव इसी रीति पर दिया जायेगा।

पहले सारे भेदो की सख्या "१४" से नष्टाक "१" को घटाने पर शेष हुआ "१३"। इससे "१४" के पूर्वांक "८" को घटाओ। वाकी हुआ "५", घटाने की क्रिया होने के कारण मिला लघु । शेषाक से पहला अक "५" घटित हुआ, केवल शून्य वच गया। इस बार पहले प्राप्त लघु गुरु हुआ। विशेष विधि के अनुसार गुरु को प्लुत करके वदल लेना है। अब हुआ पहला भेद ̀ऽ

नीचे से पहली के अलावा अन्य पक्तियो में—

यहाँ उसी विधि का अनुसरण करना चाहिए, जो लघुमेरु की नीचेवाली पहली पक्ति के अलावा अन्य पक्तियो में नष्ट की खोज के लिए अनुसृत की गयी है। लेकिन यहाँ, तृतीय के नीचेवाले अक के बदले, उसी पक्ति के तृतीयाक को लेना चाहिए। उसी पक्ति के पचम के बदले पचम के नीचेवाले अक को लेना है। अग पूर्ण न हुए हो तो, गुरु से पूर्ति कर लेनी चाहिए।

उदाहरण—६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारो में एकद्रुतभेद "५" है तो पहला भेद क्या है ? इसका उत्तर देंगे। "५" से नष्टाक "१" को घटाने पर शेष "४" हुआ। शेषाक से पूर्वांक "२" को घटाने से यह अक "२" बचा तथा एक लघु मिला। "२" से तृतीयाक "१" को घटाने पर शेष हुआ "१" और पहले प्राप्त लघु गुरु हुआ। "१" से पचम के नीचेवाले अक "२" को घटाना सभव नही, इसलिए कुछ भी न मिला। पीछे, "२" के पूर्वांक "१" को घटाने से केवल शून्य बचा। इससे एक लघु की प्राप्ति हुई। अन्तत पहला भेद ।ऽ हुआ है।

प्लुतमेरु का नष्ट

नीचे से पहली पक्ति में—

इसके लिए सर्वप्रस्तार के नष्ट की रीति के अनुसार क्रमश घटाते हुए आगे वढाना है।

उदाहरण—६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारो में बिना प्लुत के भेद "१८" है, यह प्लुतमेरु की तालिका से ज्ञात होता है। यदि कोई पूछे कि इनमें दूसरा भेद क्या है, इसका उत्तर इस रीति से प्राप्त होगा। पहले तमाम भेदो की सख्या से (१८ से) नष्टाक "२" को घटा लीजिए। वचे हुए अक "१६" से पहले के अक "१०" को घटाने पर शेप है अक ६ और एक लघु मिलता है। "६" से पूर्वांक "६" को घटाने पर

केवल शून्य बच जाता है। पहले मिला हुआ लघु गुरु हो जाता है। तालाग पूर्ण न होने से कमी के पूरणार्थ दो द्रुतों को जोड लीजिए। दूसरे भेद का रूप होता है ० ० ऽ

नीचेवाली पहली के अतिरिक्त अन्य पक्तियों में—

इनके लिए गुरुमेरु की पद्धति से घटाना चाहिए। उसी पक्ति के आखिरी कोठे तक घटाते जाते समय, अन्य कोठे में द्रुत, लघु या गुरु के मिलने पर वह प्लुत हो जाता है। प्लुत मिल गया तो, नीचेवाली पक्ति के आद्य ६ कोठों को छोडकर सातवे कोठे से फिर से घटाना आरम्भ करना है।

उदाहरण—आठ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारो में, एक प्लुत के भेद "५" है। इनमें से पहले भेद की खोज अब करनी है। पहले, "५" से नष्टाक "१" को घटाने पर प्राप्त शेषाक "४" से पूर्वांक "२" को घटाओ। अब "२" बच जाता है और घटित होने से मिलता है एक लघु। बाकी अक "२" से पूर्वांक "१" को घटाओ। शेषाक "१" बच जाता है तथा पहले प्राप्त लघु गुरु हो जाता है। उसी पक्ति के आखिरी कोठे में गुरु की प्राप्ति होने के कारण गुरु को प्लुत के रूप में बदल लीजिए। शेषाक से (१ से) नीचेवाली पक्ति के सातवें अक "२" को घटाना सभव नही। अत उसके पूर्वांक "१" को घटाना है। अब शेष रहा शून्य। घटाने की क्रिया होने से एक लघु मिलता है। पहला भेद।ऽ का होता है।

द्रुत, लघु, गुरु और प्लुत मेरुओ के उद्दिष्ट

इनके उद्दिष्ट की जानकारी, सर्वप्रस्तार के उद्दिष्ट की खोज के लिए जिस विधि का अनुसरण किया गया है, उसके अनुसरण करने पर प्राप्त होगी। इन मेरुओ की प्रत्येक पक्ति के उद्दिष्ट जान लेने निमित्त, नष्ट के घटित-अको को जोडकर, उसे समग्र भेदो की सख्या से घटाने पर भेद की क्रम-सख्या मिलेगी।

ताल-प्रस्तार से सम्बन्ध रखनेवाले खड-प्रस्तार, द्रुत-मेरु, लघु-मेरु, प्लुतमेरु, सयोग-मेरु और इनके नष्ट व उद्दिष्ट—ये विषय, 'सगीत-रत्नाकर' में गये अनुसार विशद रूप से लिखे गये है।

केवल शून्य बच जाता है। पहले मिला हुआ लघु गुरु हो जाता है। तालाग पूर्ण न होने से कमी के पूरणार्थ दो द्रुतों को जोड लीजिए। दूसरे भेद का रूप होता है ० ० ऽ

नीचेवाली पहली के अतिरिक्त अन्य पक्तियों मे—

इसके लिए गुरुमेरु की पद्धति से घटाना चाहिए। उसी पक्ति के आखिरी कोठे तक घटाते जाते समय, अत्य कोठे में द्रुत, लघु या गुरु के मिलने पर वह प्लुत हो जाता है। प्लुत मिल गया तो, नीचेवाली पक्ति के आद्य ६ कोठो को छोडकर सातवे कोठे से फिर से घटाना आरम्भ करना है।

उदाहरण—आठ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारो में, एक प्लुत के भेद "५" है। इनमें से पहले भेद की खोज अब करनी है। पहले, "५" से नष्टाक "१" को घटाने पर प्राप्त शेषाक "४" से पूर्वांक "२" को घटाओ। अब "२" बच जाता है और घटित होने से मिलता है एक लघु। बाकी अक "२" से पूर्वांक "१" को घटाओ। शेषाक "१" बच जाता है तथा पहले प्राप्त लघु गुरु हो जाता है। उसी पक्ति के आखिरी कोठे में गुरु की प्राप्ति होने के कारण गुरु को प्लुत के रूप में बदल लीजिए। शेषाक से (१ से) नीचेवाली पक्ति के सातवें अक "२" को घटाना सभव नहीं। अत उसके पूर्वांक "१" को घटाना है। अब शेष रहा शून्य। घटाने की क्रिया होने से एक लघु मिलता है। पहला भेद ।ऽ का होता है।

द्रुत, लघु, गुरु और प्लुत मेरुओ के उद्दिष्ट

इनके उद्दिष्ट की जानकारी, सर्वप्रस्तार के उद्दिष्ट की खोज के लिए जिस विधि का अनुसरण किया गया है, उसके अनुसरण करने पर प्राप्त होगी। इन मेरुओं की प्रत्येक पक्ति के उद्दिष्ट जान लेने निमित्त, नष्ट के घटित-अको को जोडकर, उसे समग्र भेदो की सख्या से घटाने पर भेद की क्रम-सख्या मिलेगी।

ताल-प्रस्तार से सम्बन्ध रखनेवाले खड-प्रस्तार, द्रुत-मेरु, लघु-मेरु, प्लुतमेरु, सयोग-मेरु और इनके नष्ट व उद्दिष्ट—ये विषय, 'सगीतरत्नाकर' में गये अनुसार विशद रूप से लिखे गये है।